मानव-दानव

मानव-दानव

महायद्ध के छिडने से मुश्ताक सकते मे आ गया। वह सहसा यह समझ गया कि अब तक वह राजनीति को जिस प्रकार बच्चो का खिलवाड समझ रहा था, अब वह वैसी नही रह गई। अब उससे खेलना उसी प्रकार से जोखिम का काम था, जैसे कोई हाथ मे जलती हुई मशाल लेकर बारूद के बस्ते से खेले। इसके अलावा वह रजिया से बहुत परेशान था, क्योकि इधर रजिया उससे बहुत कुछ आज़ाद ढग से चलने लगी थी। आखिर उसीने रज़िया को वेश्यालय के गन्दे वातावरण से निकालकर अपनी भाभी यानी क्रान्तिकारी शहीद यूसुफ उर्फ महेन्द्र की पत्नी के रूप मे प्रसिद्ध किया था। असल मे तो श्यामा, जो आनन्दकुमार के साथ रहती थी, वही शहीद की पत्नी थी, पर वह मुश्ताक के हाथो की कठपुतली बनकर लीगी सभाओ मे नाचने को तैयार नही थी। इसीलिए मुश्ताक ने रज़िया को तालीम देकर (वेश्यावृत्ति की तालीम तो उसे बडी बी से मिली थी) राज नीति के लिए तैयार किया था। वह सभाओ मे उसका परिचय अपनी भाभी के रूप मे कराता था और साथ ही उसको रखता भी था।

पर धीरे-धीरे रज़िया उर्फ सियामादेवी ने अपने को बहुत कुछ आज़ाद कर लिया था। वह सबसे अपनी शर्त देती, सभा करनेवालो से रुपये वसूलती और मुश्ताक को उन रुपयो का कोई हिसाब नही देती थी। नवाब इस्तगफार नाम से उसका एक प्रेमिक था, जो छाया की तरह सभाओ मे आ जाता था और फिर न जाने कब और कैसे उससे मिल लेता था। बहुत दिनो से उसका तो पता नही लगा। इधर रज़िया दूसरे लोगो पर भी कृपा करने लगी थी।

मुश्ताक बहुत परेशान था, क्योकि उसकी समझ मे नही आ रहा था कि वह क्या करे। उसकी हालत उस व्यक्ति की तरह थी, जिसने स्वय बोतल से जिन्न को निकाला था, पर अब वही जिन्न उसे निगलने के लिए तैयार था। उसने बहुतेरा चाहा कि इस तरह उसे सताने की बजाय रज़िया फिर अपनी बोतल मे घुस जाए, यानी फिर से दालमण्डी का कोठा आबाद करे, पर रज़िया के मुह राजनीति

का खून लग चुका था और उसमें सफलता यानी मुफ्तखोरी का अभ्यास पड चुका था, इसलिए वह अपनी पुरानी बाबी मे लौटने के लिए तैयार नही थी ।

अब अफसोस करना व्यर्थ था, क्योकि कई साल हो चुके थे । यह कयामत उसीकी बरपा की हुई थी । इस बीच यह निगोडी लडाई छिड गई । कही जिन्ना साहब ने काग्रेस पर तुरुपचाल देने के लिए तहरीक छेड दी, तो मुसीबत हो जाएगी । यो तो हज़रत जिन्ना हर बात मे पहले देख लेते थे कि गाधी और काग्रेस क्या करती है और उसीके मुताबिक अपना प्रोग्राम बनाते थे, पर कही उन्होने इस मामले मे गाधी से भी ऊपर जाने और ब्रिटिश सरकार की आखो मे महत्त्वपूर्ण बनने के लिए जेहाद बोल दिया, जैसाकि खिलाफत आन्दोलन के जमाने मे मुस्लिम नेताओ ने किया था, तो क्या होगा !

उसे अपने भाई की याद आई । वे तो हसते-हसते फासी पर चढ गए थे । क्या वह वैसा नही कर सकता ? क्यो नही ? पर नतीजा भी तो देखना होगा । उसके भाई यूसुफ हिन्दू क्रान्तिकारियो के बहकावे मे आ गए थे । वे उसके लिए आदर्श नही हो सकते । यदि वह जान देगा, तो मुस्लिम मागो के लिए देगा, न कि और किसी कारण से ।

जहा तक उसका अपना सम्बन्ध था, वह निश्चित था कि उसे क्या करना है, पर यह रज़िया उसके मार्ग मे अब रोडा बन रही थी । बाहरी लोगो को कुछ पता नही लगता, क्योकि रज़िया और वह बराबर व्याख्यान देते हुए घूमते रहते है । वह किससे मिल रही है, देखनेवालो को इसका पता नही लगता, क्योकि दो-चार दिन तो यही समझने मे लग जाते है कि रज़िया का कौन क्या है । फिर भी किसी-किसी दिन वह जब किसी व्यक्ति से बाज़ारू ढग से मिलती है, तो वह साधारण निरीक्षक से भी छिपा नही रह सकता ।

वह रज़िया से महायुद्ध के सम्बन्ध मे कुछ महत्त्वपूर्ण बाते कहना चाहता था । हिन्दू काग्रेस क्या कर रही है, या हिन्दू क्रान्तिकारी किस प्रकार रेल की पटरी उखाडने व काटने का नारा दे रहे हैं, इससे उसे कुछ मतलब नही था, न वह उनसे प्रभावित है, पर लडाई के कारण मुसलमानो मे जो फूट दिखाई पड रही है, उसका तो रज़िया को ज्ञान होना चाहिए । यही बात वह रज़िया को समझाना चाहता था । व्याख्यानो के पहले ही उसने रज़िया से कहा था—लडाई छिड गई है, आज तुमसे कुछ ज़रूरी बाते करनी है । लोगो से छुट्टी लेकर चली आना ।

पर वह नही आई। वह एक खसखसी दाढीवाले कामुक किस्म के मुस्लिम युवक के साथ, जो पजाबी लगता था, मोटर मे बैठकर चली गई। बहुत गुस्सा आया, पर खून का घूट पीकर रह जाना पडा। दूसरो के सामने वह कर भी क्या सकता था।

फिर इस कानपुर शहर से उसे बहुत पैसा मिला है और आगे भी मिलने की आशा है, इसलिए यहा अपनी नाक बनाए रहना जरूरी है। सियामादेवी को हिन्दुओ के द्वारा बहकाए और शहीद बनाए हुए यूसुफ की बीवी करके परिचित कराने के लिए वही जिम्मेदार था। दुधारू गाय की लात सहनी पडती हे, पर यह तो लात से भी बढकर था और ऐसा बार-बार हो रहा था।

महायुद्ध के पहले दिल्ली मे मुस्लिमलीग परिषद का जो इजलास हुआ था, दोनो उसमे गए थे। उसमे विशेषकर सभव महायुद्ध पर विचार हुआ था। उसमे यह साफ कह दिया गया था कि भारत के मुसलमानो पर १९३५ के अधिनियम के द्वारा उनकी इच्छा के विरुद्ध एक ऐसा सविधान लादा गया था, जिसमे हिन्दू बहुसख्या को मुस्लिम अल्पसख्या की छाती पर हर समय मूग दलने जैसा खुला अधिकार दे दिया गया था। यदि यह बहुसख्या मित्रतापूर्ण होती तो कोई बात न थी, पर यह बहुसख्या शत्रु-भावनापन्न थी। काग्रेस-शासित प्रान्तो मे मुसलमानो के विरुद्ध गुडागर्दी चालू थी। इसके साथ ही ब्रिटिश सरकार फिलिस्तीन मे अरबो के विरुद्ध कार्य कर रही थी, ऐसी हालत मे यदि लडाई छिडे तो भारत के मुसलमानो से सहयोग की आशा करना उनके धैर्य पर बहुत अधिक जोर डालना होगा। लीग की परिषद ने फिर भी यह राय दी थी कि अभी लडाई छिडी नही है, इसलिए लडाई छिडने की हालत मे क्या नीति रहेगी, इस सम्बन्ध मे कुछ स्पष्ट नही कहा जा सकता।

इसपर बम्बई के करीमभाई इब्राहिम ने यह सशोधन रखा था कि युद्ध छिडने की हालत मे भारत के मुसलमानो को सरकार से सहयोग नही करना चाहिए क्योकि वह भारतीय मुसलमानो के प्रति वफादार नही है और काग्रेस के साथ मिलकर मुसलमानो को दबाने मे लगी हुई है।

मुश्ताक ने अध्यक्ष का ध्यान आकर्षित करने के लिए हाथ उठाया था। वह इस सशोधन का ज़ोरदार तरीके से विरोध करना चाहता था, पर जिन्ना साहब ने उसे देखा ही नही या देखकर भी नही देखा। यदि उसे मौका मिलता तो वह

बम्बई के इस नेता की अच्छी खबर लेता। कैसे, किन शब्दो मे खबर लेता, यह उसने रजिया उर्फ सियामादेवी को बताया था। वह कहता—यद्यपि करीमभाई ने काग्रेस को अपने सशोधन मे गालिया दी है, पर यह स्पष्ट ही दिखाई पड रहा है, अन्धे को भी दिखाई पडता है कि असल मे उनकी मशा मुसलमानो को सब तरह से पगु कर देना था। काग्रेस और हिन्दू तो दुश्मन है ही, अब बिना कारण, बिना सोचे-समझे अग्रेजो को दुश्मन बना लिया जाए तो काग्रेस की भवर मे पडी हुई नाव निकल जाएगी और लीग की नाव फौरन ही डूब जाएगी। ऐसे लोग जो ऐसी बाते कहते है काग्रेस को ऊपर से गालिया देते हुए भी काग्रेस के दोस्त है, क्योकि जब लीग दोनो दीन से जाएगी तो उसे बरबस जाकर काग्रेस की गोद मे आश्रय लेना पडेगा।—इसके अलावा वह इस व्याख्यान मे जिन्ना साहब की तारीफ के पुल बाध देना चाहता था, पर उन्होने तो उसकी तरफ देखा ही नही था।

कुछ भी हो, मुश्ताक ने रजिया को सारी बाते बताई थी जिन्हे वह कहना चाहता था। रजिया ने क्या काम किया कि कानपुर की लीगी सभा मे उन सारी बातो को सभा के सामने ऐसे उगल दिया, जैसे उसीका स्वतन्त्र चिन्तन हो। उसने यहा तक कह डाला कि मैं तो लीग की कौसिल मे करीमभाई की बोटी बोटी उडा देती, पर मुझे मौका ही नही मिला। मैने हाथ उठाया पर दूसरे बडे-बडे लोग बोलने के लिए ख्वाहिशमन्द थे, इसलिए जिन्ना साहब ने मुझे बोलने नही दिया, गर्चे वे मुझे जाती तौर पर जानते है और मेरी कद्र करते है। मैं तो नाचीज हू, असल मे वे, मेरे शौहर शहीदे-आजम की कद्र करते है, गोकि उनसे यह छिपा नही है कि मेरे शौहर हिन्दुओ के बहकाने पर हिन्दू इन्कलाबियो के फायदे के लिए शहीद हुए थे।—कहकर उसने अपना चेहरा रुआसा बना लिया था।

रजिया ने इसके बाद फिर वही बात सुनाई थी कि किस तरह हिन्दू इन्कलाबियो ने फासीघर से एक हिन्दू बदमाश को तो निकाल लिया और मेरे शौहर को नही निकाला।

यह सब तो ठीक कहा, बहुत अच्छा कहा। जो घटना मेरे साथ लीग की कौसिल मे घटित हुई थी, यदि उसे रजिया ने अपने ऊपर ढालकर कहा तो कोई हर्ज नही। आखिर वह है क्या? वह तो सिर से पैर तक उसीके हाथो का बनाया हुआ पुतला है, ऐसा पुतला, जिसमे उसने सास फूकी, जिसे उसने देखना और सुनना सिखाया, जिसे उसने वाक्शक्ति दी। वह उसका बानीमुबानी खुदा और खालिक है और

रजिया उसकी खिलकत और सृष्टि। उसने उसे रत्ती-रत्ती करके बनाया। फिर भाभी यानी शहीदे-आजम की बीवी करके पीठिका पर स्थापित किया फिर मुसलमानो से उसकी पूजा करवाई, सिजदा करवाया और यह सब इसलिए किया कि मुसलमानो का लाभ हो, हिन्दुओ की गुलामी से उनको छुटकारा और नजात मिले और फिर एक बार इस्लाम का चमचमाता परचम हिन्दुस्तान पर लहराए।

पर वह ऐसी फूहड निकली कि अपने मिशन को समझती नही है। भले ही सबसे यह बात छिपी हो, पर मुश्ताक को यह मालूम था कि रजिया बहुत मामूली औरत है। मामूली औरत भी नही, वह तो उससे भी गिरकर एक फाहिशा है। उसके लिए यह मुमकिन नही कि वह अपने नफ्स पर काबू रखे। उससे ऐसी उम्मीद रखना ऐसा होता जैसे कोई अन्धकार से रग चाहे। इसीलिए जान बूझकर सब देख-सुनकर स्वय एक विवाहित शरीफ आदमी होते हुए भी उसने जब-तब उसकी नफ्सी जरूरते पूरी करने का ताता जारी रखा था—शहीदे-आजम की बीवी यानी भाभी बनाते हुए भी। इसमे कोई गलत बात नही थी, क्योकि न तो वह शहीदे-आजम की बीवी थी और न वह भाभी थी। असली भाभी तो श्यामादेवी है, जो उस खूसट आनन्दकुमार के बरगलाने से बिल्कुल परायी हो गई है। यही नहीं, कबीर को भी हिन्द बना लिया।

रजिया को उसके प्रति कृतज्ञ होना चाहिए था। उसने उसे पतन के अतल गह्वर से निकाला, उसे इन्सान का मुकुट पहनाया और उसे मर्यादा बख्शी। सबसे बडी इज्जत यह दी कि स्वय विवाहित होते हुए भी उसने जब-तब केवल उसकी जरूरतो को देखते हुए उसके साथ वह काम किया, जो एक शादीशुदा शरीफ आदमी को नही करना चाहिए था। फिर भी कुतिया कुतिया ही रही और उस खसखसी दाढीवाले युवक के साथ चली गई। इसके पहले कभी उस युवक को नही देखा। रजिया ने भी पहली बार देखा होगा। फिर भी उसके साथ चली गई। जब घण्टो बाद लौटकर आई, तो पहले तो बिल्कुल इकार ही कर गई कि मै कही नही गई थी, लोगो से बातचीत करती रही, लोग लीग की कौसिल के बारे मे जाने कितनी बाते पूछ रहे थे—जिन्ना साहब कैसे है? वे सूट पहनते है कि शेरवानी? सर अब्दुल्ला हारू कैसे हैं? नवाबजादा लियाकतअली खा कैसे है? वगैरह-वगैरह।

साफ झूठ बोल गई। पर जब मुश्ताक ने कहा कि मैंने खसखसी दाढीवाले

उस आदमी को देखा है, मैंने उसकी गाडी का नम्बर भी नोट कर लिया है, तब वह आखो मे अजीब दूर की दृष्टि लाकर बोली—हा-हा, वे मशहूर सौदागर कम्मू मिया के साहबजादे थे। मुझसे लीग कौंसिल की खास बाते पूछना चाहते थे, इसलिए मुझे मोटर पर ले गए।

—क्या बात पूछना चाहते थे ?

तब रजिया बोली—वे पूछना चाहते थे कि लीग की कौसिल ने तो लडाई छिडने की हालत मे मुसलमानो का क्या-क्या होगा, इसे तो गोल-मोल रखा, पर पजाब के वजीरे-आजम सिकन्दर हयातखा ने तो २५ अगस्त को ही यह कह मारा कि लडाई छिडने की हालत मे हिन्दुस्तान के मुसलमान अग्रेजो का साथ देगे। इसपर कौंसिल मे क्या राय रही ?

इसपर मुश्ताक ने पूछा था—यह तो सारे अखबारो मे छपा है, इसमे तुमसे क्या खास बात पूछने को थी ? अगर पूछना ही था तो यही पूछ लेते, उसके लिए मोटर पर ले जाने की क्या जरूरत थी ?

इसपर रजिया कुछ रुखाई से बोली—सबके सामने पूछने की बात नही थी, क्योकि सर सिकन्दर को लीग के साथ ले चलना है। फजलुलहक और सिकन्दर हयात, ये दो हमारी आर्गनाइजेशन के खास खम्भे है, जिन्हे हम छोड नही सकते।

इसपर मुश्ताक ने पूछा था—तीन घण्टे तक वे सवाल ही पूछते रहे ?

रजिया ने इसपर कहा था—सवाल नही पूछते रहे, पर जब मैं वहा गई तो चाय वगैरह हुई। क्या इसमे कोई बुराई है ?—कहकर उसने तेवर चढा लिए।

उसने तेवर चढा लिए तो मुश्ताक ने भी साफ-साफ बात कह दी। बोला—चाय मे तो कोई एतराज नही है, पर वगैरह मे जरूर एतराज है। मैंने सुना है कि अब्दुल्ला छटा हुआ बदमाश है। वह सालो तक बम्बई मे एक्ट्रेसो के फेर मे पडा रहा, लाखो फूक दिया, अब यहा तुम मिल गई तो तुम्हे मोटर पर उडा ले गया। माना कि तुम असल मे मेरी भाभी नही हो, पर तुम्हे मसल्हतन बर्ताव तो ऐसा रखना चाहिए कि कोई उगली न उठा सके, मानो तुम शहीदे-आजम की बीवी हो।

इसपर रजिया बहुत बिगड गई, बोली—जी हां, शहीदे-आजम की बीवी की तरह बर्ताव करने का मतलब यह है कि मैं लेक्चर देकर आती और आपके बिस्तरे पर लेट जाती, ताकि आप अपनी लीगी भडास निकालें। वाह ! मैं साफ

कहे देती हू कि मैं आपकी ब्याही हुई बीवी नही हू, जो आपके मातहत रहू। मेरा जिसके साथ जी चाहेगा, उसके साथ सोऊगी। कोई मुझे रोक सकता है? बडे आए शहीदे-आज़म के भाई! कम्मू मिया के यहा तुम्हारी तरह बीसियो नौकर है!

इसपर बडा भयकर झगडा हो गया, उतना भयकर जितना कि दूसरो का मेहमान रहते हुए हो सकता था, यानी रज़िया ने धडाके के साथ अपना दरवाज़ा बन्द कर लिया और भीतर से बोली—तुम्हे सौ बार गर्ज हो तो मेरे साथ रहो, नही तो मुझे तुम्हारी ज़रूरत नही है। पजाब से मेरे पास आफर आया है कि मै वहा जाकर मुस्लिम अवाम मे सिकन्दर हयात के खिलाफ फिज़ा तैयार करू। तुम चाहोगे तो मैं वहा अपने को मिल्लत की खादिमा रज़िया करके ही बताऊगी। उस बेवकूफ शहीदे-आजम के साथ अपना नाता बताना तो अपनी इज्ज़त मे गहन लगाना है।

मुश्ताक के बहुत अनुरोध करने पर भी रज़िया ने न तो दरवाजा खोला और न कोई बात ही की। मुश्ताक भी एक हद तक ही अनुरोध कर सकता था, क्योकि दूसरो के आख-कान बचाकर ही अनुरोध करना था। यदि जगहसाई और भद्द होने का डर न होता, तो वह तो शायद दरवाजा तोड डालता और रज़िया से सफाई लेकर ही छोडता, और जैसाकि इस प्रकार सभी सफाइयो के अवसर पर होता आया था, वह या तो उसी समय रजिया के साथ सो जाता या यदि मौका न होता तो मेजबानो के सो जाते ही बगल के कमरे से आ धमकता।

पर इस अवसर पर ऐसा कुछ भी नही हुआ। मुश्ताक को खून का घूट पीकर कमरे मे चला जाना पडा।

उसे नीद नही आई। कभी तो वह सोचता रहा कि जाकर कम्मू मिया के साहबजादे अब्दुल्ला से दो-दो हाथ कर ले कि अगर तुम्हे सियासी मामलो मे जानकारी हासिल करनी थी, तो तुम मुझसे करते, मैं कोई मामूली आदमी नही हू, एम०ए्ल०ए० हू, पुराना लीगी हू, शहीदे-आजम का भाई हू, जिन्ना साहब ने मुझे देखा नही, नही तो मैं वहा मौजूद सारे बुजुर्गो और खूसटो से ज्यादा अच्छी तकरीर कर सकता था।

यह तो साफ है कि अब्दुल्ला सियासी मामलो की जानकारी के लिए नहीं आया था, बल्कि रज़िया के साथ हमबिस्तर होने आया था। लोग तो

कह रहे थे कि अब्दुल्ला को कभी सियासत मे दिलचस्पी नही थी। हा वह लीग को चन्दा जरूर देता है, पर चन्दा देने का यह मतलब नही है कि उसे शहीदे-आज़म की बीवी के साथ हमबिस्तर होने का हक हासिल हो गया। रजिया भले ही असली बीवी न हो, पर अब्दुल्ला के नजदीक तो वह शहीदे-आजम की बीवी है, इस नाते उसे रजिया की इज्जत करनी चाहिए थी।

पर रज़िया अपनी तकरीर से न जाने क्या असर पैदा करती है कि अक्सर तकरीर सुननेवाले नौजवान और कई बुजुर्ग भी उसे घेरकर घूमने लगते है। यह घेरना देखने मे तो ताजीम मालूम देता है, पर असल मे यह भौरे की भन्-भन् की तरह होता है, जिसका मतलब एक ही होता है। मैने हज़ार दफे रजिया से मना किया कि तुम तकरीर करते वक्त वे अदाए न किया करो जो तुम दालमण्डी मे गाहको को अपने मकडी के जाले मे फसाने के लिए करती थी, पर वह ऐसी बद-जात है कि नही मानती।

कहती है कि सभी एक्ट्रे से और तकरीर करनेवाली काग्रेसी औरते उसी तरह की अदाए करती है। और कहती है कि जब शीरा बिखराया जाएगा तो जाहिर है कि मक्खिया आएगी। अब्दुल्ला ऐसा ही एक मक्खा था। वह फटीचर नबाब भी इसी किस्म का था। चलकर अब्दुल्ला के बच्चे से दो-दो हाथ क्यो न कर लिए जाए! अगर मैं जाकर कहू कि तुमने मेरी भाभी की बेइज्जती की, तो रज़िया को बरबस मेरा साथ देना पडेगा। सोचते-सोचते एक बिन्दु पर जाकर उसका दिल एकाएक धक से बैठ गया, क्योकि क्या मालूम रज़िया मेरा नही उसीका साथ दे, तब तो बडी भद्द पिटेगी। नही, उससे उलझने मे कोई फायदा नही। कल तो यहा से जा ही रहा हू, फिर कुजा अब्दुल्ला और कुजा कानपुर!

यह तो था बुद्धि का स्वर, पर रजिया ने जो धमाके से दरवाजा बन्द कर दिया और उसे अन्दर जाने नही दिया, इसका मलाल किसी तरह नही मिटने को था। मेजबानो ने इतना अच्छा खाना खिला दिया कि नीद भी तो नही आ रही है। नीद तो तब आए, जब कि स्नायु शान्त हो। पर यहा तो शरीर का हर स्नायु तना हुआ है, विशेषकर पेट के इर्द-गिर्द के स्नायु।

वह उठा।

कही कोई नही था। उसने रजिया के दरवाजे पर जाकर अर्थपूर्ण ढग से धीरे से खखारा जैसाकि वह उन अवसरो पर किया करता था, जबकि वह रात

को चुपके से रजिया के पास जाता था। पर उधर से कोई आवाज नही आई। उसने कान लगाकर सुना तो मालूम हुआ कि रजिया की सास नियमित रूप से चल रही है, यानी वह सो गई है। स्पष्ट है कि उसे किसी बात की चाह नही है, क्योकि उसे जो कुछ चाहिए, वह सब मिल चुका है। अब्दुल्ला से मिल चुका है।

यह सोचकर उसे बहुत गुस्सा आया। एक बार सारा शरीर कडा पड गया और उसे ऐसा लगा कि अब वह दरवाजे से—पहाडी नदी जिस प्रकार से एकाएक सामने आ गई चट्टान से टकराकर गर्जन के साथ अपना रास्ता तोड लेती है, उसी तरह से वह इस दरवाजे से टकराएगा और जैसे नदी समुद्र की गहराइया मे समा-कर ही दम लेती है, उसी तरह वह भी रजिया के अन्तरतम मे, उसके शरीर, मन और आत्मा के अन्तरतम मे समाकर ही दम लेगा।

चाहे कुछ भी हो जाए।

पर इतने मे कही कोई खटका हुआ और वह एक छलाग मे अपने कमरे मे पहुचा। बहुत देर तक वह बिलकुल हतबुद्धि रहा। वह समझ गया था कि आज रात को भाभी से मिलना सम्भव नही है। उसने अपने मन को यह समझाकर शान्त किया कि मैं तो कुछ नही चाहता था, महज यह जानना चाहता था कि पजाब मे जाकर वहा के मुख्यमन्त्री सिकन्दर हयात के विरुद्ध फिजा तैयार करने का कौन-सा आफर था। उसमे कितने रुपये मिलने को है? क्या वह आफर केवल शहीदे-आजम की बीवी के लिए है या उसके भाई के लिए भी है? ऐसा तो हो नही सकता कि शहीदे-आजम की बीवी को बुलाया जाए और भाई को न बुलाया जाए, जबकि भाई मुअज्जिज लीडर, मुसलमानो का एक प्यारा रहबर है।

बस उसे किसीने बहका दिया कि सर सिकन्दर हयात खा के खिलाफ फिजा तैयार करनी है, और वह फौरन इसके लिए तैयार हो गई। आखिर यह भी तो सोचना चाहिए कि कौन आफर दे रहा है, क्यो दे रहा है, उसकी मशा क्या है। सिकन्दर हयात खा ने २५ अगस्त को यानी लीग कौसिल की बैठक के दो दिन पहले ही यह बयान दे दिया था कि महायुद्ध छिडने की हालत मे वे पूरी तरह अग्रेजो के साथ होगे। सिकन्दर हयात की सारी जिन्दगी को देखते हुए यह कोई अजीब बात नही थी, क्योकि वे खैरख्वाहो के खानदान के थे। पर उनको साथ रखना जरूरी था क्योकि पजाब पर उनका शासन था। हिन्दू और सिख भी एक हद तक उनसे खुश थे। विगत चुनाव मे उनकी यूनियनिस्ट पार्टी ने मुस्लिम सीटो

पर लीग को हराया था, फिर वे स्वय ही लीग के साथ हो गए थे।

उनके खिलाफ फिजा तैयार करने का अर्थ पजाब मे मुस्लिम शासन का अन्त हो सकता था। वहा एक से एक हिन्दू और सिख घाघ बैठे हुए है। लीग उनका स्थान नही ले सकती, या जब लेगी, तब लेगी, अगले चुनाव के पहले तक तो यूनियनिस्ट पार्टी का ही जोर रहेगा। रजिया तो नई दिल्ली मे प्रत्यक्ष देखती रही कि क्या हुआ। लीग की कौसिल की बैठक मे आशिकहुसैन बटालवी नाम के एक सज्जन ने पजाब के वजीरे-आजम सिकन्दर हयात के विरुद्ध अनुशासन की कार्रवाई करने की माग करते हुए एक प्रस्ताव रखा, जिसमे यह कहा गया था कि हिन्द-ब्रिटिश व्यापार अनुबन्ध पर पजाब असेम्बली मे सर सिकन्दर हयात ने जो वक्तव्य दिया तथा जो फेडरल स्कीम रखी, उसके लिए उनके विरुद्ध अनुशासन की कार्रवाई हो।

पर जिन्ना साहब ने यह प्रस्ताव आने नही दिया, तब मि० बटालवी ने मुस्लिम-लीग के उन सारे सदस्यो के विरुद्ध अनुशासन की कार्रवाई की माग करते हुए एक प्रस्ताव रखा, जो 'सेना भारतीयकरण कमेटी' के सदस्य थे। इस प्रस्ताव की भी ढाल सर सिकन्दर हयात के विरुद्ध थी। पर इस प्रस्ताव को भी वापस लेना पडा।

बटालवी साहब तो फेल हो गए और यह रजिया चली है बिना सोचे-समझे सिकन्दर साहब का विरोध करने। अवश्य लीग ने सिकन्दर हयात की किसी-न-किसी रूप मे निन्दा की, पर वह बहुत नरम शब्दो मे की गई। सैयद अली मुहम्मद राशिदी ने एक बहुत बडा प्रस्ताव रखा कि १९३८ के ४ दिसम्बर वाले प्रस्ताव मे आल इण्डिया मुस्लिमलीग की कौसिल ने यह स्पष्ट प्रस्ताव किया था कि कोई भी जिम्मेदार लीगी लडाई पर किसी तरह का बयान न दे। सर सिकन्दर स्वय वहा मौजूद थे, फिर भी उन्होने २५ अगस्त को अपना बयान दिया, इसलिए लीग इसकी निन्दा करती है। पर यह प्रस्ताव इस रूप मे पास न होकर इस रूप मे पास हुआ कि सर सिकन्दर हयात के युद्ध-सम्बन्धी विचार किसी भी प्रकार भारत के मुसलमानो के विचार नही व्यक्त करते।

लीग के बडे-बडे नेताओं ने जब सोच-समझकर यह प्रस्ताव रखा, और यह तो स्पष्ट ही है कि ऐसा जिन्ना साहब के इगित और इच्छा से ही हुआ तो इसमे सोच-समझकर काम करने की जरूरत है। रजिया तो उस कहावत को चरितार्थ करने पर तुली है कि जहा फरिश्ते हार जाते हैं, वहा मूरख बहुत जल्दी कूद जाते हैं।

आखिर जो कदम उठाया जाए, वह ऐसा उठाया जाए कि उसमे फिर पीछे हटने की गुजाइश न हो। न गुजाइश न जरूरत। इस समय तो मुसलमानो मे एके की सबसे अहम ज़रूरत है। अगर एका नही रही तो जिन्ना साहब के नेतृत्व के बावजूद (नेतृत्व मे कुछ सन्देह तो था, क्योकि उन्होने उसे बोलने नही दिया था) मुसलमान दो चक्कियो के पाट के बीच मे पडकर यानी हिन्दू और अग्रेज़ो के बीच मे पडकर चकनाचूर हो जाएगे।

मुश्ताक बहुत देर तक जगता रहा। उसने कई बार पेशाब किया और पानी पिया, फिर पेशाब किया, फिर पानी पिया। कुछ तनाव कम हुआ, तब वह असतुष्ट होकर लेट गया। करवटे बदलता रहा, फिर किसी समय उसे नीद आ गई, पर अच्छी नही। एक बार उसने यह स्वप्न देखा कि वह खडा है और एकाएक कही से बाढ आ गई और पानी बढने लगा यहा तक कि उसके गले तक आ गया, तब वह भागकर इमारत की दूसरी तरफ पहुचा, तो वहा उसने यह तो देखा कि पैर के नीचे अभी जहा-तहा पानी के चिह्न है, पर पानी घट रहा है। वह जग गया और इस सपने की तरह-तरह से व्याख्या करने लगा। अन्त मे, जैसाकि हमेशा ऐसे सपने देखनेवाला करता है, उसने यह व्याख्या की कि विपत्ति उसपर आई थी, पर टल गई, यानी टल जाएगी। यह सोचते ही उसे खुशी हुई। फिर भी दो प्रश्न काटे की तरह उसके मन मे चुभते रहे, एक यह कि वह हरामजादा अब्दुल्ला उसे जो ले गया तो चाय के बाद क्या हुआ। चाय नही पूरा खाना, क्योकि रज़िया ने लौटकर मेजबानो का खाना नही खाया।

दूसरा प्रश्न यह था कि वह आफर क्या था, उसका रूप क्या है। क्या उसमे आम तौर से होनेवाले इन प्रोग्रामो से ज्यादा रुपये मिलेंगे ? क्या उसमे अपने लिए भी गुजाइश है ?

फिर भी उसे नीद आ गई। वह जब सवेरे उठा, तो उसने देखा कि रज़िया पहले ही उठ चुकी है। उसके चारो तरफ प्रशसको का एक हजूम इकट्ठा हो चुका है। कोई प्रश्न पूछ रहा है, तो कोई उसका आटोग्राफ ले रहा है। रज़िया अदा के साथ बडी सफलता से सबको निपटा रही है। मुश्ताक ने एक ही दृष्टि मे देख लिया कि उन प्रशसको मे अब्दुल्ला नही है। उसे कुछ इत्मीनान हुआ, पर अगले ही क्षण उसका चेहरा कडा पड गया, क्योकि उसे लगा कि यह इसका प्रमाण है कि उसे जो कुछ चाहिए था, वह मिल चुका है।

पर उसी समय रजिया ने बडी अदा के साथ उसे कहा—आइए, सब आपका इन्तजार कर रहे हैं। आप सोए हुए थे, इसीलिए मैं इन लोगो के सवालो का उलटा-सीधा जवाब दे रही थी। मै सफर के लिए तैयार हो जाऊ

कहकर वह अपने प्रशसको को बडी अदा के साथ सलाम करके उन्हे मझधार मे छोडकर अपने कमरे मे चली गई और दरवाजा भेड दिया। मुश्ताक के दिल का सारी मैल धुल गई और वह बडे जोश के साथ लोगो के प्रश्नो के उत्तर देने लगा।

अब उसे एक प्रश्न का उत्तर तो मिल गया था, पर उस आफर के सम्बन्ध मे कुछ पता नही लगा था। एक प्रश्नकर्ता ने इसी समय पूछा कि क्या सिकन्दर हयात खा ऐसे लोगो को साथ मे लेकर मुस्लिमलीग कुछ काम कर सकती है, तो इसके उत्तर मे मुश्ताक ने कहा—हमे तो सब मुसलमानो को साथ लेकर चलना है। सिकन्दर हयात को तो हम बिलकुल नही छोड सकते, क्योंकि वह मुसलमानो की अक्सरियत वाले एक सूबे के मालिक बनकर बैठे है ; या तो हमे उनको साथ लेकर चलना पडेगा या फिर उनकी लीडरी खत्म करनी पडेगी। सिकन्दर हयात के बहुत-से अच्छे साथी है, जैसे प्रोफेसर इनायतउल्ला, जिन्होने सर रजाअली के अमेडमेट की मुखालिफत की। फजलुलहक साहब भी तो बगाल के बडे लीडर है, पर उन्होने किसी किस्म की खतरनाक जेहनियत नही दिखलाई।

इसी तरह और भी कई प्रश्नोत्तर हुए, पर मुश्ताक का मन रजिया मे ही पडा हुआ था।

प्रश्नोत्तर के बाद चाय हुई और चाय मे भी प्रश्नोत्तर चले। एकाएक मुश्ताक ने देखा कि अब्दुल्ला वहा मौजूद है और रजिया उसके लिए चाय बना रही है। उसे बहुत गुस्सा आया, पर वह कुछ कह नही सका, उसे कुछ खूसट और भक्त टाइप के नौजवान मुसलमान घेरे हुए थे, इसलिए वह उन्हीसे उलटा-सीधा सुलटता रहा। बार-बार लोग सिकन्दर हयात पर पहुच जाते। अत मे उसे इतना क्रोध आया कि उसने कह डाला—सिकन्दर हयात कोई नबी नही है, हम मुसलमान अल-हजरत के बाद किसीको नबी मानते ही नही। मै बताना नही चाहता था, पर आप लोग नही मानते तो लीजिए, एक छोटी बात कहे देता हू, वह यह कि जैसे साप के दात उखाड दिए जाते हैं, वैसे ही सर सिकन्दर के जहर के दात उखाडने की तैयारिया हो रही हैं। फिर वे वैसे ही हो जाएगे, जैसे एक मामूली केंचुआ।

जो चाहेगा, वह उनका सिर कुचल देगा।—कहकर उसने हमकर बोलते-बतलाते हुए अब्दुल्ला और रजिया के जोड़े को सम्बोधित करते हुए कहा—अब मुझे कुछ खाने-पीने दीजिए। अब आप मेरी भाभी शहीदे-आजम की जवजा सियामादेवी उर्फ फातिमा से सवालात पूछे।

ऐसा करने मे उसका उद्देश्य महज यह था कि अब्दुल्ला को और मौका न मिले, पर अब्दुल्ला उसकी बात सुनकर खुश होते हुए बोला—हा-हा, शहीदे-आज़म की बीवी साहबा की तकरीर होनी चाहिए।

यद्यपि रज़िया बिल्कुल तैयार नही थी, पर वह उठ खडी हुई और उसने तुरन्त एक छोटा-मोटा व्याख्यान दे डाला, जिसमे उसने भारत को दारुल-हरब (काफिरो का देश) बताते हुए कहा—मुसलमानो के असली दुश्मन तो हिन्दू है। एक हिन्दू होने के नाते, खैर अब तो मैं इस्लाम मे ईमान ला चुकी हू, मुझे यह मालूम है कि स्वराज्य की असली मशा क्या है। हिन्दुओ का असली मकसद है—स्वराज्य पा लेने के बाद सारे मुसलमानो, ईसाइयो, सिखो को हिन्दू बनाना, इस तरह हिन्दुस्तान को सच-मुच हिन्दुस्तान बनाना। सब मस्जिदो, गिर्जो, गुरुद्वारो को तोडकर उनकी जगह मन्दिर बनेगे। सच तो यह है कि काग्रेस सरकारो ने वह काम चालू कर दिया है और किसीको मालूम नही है, गाव के गाव हिन्दू बनाए जा रहे है। इसलिए लडाई मे हम अग्रेजो की मदद करना चाहते है, पर यह वादा लेकर कि अग्रेजो ने मुसल-मानो से हिन्दुस्तान को लिया था, वे मुसलमानो को ही उसे वापस करे।

जब रज़िया यह कहकर बैठ गई, तो तालियो की ऐसी गडगडाहट हुई कि बाहर जो दो-चार लोग इन्तजाम मे लगे हुए थे, वे दौड आए कि न जाने कौन-सी ऐसी बात कही गई, जिससे वे वचित रह गए।

गाडी का समय हो रहा था, इसलिए थोडी देर मे ही मुश्ताक और सियामा-देवी को चल देना पडा। मुश्ताक ने आश्चर्य के साथ देखा कि स्वय मेजबान, जिनके घर वे रात को ठहरे थे और अब चाय हुई थी, और उनकी घरवाली रो रही थी। उनकी देखा-देखी और भी दो-एक साहब रोने लगे। अब्दुल्ला ने मुश्ताक और रज़िया को अपनी मोटर मे बैठाकर स्टेशन ले जाते हुए रज़िया को सम्बोधित करते हुए कहा—काश, मैं भी इन लोगो की तरह खुलकर रो सकता! पर मेरा दिल तो खून के आसू रो रहा है, जो दिखाते नही बनता।—कहकर उसने रजिया को आख मारी, जिसे मुश्ताक नही देख पाया।

मुश्ताक ने व्यग्य के साथ कहा—मुझसे तो लोग कह रहे थे कि आप चन्दा देने के अलावा लीग मे कोई दिलचस्पी नही लेते, न जाने कल कैसे जलसे मे आ गए थे !

अब्दुल्ला ने कहा—जलसो मे मैं इसलिए नही आता कि आधे वक्त तक तो कुरानशरीफ की आयते सुनाई जाती हे, बाकी बेमतलब की बाते होती है, जिनका ज़िन्दगी से कोई सरोकार नही होता। आपकी भाभी साहबा की तरह तकरीर करनेवाले लोग होते तो मै तो दिन-रात तकरीर ही सुना करता, खुदा की कसम" •

कहकर उसने फिर मुश्ताक से बचाकर रजिया को आख मारी। रज़िया फूली नही समाई, पर मुश्ताक को यह पसन्द नही आया। वह कुछ कहने ही जा रहा था कि स्टेशन आ गया। वहा भी भीड जमा थी और मोटर से उतरते ही 'लीग जिन्दाबाद' आदि नारे लगने लगे। मुश्ताक फिर एक बार प्रशसको से घिरकर रज़िया से अलग हो गया। उसने देखा कि अब्दुल्ला बराबर रजिया के साथ लगा है, पर किया क्या जाता ! इसलिए जब सब लोग नारे-वारे लगाकर चले गए और गाडी चल पडी तो पहला मौका पाते ही मुश्ताक रजिया पर बरस पडा, बोला—तुम्हे शरम नही आती कि उस बदकार के साथ कल गई और फिर आज हस-हसकर उसीसे बतियाती रहीं। मैंने बहुत मना किया, पर उसकी मोटर पर स्टेशन आईं। और लोग भी तो मोटर दे रहे थे। उसकी मोटर मे ऐसी क्या खास बात थी समझ मे नही आई।

रज़िया उर्फ मियामादेवी ने कहा—क्या करू ! वह तो छाती पर सवार हो गया। टालते नही बना।

—अब तुमने ठीक बात कही।

—क्या ?

—वह तुम्हारी छाती पर सवार हो गया। कल चाय पिलाकर भी उसने ऐसा ही किया होगा।

कल तो इसी बात पर रज़िया बिगड गई थी और उसने दरवाजा बन्द कर लिया था, पर आज उसने बिल्कुल ही दूसरा आचरण किया। वह कुछ दबकर ही बोली—क्या करू ! कुछ मौका ही ऐसा बना। मुझसे इन्कार करते नही बना। कल जलसे की तकरीर के बाद मैं अपने कमरे की तरफ आ रही थी कि वह मुझसे मिला और बोला—रज़िया ••

—मैं चौक पडी, तो वह बोला—मुझे पहचानती नही हो ? दालमण्डी और गुदडी बाजार के नुक्कड पर तुम्हारे मकान मे मै जा चुका हू, तुमसे मिल चुका हू।

—मेरी तो ऐसी हालत हुई कि काटो तो लहू नही। उसने कहा—तुम्हारी तकरीर बहुत अच्छी रही। दिल के एक-एक बन्द खोलकर रख दिए और कली शगुफ्ता हो गई। मुझे नही मालूम था कि तकरीर भी वही असर पैदा कर सकती है, जो मूजिकी। चलो

—मैंने बहुतेरा बहाना किया, पर वह नही माना। मेजबान साहब को बुलाकर उसने कहा—मैं इन्हे अपने घर लिए जाता हू, सब औरतो से मिलाऊगा कि देखो, एक औरत है जो इस्लाम के लिए आसमान और जमीन के कुलाबे मिला रही है, काग्रेस की ईट से ईट बजा रही है और तुम हो कि पर्दे मे रहती हो, दुनिया से कोई मतलब नही, वगैरह-वगैरह।

—मेजबान साहब ने मुस्कराकर कहा—यही तो मैं भी करना चाहता था। अपने घर की औरतो से इन्हे मिलाना चाहता था। पर आप जबर्दस्त हैं, आप पहले ले जाइए।

सियामादेवी कहती जा रही थी—तुम भी कही दिखाई नही पडे। बस मैं उसके साथ चल पडी।

—तुम्हे अपने घर की औरतो से मिलाया ? मैंने तो पता लगाया, उसकी शादी तक नही हुई है।

—कहा औरतो से मिलाया! उसने मुझे एक कमरे मे ले जाकर फौरन कपडे उतारने चाहे, जैसे लोग दालमण्डी मे करते हैं, पर मैंने कहा, भूख-प्यास लगी है।

उसने एक दराज खोलकर उसमे से शराब की एक बोतल निकाली और एक पेग उडेलते और खुद पीते हुए कहा—प्यास बुझा लो, भूख बाद को बुझेगी। नही तो कही मूजिकी का असर बिखर गया, तो फिर सब बदमजा हो जाएगा। —कहकर उसने बिलकुल मेरे साथ वही बर्ताव किया जो नोट देने के बाद लोग दालमण्डी मे करते है। मैंने कहा इस बदमाश से और किसी तरह से तो छुटकारा होना नही है। इसने न खाने दिया न पीने दिया और घर की औरतो के नाम से मुझे यहा पकड लाया। मैं चीखती-चिल्लाती, पर डर यह रहा कि यह मेरा और तुम्हारा

पर्दाफाश न कर दें कि हम कहीं के न रह जाएं।

मुश्ताक को अन्तिम वाक्य बहुत बुरा लगा कि ऐसे बता रही है जैसे मुझपर कोई अहसान किया हो, बोला—तुम मेरी बात जाने दो! आज भी तो तुम उससे हंसकर बोल-बतिया रही थी और उसीकी मोटर में आई, जबकि मेजबान अपनी मोटर दे रहे थे।

—मैं मेजबान साहब की मोटर में इसलिए नहीं आई कि फिर उनको भी आना पड़ता और उन्हें तकलीफ होती। वे किस बुरी तरह रो रहे थे।

मुश्ताक बोला—तुम तो हर काम को किसी-न-किसी अच्छे मकसद से करती हो! यह कहो कि उस बदमाश से तुम मिलना चाहती थी इसीलिए तुमने ऐसा किया, सो नहीं, तुमने दूसरी लन्तरानियां हांकनी शुरू कर दीं!

मुश्ताक को गुस्सा बहुत आ रहा था, पर साथ ही वह एक व्यावहारिक व्यक्ति के नाते यह समझता था कि जो हो गया सो हो गया, अब वह लौट तो सकता नहीं। रजिया से लोग मिलकर ऐसे समझते हैं, जैसे वे हजरत फातिमा से ही मिले, इस बुरी तरह लोग छः-छः घण्टे के परिचय के बाद रोते हैं, पर यह वेश्या है, कुतिया है। यह अपने कुतियापन से बाज नहीं आएगी। एकाएक पूछ बैठा—सिकन्दर हयात के पंजाब में जाने का वह आफर क्या है?

रजिया बोली—वह तो मैंने तुम्हें योंही चिढ़ाने के लिए कह दिया था। असल में मुझे कोई आफर नहीं मिला। मैंने योंही कुछ बातें सुनीं।

—क्या सुना?

—सुना यह कि अब लीग सिकन्दर हयात को पंजाब से खत्म करना चाहती है।

—चाहती तो वह पहले भी थी, पर चुनाव में हार गई, तभी बागी सिकन्दर हयात को अपना बाप बनाना पड़ा, नहीं तो सिकन्दर हयात कब का लीगी है! तुमने क्या सुना?

—यह सुना कि बहुत-से मुल्ले, काजी और हाफिज पंजाब भेजे जा रहे हैं, ताकि गांव-गांव में जाकर मुसलमानों को सिकन्दर हयात के खिलाफ भड़काएं, ताकि अगले चुनाव तक सिकन्दर हयात का पत्ता कट जाए।

—अब अगला चुनाव कहां होता है! अब तो लड़ाई छिड़ गई!—कहकर उसने एकाएक रजिया से पूछा—तुम जेल जाने को तैयार हो?

—जेल क्यो ?

—इसलिए कि कही लीग के अन्दर कम्युनिस्टो का ज़ोर बढ गया और लीग ने लडाई की मुखालिफत का कोई प्रोग्राम अपनाया तो तुम जेल चलोगी ?

—वहा मर्द और औरते एकसाथ रखे जाते है ?

—नही। मर्दो की अलग जेल है, औरतो की अलग है। तुम औरत जेल मे रखी जाओगी।

—कोई मजा नही आएगा !—कहकर वह कुछ सोचती रही, फिर जगले से बाहर मौसम के अन्तिम बादलो की ओर देखती हुई बोली—कोई मज़ा नही आएगा ! अगर तुम साथ रहो तो जेल चल सकती हू।

—मै या अब्दुल्ला ?

—अब्दुल्ला तुम्हारे पैर की जूती !

मुश्ताक ने रजिया के यौवन से तमतमाए शरारत-भरे चेहरे की ओर देखा, पर वह तो के जगले के बाहर बादलो के छौनो को देखने मे व्यस्त थी।

२

द्वितीय महायुद्ध बिना मेघ के वज्रपात की तरह नही था। वातावरण मे इस भूचाल की गूज और सरसराहट बहुत पहले से ही सुनाई पड रही थी। ससार के बाजारो मे इसकी चर्चा थी, फिर भी जब महायुद्ध वाकई ठन गया, तो काग्रेस के सभी नेता एक बार मुह बाकर रह गए। अवश्य आनन्दकुमार ऐसे लोग लडखडाकर फौरन ही सभल गए, पर राजेन्द्र ऐसे लोग जो शुतुरमुर्गी ढग से महायुद्ध के आगमन को टालना चाहते थे, वे नही सभल पाए और बौखलाकर इधर-उधर ऐसे दौडने लगे, जैसे घावोवाला कुत्ता मक्खियो के मारे परेशान होकर खुले आकाश के नीचे अधेरे की खोज मे भागता रहता है।

जिस दिन महायुद्ध छिडा, उस दिन राजेन्द्र फैजाबाद मे अपने ससुर राजा साहब के घर पर था। वह भागकर राजा साहब के पास पहुचा, तो उसे देखकर आश्चर्य हुआ कि वे अपने भविष्य-कर्तव्य के सम्बन्ध मे एक स्पष्ट निर्णय पर पहुच चुके थे। उन्होने छूटते ही अपने स्वर्गीय पिता के विषय मे कहा—१६१४ मे बडे राजा साहब ने अपनी ताल्लुकेदारी से तीन हजार रगरूट भिजवाए थे।

राजेन्द्र अपने ससुर से डरता था। उसने अदब के साथ कहा—पर राजा साहब, वह जमाना और था। भारत ने उस महायुद्ध मे जी भरकर अग्रेजो की मदद की थी, पर क्या हुआ था ! युद्ध समाप्त होते ही रौलट बिल का तोहफा मिला था।

राजा साहब अपने को कभी तर्को या तथ्यो से बधा नही समझते थे और इसीको वे स्वतन्त्र विचार कहते थे। वे पहले से अधिक निश्चय के साथ बोले—जब दुश्मन विपत्ति मे फसा हो, तो उसकी सहायता करनी चाहिए। यही क्षत्रियो का धर्म है।

राजेन्द्र समझ नही पाया कि राजा साहब के ये विचार ईसा के उस विचार मे कि तुम्हारे एक गाल पर कोई थप्पड मारे तो दूसरे गाल को आगे कर दो या बुद्ध के उस विचार से कि अक्रोध से क्रोध को जीतना चाहिए, कहा तक प्रभावित थे, पर राजा साहब ने अपने वक्तव्य को इतने आत्मविश्वास के साथ कहा कि राजेन्द्र सहसा उसे राजा साहब की खामखयाली समझकर टाल नही सका। वह राजा साहब के विचारो को जानने के लिए उतना उत्सुक भी नही था। पर जब उसने विचार सुना, तब साथ ही साथ उसके कानो मे जैसे किसीने कहा—सम्भव है गाधीजी भी इसी ढग से सोचे कि विपत्ति मे फसे हुए दुश्मन पर वार नही करना चाहिए। वह बात करते-करते अन्यमनस्क हो गया।

राजा साहब का सोता जारी हो गया था। वे कह रहे थे—अच्छे शिकारी कभी सोते हुए शेर पर हमला नही करते। उसे जगाकर पूरा मोका देने के बाद तभी उसपर गोली चलाई जाती है।

राजेन्द्र को यह दृष्टात अच्छा नही लगा, अखरा। उसकी जीभ पर आ गया—पर क्या गोली मारना स्वय ही धोखा नही है ? वीरता तो तब होती, जब उससे मल्लयुद्ध किया जाता—पर राजेन्द्र ने जीभ की देहली पर आई हुई वाणी के तीर को धनुषमुक्त नही किया, क्योकि राजा साहब से तर्क करना व्यर्थ था। उसे तो असल मे यह जानने का कौतूहल हो रहा था कि काग्रेस के उच्च नेता क्या सोच रहे हैं, विनोबा क्या सोच रहे है, सुभाष क्या सोच रहे हैं, और सर्वोपरि महात्मा गाधी क्या सोच रहे है। उसने कहा—मैं आज ही काशी जा रहा हू। देखू काग्रेस के नेता क्या कहते है।

राजा साहब को काग्रेस के नेताओ के विचारों से कोई मतलब नही था, यद्यपि

वे गत चुनाव मे विधानसभा के लिए काग्रेसी उम्मीदवार होते-होते रह गए थे और नीचो की खुशामद करके वोट नही मागूगा, इस टेक के कारण उनके दामाद राजेन्द्र को काग्रेसी उम्मीदवार बनने का मौका मिल गया था। उन्होने कहा—काग्रेस के नेता क्या सोचेगे! उनके पास दिमाग कहा है! एक ही आदमी दिमागवाला है, वह है गाधी, और वह क्या सोचेगा यह मै कह सकता हू। वह पक्का शिकारी है, इस नाते वह कभी अग्रेजो को नुकसान पहुचाने की बात नही सोच सकता। प्रथम महायुद्ध मे सरकार के प्रति सेवाओ के कारण उन्हे 'कैसरे-हिन्द' तमगा मिला था, जो तुम्हारे ददिया ससुर राजा साहब को भी मिला था। गाधी के भरती किए हुए रगरूट अभी लडाई मे जा नही पाए थे, कि लडाई ही खत्म हो गई।

राजा साहब ने जो कुछ कहा था, उसमे कोई गलती नही थी। उसमे कोई सन्देह नही कि यदि गाधीजी को अकेले छोड दिया जाए तो वे राजा साहब के ढग पर ही सोचेंगे।

बच्चो को नाना-नानी के पास छोडकर राजेन्द्र अपनी पत्नी सुमित्रा के साथ काशी पहुचा, तो उसे कुछ दूसरा ही रग मिला। सुमित्रा को तो उसने स्टेशन से ही घर भेज दिया था। स्वय आनन्दकुमार के घर पहुचा तो उन्होने कहा—इस विषय पर इतनी आसानी से राय देना सम्भव नही है। काग्रेस लगभग बारह साल से ब्रिटिश सरकार को यह चेतावनी देती रही है कि यदि कोई लडाई छिडी और भारत को उसमे उसकी मर्जी के विरुद्ध घसीटा गया तो भारतवासियो से यह आशा नही करनी चाहिए कि वे ब्रिटिश सरकार को मदद देगे, इसलिए महात्माजी इतनी आसानी से कोई राय नही दे सकते। उनको सोच-समझकर ही कुछ कहना पडेगा। शायद कुछ समय लगे।

और भी लोग आ गए थे। क्रान्तिकारी शहीद महेन्द्र उर्फ यूसुफ की पत्नी श्यामा अपने पुत्र कबीर के साथ आ गई थी। आनन्दकुमार की पत्नी रूपवती भी पास ही मौजूद थी। सब लोग, यहा तक कि घर के नौकर भी यह जानने के लिए व्यग्र थे कि आगे क्या होनेवाला है। महायुद्ध तो पोलैड और यूरोप मे हो रहा था पर सब पढे-लिखे जागरूक भारतीयो मे बहुत अधिक मात्रा मे सनसनी थी। सबको ऐसा प्रतीत हो रहा था कि जिस प्रकार से धरती चल रही थी, उस प्रकार से वह अब आगे नही घूम सकती। कुछ न कुछ होकर ही रहेगा, चाहे कोई चाहे

परिवर्तन या न चाहे।

श्यामा राजेन्द्र की तरह संग्राम से झिझक के कारण नहीं बल्कि इस डर से कि कहीं ऐसा न हो कि महात्माजी संग्राम न छेड़ें, बोली—प्रथम महायुद्ध में तो गांधीजी ने फौज में रंगरूट भरती किए थे, यद्यपि ऐसा अहिंसा की नीति के विरुद्ध था।

आनन्दकुमार को यह सब मालूम था, फिर भी उन्होंने कहा—जो लोग यह समझते हैं कि महात्माजी जैसे पहले थे, हूबहू वैसे ही बने हुए हैं, वे बड़ी गलती पर हैं। परिस्थितियों के साथ-साथ वे बराबर बदलते रहे हैं। उन्होंने १९२२ में चौरीचौरा के हत्याकांड में आन्दोलन बन्द कर दिया था, पर १९३०–३२ में चौरी-चौरा ऐसे कितने ही हत्याकांड हुए पर उन्होंने आन्दोलन नहीं बन्द किया। ज्यों-ज्यों उनकी सामग्री मोटी पड़ती गई, वे रणनीति भी बदलते रहे हैं। फिर वे केवल एक व्यक्ति नहीं हैं, उन्हें एक संगठन को साथ में ले चलना है जो अपने नियमों, वक्तव्यों और प्रस्तावों से बंधा हुआ है। और केवल प्रस्तावों की बात नहीं है, यह भी देखना है कि स्वतन्त्रता का लक्ष्य किस नीति को कार्यान्वित करने से प्राप्त होगा।

किशोर कबीर भी बड़े ध्यान से सबकी बातें सुन रहा था। उसका अस्तित्व किसीको मालूम नहीं था, पर वह एकाएक रंगमंच को अपने हाथों में लेते हुए बोला—मैं लड़ूंगा… अंग्रेजों से लड़ूंगा। अंग्रेजों ने मेरे पिता को फांसी पर चढ़ाया था।

सब लोग हंस पड़े, पर आनन्दकुमार ने कबीर को अपनी गोद में घसीटते हुए कहा—कबीर ने जो बात कही है, वह हंसी में उड़ा देने की नहीं है। इस बीच ब्रिटिश सरकार और हममें बड़ा तीव्र संघर्ष हुआ है। हजारों घर उजड़े हैं। एक पूरा इतिहास बन चुका है। उसकी हम अवज्ञा नहीं कर सकते। जब गांधीजी प्रथम महायुद्ध के लिए रंगरूट भरती कर रहे थे, तब तक भारत और ब्रिटेन का सम्बन्ध इतना कड़वा नहीं हुआ था। बाद को 'जलियांवाला' हुआ। वहीं से…।

राजेन्द्र एकाएक अप्रासंगिक रूप से बोल उठा—नेहरू को भी तो इसी समय चीन में पड़े रहना था! देश को इस समय सुभाष बोस ऐसे गैर-जिम्मेदार वाम-पंथियों से बचाने के लिए नेहरू का भारत में फौरन वापस आना जरूरी है। चीन में क्या हो रहा है, क्या नहीं हो रहा है, इससे हमें कोई मतलब नहीं।

इसपर आनन्दकुमार, जो कभी अपने लहजे मे रोष आने नही देते थे, कुछ रुष्ट लहजे मे बोले—अब महायुद्ध छिड गया, अब भी यह कहोगे कि हम अलग-थलग रहे। अब तो भारत और ससार एक ही चक्की के पाट मे आ चुका है। जवाहरलाल आते ही होगे। सुभाष बोस को गैर-जिम्मेदार कहना कहा तक उचित है, मै नही जानता। महात्माजी एक हद तक शायद ऐसे ही समझते हो, पर इतिहास किसे क्या कहता है, यह देखना है। जवाहरलाल के आने पर कुछ विशेष निर्भर नही करता क्योकि नेता गाधीजी ही है और वही देश को जैसे चलाना चाहेगे, देश वैसे चलेगा। वे अपने इस कार्य मे जवाहर का भी इस्तेमाल कर लेगे और सुभाष का भी, एक को जिम्मेदार कहकर और एक को गैर-जिम्मेदार कहकर।

राजेन्द्र इसपर जिद करते हुए बोला—मै तो देश की स्थिति मे जवाहरलाल की चुगकिग-यात्रा से ही मतभेद रखता हू। चीन स्वतन्त्र है, हमे स्वतन्त्र होना है। हमसे उनका क्या सम्बन्ध है ?

आनन्दकुमार ने पहले की तरह जोश-भरी आवाज मे कहा—जवाहरलाल का वहा जाना कुछ दृष्टियो से उचित था। चीन स्वतन्त्र होने पर भी उसकी स्वतन्त्रता नाम-मात्र को थी, क्योकि वह साम्राज्यवादी शक्तियो के चक्रव्यूह मे कैद था। मार्शल च्याग-काई-शेक के नेतृत्व मे चीन इस चक्रव्यूह से अपना छुटकारा कर रहा है। इसलिए चीन और भारत की लडाई एक ही है। दोनो देश प्राचीनकाल से सभ्य है, इस नाते भी उनमे एका तथा एकता-बोध होना बहुत आवश्यक है। जवाहरलाल आते ही होगे, पर जैसाकि मैने कहा कि एक महात्मा ही असली पथप्रदर्शक और नेता है, बाकी तो गोटे है। महात्मा माने भारत की जनता '

देर तक लोगो मे आलोचना होती रही। राजेन्द्र अपने को किसीसे कम गरम नही दिखाना चाहता था। इसलिए उसने एक अजीबो-गरीब कार्यक्रम सामने रखा, जो अभी दिमाग मे आया था, बोला—ग्यारह प्रान्तो मे इस समय प्रान्तीय स्वायत्त-शासन है। ग्यारह प्रान्तो की सरकारें पहले की तरह चालू रहे। वे अपने यहा किसी प्रकार भरती या युद्ध की तैयारी-सम्बन्धी कार्यक्रम न होने दे। फिर यदि भारत सरकार से उनका विरोध हो, तो उनके मन्त्रिमण्डल गिरफ्तार हो जाए, वह ज्यादा अच्छा रहेगा।

श्यामा जानती थी कि राजेन्द्र के असली विचार कुछ और है। वह तो योही उडान भर रहा है, बोली—पर हर प्रान्त मे एक गवर्नर भी तो है, जो लडाई छिडते ही रग बदलकर दूसरा व्यक्ति हो गया होगा। वह हर बात मे अडगा लगाएगा। इसके अलावा तो भारत सरकार सीधे-सीधे व्हाइट-हाल के हाथो मे है।

आनन्दकुमार ने कहा—इसके अतिरिक्त लीगी सरकारे भी तो है। वे भला हमारा साथ कब देने लगी! यदि वे साथ देती, तो बहुत कुछ हो सकता था।

जब राजेन्द्र खाना खाकर बहुत रात मे आनन्दकुमार के घर से गया, तो वह समझ चुका था कि कुछ-न-कुछ होकर रहेगा, पर क्या होगा, कैसे होगा, यह उसकी समझ मे नही आ रहा था। मन के कोने मे कुछ काली रेखाएं उभर रही थी। वह एक तरफ तो चाहता था कि काग्रेसी मन्त्रिमण्डल आदि इस्तीफा दे दे क्योकि उसे मन्त्री या ससदीय सचिव होने का मौका नही मिला था। दूसरी तरफ वह जेल-खाना, लाठी-चार्ज, गोलीकाड, इनसे भी बचना चाहता था। इसीलिए वह सबसे दु खी और दुविधाग्रस्त व्यक्ति था।

उसने यो आनन्दकुमार के घर से सुमित्रा को टेलीफोन कर दिया था कि मैं खाना यही खाऊगा, पर जब वह घर पहुचा तो सुमित्रा ने फिर भी मिठाइयो की तश्तरी सामने रखते हुए कहा—सासजी मानी ही नही, दो-एक मिठाई खा लो।

पर राजेन्द्र ने तश्तरी की तरफ देखा भी नही, बोला—पेट बहुत भरा है। उन लोगो ने बहुत खिला दिया। मुझे कतई खाने की इच्छा नही हो रही है।—कहकर उसने पखा तेज कर दिया और कपडे बदलकर सोने को हुआ।

पर सुमित्रा, जो इस समय पुष्पो के हारो से लदकर फूलो की रानी बनी हुई थी, उसके बिस्तरे पर बैठते हुए आक्रामक ढग से बोली—पता नही कब क्या हो जाए! मै तो आज तुमसे रात-भर बाते करूगी।

राजेन्द्र को पहली बार फूलो की भीनी-भीनी महक का ज्ञान हुआ। उसने सुमित्रा की तरफ उसी तरह देखा जैसे कोई ललकती हुई ऐसी बच्ची को देखता है जो कोई बेजा माग कर रही हो, और कहा—तुम तो खुश हो रही होगी कि तुम्हे फिर से जेल जाने का मौका मिलेगा। तुम यह नही सोचती हो कि बच्चो का क्या होगा, देश का क्या होगा, ससार का क्या होगा! तुमने तो जेल जाने को एक तावीज़ की तरह अपना लिया है। तुम उसकी भलाई-बुराई सोचने मे सर्वथ

असमर्थ हो।

राजेन्द्र यह बात इस ढग से कहना नही चाहता था क्योकि इसके पीछे सुमित्रा के जीवन की एक बहुत ही हृदयविदारक घटना का सम्बन्ध था, जिसे भुला देने मे ही भलाई थी। पर राजेन्द्र को मालूम था कि वह उस घटना को एक क्षण के लिए भी भूली नही है। जब विगत आन्दोलन के समय सुमित्रा जेल मे थी, तो उसके बच्चे को डिप्थीरिया हो गया था। बच्चा हर मिनट निश्चित मृत्यु की ओर जा रहा था। सुमित्रा जो अपने पिता राजा साहब के यहा बडे लाड-प्यार से पली थी और नौकरानियो की आदी थी, इस भयकर विपत्ति से अकेली जूझती रही। जेल के डाक्टर ने जो इलाज किया, वह यथेष्ट नही था, बल्कि वह कोई इलाज ही नही था। उसी मानसिक स्थिति मे जेलर ने उसके सामने एक कागज़ रख दिया जो पैरोल की दरख्वास्त थी, और उसने उसपर दस्तखत कर दिया था। वह घण्टे, दो घण्टे मे छोड दी गई थी, पर बच्चा तो इस बीच मर चुका था। जब बाद को सुमित्रा पर यह राज खुला कि वह पैरोल पर छूटी है, तो वह तो दुखी हुई ही, राजा साहब भी, जो जेल जाना बहुत ही नीच कर्म समझते थे, दुखी हुए। उन्होने अपने विशेष प्रभाव से सरकार को इसके लिए तैयार किया कि सुमित्रा की इस दरख्वास्त के बावजूद सरकार यह मान ले कि उसने पैरोल तोड दिया। नतीजा यह हुआ कि सुमित्रा बाकी सज़ा काटने के लिए जेल भेजी गई और उसने सज़ा काटी।

फिर भी सुमित्रा के मन मे बराबर धोखे मे पैरोल की अर्जी पर हस्ताक्षर करने की ग्लानि बनी रहती थी। वह इसीलिए जब-तब आनन्दकुमार से पूछती रहती थी कि जेल जाने का मौका फिर कब लगेगा। राजेन्द्र ने इस पृष्ठभूमि को सोचकर कहा—तुमपर तो झक सवार है, तुम्हे इसकी कोई फिक्र नही कि बच्चो का क्या होगा, देश का क्या होगा, ससार का क्या होगा!

सुमित्रा ने राजेन्द्र को अपनी बडी-बडी कजरारी मासूम आँखो से देखा। राजेन्द्र को लगा जैसे फूलो की गन्ध एकाएक बहुत तीव्र होकर उसकी आत्मा को छूकर पुचकारने लगी। सुमित्रा बोली—कैसे नही फिक्र है! फिक्र है, तभी तो मैं फूलो की रानी बनकर सामने आई हू। राजा साहब तो कहते थे कि इस महायुद्ध मे चप्पा-चप्पा जमीन के लिए लडाई होगी। पता नही कौन जीवित रहेगा और कौन नही।—कहकर उसने राजेन्द्र को एक तरह से बलपूर्वक अपनी तरफ घसीट लिया

और फिर मिठाई की तश्तरी सामने रखकर बोली—तुम्हे आनन्दकुमारजी ने क्या खिलाया होगा, वे तो सन्त आदमी है, वे खाने-खिलाने का क्या जाने ! इन मिठाइयो को खाओ जिनके पीछे शताब्दियो की सस्कृति है।

राजेन्द्र पहले तो झेप गया, फिर हस पडा। फिर मजबूरी से एक मिठाई उठा ली।

खाते-खाते उसे खयाल आया, ठीक तो है, क्यो ज्यादा फिक्र की जाए ! फिक्र करने से क्या होता है ! मैं फैजाबाद से दौडकर यहा आया कि शायद यहा लोगो को स्थिति का कुछ मालूम हो, पर सभी अधेरे मे ढेले मार रहे थे। भविष्य बिलकुल अनिश्चित था। राजा साहब का खयाल शायद ठीक था कि चप्पा-चप्पा ज़मीन के लिए घमासान लडाई होगी। कुछ सोचने की ज़रूरत नही है।

उसने एक मिठाई ली और उसे सुमित्रा के मुह मे ठूस दिया। सुमित्रा की सास करीब-करीब रुक गई, उसी हालत मे राजेन्द्र ने फूलो की रानी बनी हुई सुमित्रा को अपने आलिगन मे कसकर बाप लिया। बोला—कितनी मिठाई खाओगी, खाओ ! अब सास क्यो रुक रही है ? · ··

३

दिवाकर ने एलिस को पत्नी के रूप मे पाने की आशा त्याग दी थी। पर जब वह अपने वादे के अनुसार विलायत से मेम से शादी करके भारत लौटने मे असमर्थ रहा, तो उसने लोगो से कह दिया था कि उसकी मगेतर कम्युनिस्ट बन चुकी है। ऐसा तो उसने लोगो से कहा, फिर भी उसने एलिस से पत्र-व्यवहार जारी रखा।

विलायत मे पत्र भेजना और विलायत से पत्र पाना, यह भी एक गुलाम-तबीयत भारतीय अफसर के लिए प्रेस्टीज का एक सूत्र था। उसने भारत से एलिस को लिखा—यह बहुत ही दु ख की बात है कि आखिर महायुद्ध छिड ही गया। ब्रिटिश कूटनीति ने हिटलर को शाति की रक्षा के लिए हद से ज्यादा तरह दी, पर रूस ने इसमे सहयोग नही दिया, इसलिए यह लडाई छिडी। सबसे खतरनाक बात यह है कि हमारे देशवासी इस युद्ध के महत्त्व को नही समझ रहे है और मै यह शरम के साथ लिख रहा हू कि भारत मे इस समय प्रत्येक बच्चा-बच्चा जर्मनी की जीत चाहता है। उन्हे यह नही मालूम है कि हिटलर भारतीयो के सम्बन्ध मे क्या

मत रखता है । वे तो इसीमे फूले नही समाते कि हिटलर आर्य-प्रधानता मे विश्वास करता है, पर वे यह नही जानते कि हिटलर के अनुसार भारतीय यदि आर्य है भी तो बहुत निम्नकोटि के । खैरियत यह है कि भारत का नेतृत्व एक ऐसे व्यक्ति के हाथ मे है जो अहिसा मे विश्वास करता है और वह ब्रिटेन को दुश्मन मानते हुए भी सकट के समय उसके विरुद्ध सत्याग्रह या अन्य किसी प्रकार की सामूहिक कार्यवाही करने के पक्ष मे नही है । काग्रेस मन्त्रिमण्डलो ने इस्तीफा दे दिया, पर यह एक तरह से अच्छा ही हुआ, क्योकि यदि ये मन्त्रिमण्डल बने ही रहते, तो ख्वामख्वाह गवर्नर और मन्त्रिमण्डल मे विरोध होता, इससे यह अच्छा ही हुआ कि विरोध की जड ही कट गई । सुना है कि जर्मन, इटाल्यिन और ससार की दूसरी कई भाषाओ के अखबारो मे मन्त्रिमण्डलो के इस्तीफे को बहुत बढा-चढाकर लिखा गया है, पर यह सब कल्पना-मात्र है । अव्वल तो काग्रेसी मन्त्रिमण्डलो के हाथो मे कोई आधारभूत शक्ति थी ही नही, इसलिए उन्हे केवल भारतीयो को बहलाने के लिए मन्त्रिमण्डल कहा गया था, इसलिए उनका इस्तीफा देना न देना बराबर ही रहा । मुझे आश्चर्य है कि कुछ ब्रिटिश अखबारो ने भी इस खबर को महत्त्वपूर्ण ढग से छापा, पर अधिकतर ब्रिटिश अखबारो ने इसपर रोष ही प्रकट किया, यह उचित ही है ।

भारत को स्वतन्त्रता दी जाए या न दी जाए, कब दी जाए, कितनी दी जाए, यह भीतरी प्रश्न है, और जब शत्रु दरवाज़े पर खडा है, उस समय इस आपसी प्रश्न को इस तेज़ी के साथ उठाना कि आपसी विरोध पैदा हो और जगहसाई हो, कोई अच्छी बात नही कही जा सकती । शायद तुम्हे नही मालूम इसलिए मै तुम्हे और तुम्हारे दोस्तो की जानकारी के लिए लिख रहा हू कि १९१४–१८ के महायुद्ध मे गाधी ब्रिटिश फौज मे रगरूट भरती करने मे लगे हुए थे । कुछ भी कहा जाए यह आदमी बहुत सरल है । यदि वामपथी इस व्यक्ति की सरलता का फायदा न उठा पाए, तो यह निश्चित है कि मन्त्रिमण्डलो का इस्तीफा हो जाने पर भी यह व्यक्ति काग्रेस को भरसक ऐसा कुछ नही करने देगा, जिससे युद्ध-प्रयास मे किसी प्रकार बाधा पहुचे ।

यह बहुत ही हास्यास्पद है कि व्यक्ति तो व्यक्ति, राष्ट्र भी कई बार अपने सही दोस्त और दुश्मन नही पहचान पाते । भारतीय जनता यह समझ रही है कि हिटलर अग्रेजो को हराकर उन्हे स्वतन्त्रता देगा । पर यह सत्य से कहीं दूर है ।

गाधी बहुत जागरूक जननेता इस अर्थ मे है कि वे जनता के हृदय के हर स्पन्दन को अच्छी तरह समझते है, पर इस मामले मे वे भी जनता के बहाव के विरुद्ध जा रहे हे। यह बहुत ही सुख की बात है। पर काग्रेस के अन्दर इस समय ऐसे लोगो का ज़ोर हे, जो सौदेबाजी पर आमादा है। सौदेबाज़ी कोई बुरी चीज नही है, पर कैसा अवसर है, वह कितना खतरनाक और पवित्र है, यह भी तो नही भूलना चाहिए।

गाधी तो इग्लैण्ड को सकट मे फसा देखकर कोई कडी कार्रवाई करना नही चाहते, पर आई० सी० एस० से निकाले हुए सुभाषचन्द्र बोस और असफल बैरि-स्टर जवाहरलाल नेहरू चाहते है कि जेल आदि जाने का कोई अडगावादी कार्य-क्रम बनाया जाए। ये लोग तो जेल मे सुरक्षित होकर बैठ जाएगे और मामूली लोग लाठियो और गोलियो के शिकार होगे। खैर, अभी बुड्ढे गाधी के सामने इन लोगो की नही चल रही हे, इस कारण काग्रेस की कार्यसमिति ने एक बीच का रास्ता निकाला हे, वह यह कि एक युद्ध-समिति बनाई गई है, जिसके प्रधान जवाहरलाल बनाए गए हे। इस समिति पर यह भार है कि वह परिस्थिति के अनुसार नीति की दिशा बतलाए।

इसका अर्थ यह है कि जल्दी कुछ होने नही जा रहा हे। मुझे ऐसा लगता है कि फिर भी इन नेताओ को गिरफ्तार कर लेना चाहिए, क्योकि ये किसी भी समय कुछ भी निर्णय कर सकते है और उसके कारण युद्ध-प्रयास को हानि पहुच सकती है। इस समय सबसे बडा कार्य यह है कि हिटलर के विरुद्ध युद्ध को सफल बनाया जाए, क्योकि हिटलर मानव-सभ्यता के लिए बहुत बडा खतरा है। उसे तरह दी गई, और इस कारण तरह दी गई कि वह कुछ तो समझदारी दिखलाएगा, पर वह तो रूस के मायाजाल मे फस गया और वह वही कर बैठा, जो उसे करना नही चाहिए था। ऐसे लोग है, जो इस कारण ब्रिटिश कूटनीति को दोष देते है कि उसने इतने सालो तक हिटलर को तरह क्यो दी, पर मैं समझता हू कि इस सम्बन्ध मे जो जोखिम उठाया गया, वह उचित ही था।

हर बडे काम मे जोखिम होता हे और जोखिम होने का अर्थ ही यह है कि उस कार्य को करते हुए हानि भी हो सकती है। ससार का दुर्भाग्य है कि हिटलर ने बजाय रूस पर हमला करने के मित्रपक्ष पर हमला किया। परिणाम देखकर किसी कार्य के सम्बन्ध मे यह निर्णय करना कि वह गलत था, कोई अच्छा तरीका

नही कहा जा सकता। इस सम्बन्ध मे यही महत्त्वपूर्ण है कि रूस पर हमला करने की कुछ सम्भावना थी।

तुम मुझसे कहा तक सहमत होगी, इसमे मुझे अवश्य सन्देह है क्योकि तुम शायद साम्यवाद को ससार के लिए उतना खतरनाक नही समझती हो, जितना ब्रिटिश कूटनीति मे समझा जाता है।

मैं लन्दन से कुछ जल्दी मे ही चला आया, इसका कारण यह था कि देर करने पर लौटने की सम्भावना कम हो जाती। अवश्य, अभी इटली ने युद्ध-घोषणा नही की। वह धूर्त सियार मुसोलिनी अभी घटनाओ की परख कर रहा था। वह यही सोच रहा होगा कि फ्रास की नौसेना तथा ब्रिटेन की नौसेना के मुकाबले मे वह भूमध्यसागर मे कुछ हिल-डुल भी सकता है कि नही ! हमारी नौसेना की शक्ति का तो सारे ससार को पता ही है पर ऐडमिरल दारला के सुयोग्य नेतृत्व मे फ्रैंच नौसेना इतनी तगडी बन चुकी है, जितनी कि वह कभी नही थी। यह सब जानते हुए भी मै जल्दी इस कारण भाग आया कि इटली कुछ तो नुकसान पहुचा ही सकता है, और क्या पता कि वह जो एक प्रतिशत नुकसान पहुचा सकता है, वह मुझको ही पहुचे।

इसके अलावा मुझे यहा बहुत-से काम करने है। जैसे तुम तथा अन्य हजारो बल्कि लाखो व्यक्ति इस महायज्ञ मे हाथ बटाने के लिए उत्सुक है, उसी प्रकार मै भी उत्सुक हू। हमारे देश की जनता बहुत ही सरल और श्रद्धालु है, अग्रेजो मे उसकी सहज श्रद्धा है क्योकि आज भारत मे जो कुछ भी भला है, जो कुछ भी सुरुचिसम्पन्न है जो कुछ भी उदात्त है, वह सब अग्रेज और अग्रेजी के ही कारण है। हमारे नेता, जो अग्रेजो के दुश्मन बनते है, वे भी मन मे इस सत्य को समझते है, पर ऊपर से कुछ और कहते है। इस समय जनता गुमराह हो रही है। पर वह दूसरी बात है।

मै शायद कुछ अधिक लिख गया। पर मैने यह सब इसलिए लिखा ताकि यह स्पष्ट हो जाए कि हममे और सम्बन्ध चाहे कुछ भी हो या न हो, एक लक्ष्य के लिए जूझने, और यदि आवश्यकता पडी तो उसके लिए जीवनदान करने के लिए हम दोनो तैयार है। यह कितनी खुशी की बात है कि हम एक ही मोर्चे पर लड रहे है, यद्यपि हम एक-दूसरे से छ हजार मील दूर है। तुम्हारे लिए शायद यह विचार महत्त्व न रखता हो, पर विश्वास रखो एलिस, मेरे लिए यह विचार कि

हम सहयोद्धा है, बहुत महत्त्व रखता है। और मै क्या लिखू ! कुछ समझ मे नही आता।

सप्रेम तुम्हारा,
दिवाकर

पुनश्च—पत्र लिखने के बाद एक बात खयाल आई, वह यह कि तुमने अन्तिम भेट के दिन यह कहा था—स्तालिन और हिटलर का यह गठबन्धन महज़ सुविधा की दृष्टि से हुआ और स्तालिन असल मे इंग्लैण्ड तथा फ्रास के साथ मोर्चा बनाकर हिटलर से लोहा लेना चाहता था। यदि यही बाते है, तो अब स्तालिन के लिए मौका है कि वह पीछे से हिटलर पर टूट पड़े। यदि स्तालिन ऐसा करे, तो बहुत जल्दी वारा-न्यारा हो जाए और हिटलर की लाश बाल्टिक समुद्र पर तरती हुई दिखाई पड़े। अवश्य यह कहा जा सकता है कि जो तमाशा ब्रिटिश और फ्रैच कूटनीतिज्ञ हिटलर से कराना चाहते थे, स्तालिन अब उसका उलटा तमाशा यानी उनकी भाषा मे कहू तो पूजीवाद के विरुद्ध अन्तिम युद्ध होते देखकर क्यो हस्तक्षेप करेगा ! मैं ये बाते इसलिए लिख रहा हू कि तुम 'सोवियत-नात्सी पैक्ट' पर पुनर्विचार करो। अवश्य हम सहयोद्धा है, इस नाते इससे कुछ व्यावहारिक फर्क नही आता कि 'सोवियत-नात्सी पैक्ट' के लिए कौन जिम्मेदार है और कौन नही। पर जैसाकि तुम मानोगी कि अन्ततोगत्वा इस प्रश्न का महत्त्व बहुत अधिक है, इतिहास की दृष्टि से भी और व्यावहारिक परिणामो की दृष्टि से भी। मैं यह मानता हू कि स्तालिन ही इस युद्ध के लिए जिम्मेदार है। यदि वह हिटलर से पैक्ट करके उसे पूर्वी मोर्चे के सम्बन्ध मे अभयदान न देता, तो हिटलर चाहे जितना उद्दण्ड और पागल बने, पोलैण्ड पर नही कूद सकता था।

तुम्हारा सहयोद्धा,
दिवाकर

दिवाकर ने यह पत्र लिखा, फिर उसके हर वाक्य और शब्द को एक आई० सी० एस० अफसर की दृष्टि से तौलता रहा। कही कोई शब्द ऐसा तो नही है जिससे कोई और अर्थ निकलता हो ? उसे निश्चय था कि लिफाफे पर स्पष्ट रूप से दिवाकर आई० सी० एस० इत्यादि होने पर भी यह पत्र गुप्तचर विभाग के द्वारा पढा जाएगा। दिवाकर ने पत्र को एक बार तो अपनी दृष्टि से पढ़ा, फिर यह सोचकर पढा कि उसके पिता मि० प्रसाद आई० सी० एस० उसे पढ रहे है।

योही वह अपने सफल पिता के अत्यधिक प्रभाव मे था, पर उसने अब अपने चेहरे पर पिता के चेहरे को सुपरइम्पोज कर दिया, जैसे छापते समय एक ब्लाक पर दूसरा ब्लाक छापा जाता है, फिर उसने एक-एक शब्द को तौला। उसे खुशी हुई कि जो कुछ उसने लिखा उसमे कही कुछ सशोधन करने की आवश्यकता नही है। उसने ब्रिटिश कूटनीति की प्रशसा की थी, यद्यपि वह सोलहो आने असफल हो चुकी थी, क्योकि उस नीति के कारण एक के बाद आस्ट्रिया, चेकोस्लोवाकिया और अब पोलैण्ड की दिन-दहाडे नृशस हत्या हुई थी। उसने फासिस्टवाद की निंदा की थी, पर उस प्रकार से नही, जैसे सयुक्त मोर्चावादी करते रहे है, क्योकि उसने फासिस्टवाद की निन्दा के साथ-साथ सोवियत रूस की भी निन्दा की थी। पुनश्च लिखा ही इस उद्देश्य से गया था कि कही कोई गलतफहमी न रह जाए, कही सेंसर के मन मे यह सन्देह न उत्पन्न हो कि उसके हृदय के किसी भीतरी प्रकोष्ठ मे भी साम्यवाद के प्रति लेश-मात्र सहानुभूति है। यो तो ब्रिटिश कूटनीति की प्रशसा मे ही साम्यवाद के प्रति घृणा अभिव्यक्त हो गई थी, फिर भी उसे पुनश्च के द्वारा उभारकर सामने रख देना अच्छा रहा। क्या पता सेंसर कोई लालबुझक्कड ही हो और उसे हानि पहुचाने पर तुला हुआ हो।

पत्र को तीसरी बार पढकर वह बहुत सन्तुष्ट हुआ कि कही एक भी अर्ध-विराम-चिह्न बदलना नही पडा। राजनीतिक दृष्टि से तो पत्र ठीक रहा ही, इसके अतिरिक्त हृदयगत मामलो की दृष्टि से भी यह पत्र ठीक रहा, क्योकि एलिस से सम्बन्ध लगभग टूट जाने पर भी उसने उच्चतर आयाम मे एक ऐसा सम्बन्ध ढूढ रखा था, जो एलिस ऐसी भावुक तरुणी पर प्रभाव उत्पन्न करने मे समर्थ होगा, ऐसी आशा थी।

उसने जान-बूझकर एलिस की बीमार मा श्रीमती टामस के सम्बन्ध मे कुछ नही लिखा। यह तो वह चाहता ही था कि पत्र वैयक्तिक सम्बन्धो से उच्चतर सतह पर हो। वह यह दिखलाना चाहता था कि व्यक्ति इस विराट उथल-पुथल मे लुप्त हो चुका है या यो कहना चाहिए कि वह महासिन्धु के सतत ताडित-प्रताडित जलबिन्दु के रूप मे हो चुका है। वहा एक बिन्दु दूसरे बिन्दु से भले ही कभी सवाद का आदान-प्रदान कर ले, पर तीसरे बिन्दु का उसमे कोई स्थान नही है।

४

हिटलर पैरो के नीचे घास जमने देने मे विश्वास नही करता था। वह जब कोई कार्यक्रम निश्चित करता था तो वह पहाड पर से तुषार की अति विराट सिल्ली की तरह उतरता था। उसने पहली सितम्बर को पोलैण्ड पर हमला बोल दिया। कथित मित्रपक्ष तो दो दिन तक मुह ताकते ही रह गए। नात्सी सेना साइलीसिया से वारसा की तरफ बढी, तो दिन मे तीस मील की रफ्तार से बढती चली गई। जब तक इग्लैण्ड और फास अच्छी तरह सभल पाए, तब तक हिटलर ने पोलैण्ड पर अधिकार कर लिया था।

इस बीच ८ तारीख को ससारप्रसिद्ध पोलिश पियानोवादक और भूतपूर्व राजनीतिक नेता मोशिये पादरेवस्की ने स्विट्जरलैण्ड से महात्मा गाधी को एक तार भेजा जिसमे यह अनुरोध किया कि आप पोलैण्ड के लिए भारत की सहानुभूति तथा मित्रता का प्रदर्शन करे। यह खबर जब अगले दिन आनन्दकुमार जैसे लोगो को मालूम हुई तो सबने यही कहा कि भारत की अजीब स्थिति हो गई है। ब्रिटेन हमे इतने दिनो तक अपने बूट के नीचे रौदता रहा है, इस नाते भारतीयो की सहज सहानुभूति हिटलर से है, पर कोई भी भारतीय यह नही चाहता कि पोलैण्ड की स्वतन्त्रता नष्ट हो या उसपर जर्मनी का अधिकार हो।

आनन्दकुमार ने किसी और से नही, पर श्यामा से यह बात कही—बुद्धिमान भारतीयो की बात और है, पर साधारण जनता के लिए भावुकता के क्षेत्र मे बडा भारी सकट उपस्थित हो गया है। युद्ध केवल हिटलर-बनाम-ब्रिटेन नही है, बल्कि युद्ध हिटलर-बनाम-चेकोस्लोवाकिया, हिटलर-बनाम-पोलैण्ड, हिटलर-बनाम—बाकी सारा ससार है। पर जिसको जो दुख तात्कालिक रूप से अखरता है, वह उसी को ज्यादा समझता है। उसके सामने बाकी प्रश्न गौण हो जाते है। जिसका पैर पत्थर के नीचे दब गया है, वह पहले पत्थर को हटाकर उस पैर को निकालने की चेष्टा करेगा, न कि और कुछ। सबसे बडा सकट वही है जो अपने ऊपर है, इस नाते साधारण जनता के लोग न पोलैण्ड को देखेगे, न पादरेवस्की की करुण पुकार सुनेगे, बल्कि हिटलर जिस तरह पोलैण्ड को रौदता हुआ निकल रहा है, उससे बहुतो के मन मे खुशी ही होगी, क्योकि वे समझेगे कि हिटलर मे ब्रिटेन को रौदने की क्षमता है। देखा जाए कार्यसमिति क्या करती है।

पर कार्यसमिति ने कुछ नही किया। वर्धा मे छ घण्टे तक बैठक होती रही। उसे पूर्ण रूप से राष्ट्रीय बनाने के लिएँ उसमे सुभाष और जयप्रकाश भी बुलाए गए थे। उसी दिन 'हरिजन' मे सुभाष के विषय मे महात्मा गाधी ने एक लेख भी लिखा था, जिसमे यह कहा गया था—सुभाषचन्द्र बोस को कार्यसमिति के कार्य के विरुद्ध आन्दोलन करने और जनमत को आकृष्ट करने का पूरा अधिकार है। अशोभन ढग का जो शत्रुतापूर्ण प्रदर्शन इस अवसर पर हुआ, उसमे काग्रेस की साख मे वृद्धि नही हुई और भोडी असहिष्णुता का परिचय मिला।

जब कार्यसमिति की बैठक बिना किसी निर्णय पर पहुचे समाप्त हो गई, तो यही बताया गया कि युद्ध छिड जाने के बाद वाइसराय महोदय ने गाधीजी तथा अणे से जो बातचीत की, उसका ब्योरा समिति के सदस्यो को सुनाया गया।

अगले दिन फिर बैठक हुई, पर उसमे भी कोई निर्णय नही हो सका। यह सब पढकर श्यामा बहुत रुष्ट हुई कि इस समय देश को स्पष्ट और साहसी नेतृत्व की जरूरत थी, पर नेता इसकी बजाय बगले झाक रहे है।

आनन्दकुमार ने उसी बात को दुहराया, जिसे उन्होने पादरेवस्की की अपील पढकर कहा था—निर्णय करना कोई हसी-खेल नही है। हम निर्णय तभी कर पाते है, जब हमारे हृदय का रक्त एक ही ताल से एक ही दिशा मे प्रवाहित होता है। जब अलग अलग ग्रन्थिया रक्त मे अलग-अलग शराब डालती है, तो हम घबडाते है, पैर फटफटाते हैं, इधर-उधर दौडते है, पर कोई निश्चित कदम नही उठा पाते।

श्यामा रुष्ट होकर बोली—आप लोग तो चाचाजी बस लम्बे-लम्बे कारण बताते है! इस बीच बहुत कीमती समय नष्ट हुआ जा रहा है, यह नही देखते। पोलैण्ड तो खत्म हो गया, यदि कुछ बाकी है तो वह भी हो जाएगा, हमे भी तो कुछ करना चाहिए।

—क्या करना चाहिए, जब यही नही मालूम हो रहा है, तो फिर ख्वामख्वाह कैसे कुछ किया जाए? यदि हम इस समय ब्रिटिश सत्ता के विरुद्ध कोई आन्दोलन छेडते है, तो वह अन्ततोगत्वा हिटलर के पक्ष मे जाता है, पर यदि हम कुछ भी नही करते, तो स्वतन्त्रता-सग्राम का एक बहुत अच्छा मौका हाथ से निकल जाता है। इसी दुविधा के कारण हमारा नेतृत्व कोई ठोस कदम उठा नही पा रहा है। कर्तव्य के निर्णय मे कुछ समय लगेगा, क्योकि कदम ऐसे उठाना चाहिए कि फिर रुक न जाए और ससार के इतिहास के सामने जवाबदेही की जा सके।

श्यामा इसका कोई सुनिश्चित उत्तर न दे सकी। वह बस बार-बार यही कहती रही—हमे तो अपना सग्राम चालू रखना चाहिए। जब अग्रेजो ने हमारे साथ कोई रियायत नही की, तो हमे उनकी बात नही सोचनी चाहिए।

आनन्दकुमार ने कहा—उनकी बात नही, हमे तो अपनी बात ही सोचनी है, और चूकि हम अब अपनी बात को दूसरो की बात से अलग करके नही सोच सकते, इस कारण हमे सारी बातो पर विचार कर लेना पडेगा। मान लो, लडाई का फायदा उठाकर हमने स्वतन्त्रता प्राप्त कर ली, पर दो महीनो के अन्दर जर्मनी या जापान आकर हमपर अधिकार कर ले, वह कोई अच्छी स्थिति नही होगी।

परिस्थिति धीरे-धीरे स्पष्ट हो गई थी यद्यपि उस स्पष्टता मे भी अस्पष्टता बनी रही। ६ सितम्बर को जवाहरलाल भारत लौट आए थे, पर उन्होने कलकत्ता मे केवल इतना ही कहा था कि मुझे अपनी डेढ ईंट की मस्जिद से आवाज नही उठानी चाहिए। सारे भारत को इस समय एक स्वर से बोलना चाहिए। इसी प्रकार कार्यसमिति भी दो दिन तक तक वर्धा मे मिलती रही, पर वह किसी नतीजे पर नही पहुच सकी। गाधीजी का एक लेख प्रकाशित हुआ, जिसमे इसी दुविधा का परिचय मिला। किसीने गाधीजी को यह लिखा था कि आपको इस बात पर बडा दु ख है कि ब्रिटिश ससद भवन तथा वेस्टमिन्सटर ऐबे के विनाश की सम्भावना है, पर आपके आसू जर्मनी के इसी प्रकार के स्मारको के नष्ट होने पर उमडते नही है। विगत महायुद्ध मे जिस प्रकार मित्रपक्ष ने जर्मनी पर बलात्कार किया था, क्या यह हिटलर का उनको उत्तर नही है? यदि आप जर्मन होते, साथ ही हिटलर की तरह साधनसम्पन्न होते और सारे ससार की तरह प्रतिहिंसा के सिद्धान्त मे विश्वास रखते, तो आप वही करते होते, जो हिटलर कर रहा है। हमे जो साहित्य मिलता है वह एकतरफा है, पर मेरा यह विश्वास है कि चेम्बरलेन और हिटलर मे कोई फर्क नही है। हिटलर के स्थान पर चेम्बरलेन उसी प्रकार व्यवहार करते। क्या भारत मे इग्लैण्ड का जो रिकार्ड है, वह किसी भी प्रकार ससार के किसी दूसरे भाग मे हिटलर के रिकार्ड से ऊचा है? हिटलर तो प्राचीन साम्राज्यवादी इग्लैण्ड और फ्रास का मामूली शिष्य-मात्र है। मुझे लगता है कि वाइसराय भवन का आप पर बुद्धिभ्रशकारी असर पड गया है।

इसपर गाधीजी ने यह उत्तर दिया—मुझे जर्मनी के स्मारको तथा ऐतिहासिक भवनो के विनाश पर उतना ही कष्ट होगा। सारी बातो को तौलने के बाद

मैं इस नतीजे पर पहुचा हू कि हिटलर युद्ध के लिए जिम्मेदार है। सम्भव है कि डान्त्सिग पर हिटलर का दावा सही हो, यह भी सम्भव है कि और भी दावे सही हो, पर हिटलर एक स्वतन्त्र ट्रिब्यूनल के सामने अपने दावो को रखता तो वह ठीक होता। यदि हिटलर ऐसा करता तो उसके दावे सही है या गलत, यह मालूम होता। इग्लैण्ड और फ्रास से इसलिए मेरी सहानुभूति युक्तिसगत है। रहा यह कि सहानुभूति क्या रुख ग्रहण करेगी, यह दूसरी बात है। अकेले मे तो केवल प्रार्थना ही कर सकता हू। यही मैंने वाइसराय महोदय से कहा कि मै नही जानता कि जो ठोस विनाश हो रहा है, उसके मुकाबले मे मेरी प्रार्थना का क्या अर्थ है।

काग्रेस कार्यसमिति की तरफ से जो वक्तव्य निकला, वह भी किसी प्रकार स्पष्ट नही था। उसमे यह स्पष्ट बताया गया था कि ब्रिटिश सरकार ने मचूरिया पर आक्रमण के सम्बन्ध मे चश्मपोशी की। अबीसिनिया मे उसने इसका एक तरह से समर्थन किया। स्पेन और चेकोस्लोवाकिया मे लोकतन्त्र के साथ दिनदहाडे धोखा हुआ और जिन राष्ट्रो ने सामूहिक सुरक्षा-पद्धति पर इतना बल दिया था, वे ही उससे अलग हो गए। यह जो कहा गया कि लोकतन्त्र खतरे मे है और उसकी रक्षा होनी चाहिए, उससे हम सहमत है, पर क्या युद्ध का उद्देश्य, जो स्थिति है, उसकी रक्षा करना है? कही युद्ध का उद्देश्य साम्राज्यवादी उपनिवेशो, स्थिर स्वार्थों तथा रियायतो की रक्षा करना तो नही है? यदि है तो दूसरी बात है, पर यदि ससार मे लोकतन्त्र की पद्धति स्थापित करनी है तो भारत को इसमे बहुत दिलचस्पी है।

इसी प्रकार जो वक्तव्य आदि निकलते रहे, उनसे यही सूचित होता रहा कि काग्रेस कोई स्पष्ट मत कायम नही कर सकी। कई बार काग्रेस के नेता वाइसराय से मिले, पर उनसे मिलने के बाद स्थिति का कोई स्पष्टीकरण नही हुआ। यहा तक कि बहुत अधिक समय निकल गया। आनन्दकुमार वर्धा मे होनेवाली अखिल-भारतीय काग्रेस कमेटी के लिए तैयार हुए। श्यामा ने स्टेशन तक जाकर उन्हे समझाया कि वे फौरन सत्याग्रह छेडने की सलाह दे और केवल सत्याग्रह नही, इसके साथ साथ ऐसे अन्य कार्यक्रम भी होने चाहिए जो हिंसात्मक न हो।

आनन्दकुमार बार-बार श्यामा तथा अन्य भूतपूर्व क्रान्तिकारियो की बात सुन चुके थे, इसलिए वे हसकर बोले—तुम लोग चाहते हो कि रेल की पटरिया उखाड दी जाए, तार काट दिए जाए ताकि सरकार के लिए शासन करना असभव हो जाए। तुम लोग इसे अहिंसा के अन्तर्गत गिनाना चाहते हो, पर इसका अन्तिम

निर्णय गाधीजी ही कर सकते है। मुझे विश्वास है कि देश की जरूरत के अनुसार वे दृढ नेतृत्व दे सकेंगे।

सुमित्रा भी आई थी और राजेन्द्र भी आया था। राजेन्द्र ने अपना वही पुराना कार्यक्रम सामने रखा कि मत्रिमण्डलो को कायम रखना चाहिए। हा, जनता का अधिक समर्थन पाने के लिए उन्हे अपने को और विस्तृत कर लेना चाहिए। वे अपने कार्यक्रम चालू रखे, फिर यदि इसके लिए गवर्नर से सघर्ष हो, तो सघर्ष करते हुए वे पदमुक्त हो जाए।

आनन्दकुमार सबको यथायोग्य ढग से विश्वास दिलाकर अन्त मे बोले—हमे इस समय काग्रेस के नेतृत्व पर विश्वास रखना चाहिए। ब्रिटिश सरकार के लिए काग्रेस का सहयोग प्राप्त करना बहुत आसान था पर वह ऐसा करना नही चाहती।

'महात्मा गाधी की जय' और 'भारतमाता की जय' के नारो के साथ वर्धा को गाडी रवाना हो गई, पर जब सब लोग आनन्दकुमार को गाडी पर बैठाकर लौट रहे थे, तो उन्होने देखा, स्टेशन पर और उसके बाहर सर्वत्र ताजे पोस्टर लगे हुए थे, जिनमे जनता से तार काटने और रेल की पटरी उखाडने की बात कही गई थी। यह कहा गया था कि क्रान्ति के लिए ऐसा मौका फिर नही मिलेगा। युग-युग की बेडियो को खनखनाकर तोड देने का बहुत भारी मौका आया है, इसे हाथ से न जाने दिया जाए।

लोगो ने श्यामा की तरफ अर्थपूर्ण दृष्टि से देखा, पर श्यामा ने राजेन्द्र और सुमित्रा से कहा—मुझे कुछ नही मालूम। पर मुझे खुशी है कि नौजवान अपने ढग से सोच रहे हैं। यदि काग्रेस के नेता भी जल्दी कोई निर्णय कर लेते, तो सब तरह से अच्छा रहता।

५

बाबू रामलाल ने अपने जीवन के अन्तिम दिनो मे एक भगिन हेमा को अपनी गुप्त पत्नी के रूप मे रखा था। रामलाल की सम्पत्ति के कानूनी अधिकारी उनके बेटे विजय और सजय ने उदारतापूर्वक हेमा के मरने के पहले हेमा को वह मकान दे दिया था। उससे थोडे दिन के लिए सारी समस्या सुलझ गई थी। पर

एक दिन स्वामी रामानन्द नामक एक साधु के आने से परिस्थिति बिल्कुल बदल गई।

हेमा के बेटे अजय और मृत्युजय ने एक दिन देखा कि उनके सामने एक सौम्य-दर्शन तेजस्वी साधु खडे-खडे मुस्करा रहे है, बोले—तुम लोगो ने मुझे पहचाना नही ?—कहकर फिर फौरन ही बोले—कैसे पहचानोगे ! जब हम आया करते थे तब तुम लोग बहुत छोटे थे। मै इतने दिनो तक बाबा अमरनाथ की सेवा मे सलग्न था

साधु के चेहरे के हर रोमकूप से जैसे तेज बरस रहा था। बाल खिचडी हो गए थे, फिर भी लगता था, जैसे बुढापे की मजाल क्या थी कि वह शरीर को छू ले। वह शरीर की चौखट से दूर खडा था। गले मे बहुत बडे रुद्राक्षो की माला पडी हुई थी। दाढी और बाल लम्बे थे, पर इस प्रकार सवरे हुए थे कि मालूम होता था कि अभी-अभी किसी सैलून से निकलकर आए है। चेहरे पर जीवन का आनन्द और अपार करुणा थी। बोले—मेरे लिए पानी लाओ। मै महायुद्ध छिडने की बात सुनकर आया हू। हेमा माई कहा है ?

अन्तिम प्रश्न पूछकर ही स्वामी रामानन्द गम्भीर हो गए, फिर सब कुछ सुनकर बोले—यह गलत है। तुम लोगो को सम्पत्ति पर उतना ही अधिकार है, जितना सजय और विजय को।

अजय ने कहा—पर विवाह तो हुआ ही नही था।

स्वामी रामानन्द कुछ देर तक स्तम्भित रह गए जैसे उनके गाल पर एक तमाचा लगा हो, फिर कठिनाई के साथ कुछ याद करते हुए बोले—कौन साला कहता है कि विवाह नही हुआ था ! मैंने स्वय विवाह कराया था।

अजय को बहुत आश्चर्य हुआ, क्योकि उसने बार-बार अपनी मा हेमा से इस सम्बन्ध मे पूछा था, केवल यही नही उसने मा के सामने यह सुझाव रखा था कि कुछ गवाह तैयार कर लिए जाए और दावा किया जाए कि विवाह हुआ था, पर मा राजी नही हुई थी, बराबर बोलती रही—जब ब्याह नही हुआ तब मैं कैसे कहू कि ब्याह हुआ था ? मै झूठ नही बोलने की।

पर अब स्वामीजी क्या कह रहे है ? उसे जैसे एकाएक पडा हुआ धन मिल गया। मुह बाकर बोला—आपने विवाह कराया था, फिर मा क्यो इस बात से इन्कार करती रही ? मैं बार-बार उनसे पूछता रहा।

स्वामी रामानन्द मुह-हाथ धोकर बोले—तुम चिन्ता न करो। सारा काम हो जाएगा। उन्हे बाबू रामलाल की आधी सम्पत्ति तुम लोगो को देनी पडेगी।

पर अजय को धैर्य कहा था। वह फौरन सारी बाते जानना चाहता था। उसका वश चलता तो वह फौरन जाकर मुकदमा दायर करता और फौरन से पेशतर फैसला कराता। अब तो बाबू रामलाल की ख्याति पर भी किसी प्रकार आच आने की बात नही थी। उन्होने किसी प्रकार कोई बेजा या गैरकानूनी काम नही किया था। पहली पत्नी के मरने के बाद दूसरी शादी की थी। उसे गुप्त इसलिए रखा कि छुआछूत की धारणा लोगो मे इतनी प्रबल थी कि तहलका मच जाता और पहले के रिश्तेदारो की ओर से भयकर विरोध होता, जिससे दाम्पत्य सुख न मिलकर व्यर्थ मे टटे उठ खडे होते।

अजय बोला—महाराज, आप ऐसी बात कह रहे हैं, जिसपर सहसा विश्वास नही होता। क्या आपके समय के और चश्मदीद लोग भी है जो इस बात को बता सकते है? आप समझते होगे कि हम दोनो भाइयो के लिए यह बहुत ही महत्त्व की बात है, केवल सम्पत्ति की दृष्टि से नही, अन्य दृष्टियो से भी।

स्वामी रामानन्द घर के चारो तरफ कुछ ढूढ रहे थे, बोले—क्या तुम लोग अखबार नही लेते हो?

—हा, लेते है।—कहकर उसने दो-तीन दिन के 'प्रताप' सामने रख दिए। स्वामीजी उन्हे इस प्रकार उलट-पुलटकर देखने लगे, जैसे बहुत दिनो का भूखा खाने पर टूटता है। वे अपना वातावरण तथा अजय-मृत्युजय की बात बिलकुल भूल गए। जब वे अखबार देख चुके, तब जैसे समाधि से निम्नतर जगत मे लौटते हुए बोले—तुम लोग अभी खडे हो? मेरे भोजन की कोई व्यवस्था नही की?

दोनो भाइयो ने कहा—महाराज, जब से माताजी का देहान्त हो गया, तब से हम लोग पास ही के एक ढाबे मे खाते हैं। आज्ञा हो तो आपके लिए भी वही से भोजन ले आऊ। पर इस समय तीन बजे है, नाश्ते की ही चीज मिलेगी। घर मे बिस्कुट और जेम रखा है। कहिए तो सेवा मे उपस्थित करू।

स्वामी रामानन्द ने अखबारो को हटा दिया और मुस्कराते हुए बोले—कितने बिस्कुट है? कितने डिब्बे जैम है? मै इन चीजो को इसलिए नही खाता कि खाऊ तो नाश्ते के लिए एक डिब्बा बिस्कुट और एक डिब्बा जैम यथेष्ट न पडे। अग्रेजो को हमे भूखा मारना था, इसलिए यह सब चालू कर दिया। ढाबे-वाबे का खाना

मै नही खाता । मैं विशुद्ध आर्य हू यानी मास के बिना खाना नही खाता हू, इस-लिए जाओ, तुम दो सेर मास और अन्य सामग्री ले आओ । कुछ रसगुल्ले भी ले आना । उधर श्रीनगर मे थोडा-बहुत खाने को मिलता है, बाकी बाबजान और पजतरणी मे तो कुछ भी नही मिलता । फिर भी इतने वर्ष केवल प्राकृतिक सौन्दर्य देखकर ही बिता दिए ।—कहकर उन्होने अपने सामान मे से एक सौ रुपये का नोट निकालकर अजय को दिया और कहा—जाओ, दिल खोलकर चीजे ले आओ । अतिथि-सेवा मे किसी तरह कार्पण्य न करना । यह धन भक्तो का दिया हुआ है, गाढी कमाई का धन है

उनके चिल्लाकर बात करने और हर बात पर हसने के कारण घर का वाता-वरण विद्युत् से पूरित हो चुका था । अजय और मृत्युजय दोनो पुलकित हो रहे थे । लग रहा था कि मा की मृत्यु के बाद से सिर पर से जो साया उठ गया था, वह फिर एकाएक दसगुना होकर सिर पर प्रसारित हो गया है—सारे दु ख-कष्टो, चिन्ताओ-विपत्तियो से मुक्त करने और ससार मे सीना तानकर चलने मे समर्थ करने के लिए ।

अजय बाजार चला गया । तब स्वामीजी ने मृत्युजय से कहा—तुम्हारी मा बहुत अच्छा मास पकाती थी न ? मैने ही उसे मास पकाना सिखाया था । बाबू रामलाल वही मास खाकर इतने साल तक जीते रहे, नही तो उनके चौदह पुर्खो मे कोई दीर्घजीवी तो हुआ ही नही ।—फिर एकाएक बोल पडे—रामलाल बडा गधा निकला कि उसने सम्पत्ति का ठीक से बटवारा नही किया और मर गया । यदि मकान-सम्बन्धी झगडा उठ खडा न होता, तो शायद हेमा माई और जीवित रहती, पर रामलाल ने जान-बूझकर ऐसा किया होगा, ताकि तुम लोगो के बालिग हो जाते ही हेमा माई उससे मिले ।

मृत्युजय इन बातो पर क्या कह सकता था । वह चुपचाप सुनता रहा । इधर-उधर देखकर स्वामीजी एकाएक पूछ बैठे—महायुद्ध छिड गया, तुम लोग क्या करोगे ?—कहकर उत्तर बिना मागे ही उन्होने फिर कहना शुरू किया—मैं वहा पहाडो मे इसलिए पडा था कि इस बीच देश को स्वतन्त्र करने का मौका नही था । अमरनाथ बाबा तो योही है, पडे अपना पेट पालने के लिए बर्फ का लिंग बना कर भक्तो को ठगते रहते है । तुम यह न समझो कि हम उसकी वजह से पडे थे । हम तो प्रकृति का आनन्द लेते रहे थे और सेहत बना रहे थे । मेरी उम्र रामलाल

से अधिक है, पर तुम देख ही रहे हो कि मै कैसा लगता हू । अब बस, एक ही आकाक्षा रह गई है कि शरीर को अग्रेजो से लडता हुआ अर्पण कर दू । तुम लोग भी मेरे साथ हो जाओ ।—फिर करुणा के वशवर्ती होकर बोले—नही-नही, अभी तुम लोग खेलो-खाओ, जब हम बूढे मर जाए, तब तुम आगे आना । है न ठीक ?

मृत्युजय को इतनी देर मे जैसे वाणी मिली, बोला—महाराज, आप जो आज्ञा देगे वही करूगा । हमारी अजीब हालत है, न मा की बिरादरी वाले हमे अपना मानते है, और न दूसरे हमे अपनाते है । हमारे जीवन मे कोई सुख नही है ।

स्वामी रामानन्द की घनी, खिचडी दाढी मे जैसे क्रोध की बिजली कौध और तडप गई । नाराज होकर बोले—आर्य साले तो आक्रान्ता थे, असल मे देश तो तुम्हारा है । तुम लोग चिन्ता न करो, मैं तुम्हे पूरे हक दिलाऊगा । मैं स्वय जरूरत पडने पर गवाह के कठघरे मे खडा होऊगा ।

थोडी देर मे अजय एक कुली के सिर पर सारी चीजें लेकर आ गया और फिर तो पकाने का ऐसा समारोह मच गया कि कोई गम्भीर बात हो ही नही सकी । स्वामीजी बोले भी तो केवल भोजन और भोज्य पदार्थों के सम्बन्ध मे ही बोले, पर इस सम्बन्ध मे उनके विचार बडे अजीब थे । बोले—भारतीय कगाल हो गए तो कगाली का एक दर्शनशास्त्र ही चालू कर दिया । कम खाओ, गम खाओ, यह न करो, वह न करो, इस प्रकार से कमजोरो का और कमजोरी का एक दर्शन-शास्त्र बन गया । अग्रेज न तो कम खाते है, न गम खाते है । न जर्मन ऐसा करते है, न रूसी । प्राचीन आर्य खूब खाते-पीते, मस्त रहते थे, अतिथि आने पर बछडा मारकर उसकी आवभगत करते थे, यज्ञो मे मास की रेल-पेल होती थी । उस कम-जोरदिल बुद्ध ने आकर याज्ञिक हिंसा के विरुद्ध विचारधारा चलाई और तब से भारत के पतन का सूत्रपात हुआ या यो कहे कि पतन के युग ने ही बुद्ध ऐसे लोगो को उत्पन्न किया ।

अजय ने डरते-डरते कहा—पर महाराज, गाधीजी ने भी तो अहिंसा अप-नाई है, और भारत उससे आगे बढ रहा है ।

देगची मे मास उबल रहा था । उसकी तरफ प्रशसा-भरे नेत्रो से देखकर चम्मच से एक टुकडा निकालकर बिना ठडा किए ही मुह मे डालते हुए स्वामी रामानन्द बोले—बर्फ मे रहते-रहते इस तरह खाने की आदत पड गई है । डरो

मत । गाधी की अहिंसा बुद्ध की तरह स्थाणु अचल और सनातन नही है । गाधी तो जिस कार्य को जब चाहते है, अहिंसा करार देते है, बाकी सब हिंसा रह जाता है। अब भगवान अमरनाथ से यही प्रार्थना है कि वे गाधी को सुबुद्धि दे और, वे रेल की पटरी उखाडने और तार काटने को अहिंसा का आशीर्वाद दे दे। अक्लमन्द को इशारा काफी है, इस नीति के अनुसार बाकी सारे काम हम कर लेगे। हमसे मतलब देश की युवक-शक्ति। उसका परिचय हमे कानपुर स्टेशन पर ही मिला था, जहा मालगाडियो पर लिखा हुआ था—रेल की पटरी उखाडो ! तार काट दो ! क्रान्ति करो !

अजय ने कहा—यह तो सब कम्युनिस्टो का लिखा हुआ है । काग्रेस से इसका कोई सम्बन्ध नही है।

स्वामी रामानन्द मुस्कराए, फिर उन्होने मास चलाते हुए देगची मे से चुन कर मास का एक ऐसा टुकडा निकाला जिसमे हड्डी भी थी, फिर कलछुल रखकर, उसे हाथ मे मृदु ढग से लोकाते हुए मुह मे डालकर हड्डी को अलग करते हुए बोले—हड्डी के पास का मास सबसे स्वादिष्ट होता है, इसलिए मजा तब आएगा, जब अहिंसा के नाम पर हिंसा होगी, और हिंसा क्या, यह तो प्रतिहिंसा है । सौ डेढ सौ साल से अग्रेजो ने हमपर जो अत्याचार किया है, जिस प्रकार हमारी आत्मा को गला गलाकर पनाले मे बहा दिया है, जिस प्रकार हमारे सारे मूल्यो और मान्यताओ के साथ बलात्कार किया है, उसके फलस्वरूप या यो कहना चाहिए कि उसके एवज मे यदि सारे इग्लैण्ड को समुद्र मे बहा दिया जाए तो भी वह दया ही होगी । सौभाग्य से इस वक्त हिटलर का उदय हुआ है जो प्रतिहिंसा के तत्त्व का मूर्तरूप है । अब बस गाधी भी भारत के भाग्य को सामयिक रूप से ही सही, हिटलर के सितारे से बाध दे, तो असाध्य-साधन हो सकता है।

अजय और मृत्युजय को राजनीति मे कभी दिलचस्पी नही रही, वे अवाक् होकर स्वामीजी की बाते सुन रहे थे । उन्हे उनकी बातो से भी अधिक आश्चर्य उनके मास खाने के ढग पर था ।

स्वामीजी ने हाथ धोकर कुल्ला किया और फिर अजय से इशारा किया कि देगची उतार लो । इसके बाद पूरियो के लिए कढाही चढाते हुए बोले—यह बिलकुल गलत है कि देश मे जो कुछ भी खुराफात होती है, वह कम्युनिस्टो की उठाई हुई है, बिलकुल गलत ! कम्युनिस्टो से अलग भी देश की एक युवशक्ति है

जिसे कोई दबा नही सकता। सच तो यह है कि कम्युनिस्ट उसी युवशक्ति का एक कोना ले भागे है, इसीपर उनकी इतनी धाक है और सबपर रोब छाया हुआ है।

कढाही गरम होते ही स्वामीजी ने सारा घी कढाही मे डाल दिया, फिर उसे जल्दी से गलता हुआ देखकर बोले—बुद्ध की अहिंसा आध्यात्मिक, धार्मिक और सर्वग्रासी थी, जबकि गाधी की अहिंसा केवल सतही और व्यावहारिक है। गाधी तो मजबूरी से अहिंसा के नारे दे रहे है, जरा मौका पाते ही देख लेना तोप-तमचो का तूमार बाध देगे। बुद्ध की अहिंसा ने एक नये ढोग को जन्म दिया, ऐसा ही गाधी की अहिसा का हश्र होगा।

अजय जल्दी-जल्दी पूरिया बेलता हुआ बोला—महाराज, लगता है कि आप क्रान्तिकारी है।

स्वामी रामानन्द ने कढाही मे एक के बाद एक चार पूरिया डालते हुए कहा—यदि तुम्हारा मतलब खुदीराम से लेकर आजाद और भगतसिह ऐसे लोगो से है, तो मैं उन लोगो मे हू भी और नही भी। वे प्रतिहिंसा मे विश्वास करते थे, पर उनकी प्रतिहिसा अधिक से अधिक वैयक्तिक स्तर पर थी यद्यपि उनमे वैयक्तिक शत्रुता की भावना बिलकुल नही थी, पर मैं तो चाहता हू कि सामूहिक स्तर पर प्रतिहिंसा का कार्यक्रम बने यानी क्रान्ति हो।

—फिर आप गाधीजी का आशीर्वाद क्यो चाहते है ?

—इसलिए चाहते हैं कि यहा की जनता अभी उल्लू और बिलकुल पिछडी हुई हैं। इससे जो कुछ भी कराया जा सकता है, वह धर्म के नाम पर, अहिसा के नाम पर कराया जा सकता है। कल्पना करो, बुद्ध या महावीर रेल की पटरी उखा-डने या तार काटने को तो नही कह सकते। बहुत ही हास्यास्पद लगेगा। पर गाधी या उनके चेलो के लिए ऐसी कल्पना करना असम्भव नही है। मौका पडने पर तुम देख लेना कि वे सब कुछ करेगे, इसलिए हमे गाधी की अहिंसा से डर नही है, डर है तो एक बात का, वह यह कि बुद्ध की अहिसा ने देश को नपुसक बनाया था और गाधी की अहिसा लोगो को इसके अलावा ढोगी बनाएगी।—कहकर उन्होने पूरियो को फुलाने की ओर ध्यान दिया।

बात की बात मे खाना तैयार हो गया, तब स्वामीजी ने दोनो भाइयो को साथ मे—एक को बाये, दूसरे को दायें—बैठाया और कहा—पहले तुम लोग कौर तोडो, फिर मैं खाऊगा। नये युग के ब्राह्मण तुम्ही हो। तुम गणेशो को भोजन अर्पित किए

बिना पेटपूजा नही हो सकती ।

स्वामीजी ने भोजन के समय बिलकुल बातचीत नही की। पहले ही माफी माग ली थी, बोले थे—भोजन के समय बातचीत करने से ध्यान बटता है और ध्यान बटने से पाचन की क्रिया मे व्याघात होता है ।

जब वे खा-पीकर डकार लेकर बिलकुल निश्चिन्त हो गए, तो उन्होने कहा—देश का काम फिर होगा, पहले तुम्हारा काम । मृत्युजय तुम जाकर सजय और विजय को बुला लाग्रो । यदि वे पूछें कि कौन बुला रहा है, तो कहना कि बाबू रामलाल के गुरु स्वामी रामानन्द । तिसपर भी न आए तो कहना, आपके यहा पूजावाले कमरे मे जिस स्वामीजी का फोटो टगा है, वही पधारे है ।

मृत्युजय तो चला गया, पर अजय ने कहा—महाराज, वे माननेवाले नही है । आपकी गवाही से वे सन्तुष्ट नही होगे । कहेगे कि किसी वजह से आप झूठी बात बना रहे है ।

इसपर स्वामीजी बहुत कुपित हुए, बोले—मैं, और झूठी बात ? यदि उनको यह हिम्मत हो तो वे कहे, फिर मै उनकी हवेली की ईट से ईंट बजा दूगा । झूठ वह बोलता है जो डरता है । मैं किससे डरता हू ?

अजय ने अदब के साथ कहा—महाराज, आपका उद्देश्य अच्छा है । आप देवतास्वरूप है, इसलिए कह रहे हैं कि आपके सामने विवाह हुआ, पर वे इसे क्यो मानने लगे ! आपके अलावा और भी कोई गवाह है ?

स्वामीजी इसपर एकदम बिगड गए, बोले—यानी तुझे भी अविश्वास है ? तू समझता है मैं एक अच्छे कार्य के लिए झूठ बोल रहा हू । झूठ बोले, मेरा पैर !

अजय ने विनय के साथ कहा—महाराज, मैं तो आपकी बात मान रहा हू, पर माताजी ने भी कभी यह दावा नही किया कि विवाह हुआ, बल्कि साफ कहा कि विवाह नही हुआ, और ऐसा उन्होने सजय और विजय के सामने भी कहा होगा ।

स्वामीजी ने कहा—हेमा माई ने ठीक ही कहा ।

अजय कुछ और ही सुनने की आशा कर रहा था । उसका चेहरा फक पड गया, बोला—महाराज, इसका मतलब ? मेरी तो कुछ समझ मे नही आ रहा है ।

—तेरी समझ मे आने की जरूरत क्या है ? सजय और विजय की समझ मे आ जाए और उनके वकील की समझ मे आ जाए तो बस काफी है, नही तो मैं भरी अदालत मे खडा होकर गवाही दूगा ।

अजय कुछ डरते डरते बोला—महाराज, आप बुरा न माने, आप गवाही तो देगे, पर इतनी बडी बात के लिए शायद केवल आपकी गवाही यथेष्ट न मानी जाए। मैने वकीलो से पूछा था तो वे कहते थे कि कम से कम दो-तीन मुअज्जिज गवाह चाहिए और अन्य प्रकार से भी कोई समर्थन होना चाहिए, जैसे बाजेवाला आया हो तो वह कह दे कि मैने उस अवसर पर बाजा बजाया था, हलवाई कहे कि मैने मिठाई पहुचाई थी।

स्वामी रामानन्द पहले से अधिक तैश मे आते हुए बोले—तू झूठी गवाही बनाने के लिए गया होगा, इसलिए वकील ने ऐसा कहा होगा, पर एक सच्चा गवाह सौ झूठे गवाहो से बढकर होता है। मै तो कहूगा कि मैने ही सलाह दी शादी की, फिर मैने ही स्वय शादी कराई।

अजय समझ गया कि स्वामीजी को अपने ब्रह्मतेज पर बहुत अधिक विश्वास है, पर अदालत ऐसी बातो को नही देखती। इतना तो अजय वकीलो के यहा दौड-दौडकर अच्छी तरह समझ चुका था, नही तो इस मामले मे गवाही की जरूरत ही क्या थी। एक भद्र व्यक्ति ने एक स्त्री के साथ रहना शुरू किया और वे पति-पत्नी की तरह रहते रहे। वह पुरुष कभी दूसरी स्त्री के पास नही गया और स्त्री तो सती-शिरोमणि थी। पर अदालत के निकट इन बातो का कोई महत्त्व नही है। वह तो केवल फेरे देखती है, यदि फेरे नही डाले गए, मन्त्र नही पढा गया, तो प्रेम का कोई मूल्य नही, भक्ति का कोई मूल्य नही। परस्पर आसक्ति का कोई मूल्य नही। अफसोस है कि स्वामीजी इतने सरल है कि न तो वे यह सब समझते हे और न उनसे यह आशा की जा सकती है कि वे समझे। पता नही कितने साल हिमालय मे बिता आए। इन्हे सासारिक बातो का पता नही। फिर भी बाबू रामलाल के गुरु हे, शायद सजय और विजय पर कुछ असर पडे। पर सम्पत्ति के मामले मे न शिष्य गुरु को देखता है, न भाई भाई को देखता है, न पत्नी पति को देखती है, न पुत्र पिता को देखता है। इस बीच वकीलो के पास दौडकर वह इतना व्यवहारशास्त्र तो समझ चुका हे।

अजय को तो यह भी आशा न थी कि सजय और विजय मृत्युजय के कहने से यहा आएगे भी। उसे बडी निराशा हो रही थी कि कहा स्वामीजी के आने पर बडी आशा बधी थी, पर यहा तो कुछ भी हाथ लगता दिखाई नही पड रहा है। सारा उफान धुआ देकर ही टाय-टाय फिस्स हो जाएगा।

पहले जहा उसे स्वामीजी स्वर्ग के दूत लग रहे थे कि जो चाहे सो कर डाले, अब यह लगा कि वे एक साधारण अच्छे आदमी है, पर ऐसे अच्छे आदमी, जिनकी अच्छाई और शुभेच्छाओ से उसका कोई लाभ नही होने का। उसे अब स्पष्ट याद आ रहा था कि मा ने बार-बार पूछे जाने पर भी यही कहा था कि ब्याह नही हुआ, तो कैसे कहू कि ब्याह हुआ ! तो यह स्पष्ट है कि देशभक्त स्वामीजी अछूतो के प्रति अपने असीम प्रेम के कारण झूठ बोलने पर उतारू है और यह समझते है कि उनके झूठ बोलने से अजय और मृत्युजय को अपने बाप की सम्पत्ति पर अधिकार मिल जाएगा। जहा अस्पृश्य जातियो के प्रति स्वामीजी के प्रेम के कारण यह जी चाहता है कि उनके चरण चूम ले कि ससारत्यागी व्यक्ति होकर भी वे झूठ बोलने के लिए तैयार हो गए है, ऐसा झूठ जिससे उन्हे वैयक्तिक रूप से कोई लाभ नही है, बल्कि उसे वे महज एक सामाजिक, पारिवारिक तथा वैयक्तिक अन्याय को सुधारने मे इस्तेमाल करना चाहते है, वही उनकी अव्यावहारिक सरलता पर भी तरस आता है। वे इतने सीधे है कि यह नही जानते कि सत्य और है, और कानून और। अजय का हृदय बैठ गया।

थोडी ही देर मे एक कार आकर खडी हुई और उसमे से सजय और विजय उतरे। उन्होने स्वामीजी को बहुत ध्यान से देखा, मानो किसी मानसिक चित्र से मिला रहे हो, पर देखने के बाद भी उन लोगो ने न तो स्वामीजी के पैर छुए, न नमस्ते की और बोले—स्वामीजी, क्या आपने हम लोगो को याद किया है ?

स्वामी रामानन्द सारी परिस्थिति ताड गए। वे मुस्कराए, बोले—तुम लोगो के पिताजी मुझे गुरु मानते थे। पर मै उन्हे मन ही मन अपना गुरु मानता था क्योकि वे एक आदर्श गृहस्थ थे। वे जब मिलते तो मेरे पैर छूने को लपकते थे क्योकि मै लगभग बीस साल तक क्रान्तिकारी रहा। पर जब देखा कि छिटपुट हत्याकाण्डो और हमलो से कुछ नही होता और साथ ही जनक्रान्ति का कोई अवसर नही है, तो मै अपने दुःख भुलाने के लिए हिमालय की गोद मे चला गया। मैने सात बार अमरनाथ की यात्रा की। और लोग तो अमरनाथ के मन्दिर से उस तरह से भाग आते है जैसे लडके 'चोर-चोर' खेलते वक्त पहले छू लेते है और तुरन्त ही अलग हो जाते हैं, पर मै यह सब जानते हुए भी कि यह पण्डो की पोपलीला है, अमरनाथ मन्दिर के बगल मे अधिक से अधिक दिन तक भजन-पूजा के बहाने डटा रहता था। बर्फ का शिवलिंग धोखा है, पर रास्ते मे और स्वय मन्दिर के पास प्रकृति का जो

अजय कुछ डरते डरते बोला—महाराज, आप बुरा न मानें, आप गवाही तो देंगे, पर इतनी बडी बात के लिए शायद केवल आपकी गवाही यथेष्ट न मानी जाए। मैने वकीलो से पूछा था तो वे कहते थे कि कम से कम दो-तीन मुअज्जिज्ज गवाह चाहिए और अन्य प्रकार से भी कोई समर्थन होना चाहिए, जैसे बाजेवाला आया हो तो वह कह दे कि मैने उस अवसर पर बाजा बजाया था, हलवाई कहे कि मैने मिठाई पहुचाई थी।

स्वामी रामानन्द पहले से अधिक तैश मे आते हुए बोले—तू झूठी गवाही बनाने के लिए गया होगा, इसलिए वकील ने ऐसा कहा होगा, पर एक सच्चा गवाह सौ झूठे गवाहो से बढकर होता है। मैं तो कहूगा कि मैंने ही सलाह दी शादी की, फिर मैने ही स्वय शादी कराई।

अजय समझ गया कि स्वामीजी को अपने ब्रह्मतेज पर बहुत अधिक विश्वास है, पर अदालत ऐसी बातो को नही देखती। इतना तो अजय वकीलो के यहा दौड-दौडकर अच्छी तरह समझ चुका था, नही तो इस मामले मे गवाही की जरूरत ही क्या थी। एक भद्र व्यक्ति ने एक स्त्री के साथ रहना शुरू किया और वे पति-पत्नी की तरह रहते रहे। वह पुरुष कभी दूसरी स्त्री के पास नही गया और स्त्री तो सती-शिरोमणि थी। पर अदालत के निकट इन बातो का कोई महत्त्व नही है। वह तो केवल फेरे देखती है, यदि फेरे नही डाले गए, मन्त्र नही पढा गया, तो प्रेम का कोई मूल्य नही, भक्ति का कोई मूल्य नही। परस्पर आसक्ति का कोई मूल्य नही। अफसोस है कि स्वामीजी इतने सरल है कि न तो वे यह सब समझते है और न उनसे यह आशा की जा सकती है कि वे समझे। पता नही कितने साल हिमालय मे बिता आए। इन्हे सासारिक बातो का पता नही। फिर भी बाबू रामलाल के गुरु है, शायद सजय और विजय पर कुछ असर पडे। पर सम्पत्ति के मामले मे न शिष्य गुरु को देखता है, न भाई भाई को देखता है, न पत्नी पति को देखती है, न पुत्र पिता को देखता है। इस बीच वकीलो के पास दौडकर वह इतना व्यवहारशास्त्र तो समझ चुका है।

अजय को तो यह भी आशा न थी कि सजय और विजय मृत्युजय के कहने से यहा आएगे भी। उसे बडी निराशा हो रही थी कि कहा स्वामीजी के आने पर बडी आशा बधी थी, पर यहा तो कुछ भी हाथ लगता दिखाई नही पड रहा है। सारा उफान धुआ देकर ही टाय-टाय फिस्स हो जाएगा।

पहले जहा उसे स्वामीजी स्वर्ग के दूत लग रहे थे कि जो चाहे सो कर डाले, अब यह लगा कि वे एक साधारण अच्छे आदमी है, पर ऐसे अच्छे आदमी, जिनकी अच्छाई और शुभेच्छाओ से उसका कोई लाभ नही होने का। उसे अब स्पष्ट याद आ रहा था कि मा ने बार-बार पूछे जाने पर भी यही कहा था कि ब्याह नही हुआ, तो कैसे कहू कि ब्याह हुआ! तो यह स्पष्ट है कि देशभक्त स्वामीजी अछूतो के प्रति अपने असीम प्रेम के कारण झूठ बोलने पर उतारू है और यह समझते है कि उनके झूठ बोलने से अजय और मृत्युजय को अपने बाप की सम्पत्ति पर अधिकार मिल जाएगा। जहा अस्पृश्य जातियो के प्रति स्वामीजी के प्रेम के कारण यह जी चाहता है कि उनके चरण चूम ले कि ससारत्यागी व्यक्ति होकर भी वे झूठ बोलने के लिए तैयार हो गए है, ऐसा झूठ जिससे उन्हे वैयक्तिक रूप से कोई लाभ नही है, बल्कि उसे वे महज एक सामाजिक, पारिवारिक तथा वैयक्तिक अन्याय को सुधारने मे इस्तेमाल करना चाहते है, वही उनकी अव्यावहारिक सरलता पर भी तरस आता है। वे इतने सीधे है कि यह नही जानते कि सत्य और है, और कानून और। अजय का हृदय बैठ गया।

थोडी ही देर मे एक कार आकर खडी हुई और उसमे से सजय और विजय उतरे। उन्होने स्वामीजी को बहुत ध्यान से देखा, मानो किसी मानसिक चित्र से मिला रहे हो, पर देखने के बाद भी उन लोगो ने न तो स्वामीजी के पैर छुए, न नमस्ते की और बोले—स्वामीजी, क्या आपने हम लोगो को याद किया है?

स्वामी रामानन्द सारी परिस्थिति ताड गए। वे मुस्कराए, बोले—तुम लोगो के पिताजी मुझे गुरु मानते थे। पर मै उन्हे मन ही मन अपना गुरु मानता था क्योकि वे एक आदर्श गृहस्थ थे। वे जब मिलते तो मेरे पैर छूने को लपकते थे क्योकि मैं लगभग बीस साल तक क्रान्तिकारी रहा। पर जब देखा कि छिटपुट हत्याकाण्डो और हमलो से कुछ नही होता और साथ ही जनक्रान्ति का कोई अवसर नही है, तो मै अपने दुःख भुलाने के लिए हिमालय की गोद मे चला गया। मैने सात बार अमरनाथ की यात्रा की। और लोग तो अमरनाथ के मन्दिर से उस तरह से भाग आते है जैसे लडके 'चोर-चोर' खेलते वक्त पहले छू लेते है और तुरन्त ही अलग हो जाते है, पर मै यह सब जानते हुए भी कि यह पण्डो की पोपलीला है, अमरनाथ मन्दिर के बगल मे अधिक से अधिक दिन तक भजन-पूजा के बहाने डटा रहता था। बर्फ का शिवलिंग धोखा है, पर रास्ते मे और स्वय मन्दिर के पास प्रकृति का जो

सौन्दर्य देखने मे आता है, वह तो पोपलीला नही है, वह असली चीज है

कहते-कहते उनको एकाएक ध्यान आया कि मै स्वय तो बैठा हू, पर आगन्तुको को बैठने के लिए नही कहा। एकाएक खडे होकर बोले—अरे, मैने तुम लोगो से बैठने के लिए नही कहा, बैठो। बूढा आदमी हू, हर समय हर बात याद नही रहती। हा, मेने तुम लोगो को बुलाया है।

स्वामीजी के कहने पर चारो भाई बेठ गए। मन ही मन वे सबके चेहरे तौलते हुए बोले—जरा चारो भाई इकट्ठे आईने के सामने खडे होकर तो देखो, एक-दूसरे से कितने मिलते हो, बल्कि एक हो। मृत्युजय सबमे गोरा हे।—कहकर उन्होने एक बार सब भाइयो को एक तरफ से दूसरी तरफ तक बारी-बारी से देखा, फिर बोले—सजय, तुम समझ गए होगे कि मैंने तुम्हे किसलिए बुलाया है?

—जी हा

—तभी तुम अकड गए हो। मुझे वह सम्मान भी नही दिया, जो एक साधारण भद्रपुरुष को प्राप्य था। नमस्ते तो कर लेते, कम से कम वयोज्येष्ठ समझकर

—मुझे यह जानकर बहुत खुशी हुई कि मरते समय तुम लोगो ने हेमा माई को सन्तुष्ट कर दिया था, पर थोडा आगे बढे तो फिर पूरा आगे क्यो नही बढे? भाइयो को भाई का अधिकार क्यो नही दिया?

सजय बैठे-बैठे सिकुड गया, फिर बोला—महाराज, इस विषय पर मैं अजय और मृत्युजय से बात कर चुका हू, आप यह समझे कि यह विषय बन्द हो चुका हे, अब इस विषय पर किसी प्रकार की आलोचना सिवा कटुता के कुछ उत्पन्न नही करेगी, जिसे उत्पन्न करना मैं समझता हू कि आपका उद्देश्य नही है।

स्वामी रामानन्द को कोई निराशा नही हुई, क्योकि वे इस स्थिति के लिए प्रस्तुत थे, बोले—किसी भी अजनबी को ले आओ और उससे कहो कि तुम लोगो मे से कौन-कौन भाई है, इसकी पहचान करे, तो देखोगे कि सब एक ही उत्तर देंगे। जो प्रत्यक्ष है, उसके लिए प्रमाण की क्या जरूरत है! तुम चारो एक ही बाप के बेटे हो

सजय उठने को होकर बोला—माफ करे, मैं कह चुका कि इस विषय पर आलोचना से कटुता ही पैदा होगी। और सब तरह से हम आपकी सेवा करने के लिए तैयार है, पर इस सम्बन्ध मे बात न करें। नही तो शायद हम आपका सम्मान

न कर सकेंगे।

सजय के लहजे मे कोई ऐसा तत्त्व था, जो अन्तिमता का ही नहीं, एक हद तक रुखाई का द्योतक था, ऐसी रुखाई, जैसी धनी व्यक्ति भिखमंगे के प्रति दिखलाते है। स्वामीजी अब सहन नही कर सके, वे एकदम आपे से बाहर हो गए, बोले—चूल्हे मे जाए देश का उद्धार और चूल्हे मे जाए जनक्रान्ति, मै पहले इस मामले को निपटाऊगा, तब और कुछ करूगा ! जय अमरनाथ की !—कहकर उन्होने न जाने कहा से एक पिस्तौल निकाली और उसे मेज पर रखते हुए बोले—जब कोई व्यक्ति, गुट या दल को सुनने से इन्कार करता है, तब उसके लिए एक ही दवा है। तुम प्रत्यक्ष को नही मान रहे हो, मेरी गवाही को भी नही मान रहे हो।

सजय पता नही पिस्तौल के कारण या गवाही शब्द के कारण चौककर बोला—आपकी गवाही ? कैसी गवाही ?

स्वामीजी नाटकीय प्रयास के बावजूद भीतर से शान्त थे, बोले—मै योही नही कह रहा हू, मैं अन्याय देखकर ही इस मामले मे दिलचस्पी ले रहा हू। मुझे पहले ही मालूम हो चुका था कि बाबू रामलाल दिवगत हो चुके है, इसलिए मैं सीधे इस घर मे आया। जब मैं इधर-उधर मुसीबत उठाकर आता था, तो यही आकर मुझे शान्ति मिलती थी क्योकि तुम्हारे पिता एक आदर्श व्यक्ति थे और हेमा माई आदर्श गृहिणी थी। मैने तुम्हारी माताजी को भी देखा है, पर वे बेचारी अपने रोगो से ही बराबर परेशान रहती थी •

सजय ने नम्रता से कहा—महाराज, यह सब तो हमे मालूम है, इसीलिए इस मकान पर इन लोगो का कोई कानूनी अधिकार न होते हुए भी हमने अन्त तक इन्हे कानूनी अधिकार दे दिया

स्वामी रामानन्द ने कहा—कानूनी अधिकार केवल इस मकान पर नही, सारी सम्पत्ति पर ही है। मैं कहता हू कि मेरे सामने विवाह हुआ था

सजय और विजय एकदम चौक पडे। अब की बार विजय ने कहा—विवाह ? पर अजय की माताजी बराबर यही कहती रही कि विवाह नही हुआ।

स्वामीजी बिगड गए और बोले—तो क्या मैं झूठ कह रहा हू ? विवाह हुआ, और अवश्य हुआ ! मैने स्वय विवाह कराया। दूसरे लोग भी उसमे मौजूद थे, पर वे अब मर-खप गए है। यह कोई आज की बात है !

अजय कनखी से देख रहा था कि सजय और विजय पर इसका क्या असर

होता है। पर उसने निराशा के साथ देखा कि सजय और विजय और अकड गए। यह स्पष्ट था कि वे स्वामीजी को झूठा समझ रहे थे। कुछ बात थी भी ऐसी ही। जिसका विवाह हुआ, वह बराबर यह कहती रही कि विवाह नही हुआ, यद्यपि विवाह नही हुआ कहने से बेटो के सामने अपनी हेठी होती थी। और ये स्वामीजी कह रहे है कि मैंने शादी कराई। कहते है कि और लोग भी थे, पर वे मर-खप गए। मैं ही ऐसा क्यो न कह दू कि माताजी कह रही थी कि विवाह हुआ, और सजय, तुम झूठ बोल रहे हो। इसके बाद दो-चार गवाह और बना लिए जाएगे। किसी तरह पोट-पाटकर अछूत नेता बूढे केशवजी को गवाही देने पर तैयार किया जाए, तो ठीक रहेगा। वह बोल पडा—माताजी तो बराबर कहती रही कि विवाह हुआ। तुम्ही लोग नही माने।

स्वामीजी समझ गए कि अजय क्यो एकाएक बदल गया और झूठ बोल गया। वे उसे फटकारते हुए बोले—तू क्यो भाई के सामने झूठ बोल रहा है? अभी तो मुझसे बार-बार कह रहा था कि हेमा माई ने बराबर विवाह से इन्कार किया। क्या सम्पत्ति का लोभ इतना बडा होता है कि झूठ पर तैयार हो गया? उस सती शिरोमणि के नाम से झूठ बोलने का किसीको अधिकार नही है। समझ गया कि तुम भी वैसे ही सासारिक और साधारण व्यक्ति हो, जैसे सजय और विजय है।

सजय ने कुछ समझ न पाकर स्वामीजी से कहा—तो क्या महाराज, आप हम लोगो की परीक्षा-मात्र ले रहे है? असल मे विवाह नही हुआ था न? क्या आप एक क्रान्तिकारी के नाते अछूतो की भलाई के लिए झूठ बोल रहे है?

स्वामीजी हरहराकर हस पडे, बोले—बेटा, सत्य और झूठ के बीच रेखागणित की एक रेखा-मात्र है। मै अभी तुम लोगो से बता रहा था कि पण्डो ने पेट-पूजा के लिए पोपलीला फैलाकर यह उडा रखा है कि अमरनाथ मे बर्फ का शिवलिंग स्वय बनता जाता है। है तो यह सर्वैव झूठ, पर मै इस झूठ को किसी भी सत्य से अच्छा समझता हू, क्योकि शताब्दियो से इस झूठ के कारण लाखो सुस्त, काहिल, घरघुस्सू, बुजदिल लोग यात्रा कर रहे हैं और उन्हे प्रकृति का ऐसा दिव्य रूप देखने को मिलता है, जो कभी उन्हे नसीब नही होता। क्या उस दिव्य सौन्दर्य की कुछ तुलना है? वही सौन्दर्य शकर है। उस मन्दिर मे शकर नही है, बल्कि शकर है स्वय नगाधिपति हिमालय। पहलगाम स्वय ही बहुत सुन्दर स्थान है। पहाडो ने चारो तरफ से घेरकर एक प्याला-सा बना लिया है। इसी प्याले से सूरज

दिन मे और चाद रात मे पीता है। प्याले के चीड-कुजो के बीच गली हुई चादी की एक नदी बहती है। कही वह नदी ठुमककर चीडवनो के गलियारो मे अनधिकार प्रवेश करती है, तो कही छोटी-बडी चट्टानो से टकराकर उनके मन को उद्वेलित करती हुई, उन्हे घेरकर नृत्य और अठखेलिया करती हुई चली जाती है। कही चीड के ऐसे कुज भी राह मे पड जाते है, जहा प्रवेश करते ही मार्ग की इच्छा आपसे-आप बुझ जाती है। वहा जाने पर स्थान-काल का ज्ञान लुप्त हो जाता हे। यह तो हुआ वह बिन्दु जहा से आरम्भ होता है यात्रा का। इसके बाद क्या कहना! कुछ दूर तक वृक्ष साथ चलते है, चीड, देवदार और फिर भोजपत्र, जिन्होने हमारी प्राचीन सभ्यता को अपने पत्तो मे बाध रखा है। इसके बाद मिलती है बावजान की चमचमाती झील, जिसके पानी का रग समुद्र की कुछ-कुछ याद दिलाता है, यद्यपि समुद्र गृहस्थ के जीवन की तरह सतत उद्वेलित और तरगसकुल होता है, और यह झील है शान्ति की, अन्तरात्मा की शान्ति की द्योतक। इसके बाद बर्फ ही बर्फ मिलती है, पर प्रकृति मे इतनी शान्ति है कि सचमुच मन की वही दशा होती है जो पण्डो द्वारा शिवलिग के दर्शन पर आरोपित की गई है। इसलिए यदि पण्डे झूठ बोलते है, तो कोई हर्ज नही है। जाहिलो, बुजदिलो और काहिलो को घर से निकालकर कम से कम तीन दिन तक उस वातावरण मे पहुचा देने के लिए पाखडी पण्डो के चरणो मे सैकडो प्रणाम।

कहकर स्वामीजी बिना कारण हसते हुए बोले—पर मेरा कथन ऐसा झूठ नही है। सचमुच विवाह हुआ था। हेमा माई को इसका पता नही लगा, इसमे आश्चर्य नही, क्योकि नित्य नये उत्सव होते थे, कभी यज्ञ होता, तो कभी हवन होता, और पति-पत्नी साथ बैठते। शायद उनसे बताया भी नही गया कि तुम्हारा विवाह हो रहा है। पति पत्नी-रूप से तो वे पहले से ही रहने लगे थे।

स्वामीजी ने सबको देखा तो उन्हे ऐसा लगा कि कोई भी उनका विश्वास नही कर रहा है, यहा तक कि स्वामीजी को स्वय लगा कि कही ऐसा तो नही है कि मैं ही काल्पनिकता के आवेश मे बह रहा हू, इसलिए अपने को पहलगाम, पजतरणी और अमरनाथ के मार्ग से जबर्दस्ती निकालकर वे सालो पहले घटित घटनाओ की भूलभुलैया मे ले गए। बोले—बाबू रामलाल ने हेमा माई को उनके पिता से एक तरह से मोल लेकर एक मकान मे रख लिया था। वे जैसाकि उन्होने स्वय बाद को कहा, नये सिरे से जवान हो गए थे। एक दिन उन्होने मुझसे कहा

ब्रह्मचारीजी (तब मै स्वामीजी नही था), मेरे मन मे बडा सन्देह है, क्या करू कुछ समझ मे नही आता !

मैने पूछा—क्या बात है, स्पष्ट बताओ।

उन दिनो प्रथम महायुद्ध दम तोड रहा था। क्रान्ति की क्षीण आशा अब भी थी। हमारे नेताओ ने बताया था कि जर्मनी अस्त्र-शस्त्र भेजेगा और हम क्रान्ति करेगे। मैं छावनियो मे घूम-घूमकर पिंगले और करतारसिंह के साथ विद्रोह का प्रचार कर रहा था। बाबू रामलाल हम लोगो को धन से सहायता देते थे, पर उनका यह पहलू केवल मुझको ही मालूम था, किसी अन्य क्रान्तिकारी तक को इसकी भनक नही थी। मैंने उनसे कहा—भई, जो बात है सो कहो। मुझे मेरठ की छावनी मे जाना है।

बाबू रामलाल कुछ सोचते रहे, फिर उन्होने बताया कि किस प्रकार अपनी पहली पत्नी की मृत्युशैया पर उनकी हेमा से भेट हुई और वही कुछ ऐसा आकर्षण उत्पन्न हो गया कि फिर उससे छुटकारा नही मिला। जब पहली पत्नी मर गई, और कुछ दिन बीत गए, तो उनकी अजीब हालत हो गई। जब भी वे अपनी पहली पत्नी को याद करते, तो उनके मानसपटल पर उसके चेहरे की बजाय हेमा का चेहरा उदित होता। बाबू रामलाल ने कहा—इस प्रवृत्ति ने इतना जोर मारा कि मैंने हेमा को मागकर अपने एक मकान मे रख लिया। अब मैं उसके साथ पति-पत्नी के रूप मे रहता हू।

इसपर मैंने कहा—बुरी बात है। क्या तुमने पैसे के दबाव से उसे अपने कब्जे मे किया है या वह तुमसे प्यार भी करती है ?

बाबू रामलाल बोले—उसीकी तरफ से प्यार ज्यादा है। वह तो कहती है कि जब मेरी पत्नी की मृत्यु हो जाने के बाद उसे मेरे घर आने का मौका नही मिला, तब वह बहुत दु खी रहने लगी थी।

इसपर मैंने कहा—अच्छी बात है, सोच लो, मैं मेरठ से लौट आता हू, तब कुछ करूगा। इस बीच तुम उसके पास मत जाओ। हा, उसे सारी सुविधाएं पहु-चाते रहो।

मैं सात या आठ दिन मे लौटा, तो देखता क्या हू कि बाबू रामलाल सूखकर काटा हो गए है, लगा कि इतने दिनो तक भोजन ही नही किया। तब मैं उन्हे लेकर उस मकान मे गया, जहा हेमा माई रहती थी, वहा देखा तो वे भी बिस्तर

पर पडी है। दोनो ने एक-दूसरे को देखा तो इस तरह दहकने लगे कि सोची हुई सारी बाते गडबडा गई।

मैंने कहा—तुम लोगो के मिलन को कौन रोक सकता है! मैं तुम लोगो की शादी कराऊगा। मैं ब्राह्मण भी था, इसके अलावा पुरोहित परिवार से था। कभी विवाह नही कराया था, पर मालूम था कि कैसे क्या होता है। काशी मे पिताजी के साथ बहुत बार विवाह कराने भी गया था। इसलिए मैं पोथी-पत्रा माग लाया और विवाह कराने को तैयार हो गया। बाबू रामलाल किसी तरह का शोर नही चाहते थे, और न चाहते थे कि किसीको कानोकान कुछ मालूम हो, इसलिए हम अपने दो-एक क्रान्तिकारी साथियो को ले आए और जिस तरह से हिन्दू विवाह होता है, उस तरह से विवाह हुआ। बाबू रामलाल धर्म के अन्तर्निहित सत्य को पहचान गए थे, इसलिए उन्हे धर्म के प्रचलित रूपो और अनुष्ठानो से वास्ता नही था, पर हेमा माई बडी धार्मिक थी, धार्मिक दो अर्थो मे—एक अनुष्ठानो मे, पूजा-पाठ और लौकिक ढकोसलो मे आस्था के अर्थ मे, और दूसरे उसके सबसे उज्ज्वल अर्थ मे। मैं तुम लोगो से कहता हू, सजय और विजय, शायद तुम लोगो की शादी हुई है, अजय और मृत्युजय, तुम लोगो से भी कहता हू, कि ऐसी उच्च चरित्र की महिला हमने नही देखी। बाबू रामलाल के एक रोए को बचाने के लिए हेमा माई हसते-हसते प्राणो को न्योछावर कर सकती थी। सजय और विजय, तुम लोगो को वैसी स्त्री नही मिली होगी। मैने जिस दिन देखा, उसी दिन से उसको अपनी मा बना लिया। अब हमने आकर जो कुछ सुना, जिस प्रकार से हेमा माई ने अपने दो बेटो का स्वार्थ होते हुए भी बाबू रामलाल के नाम को किसी प्रकार घसीटने से इन्कार किया और जिस प्रकार वे बाबू रामलाल का चित्र सामने रखकर मरी, उससे मेरी भक्ति और भी बढ गई है। वह एक आदर्श प्रेमिका थी।

स्वामीजी चुप हो गए।

कुछ देर तक बिल्कुल सन्नाटा रहा।

सजय ने कहा—स्वामीजी, मैं भी उनसे बहुत प्रभावित हुआ, पर कानून कानून ही है। आप चाहे तो मुझे मार सकते है, आपके पास पिस्तोल है, पर हम दोनो भाइयो के मर जाने से भी सम्पत्ति इन दोनो को नही मिलेगी, क्योकि कानून से इनका अधिकार सिद्ध नही है। आप जो कह रहे है, उसका कोई और प्रमाण नही है, अतएव···न कहलाइए।

—क्या तुम्हारा कानून मनुष्यता से बडा है ? क्या वह न्याय से बडा है ? क्या कानून न्याय के लिए है या दलितो को और कुचलने के लिए है ?

सजय ने धीरे से पर दृढता के साथ कहा—महाराज, कानून और न्याय इन दोनो मे कोई किसीसे बडा नही है। सब अपनी-अपनी जगह पर है। न्याय न्याय की जगह पर है, और कानून कानून की जगह। आप अछूतो से प्रेम करते हैं, शायद उस कारण आत्मप्रवचना कर रहे है। असल मे आपने न विवाह कराया और न ऐसी बात हुई जिससे इन दोनो के कानूनी अधिकार प्रमाणित होते है। आपकी पिस्तौल से सत्य नही बदल जाता

स्वामी रामानन्द ने पिस्तौल उठा ली और उसे खोलकर देखा कि उसमे कितनी गोलिया है, फिर वे अजय से बोले—वह दस्तावेज कहा है जिसके अनुसार इस मकान की मिल्कियत हेमा माई को सौंपी गई है ?

सब लोग इस अप्रत्याशित आचरण और प्रश्न से चकित रह गए। क्या ये स्वामी विकृतमस्तिष्क है ? यदि वे सजय और विजय को मारना चाहते है या महज धमकाना ही चाहते है, तो दस्तावेज की क्या जरूरत ? अजय सोचने लगा, कही स्वामीजी पागल तो नही है या अर्धपागल ? किसी भी हालत मे इस घर के अन्दर सजय और विजय पर किसी प्रकार का हमला होना ठीक नही रहेगा। स्वामीजी तो क्रान्तिकारी है, या न मालूम क्या है, पिस्तौल छोडकर भाग निकलेंगे, पर अपनी मुसीबत आ जाएगी। यही समझा जाएगा कि किसी पेशेवर गुण्डे के द्वारा दोनो भाइयो को मरवा दिया गया। और मरवा देने से भी सम्पत्ति मिलती कहा है ? जब विवाह प्रमाणित नही है तो सम्पत्ति तो कानूनी रूप से उन्हीकी रहेगी। उसने कुछ रुखाई से कहा—दस्तावेज सुरक्षित है, आप चिन्ता न करें।

अब स्वामीजी पिस्तौल लेकर उठ खडे हुए और अजय की तरफ उसकी नली करके बोले—फौरन जो कहता हू सो करो, दस्तावेज निकाल लाओ। खबरदार, भागने की कोशिश न करना !

अजय ने मृत्युजय की तरफ, और फिर सजय और विजय की तरफ देखा, पर किसीसे कुछ इगित नही मिला, सब लोग हतबुद्धि होकर बैठे हुए थे। वे भी शायद स्वामीजी को पागल समझ रहे थे। अजय खडा तो पहले ही हो गया था, अब वह उसी कमरे मे रखे एक बक्से को खोलने लगा। स्वामीजी जाकर ऐसी जगह खडे हो गए, जहा वे एकसाथ अजय और बाकी तीनो पर निगरानी रख सकते थे। अजय ने

जान-बूझकर पहले गलत चाबिया लगाईं। वह चाहता था, कुछ हो जाए, जिससे समय मिले। पागल आदमी है, कही दस्तावेज फाड डालें, या और कुछ किया, या उसमे कुछ और लिखवाया, तो सारा किया-कराया बेकार हो जाएगा। भावुक मुहूर्त मे मकान दे दिया , बार-बार वैसा मौका कहा आता है!

स्वामीजी दरवाज़े के पास से खडे-खडे कडकती आवाज़ मे, जैसे सेनापति सेना को आवाज़ देता है, उस तरह से बोले—जल्दी निकालो!

तब अजय को दस्तावेज निकालना पडा। वह उसे लाकर अपनी कुर्सी पर बैठ गया। बोला—महाराज, हमे सम्पत्ति मे भाग नही चाहिए। आप बिल्कुल चिन्ता न करे। यदि ये सम्पत्ति न देना चाहे तो न दे, खुश रहे। हमारी गुज़र पहले भी होती थी, अब भी हो जाएगी।—कहकर उसने दस्तावेज़ को अपने पास कर लिया।

स्वामीजी आकर अपनी कुर्सी पर बैठ चुके थे, बोले—तुम बिल्कुल गलत समझ रहे हो। तुम हेमा माई के योग्य पुत्र नही हो। यदि ये तुम्हे अपना भाई नही मानते, तो तुम्हे यह मकान नही लेना चाहिए। तुम ये दस्तावेज़ इन्हे वापस कर दो, और यदि ये वापस नही लेते तो इन्हे जला दो।—कहकर उन्होने एक दियासलाई निकाली और अजय के हाथ मे दी।

अजय फिर भी हिचकिचाता रहा। उसका चेहरा देखने से यह स्पष्ट ही पता लग रहा था कि उसका चेहरा एक सशस्त्र पागल के हाथो मे पडे हुए व्यक्ति जसा हो रहा था। उसने दियासलाई नही ली। तब स्वामीजी ने झपट्टा मारकर बडल छीन लिया और चारो भाइयो के सामने उसमे आग लगा दी। ज्यो-ज्यो दस्तावेज़ राख मे परिणत होते गए, त्यो-त्यो स्वामीजी की बाछे खिलती गईं। बोले—हेमा माई किसीका दान नही लेती! तुम्हारे बाप ने सौ दफे पैर पकडे थे, तब जाकर वे उनकी पत्नी बनी थीं।

दस्तावेज़ जलकर राख मे परिणत हो गया। स्वामीजी राख की तरफ देखते रहे। बोले—केवल फेरोवाली शादी ही शादी नही है। आज घर-घर मे फेरेवाली शादी के हज़ारो शिकार निरन्तर कराह रहे है और खून के आसू रो रहे हैं, पर मैं तो कहता हू, इस क्षेत्र मे फेरे भी हुए थे, यद्यपि शादी पहले हुई थी।

किसीने कुछ नही कहा, क्योकि सब स्तम्भित थे। न तो सजय और विजय उनको अपना मित्र समझ पा रहे थे और न अजय और मृत्युजय। पता नही ये

किसके मित्र थे। शायद इन लोगो के विचारो को पढते हुए स्वामीजी बोले—मैं किसीका मित्र नही हू, मैं तो केवल मूल्यो और मान्यताओ का मित्र हू। मैं किसीके प्रति कोई अन्याय नही देख सकता। तुम लोगो मे से कोई भी बाबू रामलाल या हेमा भाई का पुत्र होने लायक नही है। मैं चाहता हू कि तुम उनके योग्य बनो।

स्वामीजी ने उत्तर के लिए प्रतीक्षा की, पर किसीने कुछ नही कहा। तब वे बोले—अच्छी बात है, मैं तुम लोगो से तुम्हारी सतह पर ही मिलूगा। अब मैं जाता हू।—कहकर वे सक्षिप्त-सा झोला लेकर उठ खडे हुए। जाते समय उन्होने हेमा भाई के चित्र को भक्ति के साथ प्रणाम किया।

चारो युवक उन्हे आश्चर्य के साथ देखते रहे। जब वे चले गए, तो सजय और विजय बिना कुछ बोले जाकर अपनी कार पर बैठ गए।

६

आनन्दकुमार जब वर्धा के लिए रवाना हुए, तो वे स्वय किसी नतीजे पर नही पहुच पाए थे। यदि एक प्रकार की घटनाए होती, तो कुछ निर्णय किया जा सकता था, पर घटनाओ की दिशाए भिन्न थी। सुभाषचन्द्र बोस ने तो त्रिपुरी काग्रेस मे ही अपने अभिभाषण मे यह कहा था कि लडाई आ रही है, यह एक स्वर्णिम अवसर है, इसे हाथ से न जाने दिया जाए, छ महीने की मोहलत देकर ब्रिटिश सरकार से लडाई छेड दी जाए। दूसरे वामपक्षियो ने भी ऐसा ही कहा था। श्यामा तो अन्त तक इसीकी रट लगाए रही, पर कर्तव्य का निर्णय इतना आसान नही था।

जब आनन्दकुमार वर्धा पहुचे, तो वहा भी किसीमे किसी प्रकार का स्पष्ट चिन्तन नही था। राजेन्द्र बाबू ने जो भाषण दिया, उससे परिस्थिति कुछ स्पष्ट नही हुई। वही माग रखी गई थी कि सरकार अपने युद्ध-सम्बन्धी उद्देश्य बताए। आत्मनिर्णय तथा लोकतन्त्र के लिए ससार को निरापद बनाने का नारा देकर प्रथम महायुद्ध लडा गया था, पर हुआ क्या? इसी प्रकार नात्सी आक्रमण के विरुद्ध बार-बार वक्तव्य दिए जा चुके है। भारत ही एकमात्र देश नही है जो पोलैण्ड के साथ सहानुभूति रखते हुए भी लडाई मे नही शरीक होना चाहता। यदि पराधीन

भारत से यह कहा जाता है कि वह एक ऐसे युद्ध मे भाग ले, जिसके द्वारा पोलैण्ड की स्वतन्त्रता का पुनरुद्धार किया जाएगा, तो भारत स्वाभाविक रूप से यह कह सकता है कि क्यो न हमे स्वतन्त्र कर दिया जाए, ताकि हम पूर्ण जोश के साथ इस स्वातन्त्र्य-युद्ध मे भाग ले सके। स्वय स्वतन्त्रता से वचित रहने और दूसरो की स्वतन्त्रता के लिए लडने का कोई अर्थ नही होता। ब्रिटिश सरकार युद्ध के सम्बध मे जिन उद्देश्यो की घोषणा कर चुकी है, वह यदि उनपर उन क्षेत्रो मे भी आचरण नही करती, जहा वह कर सकती है और उसे व्यावहारिक रूप नही देती, तो फिर भारत उसका विश्वास कैसे करे? विगत महायुद्ध की अभिज्ञता तो कुछ और ही बताती है।

जो प्रस्ताव अखिल भारतीय काग्रेस कमेटी के सामने रखा गया, उसमे भी इसी प्रकार की बाते कही गई। जोरदार शब्दो मे नात्सीवाद की निन्दा की गई, पर साथ ही यह कहा गया कि शान्ति और स्वतन्त्रता की स्थापना तथा रक्षा तभी हो सकती है, जब उक्त महान सिद्धान्तो को औपनिवेशिक देशो पर लागू किया जाए। विशेष रूप से भारत को एक स्वतन्त्र देश घोषित किया जाए और जहा तक हो सके, वर्तमान अवस्था मे उसे अधिक से अधिक स्वतन्त्रता दी जाए।

आनन्दकुमार वर्धा मे इतने दु खी रहे कि उन्होने कोई भाषण ही नही दिया। इस समय काग्रेस की नीति केवल प्रतीक्षा करने की मालूम होती थी। स्पष्ट ही नेताओ को कुछ सूझ नही रहा था। कारण वही था कि घटनाए स्वय कुछ नही बोल रही थी। यदि भारत स्वतन्त्र होता, तो उसका स्पष्ट कर्तव्य न केवल दूसरो को परतन्त्र बनानेवाले नात्सीवाद और फासिस्टवाद के विरुद्ध लडना होता, बल्कि साम्राज्यवाद के विरुद्ध भी लडना होता। नात्सीवाद और साम्राज्यवाद मे जो फर्क आनन्दकुमार को और उनकी तरह के बहुत-से निरीक्षको को लगता था, वह इतना ही था कि साम्राज्यवादो ने सौ-पचास साल पहले विजय का अभियान किया था और नात्सीवाद अब कर रहा है। एक लूट मचाकर शरीफ बन गया था, दूसरा लूट के लिए ललकारकर निकला था।

पता नही क्यो आनन्दकुमार को तुरन्त काशी लौटने की इच्छा नही हो रही थी, इसलिए अखिल भारतीय काग्रेस कमेटी की बैठक समाप्त होने पर भी वे वर्धा मे रह गए थे, यानी वे उस गाडी से नही गए थे, जिससे बाकी सब लोग जा रहे थे। बार-बार उनके दिमाग मे यही बात आ रही थी कि यह जो राष्ट्रीय

आन्दोलन की धारा आकर अन्तर्राष्ट्रीय आन्दोलन के समुद्र मे मिल गई, इससे इसे कुछ लाभ नही हुआ, क्योकि यह खो गया।

वे मानसिक परेशानी मे लाठी हाथ मे लेकर टहलने निकले, तो सामने से धनजय आता हुआ दिखाई पडा। वह बहुत खुश लग रहा था। यह खुशी बनावटी नही थी, बल्कि यह उस नदी की खुशी थी, जिसके भीतर के सारे सोते चालू हो चुके हं। आनन्दकुमार ने उसका प्रफुल्ल तथा उद्भासित चेहरा देखा तो वे भी खुश हुए, बोले—कहो भाई, कितने दिनो से यहा हो ? कब आए थे ?

धनजय ने प्रश्न का उत्तर नही दिया, बोला—दो-एक दिन रहूगा। आप अभी गए नही ? सब लोग तो चले गए।

धनजय भी बात करना चाहता था, इसलिए वह आनन्दकुमार के साथ हो लिया, बोला—मैंने इधर बहुत काम किया, सब लोग समझ चुके है कि बूढे नेता अब कुछ नही कर पाएगे। वे युद्ध का उद्देश्य पूछने मे ही रह जाएगे और इधर लडाई खत्म हो जाएगी। मैंने इसीलिए लोगो को पटरी उखाडने और तार काटने का कार्यक्रम समझा दिया। लोग इसपर बहुत खुश है।

—लोग कौन ? ए० आई० सी० सी० के सदस्य ?

—कुछ वे भी, पर अधिकतर वे लोग जो उनके साथ आए थे। हर सदस्य के साथ कोई न कोई आया था। भला यह भी कोई पूछने की बात है कि युद्ध का उद्देश्य क्या है ? युद्ध का उद्देश्य है लडाई जीतना , और क्या उद्देश्य होता है ! और लडाई इसलिए जीतना कि पहले से हालत अच्छी हो, न कि इसलिए कि अपना साम्राज्य समाप्त हो जाए। न नौ मन तेल होगा, न राधा नाचेगी। आप लोगो ने यह अच्छा तमाशा कर रखा है। अब आप मान गए न कि काग्रेस का नेतृत्व सठिया गया है ? अब आप लोगो के वश का कुछ भी नही है। आप लोगो ने नया नेतृत्व आने नही दिया, उसका खमियाजा भारत को भोगना पडेगा। इतनी बडी बैठक हुई, पर कुछ नही हुआ। लोग तो कैसी-कैसी आशाए रखते थे, पर खोदा पहाड और निकली चुहिया !

आनन्दकुमार की समझ मे आ गया कि धनजय इतना नाराज क्यो है कि हर वाक्य मे एक व्यग्यबाण छोड रहा है। वह चाहता था कि सुभाष ही काग्रेस के अध्यक्ष बने रहे, जबकि गाधीजी ने पट्टाभि को खडा किया था। उन्हे वह दृश्य याद आया जब वह पट्टाभि को मारकर सुभाष का रास्ता साफ करना चाहता था।

आनन्दकुमार ने उस समय उसकी पिस्तौल छीन ली थी और बाद को उससे कहा था—मेरे प्यारे भाई, काग्रेस तो मेरे ऐसे लोगो से ही भरी है। उसे कहा तक गोली मारकर सुधारोगे!

साथ ही उन्हे ध्यान आया कि धनजय के चले जाने पर उन्होने अपने साथियो से कहा था—धनजय हास्यास्पद लगता है, पर ऐसे ही लोग क्राति के उपकरण बनते है।

आज वही धनजय उनके सामने खडा था और उन्हे लग रहा था कि तार काटो और पटरी उखाडो वाला कार्यक्रम फिर भी कुछ कार्यक्रम तो है। सच तो है कि इस समय ब्रिटिश सरकार महायुद्ध मे फस चुकी है, यदि भारत मे बहुत-सी रेलो की पटरिया उखड जाए और तार कट जाए, तो युद्ध-प्रयास को बहुत हानि पहुचाई जा सकती है। सम्भव है गडबड मे भारत स्वतन्त्र ही हो जाए। उन्होने धनजय के चेहरे की तरफ देखा। स्पष्ट झलक गया कि इस युवक का चेहरा खुशी से खिल रहा है, पर यह शायद भूखा है। बोले—चलो, मेरे साथ चलो, कही बैठकर कुछ खाएगे।

धनजय को स्मरण हो आया कि वह जब भी आनन्दकुमार के घर जाता था, तो श्यामा और रूपवती उसको खिलाए बिना नही छोडती थी। धनजय बोला—चलिए, मैं भी भूखा हू।

आनन्दकुमार ने कहा—मैं भी भूखा हू। दन्तकटाकटी से बहुत भूख लगती है। चलो, दूसरी ओर की दन्तकटाकटी करे।

अखिल भारतीय काग्रेस कमेटी की बैठक के कारण जो दुकाने विशेष रूप से खुली थी, उन्हीमे से एक मे दोनो दाखिल हो गए।

औपचारिक बातचीत के बाद ज्योही पहला मौका आया, धनजय ने कहा—अब तो वह पिस्तौल दिला दीजिए। अब तो उसके लिए मौका आ गया है। मैं विश्वास दिलाता हू कि उसका दुरुपयोग नही करूगा।

आनन्दकुमार प्रसन्न होकर बोले—अब तुम समझ गए हो न कि उस समय जिस प्रकार से तुम पट्टाभि पर गोली चलाकर काग्रेस के अन्दर गरमपथ और नरमपथ की समस्या को सुलझाना चाहते थे, वह गलत होता? अब तुम मानते हो कि नही कि वह पिस्तौल का दुरुपयोग होता?

आई हुई पकौडियो की प्लेटो को ठीक बीचोबीच रखते हुए धनजय ने कहा

—गलत इस माने मे होता है कि एक पट्टाभि को मारने से कुछ नही आता-जाता, काग्रेस तो एक से एक माडरेटो से भरी पडी है।•••

—हा, वही बात हुई न ? पर अब तो तुम लोगो को खुल खेलने का मौका है, जो चाहे सो करो, कोई नही रोकेगा। जनता ब्रिटिश शासन से इतनी ऊब चुकी है कि अब वह बिना सोचे-समझे किसी प्रकार के परिवर्तन मे कूद पडने के लिए तैयार है।

जल्दी-जल्दी पकौडिया खाते हुए धनजय ने कहा—आप कुछ नही खा रहे हैं ? क्या बात है ?

—मेरी भूख या प्यास कह लो, चाय तक ही सीमित है। यह सब तुम खाओ, और भी चीजें आ रही है।

धनजय का मुह खाद्य द्रव्यो से भरा हुआ था। वह उन्हे चाय के सहारे जल्दी से गले के नीचे उतारकर बोला—मैं यही तो कहा करता था, जिसपर आप सब लोग मुझपर बिगडे, कि तैयारी अभी से होनी चाहिए। क्रान्ति यह बताकर थोडे ही आती है कि मैं आ रही हू, तुम लोग मेरे लिए पचप्रदीप लिए प्रतीक्षा करो। वह तो तुषारखण्ड की तरह एकदम से बिजली की तेजी से उतरती है। यह महा-युद्ध हमपर उस तरह से नही उतरा। हिटलर का जिस दिन से उदय हुआ, उसी दिन से यह महायुद्ध ससार पर उतरा। अब आप मुझे वह पिस्तौल दिला दीजिए, और हा, वे रुपये भी।

—कौन-से रुपये ?

धनजय ने याद दिलाते हुए कहा—आपको स्मरण होगा कि हमने एक जबर-दस्ती चन्दे का •

—तुम्हारा मतलब डकैती से है ?

—हा। हमने जबरदस्ती चन्दे मे कई हजार रुपये पाए थे, अब आप उन्हे दिला दीजिए।

—मैं कौन होता हू दिलानेवाला ?

धनजय ने फिर भी कहा—श्यामाजी आपको गुरु की तरह मानती है, और अर्चनाजी श्यामाजी को मानती है। उन्होने ही वह धन कही रख दिया है। इस समय वह धन मिलना चाहिए ताकि प्लास आदि खरीदे जा सकें। हमे हजारो सीढिया चाहिए और लाखो प्लास। इसमे तो आपको आपत्ति भी नही होनी

चाहिए, क्योकि इसमे किसी प्रकार की हिंसा नही है, कोई हत्या नही है, न कोई जबरदस्ती है। आख बचाकर पटरी उखाड दो, तार काट दो। डाइनामाइट मिल जाए तो पुल उडा दो। इन सारी बातो का नतीजा यह होगा कि भारत सरकार यानी वाइसराय की सरकार युद्ध-प्रयास मे हाथ बटाने की बजाय स्वय अपनी रक्षा मे सलग्न हो जाएगी। उन्हे बहुत काफी सेना भारत मे सम्भव क्रान्ति को दबाने के लिए रखनी पडेगी।

आनन्दकुमार महज़ दिखावे के लिए सैण्डविच का एक टुकडा उठाते हुए बोले—तुमने तो सारी समस्याओ का बडी अच्छी तरह अध्ययन किया है।

—हा। हमने रेलो, सडको, पुलिस और फौज की स्थिति तथा सख्या का अध्ययन किया है। इसके बिना तो काम ही नही चलता। मैं बडे ध्यान से युद्ध की खबरें पढ रहा हू, जो विशेष लेख निकलते है, उन्हे भी पढता हू। हिटलर ने १८ सितम्बर तक सब श्रेणियो के ११६ डिवीज़न गतिशील किए थे, जिनमे पश्चिमी मोर्चे पर ४२, मध्य जर्मनी मे १६, और पूर्वी मोर्चे पर ५८ डिवीज़न बताए जाते है। पोलैण्ड पर हमले मे ५८ बहुत तजुर्बेकार डिवीजनो का इस्तेमाल हुआ। —कहकर वह गर्व के साथ हसा, जैसे हिटलर ने नही, बल्कि उसीने ये सारे डिवीज़न प्रस्तुत किए हो।

वह और भी बहुत कुछ कहने जा रहा था। आनन्दकुमार समझ गए कि यह युवक क्रान्ति के पीछे पागल हो रहा है। वे एकाएक कह बैठे—जहा इतने डिवीज़नो का मामला है, वहा तुम थोडे-से नौजवान हज़ार, दो हज़ार प्लास और डाइनामाइट की एकाध स्टिक लेकर क्या करोगे? शत्रु बहुत ही शक्तिशाली है। इसी कारण गाधीजी का उपाय ही एकमात्र उपाय है।

पकौडियो, सैण्डविचो और चाय से धनजय का अर्धभोजन से क्षीण चेहरा खिलकर तमतमाने लगा था। बोला—इसमे सन्देह नही कि हमारे शत्रु बहुत ही ज़बर्दस्त है, पर हम भी तो अब वैयक्तिक हत्याओ के तरीके तक अपने को सीमित नही रखना चाहते। हम तो गाव वालो मे प्लास बाट देंगे और उनमे ऐसी स्प्रिट पैदा कर देंगे कि खुद-ब-खुद पटरिया उखडती जाए और तार कटते चले जाए। नतीजा यह होगा कि सरकार और जनता का सम्मुख-युद्ध शुरू हो जाएगा, सम्मुख-युद्ध इस माने मे नही कि जनता ताल ठोककर कुरुक्षेत्र की तरह किसी मैदान मे आकर खडी हो जाएगी, बल्कि वह जब भी लडाई करेगी, तो छिपकर लडाई करेगी। आपको

स्मरण होगा कि विगत सत्याग्रह आन्दोलन मे भी जनता ने यह तकनीक सीख ली थी। सभाओ मे नमक बनता था और ज्योही पुलिस को खबर लगती थी, त्योही जनता आसपास की गलियो मे घुस जाती थी। कढाही वगैरह पर पुलिस कब्जा कर लेती थी, पर पुलिस के जाते ही फौरन नयी कढाही आ जाती थी और नमक बनाने का कार्यक्रम शुरू हो जाता था। जनता जो सबक सीख लेती है, उसे भूलती नही है, इसलिए हमे विश्वास है कि जब हम उसे यह नया खेल सिखाएगे, असली बात तो यह है कि हम उसे सिखला रहे है, तब वह निरन्तर उसे खेलती रहेगी। गाव-गाव मे जब यह खेल फैल जाएगा, तभी हमारा काम बनेगा। पर उसके लिए पहले रुपया चाहिए, बाकी बाते तो हम कर लेगे।

देर तक आनन्दकुमार धनजय से बात करते रहे। वे मानने के लिए बाध्य हुए कि एक ओर काग्रेस नेताओ मे केवल अनिश्चय की भावना फैली हुई थी, दूसरी ओर यह युवक था, जिसमे सब कुछ दिन की तरह स्पष्ट और निश्चित था। लडाई छिड जाने के कारण इसमे आशा का इस प्रकार सचार हुआ था, जैसे रक्त-क्षय के कारण दुर्बल रोगी मे कृत्रिम रूप से रक्तसचार करने से होता है। धनजय भविष्य को ऐसे देख रहा था जैसे कोई काच-मढे जगले के अन्दर से सूर्योदय की लालिमा को देखता है।

उसके चेहरे पर, आखो की शिराओ मे, कनपटियो पर—सर्वत्र उस लालिमा की छाप थी। जिसे पेट-भर खाने को नही मिलता था और न साफ-सुथरे कपड़े ही मिलते थे, उसकी आखो मे ये सपने बहुत ही अजीब लगते थे, पर न तो वे अप्रासगिक लगते थे और न किसी प्रकार बेतुके मालूम होते थे।

थोडी देर पहले आनन्दकुमार लौटने से इसलिए हिचकिचा रहे थे कि श्यामा को क्या कहेगे। श्यामा के पास आनेवाले नौजवानो से क्या कहेगे? पर अब उन्हे मालूम हुआ कि कुछ कहने को है, पर साथ ही बडा सन्देह हुआ—तो क्या गाधीजी के हाथो से नेतृत्व निकल जानेवाला है? जानेवाला है, तो क्या यह भला होगा? क्या कोई नया समन्वय न होगा? कुछ समझ मे नही आ रहा था।

धनजय ने स्वय ही बताया—मैंने एक नये ढग के प्लास का आविष्कार किया है, जो मामूली लुहारखानो मे बनाए जा सकते है। हमने ऐसे कई सौ प्लास तैयार कर लिए हैं। पटरिया उखाडने के लिए रेच आदि भी इकट्ठे कर लिए हैं। लोगो मे बड़ा उत्साह है।

आनन्दकुमार ने योही सूचना एकत्र करने के लिए पूछा—तो फिर तुम लोग शुरू क्यो नही करते ?

—शुरू इसलिए नही करते कि अभी हम देखना चाहते है कि काग्रेस कहा तक आगे जाएगी। काग्रेस मन्त्रिमण्डलो के रहते हुए हमारा सिर्फ प्रचार ही चलेगा।

—तो क्या तुम लोगो को आशा है कि काग्रेस मण्त्रिमण्डलो को इस्तीफा देना पडेगा ? यह निष्कर्ष तुम लोगो ने किस बात से निकाला ? या यह महज तुम लोगो की इच्छा-मात्र है ?

—नही। या तो काग्रेस को खुलकर युद्ध प्रयास मे सहायता देनी पडेगी या फिर उसे अलग हो जाना पडेगा। हर हालत मे ब्रिटिश सरकार तो युद्ध-प्रयास जारी रखेगी और उसमे किसी तरह कमी नही आने देगी।

आनन्दकुमार ने देखा कि इस युवक मे स्पष्ट चिन्तन है, जो बहुत आश्चर्य-जनक है, क्योकि जब यह पिस्तौल लेकर पट्टाभि को मारने के लिए आशीर्वाद लेने आया था, तब यह एक अत्यन्त भावुक, रोगी की हद तक, साथ ही वास्त-विकता से कोसो दूर उडान भरनेवाला लगा था, पर आज इसकी भावुकता ही इसे बल दे रही थी और तूफानी समय मे इसे सही मार्ग सुझा रही थी। उन्होने बडे आदर के साथ कहा—मै आज रात की गाडी से रवाना हो रहा हू, तुम मुझे काशी मे मिलना।

—मुझे वह पिस्तौल दिलाइएगा न ?

आनन्दकुमार ने उठते हुए कहा—मैने लिया ही कब था ? वह तो श्यामा के पास है, और जैसे तुम्हारे पास होना है, वैसे ही श्यामा के पास होना है। वे लोग सब लोग इसी मत के है कि अब क्रान्तिकारी आन्दोलन को जन-आन्दोलन के रूप मे आगे बढाना है। स्पष्ट रूप किसीके सामने नही है, पर वे समझते है कि क्रान्ति के लिए वातावरण तैयार हो गया है।

दोनो उठकर साथ-साथ चलते रहे। आनन्दकुमार थोडी देर बाद अपने शिविर की तरफ चले। धनजय अपने ठीहे की तरफ चला गया और जाते समय कह गया—मैं आपसे शीघ्र ही मिलूगा। आप श्यामा दीदी को सारी बातें कह रखिएगा। अब हमे समय खोना नही है। हमे रुपये चाहिए, प्लास चाहिए, रेच चाहिए, पिस्तौल चाहिए, बम चाहिए—सभी कुछ चाहिए। सौभाग्य से हम लोग

बिलकुल गाफिल नही है। आशा है कि कुछ होकर ही रहेगा।

७

उस दिन रात को स्वामी रामानन्द जो उठे, तो वे एकदम चलकर ट्रेन पर सवार हो गए और वहा से काशी पहुचे। बहुत सालो बाद काशी आए थे। बहुत कुछ बदला हुआ था। हृदय मे एक टीस उठ रही थी, उन लोगो को याद करके जिनके साथ पहले काम किया था। अब उनमे कौन कहा था, कुछ पता नही। चन्द्रशेखर आज़ाद की शहादत के बाद वे बिना किसीसे कुछ कहे हिमालय चले गए थे। एक मित्र ने बहुत समझाया था—अब आप सामने आओ

पर वे किसीकी बात न मानकर यात्रा पर चल पडे थे। जाते समय कह गए थे—चन्द्रशेखर तो कल राजनीति मे आया था, उससे बढकर वीर क्रान्तिकारियो मे भी कम थे, पर वह भी मारा गया। वैयक्तिक हत्या, डकैती, पर्चेबाज़ी का यह मार्ग ही कुछ त्रुटिपूर्ण है। मैं तो तभी आऊगा, जब जनक्रान्ति की कोई सम्भावना हो। मुझे लोग कायर समझेगे, समझे। शहादत तभी रग ला सकती है जबकि आज एक के शहीद होने पर कल दस होते और परसो सौ होते और फिर सारा देश शहीद होने के लिए तैयार हो जाता। पर हुआ क्या, हो क्या रहा है ? जब हमने कार्य शुरू किया था, तब खुदीराम ने फासी पाई थी। वह उस समय एकाकी यात्री था। आजाद उसके बीस बाईस साल बाद गए, तब भी वे एकाकी यात्री ही थे। हा, एक लौ जारी है, अलख जग रहा है, पर हमे इससे सन्तोष नही है। हम तो चाहते है कि सातवे आसमान तक ज्वाला प्रसारित करके आग जले और उसमे भस्म हो जाए ब्रिटिश सत्ता, पर वह कहा है ?

उस दिन वह समझानेवाला वृहस्पति था। पता नही वह अब जिन्दा है कि नही ? स्वामीजी ने हिसाब लगाया तो वृहस्पति की उम्र पैसठ से ऊपर ठहरती थी। उसी वृहस्पति से स्वामीजी मिलने जा रहे थे। वे स्टेशन से इक्के पर वृहस्पति के घर पहुचे, यानी उस घर मे पहुचे जो कभी वृहस्पति का हुआ करता था। वे खट्-खट् सीढी से ऊपर की मजिल मे पहुच गए तो एक युवक ने उनको प्रणाम किया, पर साथ ही उसके चेहरे से यह लग रहा था कि स्वामीजी रास्ता भूलकर ही इधर आए होगे। स्वामीजी ने कहा—मैं वृहस्पति से मिलने आया हू

उस सौम्यदर्शन युवक के होठो पर मुलायम व्यग्य फैल गया, बोला—महा-राज, यहा तो कोई वृहस्पति नही है।

स्वामीजी कुछ झेपे, पर अगले ही क्षण याद करते हुए बोले—यह घर किसका है ? क्या यह पकजकुमार का घर नही है ?

युवक नम्रतापूर्वक बोला—जी हा, यह उन्हीका घर है।—कहकर वह दु खी हो गया।

—मैं उन्हीसे मिलने के लिए आया हू। वे वृहस्पति थे, और मैं हू शुक्राचार्य।

युवक ने स्वामीजी का चरण स्पर्श करते हुए कहा—मैं उनका बेटा हू, पर आप कुछ देर से आए।

—क्यो ?

स्वामीजी की भौहें बचावात्मक ढग से सिकुड गई कि कही कोई बुरी खबर सुनने को न मिले। बोले—क्यो ? क्या वे दिवगत हो गए ?

युवक ने कहा—नही, वे जीवित है पर बेहोश हैं। अजीब ढग से वे बेहोश हुए। ज्योही उन्होने अखबार मे पढा कि महायुद्ध छिड गया है, त्योही वे बेहोश हो गए, जैसे एक रासायनिक परिवर्तन हुआ। घर-भर को बुलाकर कहने लगे—अब फिर मौका आया सालो बाद तो हम तैयार नही है। पता नही हमारे सब साथी, कौन कहा पर है ! बडा अनर्थ हुआ ! फिर बीस साल प्रतीक्षा करनी पडेगी, जब तक कि तीसरा युद्ध न छिडे। हम लोगो ने समझाया कि आप नही है तो क्या, और लोग तो है। आप चिन्ता न करे। देश अवश्य स्वतन्त्र होगा। पर वे बेचैन बने रहे और बार-बार अखबार पढते रहे। कुछ खाना नही खाया, पानी नही पिया, और चार-पाच घण्टे बाद बेहोश ही बने है।

युवक स्वामीजी को वृहस्पति की शय्या के पास ले गया। स्वामीजी ने पहले तो बडे ध्यान से वृहस्पति को देखा। दाढी बढी हुई थी। चेहरा कुम्हलाया हुआ था, पर झुरियो के अन्दर से तेज और बेचैनी छिटक रही थी। अपने साथियो मे वृहस्पति एकमात्र गृहस्थ थे, पर ऐसे गृहस्थ थे, जिन्होने कभी गृहस्थी की परवाह नही की। कभी किसी कार्य मे उन्हे पाव पीछे करते या मुडकर देखते नही देखा। यह वह वृहस्पति था, जिसने कई बार पुलिस वालो से खण्ड-युद्ध किया, जिसने उत्तर भारत मे कई जगह बम के कारखाने खोले, युवको को गोली चलाने की

शिक्षा दी। खुदीराम का यह साथी, काकोरी के शहीदो, भगतसिंह तथा आज़ाद का अन्यतम गुरु आज इस तरह सो रहा था , शायद यह कभी नही उठेगा।

स्वामीजी ने कुछ देर तक खडे रहने के बाद वृहस्पति के पैरो के पास आसन ग्रहण किया। फिर युवक ने तथा परिवार के अन्य लोगो ने एकाएक देखा कि स्वामीजी की आखो से अश्रुधारा जारी हो गई है। वे भी नीरव रोदन करने लगे।

किसीने किसीके आसू नही पोछे। क्योकि यही भारत के ही नही, ससार के महान दिक्पालो की पद्धति थी। कुछ देर तक इस प्रकार बैठने के बाद स्वामीजी ने इलाज के सम्बन्ध मे पूछ-ताछ की। मन ही मन समझ गए कि वृहस्पति अब नही उठने के। वे अब तक यह भूल ही गए थे कि किसलिए वे आए है, पर जब कुछ करने को नही रहा तो वृहस्पति के बेटे को अलग ले जाकर बोले—कुछ पुराने कागज़ात है, मैं उन्हे देखना चाहता हू।

युवक ने कहा—कागजात यहा पर नही है, पर आप आज्ञा दे तो मै उन्हे ला सकता हू या आपको ही वहा ले चल सकता हू, जहा वे कागज़ात हैं।

यही निश्चित हुआ कि वही चला जाए। कई गलिया पार कर दोनो पाडे हवेली मुहल्ले के एक पुराने मकान मे दाखिल हुए। वे सीढिया चढकर तीसरी मज़िल पर एक कमरे मे गए । वहा उन्हे एक वृद्धा मिली, जिन्हे देखते ही पता लग गया कि वे अन्धी है। उन्होने आहट पाते ही कहा—कौन ? तपन ?

युवक ने कहा—जी हा।

—तुम्हारे पिता की हालत क्या है ?

—वैसी ही है। मैं साथ मे शुक्राचार्यजी को लाया हू, वे कुछ पुराने कागज़ात देखना चाहते है।

—शुक्राचार्य ? नाम सुना मालूम होता है।—बुढिया ने अन्धी आखो को इस ओर करके कहा।

स्वामीजी ने कहा—माताजी, मैं प्रणाम करता हू। मै आपके बेटे के साथ उस समय था, जब उसे पुलिस ने गोली मारी थी।

वृद्धा एकदम चौकन्नी हो गई। बीस-बाईस साल पहले की बात थी—उनके जवान बेटे को पुलिस ने गोली से मारा था। उस समय किसीने उन्हे यह खबर नही दी थी। वे यही जानती थी कि बेटा फरार है। कही देश का काम कर रहा है। पर जब असहयोग आन्दोलन चला, उसकी लौ अग्निकाण्ड के रूप मे प्रकट हुई और

फिर शान्त हो गई, तब एक दिन वृद्धा ने वृहस्पति से कहा था—सबके बेटे घर लौट आए, मेरा बेटा क्यो नही लौटा ? यदि वह जीवित होता तो अवश्य लौट आता। आखिर आप लोग भी तो है, देशसेवा कर रहे है, पर गृहस्थी छोड़ी नही है।

तब वृहस्पति को यह बताना पडा था कि किस प्रकार पाच साल पहले ही पुलिस के साथ एक खण्ड-युद्ध मे उनका बेटा शहीद हुआ था। चन्दननगर के एक मकान मे फरार क्रान्तिकारी एकत्र थे। खबर पाकर फ्रेंच पुलिस ने अधेरे मे घेरा डाला , तब सभी क्रान्तिकारी भाग निकलने मे समर्थ हुए थे, केवल प्रभासकुमार भाग नही सका था। असली बात तो यो है कि प्रभासकुमार ने पिस्तौल लेकर पुलिस की टुकडी का सामना किया था, तभी और लोग भाग सके थे।

स्वामीजी ने कहा—मैंने प्रभास से बहुत कहा था कि भाई, तुम अभी बच्चे हो, तुम भाग जाओ, मैं पुलिस टुकडी का सामना करता हू। पर वह बोला जल्दी कीजिए, आपकी जान अधिक कीमती है। मेरी सार्थकता तो इसीमे है कि मै नीव की ईंट बनू ।—कहकर उसने मुझे तथा दूसरे साथियो को एक तरह से धक्का देकर पीछे कर दिया और स्वय पिस्तौल हाथ मे ले निकलकर पुलिस की टुकडी की तरफ दौड पडा। उसी बीच हम लोग भाग निकले। तब से भाग रहा हू। सब कुछ समझ मे आया, पर यह समझ मे नही आया कि मेरी जान उससे कीमती कैसे है। जान तो कीमती तभी बनती है, जब किसी महान उद्देश्य के लिए अर्पित करके दे दी जाती है। यो तो मा सभी जीते है •

मा के चेहरे पर जो रेखाए बनी और मिटी, उन्हे दु ख की रेखाए कहा जाए या आनन्द की, यह निश्चित रूप से कहा नही जा सकता था। धीरे-धीरे अपनी अन्धी आखो से, जिधर से शुक्राचार्य की आवाज़ आ रही थी, उधर घूरती हुई बोली—वृहस्पति ने जब मुझे पाच साल बाद यह समाचार सुनाया, तो मुझे केवल एक ही बात की ग्लानि रही, वह यह कि आप लोगो ने उसे तो वीर माना, पर आखिर वह मेरा ही बेटा था, मुझे क्यो इतनी कायर समझा कि मैं इस योग्य नही समझी गई कि सही खबर जानू।

न स्वामीजी ने कुछ कहा, न तपन ने। तपन तो बचपन से ही यह उलाहना सुनता आ रहा था। आते समय रास्ते मे उसने वृद्धा का पूरा परिचय और इति-हास स्वामीजी को बता दिया था। स्वामीजी चुप रहने के बाद बोले—

प्रभास को आपकी बडी चिन्ता रहती थी। इसी कारण लोगो ने यह समझा होगा कि एक तो आप विधवा थी, दूसरे एकमात्र पुत्र की मृत्यु हो गई, कही आपके स्वास्थ्य पर इसका बुरा असर न पडे। यही कारण रहा होगा

इसपर मा ने सत्रह साल से सजोए हुए व्यग्य के साथ कहा—उसके शहीद हो जाने के बाद मेरे जीवन की कोई ज़रूरत ही नही रही। ज़रूरत तो उसी दिन खत्म हो गई थी जिस दिन मैं अपने जवान पति को मणिकर्णिका मे ले जाकर चिता के हवाले कर आई थी। फिर भी बेटे के लिए जीती रही। यदि सुनकर हूक से मर ही जाती तो किसका क्या बिगडता !

इसके बाद वृद्धा स्वीमीजी से प्रभास के बारे मे एक-एक बात पूछने लगी। बाईस साल पहले की घटना का एक-एक ब्योरा इस तरह से पूछा गया कि रात के दस बज गए। इगित पाकर तपन पहले ही चला गया था, क्योकि उसे अपने पिता के इलाज का बन्दोबस्त करना था। मा अभी तक घटो बाद भी उसी लहजे मे बात किए जा रही थी—यदि मैने अपने जवान पति को चिता पर चढा दिया, तो मैं अपने बेटे को भी चिता पर चढा सकती थी। मेरा हृदय कितना कठोर है, यह वृहस्पति को कभी नही मालूम हुआ। आज मुझे कोई भी सुख नही, आख से अधी हो गई हू, खाना नही पका पाती, फिर भी जी रही हू। जी इसलिए रही हू कि वृहस्पति ने मुझको बताया है कि जो कागज़ात मेरे घर पर रखे है, वे बहुत ही ऐतिहासिक है। मै जानती हू कि वृहस्पति ने ख्वामख्वाह मेरे जीने का बहाना बनाया है। जब आदमी ही महत्त्व के नही हुए और इस प्रकार भुला दिए गए, जैसे कोई रहा ही न हो, तो कागज़ात की क्या बिसात ! वृहस्पति ने तो यह सब इसलिए बनाया है कि मेरे जीने का एक बहाना बना रहे, पर वह स्वय धोखा देकर जा रहा है •

स्वामीजी ने समझाने की चेष्टा की कि वाकई वे कागज़ बहुत महत्त्वपूर्ण है, कभी उन कागज़ात की बडी कद्र होगी। पर मा प्रतिवाद करके बोली—तुम क्राति-कारियो की यही बात मुझे एकदम पसन्द नही आती ! कद्र होगी, ख्याति होगी, नाम स्वर्णाक्षरो मे लिखा जाएगा, क्या यह सब कोई तसल्ली है ? न लिखा जाए स्वर्णाक्षरो मे, न हो ख्याति बला से ! हर मा यह चाहती है कि उसका बेटा बडा हो, यथासमय एक नन्ही-सी बहू आए, घर बसे। पोते-पोतियो की किलकारी और चहचहाहट के सामने तुम्हारा सारा इतिहास, सारे स्मारक दो कौडी के हैं,—

समझे ! मै आज बाईस साल बाद भी यही कहती हू । •

स्वामीजी बहुत-से मामलो मे मा से एकमत हो चुके थे । हर साल पैदल धीरे-धीरे अमरनाथ की यात्रा करते हुए, चीडो और देवदारो के वनो मे बैठकर, गली हुई बरफ से बनी नदियो से चुल्लू भर-भरकर पानी पीते हुए, बावजान की जेट रग की झील मे उतरकर आकाश को एक कटोरे मे से देखते हुए, फिर वृक्षहीन बर्फीले प्रान्तरो मे से चलते हुए उन्होने बार-बार ये ही बाते सोची थी। ख्याति कुछ नही, वीरता कुछ नही, यहा तक कि स्वतन्त्रता और परतन्त्रता भी कुछ नही, अग्रेज कुछ नही, भारतीय कुछ नही , फिर भी लडाई छिड गई, यह सुनते ही भागकर नीचे आए थे । ये ही बाते उन्होने मा से कही ।

इसी प्रकार रात बाते करते-करते समाप्त हो गई । जब एकदम सवेरा हो गया, तो स्वामीजी चौक पडे । वे मुह-हाथ धोने के लिए चल पडे । मा का दूध-वाला आ गया था । मा के लिए चाय बनाई, फिर मा से बोले—आप थोडी देर सो लीजिए, मै एक बार वृहस्पतिजी को देख आऊ । खाना उधर ही से ले आऊगा ।

पर वे लौट नही सके, क्योकि जब वे वृहस्पति के घर पहुचे तो वृहस्पति नश्वर शरीर त्याग चुके थे । सब लोगो ने यही कहा कि वृहस्पति के प्राण आपके लिए ही रुके थे, आप आ गए तो वे निश्चिन्त हो गए । और तभी उन्होने शरीर त्याग दिया । न अखबारो मे कोई सुर्खी बनी और न किसीने जाना कि इतना बडा देशभक्त मर गया, जो इस शताब्दी के आरम्भ से ही स्वतन्त्रता-आन्दोलन मे कार्य कर रहा था ।

जब सध्या समय खाली हाथ और खाली हृदय स्वामीजी मा के घर पहुचे तो वे तब भी सो रही थी । पहले तो स्वामीजी को डर हुआ कि कही वे भी शरीर न त्याग गई हो, पर देखा कि मा की सास ठीक-ठीक नियम से चल रही है । उन्होने धीरे से खाना बनाया । वे जानते थे कि मा विधवा होने के नाते केवल एक दफे खाना खाती थी, रात को नही खाती थी, पर आज चूकि सवेरे नही खाया था, इसलिए आज इस समय खाना खा सकती है । सब कुछ करके स्वामीजी ने मा को जगाया, तो वे एकाएक उठ पडी, बोली—कौन ? प्रभास ?

स्वामीजी ने कहा—नही । मैं शुक्राचार्य हू ।

मा ने दूसरा प्रश्न किया—वृहस्पति की तबियत कैसी है ?

शुक्राचार्य ने यह नही सोचा था कि यह प्रश्न भी किया जा सकता है, पर उन्होने कहा—बिल्कुल ठीक है। चलिए, मुह धोकर खाना खा लीजिए। मैने भोजन बनाया है। खाना तैयार है। —हविष्यान्न।

तपन के साथ यह तय हुआ था कि मा से वृहस्पति की मृत्यु की बात उसी प्रकार से छिपाई जाए जैसे बाईस साल पहले बेटे की मृत्यु नही बताई गई थी॰

८

महायुद्ध के छिडते ही जहा जो भी क्रान्तिकारी, अर्ध-क्रातिकारी, भूतपूर्व क्रातिकारी थे, सब चौकन्ने हो गए थे और ब्रिटिश सरकार भी उसी तरह इन लोगो के सम्बन्ध मे चौकन्नी हो गई थी, क्योकि पुलिस विभाग को यह अच्छी तरह मालूम था कि न केवल भारतीय क्रातिकारियो मे, बल्कि सभी देशो के क्राति-कारियो मे यह एक पुराना विश्वास रहा है कि जब दुश्मन लडाई मे फसा हो तो उसपर हमला करना चाहिए, क्योकि उस समय योही उसकी सिट्टी-पिट्टी गुम होती है।

सूची तैयार ही थी, अब उनपर कसकर निगरानी शुरू हुई। शिशु ऐसे लोगो पर भी, जो न केवल क्रातिकारी दल, बल्कि सब तरह के आन्दोलनो से दूर जा चुका था, फिर से निगरानी होने लगी, और वह इस बात को समझ गया। पहले तो यदा-कदा उसकी जाच होती थी, पर अब उसपर चौबीसो घण्टे पहरा-सा रहने लगा। इससे वह चिन्तित हो गया। राजनीति से अलग हो जाने पर भी वह समझ गया कि पुलिस उसे राजनीति से अलग नही मानती और उसके साथ ऐसा व्यव-हार कर रही है, मानो वह क्राति का सक्रिय फ्यूज़ हो। उसके मन मे सबसे बडी चिन्ता वसुधा के सम्बन्ध मे हुई, क्या इतिहास की पुनरावृत्ति होगी ?

उस बार, यह सालो पहले की बात है, जब वह मुखबिर भद्रसेन पर गोली चलाकर गिरफ्तार हो गया था (भद्रसेन नही मरा था), तो वह ज्योही रगमच से अलग हुआ त्योही पुरन्दर, जो तब तक उसका शिष्य और छोटा भाई बना हुआ था और वसुधा को भाभी-भाभी कहा करता था, रगमच पर आया और वसुधा के साथ पति-पत्नी की तरह रहने लगा। अवश्य पुरन्दर की सफलता मे उस बार एक कारण यह हुआ था कि वह क्रान्तिकारी दल मे इतना उलझा हुआ था—

कि उसने कभी वसुधा की तरफ आख उठाकर नही देखा, पति-पत्नी का सम्बन्ध करना तो दूर रहा। वसुधा के दिमाग मे, और कुछ हद तक उसके अपने दिमाग मे यह धारणा जम गई थी कि वह साधारण अर्थों मे पुरुष नही है, पर इसका उसे कुछ अफसोस नही था।

अब की बार इस प्रकार का कोई भय नही था। धन्यवाद है जेल मे मिले हुए उस कैदी को कि उसने उसके मन को इस प्रकार मोड दिया कि वह जेल से लौट-कर वसुधा को अपने पुरुषत्व का परिचय दे सका था। यह तो एक बहुत साधारण बात थी, नदी की धारा मोडने की बात थी। जब वह मुड गई, तो फिर कलकल-छलछल करती हुई वह उस तरफ इतने आक्रोश के साथ बढी कि वसुधा चौक-चौक पडती थी कि इसीको उसने नपुसक जाना था, जबकि वह था कुछ और

एक बार तो उसे इच्छा हुई कि वह अकड मे क्यो रहे। जाकर साफ-साफ पुलिसवालो से कह दे कि भई, अब मैं भर पाया, मैने पहले चाहे जो कुछ भी किया हो, पर अब मैं एक साधारण गृहस्थ हू। मुझसे कोई डर की बात नही है। न तो मैं सत्याग्रह करनेवाला हू, और न मै प्लास लेकर तार काटनेवाला हू।

पर उसे ऐसा लगा कि वह कैसे यह कहेगा। जेल मे प्रेमचन्द से वह कुछ और ही वादा कर चुका था। उसने जेल का एक फार्म फाडकर उसमे लिखा था कि जिस जज ने आपको फासी की सज़ा सुनाई है, मै उसे यमपुर पहुचा दूगा। वह उस वादे को किसी रूप मे भी पूर्ण नही कर सका था। अब तो खैर स्वय ही इस पर हसी आती है कि कैसे उसने यह लिख दिया था कि आपके जज को यमपुर पहुचा दूगा। भला जज को मारने से क्या लाभ ? हा, सभी ऐसे जजो को एकसाथ मारा जा सके और फिर उनकी जगह जो जज हो, उनको मार सका जाए, तब तो बात कुछ बनती है नही तो एक जज को मारने का कोई अर्थ नही होता।

हा, वह जज जिस पद्धति का प्रतीक और प्रतिनिधि है, उस पद्धति को नष्ट करने की बात समझ मे आती है। पर यहा तो मैं वह भी नही कर रहा हू। एक साधारण गृहस्थ की तरह रोटी कमाता हू, और रात को पत्नी के साथ सोता हू, जैसाकि सभी गृहस्थ करते है। मुझे किसीसे कुछ मतलब नही। पर पुलिस तो मुझे वही समझती है, जैसाकि मै उस दिन था जब मैने भद्रसेन पर गोली चलाई थी। मेरा वह एक दिन वाला रूप पुलिस के लिए सब दिनवाला रूप बन गया। उसके आगे या पहले जो कुछ हुआ है, उन घटनाओ का उनके निकट कुछ भी

अस्तित्व नही है।

मेरे साथियो ने मुझे छोड दिया। बीच मे काशी से एक क्रातिकारी अवश्य आया था, पर वह भी निराश होकर लौट गया। इस प्रकार शिशु बहुत चिन्तित रहा। क्या वसुधा से इस सम्बन्ध मे कुछ कहा जाए ? पर उससे कुछ कहना व्यर्थ है। वह तो एक मास का लोथडा मात्र है, जैसे रक्त-मास के धर्म के अतिरिक्त उसमे और कोई धर्म हो ही नही। न उसे देश से मतलब न दुनिया से। जिस दिन लडाई छिडने की खबर मिली, उस दिन उसने आकर उससे कहा था, पर वह कुछ भी नही बोली थी, जैसे यह कोई रोज होनेवाली घटना हो, जिसका कोई विशेष अर्थ न हो।

उससे तो कुछ कहना व्यर्थ हे। स्वय अपना कर्तव्य सोचना चाहिए। उसे टाला नही जा सकता। अपन तैयार हो या नही, पुलिस तो तैयार है। जरा पत्ता खडकते ही वह शिशु को गिरफ्तार कर लेगी, इसमे कोई सन्देह नही। खुशी से कर्तव्य थोडे ही सोचना है। सोचना ही पडेगा, इसलिए सोचना है। लडाई मजबूर कर रही थी पुलिस को, और पुलिस मजबूर कर रही थी उसे''

इस चिन्तन का पहला असर तो यह हुआ कि उसके पास जितना भी नकद धन था उसे वह उसी मुहूर्त से अपनी जेब मे रखकर चलने लगा। बहुत थोडी रकम थी, फिर भी दो-चार दिन का सहारा तो हो ही सकता था। घर मे खडे-खडे गिरफ्तार होने से कोई फायदा नही, भले ही वह क्रातिकारी न हो, भले ही उसका रेल की पटरी उखाडने या तार काटने से कोई सम्बन्ध न हो (यह कार्यक्रम कुछ-कुछ शुरू हो चुका था), पर वह व्यर्थ मे जेल मे सडना तो नही चाहता।

वसुधा का क्या होगा ?

वही पुराना इतिहास ? पर पुरन्दर तो अब इधर नही आता, फिर भी सह-जात बुद्धि कह रही थी कि पुरन्दर परोक्ष मे कही न कही घात लगाए बैठा होगा, पर वह भी तो एक मत्रीजी के साथ लगा हुआ है। क्या वह जेल नही जाएगा ? पर वह तो तब जेल जाए जबकि काग्रेस कोई ऐसा कार्यक्रम चलाए। यदि काग्रेस आन्दोलन नही चलाती और ब्रिटिश सरकार से युद्ध का उद्देश्य पूछने के बहाने बहुमूल्य समय नष्ट करती है, जैसाकि वह अब तक करती आ रही है, तो फिर पुरन्दर जेल क्यो जाएगा ! वह जेल कभी नही जाएगा।

और गहराई के साथ जब शिशु ने अपनी स्थिति सोची, तो उसे बडा बुरा

लगा कि क्या वह एक स्त्री के पीछे, जिसने उसे एक वार सख्त धोखा दिया, अपना जीवन गवा दे ! क्या-क्या, कैसी-कैसी उच्चाकाक्षाए लेकर चले थे, और अब यह स्थिति पहुच गई। उसे जैसे आत्मज्ञान हुआ। पर जब वह घूम-घामकर घर पहुचा और उसने वसुधा को देखा, तब उसे लगा कि सब बाते ठीक है। फिर भी जब उसने सोचा वसुधा कही पुरन्दर के कब्जे मे न चली जाए, जैसाकि उसे विश्वास था कि वह अवश्य जाएगी, तो वह फिर उधेड बुन मे पड गया। पर प्रश्न तो यह था ही नही कि वसुधा के साथ रहा जाए या आन्दोलन मे भाग लिया जाए। जिस प्रकार उसपर निगरानी हो रही थी, उसके अनुमार तो प्रश्न का रूप इस प्रकार था—चाहो या न चाहो, गिरफ्तारी तो होगी ही। उसे हसी आई कि सारी दुनिया ने तो उसका नाम क्रान्तिकारियो मे से, यहा तक कि देशभक्तो की सूची से भी काट दिया, और पुलिस, जिसे कि पूरी बात जाननी चाहिए थी, उसे एक खतरनाक व्यक्ति समझती जा रही है।

पुलिसवालो का हिसाब तो खैर समझ मे आता है, क्योकि वे जोखिम उठाना नही चाहते। एक और व्यक्ति जेल मे पहुच गया, तो उससे उनका क्या आता-जाता है !

वसुधा सितार लेकर बैठने ही वाली थी कि शिशु ने एकाएक कहा—देश मे इतनी बडी घटनाए हो रही है, तुमको कुछ पता भी है ?

—कौन-सी घटनाए ?

युद्ध छिडने की बात तो वसुधा को मालूम थी। अब शिशु ने बताया कि शायद दो-चार दिन मे काग्रेस मन्त्रिमण्डल इस्तीफा देनेवाले है, उसके बाद पता नही कैसी स्थिति पैदा हो जाए।

वसुधा ने कुछ नही कहा, पर उसके चेहरे से यह झलक गया, जैसे वह कह रही हो कि हमे क्या मतलब। न जाने क्यो शिशु को यह रुख अच्छा नही लगा। उसे ऐसा प्रतीत हुआ कि इस प्रकार के रुख के पीछे जितनी जडता दिखाई पड रही है, वह केवल दिखाऊ है। भीतर ही भीतर बताशे फूट रहे है। वह क्रुद्ध होकर बोला—अब की बार जो सग्राम होगा, उसमे या तो बेडा उस पार होगा या इस पार !

फिर भी वसुधा कुछ नही बोली और मिजराब-लगी अगुली से हवा को छेडने लगी। शिशु समझा कि इससे बात करना व्यर्थ है, स्वय ही कर्तव्य का निर्णय

पास ही एक नई मोटर खडी थी, पता नही यह डाक्टर साहब की है या किसी मरीज की।

शिशु को बडी हसी आई कि वह इस गुत्थी मे सिर खपा रहा है, जबकि उसे गम्भीर विषयो पर सोचना चाहिए, और उन्हीपर विचार-विमर्श करने के लिए वह यहा आया है। अर्चना का यहा कही पता नही था।

पता नही अर्चना कहा गई? उसका तो तब से कुछ पता नही लगा। क्या हुआ? क्या उसने शादी कर ली और अब एक साधारण कुलवधू बन गई है? नही, ऐसा नही हो सकता। वह ऐसा नही कर सकती। वह तो शहीद प्रेमचन्द की प्रेमिका थी या अपने को मीरा की तरह उसकी प्रेमिका मानती थी। हो क्यो नही सकता? दुनिया मे सब कुछ हो सकता है। स्मरण हो आया कि उसने भी तो प्रेमचन्द से कुछ वादा किया था। जब वादा किया था तो ऐसे वादा किया था मानो जेल से छूटने के बाद पहला काम वह यही करेगा कि जाकर उस जज को गोली मार देगा, जिसने प्रेमचन्द को फासी की सज़ा सुनाई थी। पर उसने इन सालो के दौरान क्या किया! इसी तरह अर्चना भी तो कर सकती है। यह बिलकुल स्वाभाविक भी है। इसमे बुराई क्या है? यदि साधारण विधवा के लिए पुर्नविवाह करना जायज है, तो फिर क्रान्तिकारिणी अर्चना ने शादी कर ली हो, तो इसमे दोष क्या है?

इसी प्रकार सोचता हुआ वह फिर डाक्टर साहब के घर पर पहुचा। वहा उसने चारो तरफ दृष्टि दौडाई, तो खुफिया पुलिस का कोई आदमी दिखाई नही पडा। इससे एक तरफ जहा निश्चिन्तता हुई, दूसरी तरफ उसे निराशा भी हुई। इसका स्पष्ट अर्थ तो यही है कि यहा अर्चना नही है। कुलवधू बनकर गई

यद्यपि उसने अभी-अभी अपने से यह तर्क किया था कि अर्चना के लिए पुनर्विवाह करना बिल्कुल उचित है, पर उसे अब लगने लगा कि अर्चना को पुनर्विवाह करने का हक़ नही है। अर्चना ही अध्ययनशील बल्कि पुस्तककीट अध्यापक प्रेमचन्द को घसीटकर विश्वविद्यालय से बाहर लाई थी। उसे क्रातिवादी से क्रातिकारी बनाया था और फिर उसके हाथ मे पिस्तौल देकर उसे अत्याचारी मजिस्ट्रेट को मारने के लिए भेजा था। पर पता नही क्या हुआ, अन्यमनस्क हालत मे प्रेमचन्द ने पिस्तौल कही डाल दी और मजिस्ट्रेट के बगले के अन्दर पकडे गए। सफाई पक्ष की ओर से बचाव मे कहा गया कि पक्षि-विज्ञान मे दिलचस्पी रखने के

कारण वे एक नया पक्षी देखकर उसके पीछे-पीछे बगले मे घुस गए थे।

सम्भव है कि असली बात भी यही हो। वे तो केवल अर्चना के सिखाने पर कर रहे थे। अर्चना ने स्वय कुछ नौजवानो को, जिनमे प्रेमचन्द भी एक थे, पार्टी से निकालकर इस कारण दूसरी पार्टी बनाई थी कि पुराने नेता बहुत धीमी चाल से चलते हुए ज्ञात हो रहे थे। पर जब प्रेमचन्द उस प्रकार बेवकूफ की तरह पकडे गए, तो उस भद्द को मिटाने के लिए ही शायद अर्चना ने उससे तसद्दुक की हत्या करा दी। उस हत्या से प्रेमचन्द का भी मुह रह गया, और अर्चना का भी। टुकडी लेकर पार्टी से अलग होने की कुछ सार्थकता ज्ञात हुई। प्रेमचन्द ने इस हत्या के लिए जो बहाना लिया—यानी तारा के सम्मान की रक्षा, वह तो केवल दिखावा था। असल मे उन्होने तारा की इज्जत की रक्षा उतनी नही की, जितनी कि अर्चना के अहकार की रक्षा की।

इस प्रकार उस व्यक्ति ने अर्चना के लिए ही अपना जीवनदान कर दिया। ऐसी हालत मे क्या विधवा-विवाह वाला घिसा-पिटा अति सरल नुस्खा उसपर लागू होता है? नही। अर्चना को भी कुछ करके दिखाना चाहिए। ऐसा सोचते ही उसके मन मे वही बात आई कि मुझे भी तो कुछ करना चाहिए। मैंने भी तो कुछ वादा किया था, और देश को स्वतन्त्र करने का इससे अच्छा मौका कब मिलेगा!

पर देश स्वतन्त्र करने का लक्ष्य अब उसके लिए इतना मोहक नही रह गया था जितना आज से दसेक साल पहले था। वह तो देशभक्ति मे इतना दीवाना था कि वह सचमुच नही तो व्यावहारिक रूप से ऐसा बन गया था कि उसकी पत्नी तक ने उसे नपुसक समझ लिया, पर पीठ फेरते ही इस देशभक्ति का क्या नतीजा हुआ? स्वय पत्नी दूसरे के साथ रहने लगी, और जो मित्र तथा शिष्य था, वह दुष्ट पुरन्दर (कैसा भाभी-भाभी किया करता था!) विश्वासघातक बन गया!

तो क्या वह लौट चले?

पैरो ने पीछे की ओर रुख किया, पर मन ने कहा—भाग कहा सकते हो, भाग तो सकते ही नही हो! कितने भी तर्क करो, कितनी भी बाल की खाल निकालो, पर डण्डे लगानेवाले वे सिपाही टलनेवाले नही हैं। यो तो कभी-कभी सिपाही आते थे, पर अब तो उनकी सरगर्मी बहुत बढ गई है। स्पष्ट है कि कुछ होनेवाला था।

होनेवाला यही है कि काग्रेस मन्त्रिमण्डलो ने इस्तीफा दिया नही कि पकडे गए! पर पकडेंगे किस बात पर? उस बार की तरह '११०' तो चला ही सकते है,

क्योकि जिस प्रकार की कमीशन एजेन्सी वह करता है, उसे अदालत मे खडे होकर ठीक से प्रमाणित करना मुश्किल है। कभी कुछ करता है तो कभी कुछ। '११०' मे फिर पकडा जाना तो बहुत खराब होगा। उस बार तो खैर बात यह थी कि पुलिस की बेईमानी बहुत स्पष्ट थी। वे उसे हत्या या हत्या के प्रयास मे फसा नही सके इसलिए '११०' चलाई थी। सभी जानते थे, इसलिए कोई लज्जा की बात नही थी, पर अपने को भी अब की बार तो लज्जा मालूम होगी।

वह काफी दूर लौट चुका था, तो उसने देखा कि अर्चना सामने से चली आ रही है। अर्चना ने उसे पहचान लिया, पर फौरन ही उसने इशारा कर दिया जिसका अर्थ शिशु ने यह लगाया, और ठीक लगाया कि पीछे कुछ खतरा है, अभी मत बोलो।

शिशु ने देखा कि अब और कुछ करने का मौका नही है, इसलिए उसने अर्चना का इस प्रकार पीछा किया जैसे वह उसे जानता ही न हो। फिर जब उसे डाक्टर साहब के घर मे घुसते देखा तो इतना चिल्लाकर कि पुलिसवाले सुन ले, कहा—क्या आप डाक्टर साहब की बीवी है? डाक्टर अरविन्द घर पर है? मेरी मा बहुत बीमार है। अभी उन्हे ले चलना है।

अर्चना ने उदासीनता दिखलाते हुए कहा—अभी डाक्टर साहब घर नही आए होगे। वे आठ बजे आते है। आप चलकर उनकी बैठक मे बैठिए। नीली मोटर मे आएगे।

शिशु आधा चिल्लाकर बोला—मैं उनका पुराना क्लायण्ट हू। हर मर्ज पर उन्हीके पास आता हू। पहले डिस्पेसरी गया था, वहा से वे विज़िट पर चल चुके थे। मैं बैठक मे बैठता हू, आप फोन कर दीजिए।

कहकर वह भी अर्चना के पीछे-पीछे घर मे घुस गया। फौरन ही बहुत कुछ धमाके के साथ डिस्पेसरी का कमरा खुला और उसमे शिशु एक कुर्सी पर बैठा हुआ धन्नियो को गिनते हुए अपना पार्ट सफलतापूर्वक अदा करता हुआ दिखाई पडा। अर्चना भीतर चली गई थी।

एक व्यग्र और चिन्तित पुत्र की तरह, जिसकी मा सख्त बीमार है, शिशु बार-बार डिस्पेसरी के दरवाजे से बाहर झाकने लगा और जब उसने देखा कि दूर खडे खुफियो को पूरा विश्वास हो गया है, जैसाकि उनके द्वारा सुलगाई हुई सिगरेटो से पता लगा, जो अधकार मे पास ही पास चमक और हिल रही थी,

उसने धीरे से डाक्टरी पुस्तको की आलमारी की आड मे खडी अर्चना को सिगनल दे दिया, और अर्चना इस ढग से पास आकर एक खाली कुर्सी पर बैठ गई कि बाहर वालो को कुछ पता न लगे। शिशु का चेहरा बाहर से देखा जा सकता था, इसलिए उसने उठाकर सामने पडा एक अखबार बुर्के की तरह तान लिया और थोडे मे अपनी स्थिति और इतने दिनो तक न आने का कारण बताया। सब कुछ सुनकर अर्चना बोली—मै वर्धा की अखिल भारतीय काग्रेस कमेटी की बाट जोह रही थी, सो उसमे कुछ नही हुआ, इसलिए मै स्थिति का अध्ययन करने के लिए कल ही काशी रवाना हो रही हू। आप तब तक कुछ न करे।

पर शिशु ने कहा—मुझे एक ही खटका है।

अर्चना को कुछ-कुछ अनुमान हो गया कि क्या बात है। और क्या खटका होगा!—वही वसुधा! वह तो सुना फिर ठीक हो गई है और सगीत की ट्यूशन करने लगी है। उसकी इसे चिन्ता क्यो है? अर्चना को लगा कि चिन्ता नही होनी चाहिए, विशेषकर इसलिए क्योकि वह ऐसी स्त्री है जिसने पति के जेल जाते ही उसके साथ विश्वासघात किया और पुरन्दर जैसे (अब तो वह राघवेन्द्र बन गया है, और बडे ठाठ है!) घिनौने व्यक्ति के साथ रहने लगी। वह कुछ नाराज होकर बोली—क्या?

शिशु बोला—मैं फरार तो हो जाऊ, पर घर का क्या होगा, यह समझ मे नही आता।

—जैसे सब घरो का होगा वैसे ही आपके घर का भी होगा, इसमे खास चिन्ता करने की क्या बात हे?—अर्चना ने एक हद तक चुनौती के साथ कहा।

फिर अगले ही क्षण बोली—मैं लौटकर आऊ तब आपसे कुछ कहूगी। फरार होने की बात आपने कैसे कही?

अर्चना को ताज्जुब था कि शिशु ने एकदम फरार होने की बात कैसे कह दी। शिशु बोला—अब की बार खडे-खडे अपने को गिरफ्तार करानेवाला आन्दोलन न तो चलेगा, न चल सकता है, न उसका कोई अर्थ होता है।

—आपने यह कैसे समझा?—अर्चना ने आश्चर्य के साथ पूछा और उसके चेहरे की तरफ विस्फारित नेत्रो से देखती रही। तो सब लोग यह समझ रहे हैं कि आन्दोलन होगा तो दूसरे ढग का होगा? यह विचार सारे वातावरण मे उसी प्रकार से बस गया है जैसे उद्यान की वायु मे फूलो की महक बस जाती है। हर-

एक यही कह रहा है कि अब की वह तमाशा नही होने का कि शराब या विलायती कपडो की दुकानो पर पिकेटिंग की जाए या दो रुपये की लकडी जलाकर एक दमडी का नमक बनाया जाए। तब जो कुछ हुआ था, वह उस स्थिति मे ठीक था, पर अब जबकि हिटलर के तोपखाने धडधडाते हुए आगे बढ रहे है, उसके हवाई जहाज आकाश मे बवण्डर मचा रहे है, हजारो आदमी घर-बार खो रहे है, आजादिया बात की बात मे नष्ट हो रही है, उस परिप्रेक्ष्य मे पहले वाले सारे कार्यक्रम भोडे, अशोभन, मूर्खतापूर्ण और शक्ति का भयकर अपव्यय ज्ञात होते है।

यही शिशु ने कहा, सुनकर अर्चना प्रसन्न हुई। मन ही मन उसने प्रेमचन्द को स्मरण किया कि उन्होने ठीक ही समझा था कि आतकवादी आन्दोलन का प्रयोजन जाता रहा, पर साथ ही यह भी काटे की तरह चुभा कि यह कहने के लिए जेल से भागने से इन्कार करके फासी पर चढ जाने की जरूरत शायद नही थी। बोली—तो आप समझते हैं कि अब की बार पहले ही से फरार होना चाहिए?—कहकर वह इस प्रकार से मुस्कराई मानो किसी युवती से पहली बार किसी प्रियदर्शन व्यक्ति ने प्रेम-निवेदन किया हो।

शिशु ने अपनी बुद्धि के अनुसार सारी परिस्थिति का विश्लेषण करके रख दिया। बीच-बीच मे वह अखबार हटाकर देख लेता था कि वे दो सिगरेटे या बीडिया (बीडिया ही होगी) उसी प्रकार से एक-दूसरे के पास चमक और हिल रही है या नही। उसके अन्दर पहले का शिशु, जो इस बीच मर चुका था और जिसकी कब्र जमीन के सात फुट नीचे बन चुकी थी, वह धीरे-धीरे अगडाइया लेकर उठ खडा हुआ। बोला—यह अन्तिम सग्राम होगा, यह कौन नही जानता! मैं इसी शुभ घडी की प्रतीक्षा कर रहा था। विनायक और जीवानन्द और आप जैसी आज्ञा दे।

इस समय अर्चना को एक अजीब अनुभूति हुई। वह स्वय उसी दिन से बहुत चिन्तित थी जिस दिन लडाई छिडी थी, पर अब उसे ऐसा लगा कि जैसे शिशु के अन्दर से होकर कोई सूक्ष्म अशरीरी पदार्थ उसके मन मे समा गया। विचार उफनते, तेजी से दौडते, मृत्यु के तत्त्वो से टकराते और लोहा लेते हुए रक्तकणो के रूप मे परिणत हो गए। वह तो अपने को बहुत बडी क्रान्तिकारिणी मानती थी, पर उसे एकाएक लगा कि अरे, उसने तो यह बात कभी सोची ही नही थी कि यह अन्तिम सग्राम होगा, उसने यह नही सोचा था कि पहले से ही इसमे फरार

हो जाना है, क्योकि यह उस प्रकार का सग्राम नही है जिसमे अपने को गिरफ्तार कराना ही चरम लक्ष्य होता था।

इस सग्राम का उद्देश्य तो शक्ति पर अधिकार करना है, न कि शक्तिशाली पर असर-मात्र पैदा करना जैसाकि असहयोग और सत्याग्रह के युग मे पैदा किया जाता था, या शक्तिशाली को डराना या उसकी नीद-मात्र हराम कर देना, जैसाकि आतकवाद मे किया जाता था। हजारो व्यक्ति गिरफ्तार हो रहे हैं, जेलो मे जगह नही है, यह एक प्रकार से दबाव डालना ही तो हुआ। इसी प्रकार मेदिनीपुर के एक के बाद एक मजिस्ट्रेट मारे जा रहे है, मुखबिर मारा जा रहा है, यह सब कार्यक्रम डराने के अन्तर्गत ही आ जाता है। पर असली कार्य तो है अपने हाथो मे राष्ट्रशक्ति ले लेना, उसपर अधिकार जमाकर अपने सपने की समाज-व्यवस्था का निर्माण करने के लिए चल पडना।

उस समय और बातचीत नही हो सकी क्योकि डाक्टर साहब आ गए और उनकी मोटर की आवाज पाते ही अर्चना ने मरीज को गायब कर दूसरे दरवाजे से निकाल दिया। मरीज को फिर भी उन खुफियो के सामने अपना मर्ज प्रमाणित करना था, इसलिए वह उनके सामने से बडबडाता हुआ चला गया—इतने बडे आदमी है, पर कहते हैं कि रात को फीस दुगुनी होगी। क्या कानपुर मे और डाक्टर नही है!—कहकर वह हवा को चुनौती देते हुए स्पर्धा के साथ उनके सामने से निकल गया।

न जाने किस बात का क्या प्रभाव हुआ, उसी रात को अर्चना ने फरार हो जाने का निश्चय किया, यानी काशी जाकर। उसे ऐसा लग रहा था कि कोई अज्ञात, अदृष्ट विशाल जाल धीरे-धीरे उसकी तरफ, उसके ऐसे सब लोगो की तरफ मुह बाये बढ रहा है। अन्त मे जाल के तारो को टूटना है, उसके लक्षण स्पष्ट दिखाई पड रहे है, पर अभी तो वह जाल बडा जबर्दस्त है।

उसके लिए फरार हो जाना ही सबसे अच्छा है। इससे भी आश्चर्य की बात यह हुई कि शिशु जो समझता था कि वह बुरी तरह घर मे, घरेलू बातो मे बध चुका है, शायद ही कभी उस कोल्हू से उसकी मुक्ति हो पाए, सो वह अगले ही दिन फरार हो गया। अर्चना को यह खबर देने का मौका भी नही लगा, न उसने इसकी जरूरत ही समझी। वसुधा से बस उसने इतना ही कहा—अब मैं जा रहा हू, कभी-कभी आऊगा, पर मेरी आशा नही करना।

श्रौर भी बहुत-सी बाते कहने की इच्छा हुई, पर उसने समझ लिया, कहने के पहले ही समझ लिया कि कहना-सुनना व्यर्थ है, जो होना है सो होगा, श्रौर उसे लगा कि श्रब वह फिर उस सामूहिक जीवन से जुड चुका है, जिसके साथ जोडने-वाली उसकी पाइप-लाइन कट गई थी। श्रब हर सास के साथ जीवनदायी रक्त के वे कण उसकी नसो मे श्राते जा रहे थे श्रौर उनके सामने छोटे-छोटे सन्देह, साथ ही उसका छोटा स्व भी घुलता, समाप्त होता जा रहा था। वह एक व्यक्ति नही था, वह एक समष्टि की व्यष्टि था। उसके सामने श्रब एक ही लक्ष्य था जैसे श्रर्जुन के सामने था, जब श्राचार्य ने उसकी परीक्षा ली थी, वह लक्ष्य था—स्वतन्त्रता के लिए सग्राम, सम्मिलित सग्राम!

९

स्वामीजी को एकाएक सामने खडा देखकर सजय बहुत ही श्राश्चर्य मे पड गया। वे उसी प्रकार से प्रकट हुए थे, जैसे दीवार फाडकर नृसिहावतार सामने श्राए थे। वह चौककर खडा हो गया, पर स्वामीजी ने श्रभयदान करते हुए दोनो हाथ उठाकर कहा—डरो मत, मेरे पास कुछ नही है। मैं श्रपनी कीमती जान (कहते समय स्वामीजी ने बाईस साल पहले की वह बात याद की, जो शहीद होने को उद्यत प्रभास ने कही थी) इस छोटे-से झगडे मे गवाना नही चाहता। तुमने क्या सोचा?

सजय ने कहा—किस विषय मे?

—श्रछूत मा से उत्पन्न भाइयो को श्राधी सम्पत्ति देने के विषय मे।

—मैने कुछ भी नही सोचा। हा, श्रापने जो दस्तावेज जला दिए थे, श्रदालत से उसकी एक प्रति बनवाकर मैने उन लोगो को भेज दी है।

—श्रौर उन्होने ले ली?

—हा, उन्होने ले ली श्रौर मुझे धन्यवाद का पत्र लिखा। क्या पत्र दिखाऊ?

—नही, जरूरत नही। इससे यही प्रमाणित करता है कि न तुम लोग बाबू रामलाल के योग्य हो श्रौर न वे हेमा माई के योग्य है।

स्वामीजी बैठते हुए बोले—मैं तुम लोगो से श्रसली विषय पर वार्तालाप नही

करना चाहता। तुम अपने वकील को साथ लेकर या तो मुझसे मिलो या मैं ही जाकर तुम्हारे वकील से मिलू—जो भी बात तुम्हे सुविधाजनक लगे, वही करो।

सजय ने उत्सुकता के साथ पूछा—क्या आप बताएगे कि प्रमाण की प्रकृति क्या है ?

—तुम्हारे वकील से बातचीत होगी, मैं कुछ नही कह सकता। मै न तो अभी तक अजय और मृत्युजय के पास गया और न उनसे इस बीच मिलने की इच्छा ही है। मैं इस झगडे मे पडता ही नही, पर बाबू रामलाल के कारण मैं इसमे पड रहा हू। नही तो अब वैसे इतना समय थोडे ही है कि मैं निजी झगडो-बखेडो मे उसे नष्ट करू। अब तो खुल खेलने का समय आ गया है। देख ही रहे हो कि मेरी वृद्धावस्था है, अब एक ही तमन्ना है कि मृत्यु इस प्रकार से हो कि मृत्युभय न रहे, बल्कि मृत्यु एक दुलहिन की तरह मालूम हो।

सजय ने वकील का नाम बता दिया और बोला कि कल सवेरे मैं वहा पहुचूगा, आप भी पहुचिए। स्वामीजी ने अपना कोई स्थान नही बताया और अनुरोध टालकर बिना चाय आदि पिए ही चले गए।

अगले दिन जब वे बाबू बृजनाथप्रसाद के यहा पहुचे तो उनके हाथ मे एक छोटा-सा बण्डल था। सजय और विजय पहले से ही मौजूद थे। स्वामीजी ने बिना किसी प्रकार की भूमिका किए ही कहा—सौभाग्य से ऐसे प्रमाण निकल आए, जो अकाट्य हैं।

—क्या पिताजी का कोई पत्र है ?

—पत्र नही, उससे भी गहरा प्रमाण है। ऐसी वस्तु का प्रमाण है जो कभी झूठ नही बोलती।

—आपके अलावा और कोई गवाह तैयार हो गया ?

—हा, गवाह है, पर तैयार नही हुआ है। वह अमिट है और उसकी जितनी चाहे, प्रतिया बनाई जा सकती है।

—क्या आपका मतलब किसी फोटो से है ?

—अब तुम ठीक समझे। पर एक नही, बहुत-से फोटो हैं।—कहकर स्वामीजी ने बण्डल खोल दिया और उसमे से एक फोटो निकालकर कहा—यह देखो वह फोटो, जिसमे मैं हेमा माई का विवाह करा रहा हू। देख रहे हो न, विवाह की सब सामग्री रखी हुई है।

स्वामीजी ने फोटो की ओर व्याख्या करते हुए कहा—विवाह साधारण हिन्दू रीति से हुआ, और यह देखो, उसमे वृहस्पतिजी बैठे हुए है।

—वृहस्पतिजी कौन ?

—वे अपने युग के बहुत बडे क्रान्तिकारी थे। असली नाम था पकजकुमार। किसीने उन्हे जाना इसलिए नही कि पुलिस उन्हे कभी किसी मुकदमे मे फसा नही सकी। हा, दो बार नज़रबन्द हुए थे।

—क्या वे जीवित है ?

—नही, तीन-चार दिन हुए, उनका देहान्त हो गया। पर उनका लडका तथा सैकडो अन्य लोग आकर कह सकते है कि यह फोटो वृहस्पतिजी का ही है।

बृजनाथप्रसाद ने कहा—चलिए, और दिखाइए।

स्वामीजी ने उसी दृश्य के कई अन्य पोज़ दिखलाए—एक मे वर और वधू के हाथ मिले हुए थे। बोले—यह पक्का प्रमाण है कि विवाह हो रहा था, न कि और कुछ। बाबूजी के कपडे तो साधारण है, पर हेमा माई वधू के वेष मे है।—कहकर उन्होने एक और फोटो निकाला, जिसमे केवल वर और वधू खडे थे। उसमे और कोई नही था। दोनो बहुत ही खुश लग रहे थे।

इसी प्रकार स्वामीजी ने ग्यारह फोटो दिखलाए, फिर बोले—अब भी कोई सन्देह है ?

बृजनाथप्रसाद ने सजय के कान मे कुछ कहा। सजय ने अनुमति दी, तब बृजनाथप्रसाद बोले—मान लीजिए यह प्रमाणित है कि बाबू रामलाल ने एक लडकी से शादी की, पर यह लडकी हेमादेवी ही है, और कोई नही, इसका आपके कहने के सिवा और कोई प्रमाण है ?

स्वामीजी को स्वप्न मे भी यह आशका नही थी कि इस प्रकार की शका उठाई जा सकती है। वे एकदम हतबुद्धि हो गए, बोले—क्या यह भी कोई ऐसी बात है जिसे प्रमाणित करने की ज़रूरत है ? मैं पुरोहित था, मै बता रहा हू कि लडकी वही है। यह प्रमाणित है कि हेमा माई बाबू रामलाल के मकान मे रहती थी। यह तो आपका ही कहना है। बाबू रामलाल ने, नयी पत्नी से जो बच्चे हुए उनका नाम भी ऐसे रखा कि सजय और विजय के भाई लगते हैं। फिर उनका चेहरा गवाह है। चारो के चेहरे बिल्कुल एक ही टकसाल मे बने हुए लगते है। और क्या प्रमाण चाहिए ? यदि आपका यह दावा है कि फोटो की लडकी कोई और थी, तो आप

उस लडकी को पेश कीजिए।

बृजनाथप्रसाद ने पेशेवर शीतलता से कहा—हम तो आपपर कोई दावा नही कर रहे है, इसलिए प्रमाण सब आपको ही देना है। इन चित्रो से साबित है कि आप पुरोहित बने थे और बाबूजी वर। यह भी मान लेता हू कि बृहस्पतिजी उसमे थे, पर यह भी तो हो सकता है कि वास्तविक रूप से कोई शादी नही हुई हो, केवल आप लोगो ने एक नाटक खेला और उसके फोटो रख लिए गए हो, अजय और मृत्युजय का कुछ और नाम हो और मुकदमे को बल पहुचाने के लिए उनके नाम बदल दिए गए हो।

—उनके नाम स्कूल से ये ही है।

—इससे कुछ साबित नही होता। इससे यही साबित होता है कि बाईस साल से षड्यन्त्र चल रहा था, और कुछ नही।

स्वामीजी एकदम पत्थर की दीवार के सामने खडे थे, कही से जरा भी सास नही दिखलाई पड रही थी। उन्होने मन ही मन बहुत हाथ-पैर मारे, पर तट पर पडी हुई मछली की तरह उनका सारा फडफडाना व्यर्थ गया। इतने दिन नष्ट गए और कोई नतीजा नही निकला। क्या बाबू रामलाल जान-बूझकर हेमा तथा उसके बच्चो को धोखा दे गए ? वकील ठीक तो कह रहा है। नाटक खेलने के चित्र भी तो इसी प्रकार होते हैं, पर रामलाल नाटक कब खेलते थे ! इससे क्या ? वकील को तो किसी तरह अपने मुवक्किल को युधिष्ठिर करके दिखाना था और उसे जितवाना था।

क्या अपनी पराजय हो गई ? यह तो कुछ भी नही निकला। बृहस्पति मर गए, नही तो शायद कुछ उपाय सोचते या और कोई बात याद आती, पर वे भी ऐसे मौके पर चल बसे कि कोई सहायक नही रहा। बृहस्पति गृहस्थ होने के कारण कुछ न कुछ तरकीब अवश्य निकाल लेते। हा, वह फोटोग्राफर कहा गया, जिसने फोटो लिए थे ? वह भी तो अपना ही आदमी था। पर किसी तरह याद नही पडता कि वह कौन आदमी था। बृहस्पति को जरूर याद होता। यहा जो इतने सालो तक प्रकृति की गोद मे पलते रहे, तो धीरे-धीरे सारा ससार ही भूलने लगा था। आते ही झझट, परेशानी, मिथ्या और फरेब का सामना शुरू हो गया।

स्वामीजी ने दीवारघडी की तरफ देखा। फिर वे उस हारे हुए व्यक्ति की तरह, जो अपना सर्वस्व जुए मे हार चुका हो, धीरे-धीरे अपने फोटो बटोरने लगे।

उन्होने उन्हे उठाकर उस लिफाफे मे रखना चाहा, तो उसके अन्दर से एक कटिंग निकल आई। योही कौतूहलवश उन्होने उस कटिंग को देखा, तो उसमे कुछ दिलचस्पी की बात नही लगी। शायद इसी कागज़ मे इन चित्रो को लपेटकर रखा गया था। वे यही समझकर उस कागज़ को यथापूर्वक रखने लगे तो उनका ध्यान एक चित्र की तरफ गया जो उसी कटिंग की उल्टी ओर छपा था। ध्यान से देखा तो मालूम हुआ कि यह बाबू रामलाल की पहली पत्नी की मृत्यु के बाद का चित्र था। वे उस चित्र को यह कहकर सजय को देने ही जा रहे थे कि यह चित्र मेरे किसी मतलब का नही, पर तुम्हारे लिए स्मृतियो से ऐश्वर्यशाली है, किंतु उसी समय उन्हे एकाएक सूझा कि कही जो लोग शव के चारो तरफ खडे है, उनमे हेमा माई तो नही है! उन्होने ध्यान से देखा तो एकाएक उनका शिथिलीभूत शरीर कडा पड गया। बोले—देखिए बृजनाथ बाबू, ये हेमा माई है जो सजय-विजय की माताजी के पैताने खडी है।

बृजनाथप्रसाद का चेहरा काला पड गया, जैसे हड्डी-हड्डी और चमडा-चमडा रह गया हो, सारा खून बहकर बिखर गया हो। सजय भी समझ गया कि अब बचना मुश्किल है। प्रमाण तो हो जाएगा।

स्वामीजी को अब तक कुछ नही सूझ रहा था। वे एकाएक बोल पडे—सम्भव है हेमा माई के रिश्तेदार भी जीवित हो, वे आकर गवाही दे सकते है।

बृजनाथप्रसाद ने विजय से कहा—तुम स्वामीजी के साथ बैठो, हम लोग दूसरे कमरे से बातचीत करके आते है। स्वामीजी, आपको तो कोई आपत्ति नही है? हम अभी दो मिनट मे आते है।

स्वामीजी ने समझ लिया कि अब पासा पलट चुका है, बोले—अवश्य, अवश्य!

थोडी देर मे जब बृजनाथ बाबू लौटे तो वे गम्भीर थे। बोले—देखिए स्वामीजी, आप क्रान्तिकारी है। आपको इन झगडो से क्या लेना-देना? जायदाद उनके पास रहेगी, तो भी आपको कुछ लाभ नही, इनके पास रहेगी, तो भी आपको कुछ नुकसान नही। मैं आपके सामने एक प्रस्ताव रखता हू। आप यही चाहते है न, कि क्रान्ति हो, और उसीके लिए आप इतने सालो बाद काश्मीर से उतरकर आए है। क्रान्ति यो नही हो सकती। मैं भी किशोरावस्था मे क्रान्ति की बातें सोचा करता था। आप क्रान्ति कराने के लिए बीस-पच्चीस हज़ार ले लीजिए

और ये फोटो, कटिग, इनके नेगेटिव सब हमको दे दीजिए और आगे इस मामले मे आप कोई दिलचस्पी न लीजिए। अजय और मृत्युजय को 'श्रीराम लक्ष्मण मिल' मे उनके उपयुक्त कोई अच्छी नौकरी दे दी जाएगी। आप लोग कितने ही साथियो को क्रान्ति के लिए बलि पर चढा देते हैं, समझिए कुछ हद तक अजय और मृत्युजय को भी आपने बलिवेदी पर चढा दिया।

स्वामीजी की पहली प्रतिक्रिया तो यही हुई कि एकदम से दुत्कार दे, पर वकील ने क्रान्ति का चित्र इस तरह से खीचा था, और सचमुच इन चन्द दिनो मे ही उन्होने समझ लिया था कि धन की कमी ही गरमपन्थी लोगो के रास्ते मे सबसे बडी बाधा सिद्ध हो रही है, कि वे एकाएक किसी निर्णय पर नही पहुच सके। एक तरफ क्रान्ति की गाडी के लिए पेट्रोल के रूप मे पैसे मिलते थे, दूसरी तरफ केवल दो व्यक्तियो के स्वार्थ का बलिदान था।

पर नही। इसमे एक सिद्धान्त भी लपेट मे आता था। वे कुछ देर हिच-किचाए जैसे मन ही मन कुछ तौल रहे हो, अन्त मे बोले—यदि हेमा माई कथित अछूत जाति की न होती, तो मैं अवश्य अजय और मृत्युजय के स्वार्थ देश के स्वार्थ पर बलिदान कर देता, पर हम अपनी स्वतन्त्रता की लडाई किन्ही आधारभूत लक्ष्यो को सामने रखकर लड रहे हैं। उस लक्ष्य का सर्वप्रधान नही, तो सर्वप्रथम उद्देश्य उन करोडो भाइयो के साथ न्याय करना है, जिन्हे सैकडो वर्षो से बिना कारण पद्धतिगत रूप से पैरो के नीचे रौंदा गया है जैसाकि किसी देश मे किसी वर्ग को कभी कुचला नही गया है। मेरा तो निश्चय इस सम्बन्ध मे इतना पक्का है कि यदि स्वतन्त्रता मिलने मे कुछ देर हो जाए तो हो जाए, इस अन्याय का प्रतिकार पहले होना चाहिए।

सजय ने अब बातचीत का सूत्र अपने हाथ मे ले लिया। बोला —महाराज, अन्याय कहा हो रहा है ? यो आप सोचिए कि एक भगिन के लडको को क्या आराम मिलता ? वे कही कमाते होते। पर पिताजी की कृपा के कारण ही उन्हे अच्छे मकान मे रहने को मिला, शिक्षा मिली और अब जैसाकि मैंने आपसे प्रतिज्ञा की है, उन्हे शिक्षा के अनुसार उपयुक्त नौकरी भी मिल जाएगी। फिर अन्याय क्या हुआ ? इसलिए मेरा विचार यह है कि आप चन्दे के रूप मे अपने दल के लिए हमसे एक अच्छी-खासी रकम ले ले और इस मामले से सम्पूर्ण रूप से हाथ खीच ले। हम अजय और मृत्युजय की जात-पात तोडकर शादी भी करवा देंगे। कोई

जानता ही नही कि वे अमुक भगी के नाती और अमुक के बेटे है ।

पर स्वामीजी किसी भी तरह राजी नही हुए। बोले—तो फिर स्वतन्त्रता किसलिए है ? पुत्र को पिता की सम्पत्ति का भाग मिलना ही चाहिए। हा, जब समाज की वह स्थिति आएगी कि सब कुछ समाज देगा, सारी सम्पत्ति सामाजिक होगी, तब बात और है। मै अछूतो के हको की कुर्बानी नही करवा सकता ।

बजनाथप्रसाद ने दूसरे ढग से समझाना चाहा। उसने यह कहा कि यदि मुकदमा चला भी तो बहुत लम्बा चलेगा। इतने दिनो तक आप बध जाएगे। आप इसीकी पैरवी मे मर-खप जाएगे। पहलगाव से आपका उतर आना व्यर्थ जाएगा ।

पर स्वामीजी टम से मस नही हुए और अन्त तक वे बोले—चौबीस घण्टे के अन्दर आप लोग अपनी राय ठीक कर ले, नही तो मुकदमा चलाना ही पडेगा, जिससे व्यर्थ मे बाबू रामलाल की बदनामी होगी। लोग समझेगे नही कि उन्होने उसी प्रकार से हेमा माई से शादी की थी, जैसे अन्य लोग पत्नी के मरने पर दूसरी शादिया करते है। आपके वर्ग के लोग यही समझेगे कि उन्होने रखैल रखी। इस प्रकार हेमा माई का सिर नीचा होगा, और रामलाल बाबू का नाम भी कीचड मे घसीटा जाएगा। यह किसी तरह लाभदायक नही हो सकता।—कहकर वे चले गए।

सजय दरवाजे तक स्वामीजी को छोड आया, तो बृजनाथप्रसाद बोला—मेरे आदमी स्वामी का पीछा करेगे और पता लगा लेगे कि वह कहा ठहरा है। इसमे तो हमे कुछ करना भी नही है। हज़रत जो भागकर इतने वर्षो तक पहाडो मे छिपे रहे, इसका कुछ कारण होगा। अवश्य ही यह कोई फरार व्यक्ति है। बस, पुलिस को खबर कर देनी है, और कुछ करना नही है। वे तो अड नही रहे है, यह स्वामी ही व्यर्थ मे अड रहा है।

सजय को यह सब मालूम था। सच तो यह है कि उसीने ही बृजनाथ बाबू से यह कहा था कि स्वामीजी को किसी तरह पकडा दिया जाए, तो सारे झझटो से छुटकारा मिल सकता है। पर जब उस कार्य को करने का अवसर बिलकुल सामने आया, तो वह हिचकिचाने लगा। बोला—मैं यह भूल नही सकता कि पिताजी स्वामीजी को गुरु करके मानते थे। दूसरी बात यह है कि वे बिल्कुल नि स्वार्थ हैं। अजय को वे कोई अच्छा आदमी नही समझते, और जब उसने हमारे विरुद्ध झूठी गवाही बनाने का इशारा किया था, तो उन्होने उसे फटकार दिया था। वे

इस बार उनके यहा ठहरे भी नहीं ।

बृजनाथप्रसाद बोला—तो फिर चलने दीजिए मुकदमा, हम देख लेगे ! सरकार की सहानुभूति अपनी ओर खीचने के लिए हम भी मुकदमे को कुछ-न-कुछ रूप देगे। हम अभी सोच नही पाए है कि क्या करेगे, पर ऐसा कुछ कर सकते हे कि हेमा या तो क्रान्तिकारिणी थी या क्रान्तिकारियो की रखैल थी। इन लोगो ने बाबू रामलाल की सम्पत्ति पर कब्जा करने के लिए बहुत दीर्घ षड्यन्त्र किया है, इत्यादि-इन्यादि ।

सजय इस प्रकार की बातो पर कतई राजी नही हुआ। बोला—अभी आप कुछ न करें। स्वामीजी का पता मुझे दे दे। मैं कोई भी काम ऐसा नही करना चाहूगा, जिससे पिताजी के चरित्र पर आच आए। मै स्वामीजी के चरित्र पर कोई लाछन लगाना नही चाहूगा· ·

उसे बीच मे ही टोककर बृजनाथप्रसाद हस पडा । बोला—तब आप मुकदमा लड चुके ! सीधे से समझौता कर लीजिए।

—हा, वही शायद करना पडे, पर अभी हम कुछ निश्चय नही कर पाए। हम दोनो भाई तो तैयार है । शायद एक-तिहाई सम्पत्ति उन दोनो भाइयो को दे देने पर वे राजी हो जाए गे, क्योकि यह भी एक करोड से ऊपर ही होगा। पर हमारी पत्निया किसी तरह राजी नही हो रही हैं। हमारे ससुर साहब तो कह रहे है कि ऐसे सब रखैलो को जायदाद का हिस्सा दिया दिया जाने लगा, तो फिर समाज की सुव्यवस्था हो चुकी। वे कहते है हमे दबना नही चाहिए ·

—पर वह रखैल नही थी। वह बाकायदा विवाहिता स्त्री थी। स्वामीजी के अलावा सम्भव है और भी गवाह जीवित हो। इस कारण आपके ससुर साहब की बात उन लोगो पर बिल्कुल लागू नही होती।

तीनो बडी देर तक सारी सम्भावनाओ पर बातचीत करने लगे, पर कोई ऐसा रास्ता दिखाई नही पडा, जिससे साप भी मरे और लाठी भी न टूटे। असल मे ससुर साहब और पत्नियो का तो बहाना था । सजय स्वय भी सम्पत्ति देने से भरसक बचना चाहता था।

१०

पुरन्दर उर्फ राघवेन्द्र को जाने कैसे यह पता चल गया था कि शिशु अब घर नही जाता। या तो उसने पुलिसवालो से सुन लिया था, जिनका जमघट पार्लियामेटरी सचिव सूर्यकुमार के यहा होता रहता था या, और किसी प्रकार से यह खबर लगी थी। इससे उसे एक तरफ जहा आनन्द हुआ था, कि चलो पटरी खाली हुई, अब अपनी रेलगाडी को हम उसपर दौडा सकते है, वही उसे डर भी लगा कि देश मे कुछ भयकर ऊधम होनेवाला है। पोलैण्ड पर हमला होते ही वह चौकन्ना हो गया था, और उस रात को वह घर ही नही आया था, यानी वह मूलगज के एक कोठे मे ही रह गया था। अगले दिन सवेरे अखबार पढकर तब वह सूर्यकुमार के घर गया था।

जब दो दिन बाद ब्रिटिश सरकार ने लडाई छेडी, उस दिन वह और भी चौकन्ना हो गया। लगा कि सीने पर कोई बोझ आ गया, जो अब टलनेवाला नही। जेल से माफी मागकर छूटनेवाला पुरन्दर ऊपर आ गया, और जनता के सामने काग्रेसी नेता के रूप मे उछल-कूद करनेवाला राघवेन्द्र तलछट बनकर बैठ गया। वह बहुत ही घबडा गया। उसे अफसोस हुआ कि वह इस अग्निक्रीडा मे पडा ही क्यो!

यौवन के प्रारम्भ मे जाने कैसी भावुकता के बहाव मे लडखडाकर वह शिशु के इर्द-गिर्द मडराने लगा था, जैसे उन दिनो कई अन्य पुरुष मडराते थे। वह उसका उपग्रह बन गया था, और इसीमे उसे तृप्ति थी। जाने कैसी भावुकता से तो नही—क्योकि अब तो उसके निकट यह स्पष्ट हो चुका था कि किस कारण वह शिशु के पास गया था। वह तो वसुधा की चुम्बकीय कशिश से खिचकर गया था, ठीक उसी प्रकार जैसे गुरुत्वाकर्षण से ऊपर की वस्तु नीचे आ जाती है। क्रान्ति-भ्रान्ति तो बहाना था, जिसका कोई अर्थ नही होना था, वह तो एक रूपविमुग्ध प्रेमिक था, पर अपना यह स्वरूप उसके निकट तब खुला, जब शिशु बिना किसी प्रकार की चेतावनी दिए, बिना मेघ के वज्रपात की तरह एक दिन भद्रसेन नामक मुखबिर पर गोली चला बैठा, और पकडकर जेल भेज दिया गया। इस प्रकार उसके लिए मैदान साफ था।

तब उसने वसुधा के प्रेमस्रोत मे अपने को तैरा दिया। वसुधा का सीप-समान

नन्हा-सा हृदय बिल्कुल मरुभूमि की तरह वर्षावारि के लिए पिपासित और अतृप्त था। एक ने नि स्व होकर अपने को उडेलना शुरू किया, और दूसरे ने आजर भर-भरकर उसे खूब पिया। वे दिन क्या खूब बीते ! —और रातें तो स्वप्नवत् रही ! यदि उस युग मे किसी प्रकार का काटा कभी चुभा तो यही कि एक-एक दिन जा रहा है, और शिशु के छूटने का दिन करीब आ रहा है। किसी प्रकार की कोई अनुशोचना या पश्चात्ताप की किरकिरी नही थी, विशेषकर जब पहले ही दिन घनिष्ठता के समय यह मालूम हो गया कि शिशु नपुसक था। मन के अदर के सारे टाके खुल गए और निर्मल आनन्द की धारा झर-झर फूट निकली। हा, लोगो के सामने अपना रुख यही रहता था कि बडे भाई जेल गए है, इसलिए देवर और भाभी साथ मे रहते हैं। क्या किया जाए, मजबूरी है !

अच्छे-खासे दिन कटे। फिर शिशु आया और उसने सब तहस-नहस कर दिया। नही, शिशु नही, वसुधा को ही पता नही क्या ख्याल आया वि वह उसे शहीद बनाने पर तुल गई। नतीजा यह हुआ कि वह उससे बचने के लिए सत्याग्रह करके जेल चला गया। अपनी खुशी से जेल नही गया था। लोग भले ही अपने को सत्याग्रही समझें, पर सत्याग्रह से अपने को कोई वास्ता नही था। जेल मे इसलिए भाग आए थे कि कही वसुधा के कहने मे आकर सचमुच पिस्तौल लेकर किसी अग्रेज अफसर को न मार दें और व्यर्थ मे फासी पर ही चढना पडे। इसलिए जब आत्मा ने विद्रोह किया, तब माफी मागकर छूट आए। इसी बात का लोगो ने बतगड बना दिया। फिर शिशु छूटा, और वसुधा उससे छूट गई।

फिर भी मन्त्रीजी, लोग तो मन्त्रीजी ही कहते हे, के साथ अच्छी कट रही थी। पुरन्दर का चोला छोडकर राघवेन्द्र बने। मास्टरी, ट्यूशन सब छोड दी, पॉलिटिक्स करने लगे। काग्रेस का राज्य हो गया था, कोई डर-भय था नही, दगे हुए साड की तरह विचरते थे। अवश्य दो-चार दिन के लिए तब एक आफत आई थी, जब काग्रेस मन्त्रिमण्डलो ने क्रान्तिकारी कैदियो को छुडाने के लिए पद-त्याग कर दिया था।

उन दिनो एक बार दिन मे तारे दिखाई पडे थे। पर वह तो कुछ भी नही था इस भयकर आफत के मुकाबले मे, जो अब महायुद्ध छिडने से सिर पर ही नही, सारे अस्तित्व पर आकर बैठ गई है।

वामपन्थी तो हमेशा से हाय-हाय करते रहे है, क्योकि उनको तो किसीने

मन्त्री नही बनाया, पर दक्षिणपन्थी भी बेचैन हो रहे है। यहा तक कि गाधी भी। यह भी कोई बात हुई कि व्यर्थ मे ब्रिटिश सरकार से यह पूछ रहे है कि युद्ध करने मे तुम्हारा उद्देश्य क्या है! यह तो बिलकुल ढोग है। कोई भी दुधमुहा बच्चा जानता है कि हर युद्ध का क्या उद्देश्य होता है। हर युद्ध का उद्देश्य होता है—लडाई जीतना, दुश्मन को शिकस्त देना, और इस क्षेत्र मे चूकि हिटलर दुश्मन है, इसलिए उसे मात देना ही उद्देश्य है। यह तो महज़ बेवकूफी और ज़बरदस्ती है कि पूछते है—युद्ध के सम्बन्ध मे भारत मे तुम्हारा क्या उद्देश्य है?

अरे भई, भारत से युद्ध का क्या मतलब? न भारत के कारण युद्ध हुआ, न भारत से युद्ध का कोई खास मतलब। फिर भी ब्रिटिश भारतीय सरकार ने युद्ध-घोषणा की। इसका कारण यह है कि भारत सरकार नाम की कोई वस्तु है नही। वह तो ब्रिटिश सरकार का एक पुछल्ला-मात्र है। जब धड लडेगा तो सिर उससे अलग कैसे जाएगा? ऐसा प्रश्न पूछना निरी हिमाकत है। पर खुल्लमखुल्ला ऐसा कह कौन सकता है! भेडियाधसान-मूलक नक्कारखाने मे एक की तूती कैसे बोले! एक सियार ने जो अज़ान दी, बस सब सिर नीचा करके उसीके सम्बन्ध मे कह रहे है—आमीन, हू-हू-हुक्का-हुआ! जो स्वत सिद्ध है, जिसमे कोई सदेह नही है, जिसका एक के सिवा कोई दूसरा उत्तर नही हो सकता, उस प्रश्न को पूछना राजनीतिज्ञता की एवरेस्ट चोटी समझी जा रही है! हा, यदि जान-बूझ-कर अनजान बनना है, देखकर भी नही देखना है, सुनकर भी बहरा बने रहना है तो और बात है।

पर काग्रेस के इस रवैये मे राघवेन्द्र को आशा की एक रौप्यरेखा भी दिखाई पड रही थी। वह यह कि शायद यह कुछ न करने या अकर्मण्यता की एक भूमिका-मात्र हो—सार्वजनिक भूमिका!

एक तरफ तो यह आशा थी, दूसरी तरफ निराशा ही निराशा थी, क्योकि काग्रेस के बाहर कुछ तत्त्व ऐसे है, जो हर समय ब्रिटिश सरकार के विरुद्ध तलवार झनझनाने मे आस्था रखते है। होना तो यह चाहिए था कि ऐसे तबके की सम्पूर्ण रूप से अवज्ञा की जाती, पर काग्रेस के अन्दर कुछ ऐसी बुनियादी त्रुटि है कि उस-पर कुछ अवाछनीय तत्त्व हावी रहते हैं, जो बाहर की उन अपतरगो को रिसीवर की तरह प्राप्त करते हैं और रोगग्रस्त अग की तरह उसे सारे शरीर मे फैला देते है। फिर तो उसमे हिचकिया, उबकाइया और तरह-तरह के लक्षण प्रकट होने लगते

है, जो बहुत खतरनाक है। तलवार लपलपाने का नाटक करते-करते जाने कब तलवार चल ही जाए, और फिर घमासान छिड जाए !

काग्रेस मन्त्रिमण्डलो से देश को कितना लाभ हुआ हैं इसे कोई नही देखता। शक्ति धीरे-धीरे काग्रेसी मन्त्रियो के हाथो मे आती जा रही है, पर इस मार्ग मे धैर्य-धारण की आवश्यकता है। रोम एक दिन मे नही बसा था, और न भारत एक दिन मे स्वतन्त्र हो सकता है। होते-होते ही कुछ होगा।

पुरन्दर उर्फ राघवेन्द्र को पूरी फिक्र पड गई थी कि यदि काग्रेस लडाई छेडेगी, तो उस हालत मे वह क्या करेगा। एक रिहर्सल तो इसके पहले ही हो चुका था—जब काग्रेस के दो मन्त्रिमण्डल इस्तीफा देकर हरिपुरा गए थे। तभी राघवेन्द्र ने अपना एकाकी मार्ग चुन लिया था। वह हरिपुरा न जाकर इधर ही रह गया था। वह तो एक भयकर दुखान्त घटना रही कि वह हरिपुरा जाकर शेर बनने से रह गया, और उधर कुछ हुआ भी नही। टाय-टाय फिस्स हो गया और काग्रेस मन्त्रिमण्डल 'जान बची लाखो पाए, लौट के बुद्धू घर को आए' कहावत को चरितार्थ करते हुए फिर अपनी मसनदो पर आसीन हो गए। अपन वीर बहादुर बनने से रह गए।

कही उसी प्रकार अब की बार भी तो नही होने जा रहा है ? पर नही, अब की बार सरकार सख्ती पर तुली हुई मालूम होती है। उसके सारे रग-ढग भयानक लग रहे है। तैयारी काग्रेस को जड से उखाड फेंकने की है। अग्रेज तब हिटलर के मामले मे गम्भीर नही थे, पर जब से युद्ध छिड गया, तब से बाकायदा युद्ध मन्त्रिमण्डल बनाकर अभियान जारी है। यदि भारत के लोग इसमे बाधा पहुचाएगे तो वे कुचल दिए जाएगे, उनका बुरी तरह दमन होगा।

उसने बाबू सूर्यकुमार से मौका पाकर कहा—कुछ समझ मे नही आ रहा है कि हम लोग किधर जा रहे है ! यो तो हमारे कर्णधार महात्मा गाधी बहुत ही अभिज्ञ है, पर अब की पाला भी तो बहुत बडे तूफान से है। क्या होगा, समझ मे नही आता। लोगो मे बडा उत्साह है, पर जनता का उत्साह सोडावाटर के उफान की तरह होता है। वह ज्यादा देर तक नही ठहर सकता। जो कुछ होना है, फौरन हो जाना चाहिए, नही तो सन् '३८ की हालत न हो। लोहा ठण्डा पड जाने पर घन चलाने से क्या होता है !

बाबू सूर्यकुमार क्या, उनकी तरह कोई भी मन्त्री या अन्य बडे लोग यह नही

जानते थे कि आगे क्या है। इस समय तो केवल वे लोग घटनाओ की प्रतीक्षा कर रहे थे। न उन्होने युद्ध छेडा था, और न आगे की घटनाए उनके बस मे थी, फिर भी सूर्यकुमार यह दिखाना नही चाहते थे कि मैं कुछ नही जानता। इससे उनकी नेतागिरी मे फर्क आता था। उन्होने पक्की नेतागिरी के लहजे मे कहा—मैं तुम वामपन्थियो (सूर्यकुमार ऐसे बोल रहे थे मानो वे नौजवानो की सभा मे बोल रहे हो) की बात बिल्कुल नही समझ पाता। सभी बातो को देखना होता है। लडाई चाहे हिसा की हो चाहे अहिसा की, बाकायदा तैयारी के बाद ही कुछ हो सकता है। बर्तानिया और फ्रास ने हिटलर के विरुद्ध लडाई की घोषणा कर दी है, पर हो क्या रहा है फ्रासीसी सेना ने जर्मनी पर हमला नही किया, यहा तक कि जब उनकी सारी सेना गतिशील हो चुकी, तब भी वह पूरे मोर्चे पर लगभग चुपचाप खडी रही। हवाई हमले नही हुए, हा थोडी-बहुत उडाने महज शत्रु की स्थिति पर देख-रेख करने के लिए होती थी। यही नही कि फ्रासीसी सरकार चुप रही, समझा यह जाता है कि उसने ब्रिटिश सरकार को भी यही कहा कि वह जर्मनी पर कोई हमला नही करे, तेल देखे तेल की धार देखे। देखते देखते आखो के सामने पोलैण्ड की हत्या हो गई। पोलिश सेना बडी बहादुरी से लडी, पर वह लड कहा पाई, क्योकि जर्मन वायुसेना ने बात की बात मे उसकी चिन्दी उडा दी। तीस पोलिश डिवीजनो को अपने से लगभग दुगुनी सेना से लडना पडा। एक तो हवाई शक्ति मे निकृष्टता, तिसपर तोपखाना भी पुराना, नौ जर्मन पैजरो के सामने पोलिश सेना बडी बहादुरी से लडी, पर न तो बर्तानिया उनके काम आया न फ्रास। अब भी लडाई केवल नाम को ही हो रही है। यह इसलिए नही कि बर्तानिया या फ्रास वाले कम बहादुर है, बल्कि इसलिए कि वे लडाई लडाई के ढग से ही लड सकते है, न कि और किसी ढग से। पोलैण्ड को तो खत्म होना ही था, यह मानकर ही बर्तानिया तथा फ्रास की सेनाओ ने काम किया।

राघवेन्द्र यह दिखाना चाहता था कि वह भी कम ज्ञान नही रखता, बोला—पोलैण्ड को अग्रेज और फ्रास कोई मदद नही पहुचा सके, और उधर रूसी सेना उसकी पूर्वी सीमा पर एकत्र हो गई, और फिर चौडा मोर्चा बनाकर आगे बढने लगी। हिटलर के दुश्मन ताल ठोकते ही रह गए, और उधर रूसी सेना बिलना पहुच गई और ब्रेस्त-लितोवस्क मे रूसी सेना और जर्मन सेना का सगम हो गया, फिर भला पोलैण्ड क्या लडता!

सूर्यकुमार को आश्चर्य हुआ कि राघवेन्द्र युद्ध-समाचारो को इतने ध्यान से पढता रहा है। बोले—हा, पोलैण्ड के लिए सारी घटनाए विरुद्ध गई। रूस ने पहले पोलैण्ड से कुछ इस प्रकार का प्रस्ताव रखा था कि गत महायुद्ध मे तुमने हमारा जो हिस्सा दबा लिया था, उसे लौटाने का वादा करो तो हम तुम्हारी रक्षा कर सकते है। पर पोलैण्ड इसपर राज़ी नही हुआ था। कुछ भी हो, पोलैण्ड खत्म हो गया। अब करीब-करीब लडाई जहा की तहा टिकी हुई है। इससे कोई यह तो नही कहता कि बर्तानिया या फ्रास लडना नही चाहते ! फिर तुम लोग यह ऊधम क्यो मचाए हुए हो कि गाधी युद्ध के उद्देश्य पूछ रहे है, इसलिए वे लडना नही चाहते ?—कहकर मन्त्रीजी ने अपने कथन की पुनरावृत्ति करते हुए कहा—लडाई तो लडाई के ढग से ही लडी जाएगी ! तार काटने और पटरी उखाडने के नारे देने-वाले लोग देश को बहुत हानि पहुचा रहे है। सबको मिलकर काम करना चाहिए। उतावलेपन से कोई फायदा नही है। सब्र का फल अच्छा होता है।

राघवेन्द्र मन ही मन झेप गया, पर साथ ही खुश भी हुआ कि मन्त्रीजी उसे बहुत गरम युवक समझ रहे है। उसे न तो मन्त्रीजी से वास्तविकता का पता लगा, न और किसीसे। सब कहते थे कि कुछ होगा, पर क्या होगा, कैसे होगा—यह कोई नही कहता था। हा, कहने का एक तरीका यह भी चल गया था कि अब की बार जो आन्दोलन होगा, वह पहले के आन्दोलनो से भिन्न होगा। तो क्या अन्त तक काग्रेस गरमदल के ढग पर तार काटने, पटरी उखाडने और क्राति करने के मार्ग पर चल निकलेगी ? यह तो बहुत ही खतरनाक बात है। यदि इसकी दो प्रतिशत सम्भावना भी है, तो भी पहले से अपना कार्यक्रम सोच लेना चाहिए।

व्यर्थ मे जान नही गवानी है, और न किसी ऊधम मे फसना है। यदि वह पुरन्दर से राघवेन्द्र बना है, तो वह राघवेन्द्र से पुरन्दर भी बन सकता है, और पुरन्दर ही क्यो, आवश्यकता पडे तो वह तीसरा ही कुछ बन जाएगा। वसुधा के भडकाने पर भी उसने क्रान्तिकारी बनना स्वीकार नही किया, और उससे बचने के लिए जेल चला गया, और जेल से बचने के लिए माफी मागी। वह अपने को अच्छी तरह पहचानता है, उसके बस का न फासी चढना है, न जेल जाना। फासी चढने से जेल जाना आसान है, पर उससे आसान है आराम से चुपचाप ज़िन्दगी व्यतीत करना। वह अक्सर इन्ही बातो को सोचते हुए गगाजी के तट पर निकल जाता था और वहा देर तक बैठा रहता था। इसी प्रकार बैठे-बैठे एक दिन उसे

ऐसा लगा कि उसमे दिव्यज्ञान स्फुरित हुआ है। शायद भगवान बुद्ध को जब बोधि प्राप्त हुई होगी, तब उनको ऐसा ही लगा होगा।

सारी समस्याओ का समाधान तो एकसाथ हो जाता है। अरे, वह कितना मूर्ख है कि उसने अभी तक यह बात सोची ही नही थी! सोची तो थी, पर इन दिनो जाने कैसे ध्यान से उतर गई थी। उसने आवेश मे आकर गगा के पानी मे हाथ डाला और जल की बूदे अपने सिर पर छिडक ली। फिर वह शान्त होकर गगातट से चल निकला।

हिटलर का यह समझना गलत है कि वह ससार मे जो चाहे सो कर सकता है। उसने पोलैण्ड को दबोच लिया। शायद उसीके कारण काग्रेस मन्त्रिमण्डलो को इस्तीफा भी देना पडे, क्योकि ताल ठोकते-ठोकते, तलवार लपलपाते-लपलपाते एक ऐसी स्थिति आ जाती है, जब वार करना ज़रूरी हो जाता है। लोग गाधीजी को बडा भारी नेता और तीसमारखा समझते है, पर अपने से तो उसकी पोल-पट्टी छिपी नही है। लार्ड इरविन ने समझौते के नाम पर उसे कैसा उल्लू बनाया! गोलमेज़ से हज़रत लौट आए तो सोचते थे कि जनता वही खडी है जहा वह गाधी-इरविन समझौते के समय खडी थी।

उन्होने आकर कहा—खुल जा सिम-सिम! पर जनता कोई कण्डे की आच पर रखी हुई दूध की कढाई थोडे ही है कि बराबर गर्म ज़िन्दा तार बनी रहेगी, बल्कि घाते मे कुछ मलाई भी हाथ लगेगी। 'खुल जा सिम-सिम कहा तो अपने लिए जेल का फाटक तो खुल गया, पर जनता ने साथ नही दिया। नतीजा यह हुआ, किसी तरह इज्जत बचाई। खैरियत यह हुई कि चुनाव आ गया और फिर एक बार सिर उठाने का मौका मिला। फिर वही बेहूदगी शुरू कर दी। युद्ध का उद्देश्य पूछ रहे है! युद्ध का उद्देश्य कहो! वाह!

पर अपने लिए तो मार्ग सूझ गया। शिशु अवश्य जेल मे जाएगा, नही जाएगा तो कुछ किया जाएगा, जिससे रास्ते का यह रोडा टले, आख की किरकिरी निकल जाए और फिर गुलछर्रे उडे। जिस तरह कई प्राणी जडात्र बिताते है, उस तरह अपन वसुधा के साथ यह सकटकाल गुज़ार देगे।

फिर?

फिर क्या? जब सकट का शीतकाल टल जाएगा, फिर एक बार सूर्यकिरण चारो तरफ छिटकेगी, तो मैं भी किसी-न-किसी रूप मे गिरगिट की तरह प्रकट

हो जाऊंगा। कह दूगा—काग्रेस से मेरा मतभेद हो गया था, इसलिए मैं तार काटता और पटरिया उखाडता रहा। इसमे कोई झूठ नही। वह भी एक तरह का तार काटना ही है। गदराए हुए नारी-शरीर को भोगना एक तरह की पटरिया उखाडना ही है। शिशु साला तो जेल की हवा खाएगा, और यहा उसका कारखाना चालू रखेंगे। बम्बई और बडे-बडे शहरो मे कहते है कि मज़दूरो की खाटे ठण्डी नही होती, यानी जब एक शिफ्ट का मज़दूर चला जाता है, तो दूसरी शिफ्ट का मज़दूर आकर उस बिस्तरे पर सो जाता है, उसी तरह मैं भी शिशु की खाट को, बल्कि वसुधा की खाट को ठण्डी न होने दूगा।

कभी मौका नही मिला कि वसुधा से यह पूछू कि कौन अधिक पुरुष है। पर अब मौका मिलेगा। दोनो हाथो मे लड्डू है। यदि काग्रेस लडाई छेडती है तो, और यदि नही छेंडती है तो। वाह, कैसा समाधान रहा!

इस बीच उसे पता लग गया कि शिशु फरार हो गया है। यह इतनी महत्त्वपूर्ण खबर थी कि उसे लगा कि भाग्य मुस्करा रहा है और जो वह चाहता है वह उसी रूप मे होने जा रहा है। फरार से उसे पूरी खुशी नही हुई, क्योकि फरार आदमी गिरफ्तार से कही अधिक खतरनाक होता है, और हो सकता है कि उसके पास अस्त्र-शस्त्र हो, और कही वह बिलकुल सिर पर कफन बाधे हुए हो, तो उससे बहुत बडी हानि हो सकती है। पर घटनाए सम्पूर्ण रूप से अपने अनुकूल तो जा नही सकती, जितनी अनुकूल जा चुकी है, वही बहुत है। पटरी साफ तो है। वह झाककर देख आया कि वसुधा अब अकेली ही रहती है, पर उसने अभी प्रकट होना उचित नही समझा, क्योकि उसे स्मरण था कि अन्तिम बार जब वह वसुधा के सामने गया था, तो उसने उसे अपमान करके बाहर निकाल दिया था। इसलिए जो कुछ करना है, वह समझ-बूझकर करना है। पहले थाह लेकर तब नदी मे पैर रखना चाहिए, नही तो डूबने की नौबत आ सकती है। फिर शिशु जब बिना वारण्ट के फरार हो गया है तो क्या वह जब-तब आता न होगा? अवश्य आता होगा। इस कारण, वसुधा के दिल मे यदि उसके प्रति प्रेम न भी हो, तो भी वह मुझसे मिलने मे हिचकिचाएगी। मानसिक रूप से एक ब्रेक तो बना ही रहेगा।

इसी प्रकार सपने देखते हुए और कल्पना मे वसुधा से प्रेम करते हुए, साथ ही डरते हुए कई दिन बीत गए। इतने मे वर्धा मे कार्यसमिति की एक बैठक हुई। राघवेन्द्र दैनिक 'प्रताप' के दफ्तर मे जा-जाकर हर घण्टे पता लगाने लगा कि

क्या हो रहा है।

अरे, जिसका डर था, वही होकर रहा। जो राघवेन्द्र ने पहले-पहल तार पढा, तो उसे ऐसा लगा कि हरफ घूम रहे है, और वह हरफ मिलाकर शब्द, और शब्द मिलाकर वाक्य नही बना पा रहा है। सारा शरीर पसीना-पसीना हो गया। वह दीवार पकडकर बैठ गया, तो एक उप-सम्पादक ने कहा—क्या बात है ?

उसने सभलकर कहा—बात कुछ भी नही, अभी से फरार होना पडेगा, और मेरे पास कुछ रुपये नही है।

खैरियत हुई कि उप-सम्पादक ने यह समझा कि यह व्यक्ति कुछ मागने की भूमिका बाध रहा है, इसलिए वह जल्दी से काम के बहाने चला गया। तब राघवेन्द्र ने वह समाचार पढा, जिसमे यह कहा गया था कि ससदीय उप-समिति ने कार्य-समिति की स्वीकृति से मन्त्रिमण्डलो तथा काग्रेस प्रान्तो के काग्रेस दलो के पथ-प्रदर्शन के लिए निम्नलिखित हिदायतें जारी की हैं—

कार्यसमिति का प्रस्ताव काग्रेस की प्रान्तीय सरकारो से इस्तीफा देने के लिए हिदायत देता है। असेम्बलियो की जो बैठकें बुलाई गई हैं, उनके बाद इस्तीफे दे दिए जाए, पर हर हालत मे यह आशा की जाती है कि ३१ अक्तूबर तक इस्तीफे पेश कर दिए जाएगे। मध्यप्रान्त तथा उडीसा की विधान-सभाए नवम्बर के प्रारम्भ मे बुलाई गई हैं, इसलिए इन प्रान्तो के मन्त्रिमण्डल इस बैठक के बाद ही इस्तीफा देगे।

राघवेन्द्र ने इस समाचार को कई बार पढा। उसने चाहा, बहुतेरा चाहा कि समाचार का कोई और अर्थ निकले, ठीक उसी प्रकार से जैसे कोई चीज़ खो जाती है तो हम आशा के विरुद्ध आशा करते हैं कि वह एकाएक नही मिल जाएगी। प्रेस के सारे कर्मचारी तथा सम्पादक उस समाचार को हाथो-हाथ ले रहे थे। सबके चेहरो के रग बदल चुके थे। सबमे उत्साह था, साथ ही सबमे भय भी था, क्योकि यह निश्चित था कि देश मे जो उथल-पुथल मचेगी, उसमे समाचारपत्रो पर भी प्रहार होगा, यानी उपस्थित सबकी रोज़ी पर आ बनेगी। फिर भी लोगो के मन मे उत्साह था, यानी उसीकी प्रधानता थी। यदि भय था, तो दबा हुआ।

राघवेन्द्र ने यह सब देखा, पर वह प्रभावित नही हुआ, क्योकि वर्षों से वह इसी प्रकार के वातावरण मे चल रहा था। जब शिशु पहली बार गिरफ्तार हुआ था, तब अन्तिम बार उसे देशभक्तिमूलक जोश आया था, पर अगले हा क्षण ज्योही

उसने वसुधा को देखा था, और कामुकता के साथ देखा था, तो उसके उस जोश की अकालमृत्यु हो गई थी। उत्सात मिट गया था। तब से वह जानता ही नही था कि जोश किसे कहते हैं—यानी देशभक्ति वाला जोश। अब तो केवल शीतल हिसाब-किताब करके चलना-मात्र था।

राघवेन्द्र अब मन से फिर पुरन्दर बन चुका था, और पुरन्दर बनकर ही वह समाचारपत्र के दफ्तर से निकला। अब उसे लगा कि फौरन कुछ करने की जरूरत नही है। देखा जाए, दूसरे लोग क्या करते हैं। पहले से अपनी बात क्यो बनाई जाए! इस बीच कुछ तैयारी की जाए। तैयारी की बात सोचते ही उसका चेहरा कडा पड गया। सबसे बडी तैयारी तो रुपये से होती है। यही एक वस्तु है जो सर्वत्र सब स्थितियो मे काम देती है। अब तो वही चाहिए।

कैसे उस उप-सम्पादक ने मुह फेर लिया था—हा-हा-हा-हा! अब जाकर मानव-हृदय का असली रहस्य समझ मे आया। वह मन ही मन बहुत खुश हुआ। ऐसा लगा कि उसीने पहली बार इस रहस्य का आविष्कार किया है। बाकी लोग तो सत्य के प्रशान्त महासागर के बलुई तटो पर खडे होकर ककड-पत्थर बीन रहे हैं, असली रत्न का पता तो उसीने पाया है। इसीको कहते है, रणनीति। यह ऐसा व्यूह है, जिसमे ओ३म्लाभ के सिवा कुछ नही है, पराजय की कोई सम्भावना नही है।

उसने देखा कि समाचारपत्रो मे खबर आने के पहले ही यह खबर फैल चुकी थी। लोग जहा-तहा छोटी-छोटी टोलिया बनाकर जोश के साथ बातें कर रहे थे। उसे बडी निराशा हुई। पर कुछ देर सोचने के बाद वह इस नतीजे पर पहुचा कि ऐसा तो होगा ही। मूर्ख लोग स्वतन्त्रता-सग्राम मे अपनी जान गवाएगे और बुद्धिमान लोग गुलछर्रे उडाएगे। स्वतन्त्रता आई तो भी, न आई तो भी। अपनी तो पाचो उगलिया हमेशा घी मे रहेगी। जो रहस्य मालूम हो चुका है, उसके बाद फिर काहे का दुख, काहे का शोक, काहे का ताप!

जीवन अविरल गति से चला जाएगा। क्या सुन्दर कहा गया है—वीर भोग्या वसुन्धरा! इसमे बस इतना ही सशोधन चाहिए—वीर भोग्या वसुधा! और वीर वही, जो बच जाए। जो लोग मर-खप जाएगे, फासी पर लटकेंगे, गोलियो से भून दिए जाएगे, उनकी ऊची-ऊची समाधिया बनाई जाएगी, स्मारक बनेंगे—सीमेट के, सगमरमर के, सोने के, उनके नाम स्वर्णाक्षरो मे लिखे जाएगे, इतिहास उनकी

गाथाओ से भरा होगा, कथाकार उनपर कथाओ की रचना करेंगे, कवि गीत गाएगे, चित्रकार उनका चित्र बनाएगे, पर वसुधा का भोग तो वही करेंगे जो बच जाएगे। युग-युगान्तर से ऐसा ही हुआ है, और आगे भी ऐसा ही होगा। वीर वही, जो बच जाए।

जो कुछ खटका है, वह केवल शिशु की फरारी का ही है। क्या वह जान गया था कि मन्त्रिमण्डल इस्तीफा देंगे ? फिर वह कैसे फरार हो गया ? यदि फरार न होता, गिरफ्तार हो जाता। काश ! •

राघवेन्द्र की खाल ओढे हुए पुरन्दर इन्ही बातो को सोचता हुआ मन्त्रीजी के घर पर पहुचा, तो देखा कि वहा पहले ही सब खबर लग चुकी है और एक जमघट जमा है, यद्यपि मन्त्रीजी लखनऊ मे है। शायद इस वक्त तक मन्त्रिमण्डल की बैठक शुरू हुई होगी और इस विषय पर विचार-विमर्श हो रहा होगा कि किस प्रकार ससदीय उप-समिति की आज्ञा को कार्यान्वित किया जाए।

उसने ध्यान से देखा तो जो लोग जमा थे, उनकी किस्म उनसे दूसरी थी जो यहा और लखनऊ मे हमेशा मन्त्रीजी के इर्द-गिर्द मधुलोभी भौरो की तरह मड-राया करते है। ये तो वे लोग थे जो न ज्यादा पढे-लिखे है, न बुद्धिमान है। हा, ये वे ही लोग है। इनके चेहरो पर दृढ प्रतिज्ञा झलक रही है। ये ही वे लोग है जिनके स्मारक बनेगे, जिनपर गाथाए प्रस्तुत होगी, जिनके चित्र हर घर की दीवार पर टगेगे—पर अपना तो वर्ग ही दूसरा है।

फिर भी सारी भीड उसे देखते ही उसकी तरफ आ गई। राघवेन्द्र इस मूर्ख भीड से बचना चाहता था क्योकि वह जानता था कि लोग क्या कहेगे। यही कहेगे कि हमे रास्ता दिखाइए। पर पता नही इनमे कितने सी० आई० डी० के शुभ सज्जन शोभायमान हो रहे है। वह समझ गया कि मन्त्रीजी के अभाव मे वे उसी-को अवलम्ब के रूप मे पकडकर उसपर बौडना चाहते है। राघवेन्द्र ने हतबुद्धि होकर सबको देखा। फिर उस व्यक्ति की तरफ देखकर, जो निश्चित रूप से सी० आई० डी० का लग रहा था, बोला—मन्त्रीजी शायद घर पर नही है। वे तो लखनऊ मे ही रहेगे, दिन-रात बैठके होगी, और जाने क्या-क्या होगा।

सन्दिग्ध व्यक्ति ने भीड़ चीरकर आगे बढकर राघवेन्द्र से पूछा—आपके पास उनका कोई सन्देश तो आया होगा ?

राघवेन्द्र का सन्देह विश्वास मे परिणत हो गया। बोला—नही, मेरे पास

कोई सन्देश नही आया, और न आएगा। मैं भी लखनऊ जाने की सोच रहा हू।

एक उत्साही युवक, जो पहले जेल जा चुका था, बोला—पर इस बार तो दूसरी तरह से आन्दोलन होगा। कोई गिरफ्तार नही होगा। आप भी तो फरार होनेवाले होगे ?

राघवेन्द्र हक्का-बक्का रह गया। सी० आई० डी० की तरफ देखता हुआ बोला—भला मैं क्यो फरार होने लगा ! क्या मुझे पागल कुत्ते ने काटा है ? अहिसा के अन्तर्गत फरारी कहा आती है ? यह सब वामपन्थियो का प्रचार है, जो इस मौके से काग्रेस पर अधिकार जमा लेना चाहते हे।

कहकर उसे एकाएक याद आया कि क्यो न इसी मौके का लाभ उठाकर ऐसा कुछ कह दे जिससे शिशु ऐसे लोगो को हानि पहुचे और पुलिस जान पर खेलकर भी उन्हे गिरफ्तार कर ले। बोला—हमारा काम तो खुले-खज़ाने जो कुछ करना है, सो है। क्रान्तिकारियो का काम अलबत्ता यह है कि वे फरार होकर बम बनाए, और फिर थानो और गोरो के क्लबो को उडा दे। हम फरार होकर क्या करेगे !

उस उत्साही युवक ने कहा—पर अभी तो आप कह रहे थे कि मैं फरार हो जाऊगा, आज्ञा दे तो हम लोग भी फरार हो जाए।

राघवेन्द्र की ऐसी हालत हो गई कि काटो तो लहू नही। वह सारे अस्तित्व के साथ प्रतिवाद करता हुआ बोला—मैंने कब कहा ?

—आपने अभी 'प्रताप' के दफ्तर मे यह कहा था। मैं वही पर मौजूद था। खबर जानने गया था। हे-हे-हे-हे ऽऽऽ !

एक क्षण के लिए राघवेन्द्र को ऐसा लगा जैसे वह गुरुत्वाकर्षण की शक्ति से मुक्त हो गया, पर अगले ही क्षण वह सभलता हुआ बोला—मैंने अपने विषय मे थोडे ही कहा था। मैंने तो कहा था कि श्रीकान्त शिशु ऐसे लोग फरार हो रहे हैं, इससे हमे विचलित नही होना चाहिए, बल्कि हमे बिलकुल अहिंसात्मक ढग से गिरफ्तार हो जाना चाहिए।

उस उत्साही युवक को बहुत आश्चर्य हुआ। उसने कहा—फिर नई बात क्या हुई ? अब की बार तो आन्दोलन दूसरे ढग का होगा ? हेऽ-हेऽ !

अब राघवेन्द्र को ऐसा लगा कि वह जनता को कब्जे मे ला सकेगा। वह बोला—किसीने भी नही कहा कि अब की बार कोई नई बात होगी। यह तो

क्रातिकारियो का प्रचार-कार्य है, जो ग्रानेवाले ग्रादोलन को ग्रपने ढग पर ढालने की ग्रपचेष्टा कर रहे है।—कहकर वह सी० ग्राई० डी० लगनेवाले व्यक्ति की ग्रोर चुनौती के साथ घूरने लगा, जैसे वह चाहता हो कि यह एक ऐसी बात मैंने कही है, जिसे तुम ग्रवश्य नोट कर लो।

पर वह सी० ग्राई० डी० समझा जानेवाला व्यक्ति उस उत्साही युवक से बोला—ग्राप तो बच्चो की सी बातें करते है! ग्रगर ये फरार होना चाहेगे तो बताकर थोडे ही फरार होगे। जब ग्रहिंसा से नाता तोड दिया, तो सत्य से तो यो-ही छुटकारा हो जाता है!

ग्रपनी चाल व्यर्थ जाते देखकर राघवेन्द्र झल्ला गया, पर हसने की चेष्टा करते हुए बोला—ग्रपनी ग्रसलियत कोई नही बताता, पर गाधीवाद मे ऐसा करना वर्जित है। ग्रव्वल तो उसमे दुश्मन शब्द है ही नही, पर साधारण ग्रर्थों मे जो दुश्मन है, उससे पहले सारी बाते बता दी जाती हैं।—कहकर उसे ध्यान ग्राया कि वह तो सी० ग्राई० डी० के विरुद्ध व्यग्य कर गया। इसका नतीजा खराब हो सकता है। बोला—लोग कहेगे कि मैं गाधीजी से ज्यादा गाधीवादी हू, पर मै तो उन्ही तरीको मे विश्वास करता हू। दूसरे तरीके मुझे ग्राते ही नही। ग्रब सीख भी नही सकता।

उस समय भीड को किसी तरह समझा-बुझाकर शात करने के बाद उसने निश्चय कर लिया कि ग्रगली गाडी से लखनऊ चल देने मे ही कल्याण है। तैयारिया पूरी करने के लिए वह भीतर पहुचा, तो यो तो श्रीमती सूर्यकुमार उससे ग्रधिक बोलती-बतलाती नही थी, पर वे एकाएक उसे सामने देखकर विह्वल होती हुई बोली—भैया, ग्रब क्या होगा!

इसके पहले उस महिला ने उसे कभी न तो भैया कहा था ग्रौर न इतनी विह्वलता दिखाई दी थी। वह तो उससे जब भी मिलती थी, बहुत ऊचे शिखर पर खडी होकर मिलती थी, जैसे वहा से नीचे किसी चीटे को देख रही हो, ग्रौर वैसा करने मे उसे कष्ट होता हो। इस कारण राघवेन्द्र को बडा ग्राश्चर्य हुग्रा।

उसने भी ग्रब पहली बार दृष्टि भरकर श्रीमती सूर्यकुमार को देखा, बिलकुल साधारण स्त्री थी, पर बुरी नही थी। फरार तो होना ही था, यानी पुलिस के माने मे नही, ग्रादोलन से फरार होना था। बोला—कोई बात नही, ग्राप घबराइए नही! मेरा तो खयाल है कि मत्रिमण्डल के उस बार के इस्तीफे की तरह थोडी बहुत

आतिशबाज़ी और घूमधडाके के बाद वातावरण शात हो जाएगा। असल मे कुछ नही होगा। आप कहिए तो जब तक बाबूजी नही आते, तब तक मै भीतर ही सोया करू।

श्रीमती सूर्यकुमार ने राघवेन्द्र को ध्यान से देखा, फिर बोली—मै अगली गाडी से लखनऊ जा रही हू।

—मै भी चलू ?—राघवेन्द्र ने फौरन प्रस्ताव रखा।

श्रीमती सूर्यकुमार ने मना कर दिया।

११

यद्यपि जयराम शर्मा कई बार गाधीजी पर हमला करने के षड्यन्त्र मे असफल हुआ था, और अब उसके घर मे पटाखे बनाने का (वह स्वय तो उसे बम मानता था!) कारखाना नही रह गया था (उसकी पत्नी ने उसकी अनुपस्थिति मे सारा सामान नाली मे बहा दिया था), फिर भी वह निराश नही हुआ था। वह अब भी चातुर्वर्ण्य और चतुराश्रम के गीत गाया करता था और जब-तब जोश मे आकर चारो तरफ के लोगो मे कहा करता था—गाधी हिन्दू धर्म का परम शत्रु है!

वह अपने ढग से सारी घटनाओ को बडे ध्यान से देख रहा था। जब काग्रेस कार्यसमिति ने मत्रिमण्डलो को इस्तीफा देने का आदेश दिया तो वह फूला नही समाया। उसे लगा कि अब की बार ईश्वर उसकी प्रार्थना सुननेवाले हे। तब की बार तो शिकार बिलकुल हाथ मे आकर भी छूट गया, जिससे बडी निराशा हुई। उसकी आशा तथा इच्छा के विरुद्ध ब्रिटिश सरकार ने राजनैतिक कैदियो के मामले मे घुटने टेक दिए और काग्रेस मत्रिमण्डल फिर मसनदो पर आसीन हो गए। पर अब की बार दिल्लगी नही है। ब्रिटिश सरकार लडाई की दलदल मे फसी है—जीवन-मृत्यु की लडाई, जिसमे शायद ब्रिटिश सत्ता ही खत्म हो जाए। ऐसी स्थिति मे वह किसी प्रकार की बेवकूफी बर्दाश्त करने के लिए तैयार नही होगी, ऐसी आशा तो की ही जा सकती है। जयराम को यदि इस समय कष्ट था तो केवल एक, बल्कि दो। महान कष्ट तो यह था कि जिनकी भलाई के लिए वह सब कुछ होमने को तैयार था, वे ही उसका एहसान मानने के लिए तैयार नही थे। हिन्दू अपना

स्वार्थ न देखकर व्यर्थ मे भेडियाधसान-वृत्ति से परिचालित होकर गाधी के पीछे-पीछे चल रहे थे। मुसलमान जिन्ना के पीछे चल रहे थे, उसी तरह से हिन्दुओ को हिन्दू महासभा के साथ चलना चाहिए था, पर नही, हिन्दू महासभा भी किसी प्रकार के जवामर्दी वाले कार्यक्रम मे विश्वास नही करती थी। स्वामी लालनाथ ऐसे लोग भी ऐन मौके पर दुम दबाकर भाग गए। इस मार्ग मे तो वही चल सकता है, जिसने अपने सिर पर कफन बाध लिया हो।

दूसरा दु ख यह है कि उत्तर और दक्षिण मे जिस मेल-जोल की बात उसने सोची थी, वह पूरी नही हो सकी, क्योकि कौमुदी का कुछ पता नही लगा। वह नियमित रूप से मदिर मे जाकर आखे मूदकर बैठता है, पर न तो कोई स्वप्नादेश होता है और न किसी प्रकार कोई स्पष्ट लक्षण ही दिखाई पडता है कि कैसे इस महान उद्देश्य को पूरा किया जाए। उत्तर मे तो बरायनाम हिन्दू धर्म की रक्षा हुई। इधर के लोग सस्कृति आदि की दृष्टि से आधे मुसलमान हो गए, पर दक्षिण मे प्राचीन आर्यो की पूरी सस्कृति ज्यो की त्यो मौजूद है, जैसाकि वह कई बार अपनी यात्राओ मे देख चुका है। वही वास्तुकला, विराट, विशाल मदिर, जो आर्यों की महत्ता की याद दिलाते है—वही श्रद्धा, वही भक्ति, वही प्रेम!

यह केवल एक ऐतिहासिक आकस्मिकता नही है कि जब भारत बौद्ध आक्रमण से विध्वस्त और जर्जर हो चुका था, तब एक दक्षिणभारतीय शकराचार्य ने ही हिन्दू धर्म का पुनरुद्धार किया था। इस पुनरुद्धार के बाद भी बौद्धधर्म की बहुत-सी मान्यताए हिन्दू धर्म मे प्रच्छन्न रूप से रह गई थी, यह दूसरी बात है। एक बेचारा शकराचार्य क्या करता! बुद्ध ने तो हिन्दू धर्म की जड ही काट दी थी। अब गाधी ने फिर उसीका बीडा उठाया है, और वह भी बुद्ध ही की तरह नपुसक बनानेवाली वृत्ति या अहिंसा का ही प्रचार कर रहा है।

इन दार्शनिक दु खो के अलावा जयराम को अपनी पत्नी यशोदा से कुछ बहुत वास्तविक क्लेश थे। वह कुछ समझती-बूझती नही है। उसका स्वभाव बहुत ही सकुचित है। इमली के पत्ते की तरह न उसे हिन्दू धर्म के भविष्य की फिक्र है, और न उसे इसपर कोई विशेष क्रोध है कि गाधी तथा अन्य धर्मशत्रुओ की अपचेष्टाओ के कारण एक के बाद एक मदिर अछूतो के लिए खुलते जा रहे है। न वह राज-नीति समझती है न धर्मनीति, और टाग हर बात मे अडाती है। मेरे अच्छे-खासे बम के कारखाने को व्यर्थ मे नष्ट कर दिया। कौमुदी का फोटो फाड डाला, मिल

जाता तो उसका नेगेटिव भी नष्ट कर डालती। ऐसी मूर्खा स्त्रियो के कारण ही आर्यधर्म का पतन हुआ। यदि वह सच्ची आर्यललना है, तब तो उसे केवल आर्यों का स्वार्थ देखना चाहिए। उसे यह नही देखना चाहिए कि मैं कहा जाता हू, क्या करता हू, किससे मिलता हू। आर्यपुरुष के लिए तो अनगिनत शादियो की छूट है, फिर वह इस बात से क्यो परेशान होती है कि कौमुदी कौन है ! मैंने स्वप्न मे दो-एक बार उसका नाम लिया, इसीसे उसे सन्देह पड गया। मैने बहुतेरा समझाया कि कौमुदी कोई व्यक्ति नही है, कौमुदी माने चादनी, वह चादनी जो भारतीयो के हृदय मे छिटकेगी, इस अन्धकार के नष्ट हो जाने के बाद। पर वह मानती कहा है !

वह कहती है—मुझे सब मालूम हो गया है ! तुम उस बार काग्रेस नही गए थे, कही और गए थे। तुमसे काग्रेस का क्या वास्ता ? तुम तो उसके विरोधी हो। तुम बार-बार दक्षिण क्यो जाते हो ?

यशोदा को फिर-फिर समझाया गया कि नही बाबा, ऐसी बात नही है, पर वह मानती नही है। इधर उसे एक नया तर्क मिला है। कहती है—पुरुष सबके सब लम्पट होते हैं !—कृष्ण से लेकर गाधी तक !

उसने गाधी का वह लेख पढ लिया (मेरा ही कसूर है, मै सब 'गाधी साहित्य' लाता हू—उसे पचाने और उसका विरोध करने के लिए) जिसमे गाधी ने 'मेरा जीवन' शीर्षक से लिखा था—

"दो दिन पहले चार या पाच गुजरातियो के हस्ताक्षर से मुझे एक अखबार मिला, जिसका एकमात्र मिशन मुझे काले से काले रग मे पेश करना होता है। इसके शीर्षक के अनुसार यह पत्र हिन्दू सगठन का है। मुझपर जो अभियोग लगाए गए है, वे मुख्यत मेरे द्वारा की हुई स्वीकारोक्ति से लिए गए है, और वे प्रसंग से हटाकर ऊलजलूल रूप मे पेश किए गए हैं। अन्य बहुत-से अभियोगो मे मुझपर यह अभियोग लगाया गया है कि मैं कामुक हू, और मेरा ब्रह्मचर्य कामुकता को छिपाने का एक लबादा-मात्र है। मेरी मालिश और सोषधि स्नान कराने रूपी अपराध के लिए बेचारी डा० सुशीला नैयर को जनता की दृष्टि के सामने घसीटा गया है, जबकि सत्य यह है कि हमारे इर्द-गिर्द रहनेवाले लोगो मे उक्त दो कार्यों को कराने मे वही सबसे उपयुक्त है। कौतूहल रखनेवाले लोगो को बताने मे कोई हर्ज नही है कि इन कार्यों मे (जिनमे डेढ घण्टे से ऊपर समय लगता है) किसी

प्रकार की गोपनीयता नही है। इसके दौरान कई बार मैं सो जाता हू, और कई बार महादेव, प्यारेलाल तथा सहकर्मियो की उपस्थिति मे कार्य चालू रहता है।"[1]

अजीब बात यह है कि एक तरफ छुआछूत को उचित और शाश्वत माननेवाले लोग गाधी की दुश्चरित्रता-सम्बन्धी इन समाचारो का उपयोग अपने प्रचार-कार्य मे कर रहे है, दूसरी तरफ इस मूर्ख स्त्री यशोदा ने मेरी ऐसी हालत बना रखी है कि मुझे घर के अन्दर गाधी के चरित्र के पक्ष मे वकालत करनी पडती है, जबकि बाहर एक सच्चे धर्म-प्रेमिक के नाते मैं दूसरी ही बात करता हू। इस मूर्ख औरत से मुझे कहना पडा—हर तरह के लोग होते है। जितने मुह उतनी बाते है। असल मे गाधी के चरित्र पर हमला करना बिलकुल गर्हित है।

पर वह सर्वज्ञता के लहजे मे इन सब बातो को उडा देती है। कहती है—मैं सब जानती हू! तुम बम किसलिए बनाना चाहते थे?

यह प्रसग बहुत ही नापसन्द था, क्योकि दीवारो के कान होते है। कही धोखे मे क्रान्तिकारी समझ लिया गया तो फिर परित्राण नही है। पर कहना पडा—क्या जानती हो?

निर्लज्जता के साथ बोली—मैं जानती हू, कौमुदी कोई स्त्री है, जिसके पति को तुम मारना चाहते हो!

स्त्रियो की अक्ल का यह नमूना बहुत ही हास्यास्पद है। हास्यास्पद इसलिए कि इसका दायरा बहुत सकुचित होता है। वह यही सोचती है कि कोई उसका किराया मारने पर आमादा है, तो कोई उसका सुहाग लूटकर गुलछर्रे उडा रही है। ऐसी गृहस्थी से तो वानप्रस्थ ही अच्छा है। पर चलो, अब निराशा के अन्दर आशा की एक किरण तो चमकी। काग्रेस मन्त्रिमडल इस्तीफा दे दे, तो पाप कटे। यह जो सरकारी तौर पर खुल्लमखुल्ला छुआछूत का विरोध करके धर्म मे हस्तक्षेप की प्रक्रिया थी, वह तो अब बन्द होगी।

हिटलर अपने को आर्य कहता है, वह आर्यो की रक्षा के लिए कुछ तो करेगा। और कोई समझे या न समझे, यदि हिटलर का राज्य हो गया, तो वह कम से कम छुआछूत के रहस्य को तो हृदयगम कर लेगा। आर्य बडे दयालु थे, इसलिए उन्होने पराजित अनार्यों को अपनी सामाजिक पद्धति के अन्दर पिरो लिया, पर गुण तथा कर्म के अनुसार किसीको शूद्र बनाया और किसीको उससे भी उतरकर अस्पृश्य

[1] तेन्दूलकर, पृ० २४०

बनाया। इसमे बुराई क्या है? अपने देश के भ्रष्ट अंग्रेजी पढे हुए लोग ईसाइयत के बहकावे मे आकर छुआछूत और जात-पात, सब मिटा देना चाहते है, पर जर्मन हिटलर के हाथ मे आर्यधर्म का झण्डा है, वह अवश्य इस पहिये को उलटी तरफ घुमाने मे समर्थ होगा।

पर यशोदा को यह सब कौन समझाए! उसे तो बस यही पडी है कि ठेकेदारी से पैसे आए, नये मकान का अच्छा किराया आए, और मै दियाबत्ती होते ही घर मे आ जाऊ, चाहे धर्म भाड मे जाए, उत्तर और दक्षिण का मिलन होने से रह जाए, जात-पात और छुआछूत मिट जाए! वह अकडकर घर मे घुसा, और मानो स्वप्नादेश की आज्ञा सुनाते हुए यशोदा से बोला—दो-चार दिन मे कांग्रेस मन्त्रि-मण्डल इस्तीफा दे देगे।

यशोदा न तो राजनीति समझती थी और न यह समझती थी कि जो युद्ध छिडा है, उससे लाभ है या हानि। उसका मत कुछ ऐसा था कि अखबारो मे लडाई-दगे, झगडे-फसाद छपते ही रहते है। लडाई-दगे जब होते है तभी छपते है, ऐसी कोई कार्य-कारण-सम्बन्धो की कडिया उसके दिमाग मे नही थी। कहानिया भी तो लिखी जाती हैं, जिनमे प्रेम, विरह, मिलन, जाने क्या-क्या होता है, पर उनका वास्तविक जीवन से किसी प्रकार का वास्ता नही होता। उसी प्रकार अखबार वालो द्वारा छापी जानेवाली खबरे वैसी ही होती होगी। कम से कम जीवन से उनका कोई सम्बन्ध है, अथवा हो सकता है, ऐसी धारणा उसे नही थी।

वह कांग्रेस मन्त्रिमडलो के इस्तीफा देने का अर्थ नही समझ सकी। याद पडा कि पहले भी एक बार इसी तरह का हल्ला उठा था, जाने किसी कैदी को छोडने का किस्सा था। उस बार भी जयराम बहुत उत्तेजित हुआ था, पर सारी उत्तेजना का अन्त एक यात्रा मे हुआ था, जिसके सम्बन्ध मे अब उसे मालूम हो चुका था कि वह हरिपुरा कांग्रेस जा रहा हू, ऐसा कहकर गया था, पर गया कही और था। उसने सोचा अब की बार भी वही प्रतिक्रिया होगी, शायद यह उसी-की भूमिका-मात्र है। वह कुछ परेशान होकर बोली—तो तुम फिर हरिपुरा जाओगे?

उसने कितनी सरलता से यह बात कही थी, और कितने व्यग्य से, यह जयराम नही भाप सका, फिर भी वह तिनककर आपे से बाहर होता हुआ बोला—मैं कही भी जाऊ, तुमसे क्या मतलब? आर्यललना की तरह रहती है तो रह, नही तो

ऐसी दस पत्निया ला सकता हू ! ज़रूरत भी इसीकी है। दूसरो का नम्बर इसी-लिए बढ गया कि द्विजो ने एक से ज्यादा शादिया करनी छोड दी।

काग्रेस मन्त्रिमडल के इस्तीफे की बात तो खटाई मे पडी रह गई, और पति-पत्नी मे वही झगडा शुरू हो गया, जो इसके पहले सैकडो बार हो चुका था। जयराम ने अपनी बहुविवाह-वृत्ति के समर्थन मे आर्यो का आदर्श, अनार्य अथवा अनार्यवत् लोगो की तुलना मे उनकी सख्या बढते रहने की आवश्यकता आदि पर व्याख्यान तो दिया ही, इसके अतिरिक्त उसने अपनी पत्नी के साथ क्रोध मे आकर ससुरी, साली आदि के ऐसे सम्बन्ध स्थापित किए जो आर्यजनोचित भले ही न हो, पर मन की भडास को आर्यभाषा के शब्दो से अच्छी तरह व्यक्त करते थे। वह इन सारे वक्तव्यो और व्याख्यानो का निर्यास-सा निकालते हुए बोला—अब मैं वानप्रस्थ लेनेवाला हू। दिन-रात धर्म की सेवा करूगा। मैं अब उसी घर मे रहूगा, इसमे आऊगा ही नही।

जयराम ने यह सोचकर यह बात कही थी कि (यदि कभी कौमुदी आई·· वह अवश्य आएगी, क्योकि अब सारे बादल छट रहे है और सूर्य का प्रकाश फैल रहा है) वह मकान खाली है। उसने जान-बूझकर उस मकान के लिए किरायेदार नही ढूढे थे। यही कह देता था कि आजकल किरायेदार नही मिलते, जो मिलते हैं, वे किराया देनेवाले नही हैं। पर यशोदा काटा चुभाने का आनन्द लेते हुए पहली बार बोली—तुम्हारे लिए मकान खाली धरा है न! मैंने उसमे किरायेदार रख लिए हैं। बहुत अच्छे लोग है।

जयराम को यह समाचार इतना अप्रत्याशित और दारुण दु खदायी मालूम हुआ कि काग्रेस मन्त्रिमण्डलो के इस्तीफा देने की सम्भावना से आखो के सामने जो उजाला फैल गया था, और जो प्रतिक्षण बढता ही चला जा रहा था, एकदम से राख मे परिणत हो गया। वह सुलग उठा। बोला—तुम्हारी यह मजाल कि तुमने मुझे बिना पूछे मकान किराये पर उठा दिया! तुम्हे अपने किराये की ही पडी है, और यहा इतनी बडी-बडी समस्याए है! राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में इतनी बडी बडी घटनाए घटित हो रही है। अब उत्तर-दक्षिण का मिलन कैसे होगा! हिटलर आएगा तो क्या होगा!

यशोदा यो तो हिटलर के विषय मे अधिक कुछ जानती नही थी, पर उसने जो कुछ सुना था, उसके आधार पर उसने उसका जो मानसिक चित्र बनाया था,

वह कुछ इस प्रकार था कि वह एक विराट पुरुष है, चेतक की तरह किसी घोडे पर बैठता है , उसके पीछे-पीछे तोपखाने, रथ और सेना चलती है , वह जिधर जाता है, उधर विजय होती है। हिटलर के सम्बन्ध मे उसके मन मे बडी प्रशसा-भावना थी। वह आर्य है और आर्यत्व का गर्व करता है, यह भी वह सुन चुकी थी। बोली—अपनी रखैलो की बात करते हो तो करो, क्या हिटलर आएगा तो उसे रहने को जगह नही मिलेगी, जो तुम्हारे मकान की उसे ज़रूरत पडेगी ? फिजूल की बातें न करो ! अब की बार हरिपुरा गए तो फिर अपना काला मुह यहा न दिखाना। मैं भी आर्यललना हू, तुम्हारे बिना सब काम चला लूगी, पर सौत लाने नही दूगी, चाहे जो कुछ हो जाए !

जयराम ने यशोदा के परेशान सुन्दर मुखडे की ओर देखा। मकान तो हाथ से निकल ही चुका था। आजकल भला कौन किरायेदार आसानी से मकान खाली करता है ! ठीक तो कहती है, कौमुदी को अपने घर मे रखने के बजाय दूसरा घर किराये मे लेकर उसमे रखना सभी दृष्टियो से अच्छा रहेगा, नही तो यह जाहिल औरत कही झाडू-वाडू लेकर पहुची तो उत्तर और दक्षिण मे मेल होने की बजाय महाभारत मचकर रहेगा—ऐसा महाभारत, जिसमे कौरव ही कौरव रह जाएगे , वे रौरव मचाएगे और पाण्डव को खाण्डव का रास्ता पकडना पडेगा। बोला—तुम कुछ समझती नही हो, तुमसे अक्ल की कोई बात कहना व्यर्थ है !

—मैं कुछ समझती नही हू तो क्या वह चुडैल समझती है, जिसका फोटू तुमने उस कमरे मे टाग रखा था ? पाऊ तो पचास झाडू मारू, और एक गिनू ! कही इस धोखे मे न रहना कि सौत लाओगे, और मैं टुकुर-टुकुर देखती रहूगी। मै मायाराम से सारी बात बता चुकी हू।

जयराम को बडा आश्चर्य हुआ कि यह मायाराम से क्यो मिली, क्योकि मायाराम पहले तो अपना चेला था, गाधी की हत्या के कार्यक्रम साथ-साथ बनाया करता था, पर अब वह काग्रेस मे जा चुका है। बोला—तुम हमारे दुश्मनो से मिला करती हो ?

यशोदा ने तुर्की बतुर्की जवाब देते हुए कहा—तुम्हारा दुश्मन नही, तुम्हारी रखैलो का दुश्मन ! वह बेचारा इतना अच्छा लडका है। तुम जब से दक्षिण मे गए, तब से वह दु.खी होकर अलग हो गया।

जयराम को भी बहुत दु ख था कि एक तरफ लालनाथ ऐसे लोग आन्दोलन

छोडकर बैठ गए, दूसरी तरफ मायाराम ऐसा जोशीला युवक उससे किनाराकशी करके अलग हो गया। दूसरे लोग तो पहले ही अलग हो चुके है। अब वह अपने पथ का एकाकी यात्री रह गया है। बोला—हरि का भजै सो हरि का होई! उसका-हमारा नाता धर्म-सम्बन्धी था। जब वह धर्म से अलग हो गया, तो मेरा भी उससे नाता टूट गया। असल मे वह डरपोक था। जब उसने देखा कि केवल बातो का जमा-खर्च नही है, हर कदम पर खतरा है, यह मार्ग सिर उतारकर जमीन पर रखनेवालो के लिए है, तब वह हमसे अलग हो गया। तुम यह बात समझती नही हो, और व्यर्थ मे उससे मिलती हो। वह कोई अच्छा आदमी नही है।

यशोदा समझ गई कि इगित किस बात का है। उसने स्वय ही कभी मायाराम को पति से अलग करने के लिए उसके सम्बन्ध मे कहा था कि यह आदमी अच्छा नही है, पर आज दूसरी ही स्थिति थी। उसने उसकी रक्षा करते हुए कहा—काग्रेस के सब आदमी खराब ही नही होते, उसमे कुछ अच्छे आदमी भी हो सकते है।

जयराम को इसपर भी बडा क्रोध आया कि इसने तो गाधी को भी दुश्चरित्र कहा था, और आज यह मायाराम को बचाना चाहती है। बोला—तुमसे आखिरी बात कह देता हू, घर के काम से काम रखा करो! मायाराम जब तक मेरे साथ था, तब तक भाभी-भाभी कहकर आता था, ठीक था, पर अब उसका यहा आना ठीक नही। मैं कायरो से कोई सम्बन्ध नही रखना चाहता। आर्यो के लिए यदि कोई बात निषिद्ध है, तो वह है कायरता!

जयराम अब आगे वाद-विवाद करने के लिए तैयार नही था। उसे बडा बुरा लग रहा था कि इतनी अच्छी खबर मिली, पर इस मूर्ख स्त्री के कारण वह उसका रस नही ले पाया।

वह जल्दी से जैसे-तैसे खाना खाकर घर से निकल गया। वह जानना चाहता था कि काग्रेस का प्रस्ताव तो हो गया, पर उसे कार्यान्वित कब किया जाएगा। कही ऐन कार्यान्वियन के पहले ऐसी कोई स्थिति उत्पन्न न हो जाए, जिससे बना-बनाया काम बिगड जाए और तब की बार की तरह पहले से अधिक अकडफू के साथ काग्रेस मत्रिमडल अपनी मनसदो पर वापस आ जाए। हे भगवान, तुम कही ऐन मौके पर कोई ऐसी बात न कर देना, जिससे इन लोगो का सर्वनाश होते-होते रह जाए। तब की बार तुमने बिलकुल तट पर लाकर हमारी नाव डुबा

दी। यह मैं जानता हू कि यह परीक्षा है, यह सकट है, जिसमे तुम अपने भक्तो को डालते रहते हो। पर यदि तुम मेरी राय मानो, तो भक्तो को सकट मे डालकर उनकी परीक्षा लेने की परिपाटी बहुत पुरानी पड चुकी है। अब तुम कोई नई नीति ग्रहण करो। हमारे दुश्मनो की परीक्षा लो, उन्हे जेल मे डालो, उन्हे ऐसी बुद्धि दो कि उनका सर्वस्व नष्ट हो जाए, क्योकि मै तुम्हे स्मरण दिलाता हू कि तुम्हारी यह नीति रही है कि जिसे तुम दारुण दु ख देना चाहते हो, उसकी मति पहले हर लेते हो।

मन्दिर मे बैठकर आखे मूदे हुए वह कहता रहा—तुमने स्वय गीता मे कहा है कि चातुर्वर्ण्य की सृष्टि मैंने की , उसीमे छुआछूत भी आ जाता है। तुम्हारी बनाई हुई समाज-पद्धति अब सकट मे है, उसकी नाव मे छेद हो चुके है, क्योकि बहुत-से उच्च वर्ण के लोग भी इसके विरुद्ध प्रचार कर रहे है, चारो तरफ से पर्वत-प्रमाण तरगे आकर हमारी डगमगाती हुई नैया को निगलकर जलसमाधि देने के लिए तैयार है। पाल फट चुका है। यह मालूम है कि तुम आर्यधर्म के रक्षक हिटलर को तेजी से इस तरफ भेज रहे हो, पर वह भी पोलैंड जीतने के बाद से काफी ठडा पड चुका है, इसलिए भवर मे पडी हुई इस नाव को तुम्ही बचा सकते हो।

वह कुछ उतरकर बोला—इसमे, यह भी तुम्हारी लीला है कि तुम हमेशा दक्षिण से ही उद्धारक भेजते हो। तुम कौमुदी को क्यो नही भेजते, जैसा तुमने फ्रास मे जोआन आफ आर्क को भेजा था। मैं विश्वास दिलाता हू कि उसमे यह शक्ति है, और फिर तुम चाहो तो पगु गिरिवर-लघन कर सकता है, मूक वाचाल हो सकता है। क्या दक्षिण और उत्तर का मिलन हो जाए, तो भी आर्यधर्म की रक्षा नही हो सकती ? हे भगवान, मधुसूदन !

जयराम देर तक आख मूदे मन्दिर मे बैठा रहा। उसे ऐसा लग रहा था कि अब भगवान प्रसन्न होगे। उनकी प्रसन्नता का पहला स्फुरण हिटलर के रूप मे प्रकट हुआ है, और दूसरा स्फुरण काग्रेस मन्त्रिमडलो द्वारा त्यागपत्र देने के प्रस्ताव के रूप मे। प्रभु की लीला ऐसी है कि अब जो कुछ होनेवाला है, वह विश्व-पैमाने पर होनेवाला है। अब एक ही बार मे धरती शुद्ध हो जाएगी। क्या पता हिटलर भगवान कल्कि का अवतार हो ! अब पाप बहुत बढ गया है। अब साधुओ के परित्राण, दुष्कृतो के विनाश तथा धर्म-सस्थापन के लिए अवतार हो जाना ही चाहिए। अब और देर करोगे तो वह अधेर मे ही माना जाएगा !

गाधी बुद्ध की धारा मे है। व्यर्थ मे अहिंसा को इतना बढावा दिया है। आर्यो मे नृसिहावतार से लेकर राम और कृष्ण तक सभी हिसा हिसा के लिए नही, बल्कि सृष्टि के लिए हिंसा, इस सिद्धान्त मे विश्वास करते थे। इस रूप मे भी हिटलर आर्यधर्म का प्रतीक और प्रतिनिधि है और उसीके हाथो से आर्यधर्म का कल्याण होगा। हिटलर ने आर्यधर्म का एक सिद्धान्त बहुत ही सुन्दर रूप मे मूर्त किया हे, वह यह कि सब व्यक्ति समान नही ह। समानता और साम्यवाद का सिद्धान्त ही आर्यधारणा के विपरीत जाता है। गीता मे समदृष्टि की जो बात कही गई है, उसका अर्थ यह थोडे ही है कि जिन वस्तुओ को—कुत्ता, गाय, हाथी और मनुष्य को—समदृष्टि से देखा जाता है, वे एक और अभिन्न हो गई। वस्तुत, वे जो जहा है वहा बने रहते है। कुत्ता कुत्ता ही है, गाय गाय ही है, हाथी हाथी ही है, ब्राह्मण ब्राह्मण ही है, शूद्र शूद्र ही है। समदृष्टि केवल दृष्टि का एक व्यायाम-मात्र है। हिटलर तो नही मानता कि मनुष्य-मात्र समान है। वह तो साफ कहता है कि आर्य अनार्यो से श्रेष्ठ है, और उनमे भी (यहा जयराम ने अपना भाष्य कर लिया) यूरोप मे नार्डिक जाति और भारत मे द्विजवशीय आर्य सबसे श्रेष्ठ हैं।

इस प्रकार जयराम देर तक आख मूदे बैठा रहा। कभी वह भगवान को उनके वादों की याद दिलाता रहा, कभी वह उन्हे उनकी कही हुई बातो का युग के अनुसार नया अर्थ समझाता रहा, कभी यह कहता रहा कि अब एकसाथ ही अग्रेजो और गाधी का नाश होना चाहिए। इस प्रकार से उसने वह प्रक्रिया जारी रखी, जिसे लोग प्रार्थना कहते है। वह गदा-चक्र-शख-पद्मधारी, किरीटधारी विष्णु का ध्यान करता रहा, पर साथ ही अपनी कल्पना के अनुसार हिटलर का भी चिन्तन करता रहा। कभी गदा-चक्र-शख-पद्मवाला चेहरा मिट जाता और उसके स्थान पर वर्दी मे लैस हिटलर का चित्र उभरता। दोनो एक-दूसरे मे कभी हिल-मिल जाते, जैसे दो चित्र कभी-कभी इस प्रकार से दिखाए जाते है कि एक के कपोलो के साथ दूसरे के कपोल मिल गए है।

रात अधिक हो जाने पर जब वह उठने को हुआ, तो उसे ऐसा लगा कि एक नारी मूर्ति एकाएक उसे उठते देखकर अन्तर्धान हो गई। उसने पहचाना—यह यशोदा थी। उसका चेहरा कडा पड गया और मुह कडवा हो गया। तो यह मुझ-पर खुफियागिरी करती रहती है!

इसीलिए श्रीमती सूर्यकुमार को कानपुर रहना पडा था। जो कारण उसके लिए सही था, वही कारण राघवेन्द्र के लिए भी सही था, इसलिए राघवेन्द्र बहाना बनाकर कानपुर रहने लगा था। वह बाहर के कमरे मे सोता था और श्रीमती सूर्यकुमार भीतर सोती थी। नौकरो-चाकरो मे दो तो लखनऊ मे ही थे, केवल एक यहा था। जब से सूर्यकुमार के लखनऊ-निवास यानी सचिवत्व का आरम्भ हुआ था, तब से नौकर-चाकर गाव से मगाए गए थे, नही तो यहा के घर मे तो एक महरी-भर रहती थी जो दिन मे दो बार आकर चौका-बर्तन कर जाती थी। श्रीमती सूर्यकुमार स्वय खाना पकाती थी।

बच्चे बडे थे, इसलिए अधिक टण्टा नही था। राघवेन्द्र बहुत परेशान था। उसने सोचा था कि काग्रेस ने मन्त्रिमण्डल ले लिया तो हमेशा के लिए जेल जाने का खतरा दूर हुआ, पर हिटलर न मालूम कहा से पैदा हो गया और उसने पोलैण्ड से लडाई छेड दी। योही उसे बहुत-से देश मिल गए थे। उन्हीसे वह सन्तुष्ट रहता। सो नही, उसने और लोभ किया। खैर, लोभ किया तो किया, हिटलर जानता और पोलैण्ड जानता, पर अग्रेजो और फ्रासीसियो ने भी ताव मे आकर लडाई छेड दी।

इसपर स्वाभाविक रूप से भारत सरकार को लडाई छेडनी पडी। भारत सरकार तो ब्रिटिश सरकार का विभाग-मात्र है, इस नाते उसका इस प्रकार लडाई छेडना न तो कोई अनहोनी बात है और न अस्वाभाविक। काग्रेस के नेताओ की समझ मे यह अत्यन्त साधारण बात नही आई और उन लोगो ने व्यर्थ मे लडाई के पैतरे दिखाने शुरू कर दिए। नतीजा वही हुआ जो होना था। इन्ही बातो को सोचकर राघवेन्द्र कानपुर रह गया था।

सबसे अजीब बात यह थी, और इसपर उसे स्वय भी आश्चर्य था कि जब से काग्रेस ने अपने मन्त्रिमण्डलो को हिदायत दी थी कि वे अक्तूबर के अन्त तक इस्तीफा दे दे या अधिक से अधिक और थोडा समय ले, तब से राघवेन्द्र मूलगज की सैर के लिए नही जा पाया। जब मन मे हर समय बेचैनी और भय समाया हुआ हो तो हृदय के सारे सोते सूख जाते है, उस समय सौन्दर्य की चिन्ता अच्छी नही लगती, यद्यपि उसने सुना था कि इस बीच मूलगज मे कश्मीर से कोई नया माल आया है।

वह रात को अच्छी तरह सो नही पाता था। हर समय डर लगा रहता था कि

पुलिस आएगी और पूछेगी—इस मकान मे राघवेन्द्र उर्फ पुरन्दर कोई है ?

उस रात को भी नीद नही आ रही थी। वह कई बार उठा, फिर-फिर पेशाब किया और पानी पीया। और दिनो से आज बेचैनी अधिक लग रही थी। क्या काग्रेस मन्त्रिमण्डल ने इस्तीफा दे दिया ? नही, उसकी तो तारीख निश्चित हो चुकी है। अभी कई दिन रहते है, फिर क्यो इतनी बेचैनी लग रही है ?

वह चौथी बार उठा, पानी पीया। पीकर कुर्सी पर बैठ गया। लग रहा था कि उसने जीवन के सूत्रो को व्यर्थ मे बुरी तरह उलझा लिया है। क्रान्तिकारी बना तो टिक न सका। देवर बनकर उस व्यक्ति की पत्नी को भोगता रहा, जो इस मार्ग मे उसका गुरु था। उस समय तसल्ली थी कि शिशु नपुसक है, पर बाद को जब वह जेल से छूटकर आया, तो विवेक पर की वह पट्टी भी खिसककर गिर पडी। फिर सत्याग्रह आन्दोलन मे जेल गया तो वहा से माफी मागकर निकला। खैर, उसने उस लग-भग असह्य स्थिति का भी जैसे बना तैसे सामना किया और पुरन्दर से राघवेन्द्र बन गया। चोला ही बदल डाला। अब छोटा-मोटा नेता है। यदि हिटलर बेवकूफी न करता तो आशा थी कि कालान्तर मे वह बडा नेता बन जाएगा। अब लडाई आ गई।

उसने फिर एक बार पानी पीया और उठ खडा हुआ। कैसा रहे यदि वह यहा की बजाय भीतर सोए ? खडे होकर उसने आहट सुनी। बिलकुल सन्नाटा था। हा, दूर मुहल्ले मे कही एक कुत्ता भौ-भौ कर रहा था। उसे बुरा लगा। उसने जगला बन्द कर दिया। भौ-भौ !—यह बहुत ही बुरी आवाज है। पता नही लोग कुत्ता क्यो पालते हैं ! गन्दा जानवर है, रात को नीद हराम करता है। मनुष्य के शौक भी अजीब हैं !

वह वहा से भीतर की ओर चला। सोचा यदि भीतर सोऊगा तो पुलिसवाले वाहर आकर जब तक नाम-वाम पुकारेंगे तब तक बन्दा छतो पर होते हुए मूलगज के किसी कोठे पर होगा। भागकर छिप रहने की इतनी अच्छी जगह कोई नही हो सकती। अत्यन्त बेचैनी मे भी उसे ऐसा लगा कि उसका यह जो शौक है कोठे पर जाने का, वह बडा ही सार्थक और सुन्दर है। पुलिस क्या, पुलिस के बाप को भी पता नही लगेगा, क्योकि काग्रेसियो के लिए वे मूलगज को वर्जित स्थान समझते है। हा, हा, हा, हा !

वह कदम तोल-तोलकर आगे बढने लगा। इतने मे उसे श्रीमती सूर्यकुमार

की नियमित सासे सुनाई पडी। वह कुछ देर खडा होकर सासे सुनता रहा। उसका मन एक मधुर रस से आप्लुत हो गया। बेचारी कितनी दु खी है! बेचारी ने जीवन-भर दु ख ही दु ख भोगा। सूर्यकुमार मत्री बने, तो कुछ कष्ट दूर हुआ, पर यह सुख तो बादल की छाह निकला, देखते-देखते सिर पर से गायब हो गया। लडके भी दो दिन से लखनऊ गए हुए है। शायद मत्रीजी उन्हे दिखाकर किसीसे सहायता आदि मागे। चूल्हे मे जाए!

बेचारी बडी दु खी है। मै भी दु खी हू। मेरा दु ख भी कुछ कम नही है। मै किससे सहानुभूति करू? मेरे जीवन मे बल्कि अधिक उलझने है।

वह श्रीमती सूर्यकुमार के कमरे के सामने खडा हो गया। उसे एकाएक लगा कि साप ऐसी कोई चीज उसे छू गई, और उसके बाद ही ठण्डी-सी कोई चीज उसके घुटने के पास छू गई। वह चिल्लाने ही वाला था कि उसने देखा सूर्यकुमार बाबू का अलसेशियन कुत्ता दुम हिला रहा है।

उसने उसे थपकिया देकर शात किया। फिर वह कुत्ते के सिर पर हाथ रखकर ही श्रीमती सूर्यकुमार की सासे सुनने लगा। कुत्ते को हाथ से इशारा कर दिया कि वह वहा से जाए। कुत्ता बडा होशियार था, वह समझ गया और फौरन ही उधर की तरफ गया, जिधर से राघवेन्द्र आया था। कोने मे बैठकर वह शायद किसी हड्डी को तोडने मे व्यस्त हो गया जैसाकि आवाज से ज्ञात हुआ।

राघवेन्द्र चौखट के भीतर गया। वह एक छलाग मे श्रीमती सूर्यकुमार की खाट पर होना चाह रहा था। कुछ देर सोचता रहा, फिर उसने अन्तिम निश्चय कर लिया। उसने कुर्ता उतार लिया। फिर एक कदम आगे बढा। अब वह बिलकुल तैयार था। खतरा जरूर था, पर उसे विश्वास था कि वह सारे खतरो पर उसी तरह से विजयी होगा, जैसे अब तक होता आया है। ज़रूरत पडेगी तो वह मुह दाब लेगा। यह कोई मुश्किल बात नही है। स्त्रियो मे बल ही कितना होता है! रही बाद की बात, सो देखी जाएगी। इस समय पुलिसवाले काग्रेसियो के मित्र नही है। जिस तरह से वह आक्रमण के लिए तैयार हो रहा है, उसी तरह से पुलिस विभाग भी आक्रमण के लिए तैयार है। बस, एक रेखागणित की रेखा का पर्दा बीच मे रह गया है। वह टूटने ही वाला है।

उसने फिर सासे सुनी। वह बिलकुल निश्चिन्त होकर सो रही थी। पर वह दु खी थी। यह उसकी सासो से ही ज्ञात होता था। वह दु खी है। मैं भी दु खी हू।

फिर क्यो न दोनो के दु ख दूर हो जाए। अवश्य होगा, कोई रोक नही सकता। उसने पैतरा किया और छलाग भरने ही वाला था, शायद भर चुका था कि उसे ऐसा लगा कि खम्भे-सी किसी वस्तु ने उसे एकदम से जमीन पर गिरा दिया। भड-भडाहट से श्रीमती सूर्यकुमार जग गई। उन्होने जल्दी से बत्ती जलाई, तो सामने अपने कुत्ते टाम को खडे-खडे दुम हिलाते पाया। वह बडी-बडी स्नेह-भरी आखो से अपनी मालकिन को देख रहा था।

राघवेन्द्र गिरकर फौरन भाग गया था, इसलिए श्रीमती सूर्यकुमार को राघवेन्द्र के अपप्रयास का पता नही लगा। वे समझी कि टाम किसी बिल्ली या चूहे पर कूदा होगा, जैसाकि वह समय-समय पर कूदा करता है। उन्होने टाम को डाटा, फिर बत्ती बुझाकर सोने लगी।

तब राघवेन्द्र सभलकर आ गया, बोला—मैने कोई बहुत ज़ोर की आवाज़ सुनी, इसलिए मैं आ गया।

कुत्ता गुर्राने लगा और राघवेन्द्र समझ गया कि वह अब की बार उसे चौखट के अन्दर आने नही देगा। यही क्या कम है कि उसने उसे गिराने के बाद उसे झिझोड नही डाला था। परिचय के कारण इतनी रियायत तो उसने की थी, अब आगे शायद रियायत न करे। गुर्राने के ढग से यह भय हो रहा था।

श्रीमती सूर्यकुमार ने टाम को डाटा, पर टाम ने मालकिन की बात मानने से इनकार किया और गुर्राता ही रहा। राघवेन्द्र परिस्थिति अच्छी तरह समझ गया। खैरियत है कि टाम बोल नही सकता, नही तो वह रेला खडा कर देता। बोला—मैं कोई बहुत भारी आवाज सुनकर आ गया। मैने सोचा कही कोई चोर-वोर न आ गया हो।

असल मे वह कुर्ता लेने के लिए आया था, क्योकि कई बार सूर्यकुमार बिलकुल सवेरे की गाडी से बिना कुछ कहे आ जाते थे। वे वहा उसका कुर्ता देखते तो क्या कहते ! गुनाहे-बेलज्जत ! न कुछ लेना न देना, और ऊपर मे मुसीबत ! इस कुत्ते से यह शका नही थी। साला कैसे दुम हिला रहा था, और ऐन मौके पर झपट पडा ! बोला—कोई बात तो नही है ?

श्रीमती सूर्यकुमार ने कहा—नही। यह तो टाम की आदत है, बिल्ली वगैरह देखता है तो एकदम से झपटता है। शायद कोई बिल्ली दूध पीने आई हो। आप जाइए। सब ठीक है।

वह आता ही नहीं, यदि कुर्ता न होता। बोला—आप इस कुत्ते को बाहर कीजिए, मैं जरा खाट के नीचे देख लू। न बाबूजी हे, न लडके है, इसलिए मेरा फर्ज हे। चोर कई दफे खाट के नीचे घुसकर बैठ जाते है।

श्रीमती सूर्यकुमार ने टाम को रुखाई से आज्ञा दी—बाहर जाओ।

टाम बाहर गया, पर खडे-खडे घूरता रहा। राघवेन्द्र ने सोचा क्या असमाप्त काम समाप्त किया जाए। पर उसे टाम का भय था। टाम उसी तरह से उसे झिझोड डालेगा, जैसा उसने कुछ दिन हुए एक बिल्ले को किया था।

पर कुर्ता तो लेना ही था। इसलिए उसने खाट के नीचे झाका और जिस प्रकार से मदारी फुर्ती से काम करते है, लगभग उसी प्रकार फुर्ती से कुर्ता लेकर बाहर निकल आया। श्रीमती सूर्यकुमार यह देख भी नही पाई कि उसने क्या किया। राघवेन्द्र बहुत खुश हुआ और बोला—आप बत्ती बुझाकर निश्चित होकर सोइए। टाम जब बिल्ली तक को यहा नही आने देता, तो वह चोर को कैसे आने देगा।—कहकर टाम की तरफ घूरते हुए उसने कहा—क्यो टाम, तुम हो न राजा बेटा ?

टाम उसे उसी प्रकार एकाग्र होकर देख रहा था, जैसे वह कभी-कभी सडक पर के नीम के पेड पर चढे हुए बन्दर को घूरा करता था। प्रश्न सुनकर वह जरा भी नही पसीजा। वह घुर्र-घुर्र करने लगा और पूछ के अग्रभाग को बहुत धीरे-धीरे ऐसे हिलाने लगा, जैसे शिकार पर कूदने से पहले हिंस्र पशु किया करते है। राघवेन्द्र समझ गया, और प्रेम बढाने की चेष्टा न कर वहा से खिसक गया।

उस दिन से टाम पर उसका गुस्सा बना रहा, पर वह कुछ कर नही सका, क्योकि टाम अब उसके पास आता ही नही था। वह फिर क्या करता!

यह घटना कुछ पहले की ही है, पर इस समय जबकि काग्रेस मन्त्रिमण्डल ने इस्तीफा दे दिया, तब उसने श्रीमती सूर्यकुमार के पैर छू लिए। बोला—अब मैं फरार होता हू। अब की बार आन्दोलन दूसरे ढग का होगा। खडे-खडे गिरफ्तार हो जाने मे कोई तत्त्व नही है। मैं समय-समय पर आप लोगो से मिला करूगा।

कहने तो वह जा रहा था कि बाबूजी से मिलूगा, पर उसने जान-बूझकर ऐसी बात नही कहनी चाही, जिसका व्यग्यात्मक अर्थ ही हो सकता था, क्योकि सबसे पहले गिरफ्तार होनेवालो मे सूर्यकुमार होगे, यह उसका विश्वास था। अजीब बात है, यानी उसे यह अजीब लगता था कि पार्लियामेंट्री सचिव होते हुए भी

सूर्यकुमार चाहते थे कि आन्दोलन हो, और ज़ोर के साथ हो। वह यह समझ नही पाता था कि लोगो मे जेल जाने का यह कैसा मर्ज लग गया !

श्रीमती सूर्यकुमार इतनी विह्वल थी कि वे अच्छी तरह समझ नही पाई कि क्या कहा गया। वे ऐसे व्यवहार कर रही थी जैसे सूर्यकुमार जेल पहुच गए हो और घर पर काफी आफत आ चुकी हो। बोली—भैया, मुझे लखनऊ ले चलो !

बिजली की तरह एक विचार राघवेन्द्र के दिमाग मे कौध गया कि क्यो न इसे भी साथ मे ले चला जाए। वसुधा जब मिलेगी, तब मिलेगी, अभी इससे काम चले, तो क्या बुराई है ! पर फौरन ही उसे स्मरण हो आया कि औरत बडी बेवकफ है, इसे साथ मे रखना अपना खतरा बढाना है, फिर इसका पेट कहा से भरेगे ? बोला—आप फरार होना चाहे तो हो सकती है, पर सारे गहने-गुरिये भी लेते चले, नही तो पुलिस ज़ब्त कर लेगी।

पर श्रीमती सूर्यकुमार बोली—वे फरार हो जाएगे, और मैं फरार हो जाऊगी, तो बच्चो का क्या होगा !

राघवेन्द्र एक मार्ग पर जा रहा था, उसे जैसे किसीने हाथ पकडकर शून्य मे उठा लिया और दूसरे मार्ग मे डाल दिया। बोला—क्या बाबूजी फरार हो रहे है ?

श्रीमती सूर्यकुमार को याद हो आया कि यह बात नही कहनी चाहिए थी, और सूर्यकुमार ने निश्चित रूप से कुछ कहा भी नही था। इतना ही कहा था कि अब की बार आन्दोलन दूसरी तरह का होगा। फरारी का नाम भी नही लिया था। बोली—नही नही, मुझे कुछ नही मालूम, पर भैया, जब तुम फरार हो, तब शायद वे भी फरार हो जाए। मैं तो कुछ समझती नही।

राघवेन्द्र ने समझ लिया कि यह स्त्री चाहे जितनी बेवकूफ हो, यह उसके साथ भागने की नही। बोला—किसी भी हालत मे यहा गहने-गुरिये रहना उचित नही है। आप जानती हैं न कि यदि कोई व्यक्ति लापता हो जाए तो पुलिस पहला काम यही करती है कि उसकी जायदाद पर कब्ज़ा कर लेती है। आप चाहे तो मैं आपके गहने का बक्स छिपा दू। मै हर रोज़ रात को किसी-न-किसी समय आकर खबर ले जाऊगा। आप जैसा कहेगी वैसा करूगा।

श्रीमती सूर्यकुमार ने थोडी देर तक विचार किया, फिर बोली—हा, यह तो बहुत अच्छा प्रस्ताव है।

राघवेन्द्र बहुत खुश हुआ कि चलो एक चिन्ता मिटी। अब वसुधा मिल जाए

तो फिर सारा काम बन जाएगा । एक के धन से दूसरी का यौवन भोगेंगे । और दूसरी का कोई ठेका है, रुपये मिल गए तो कितनी ही मिलेगी ।

श्रीमती सूर्यकुमार उठकर भीतर चली गई ।

वह अब कल्पना-नेत्रो मे भविष्य के सपने देखने लगा—कही बिल्कुल बस्तियो से दूर किसी बल खाती हुई नन्ही-सी नदी के किनारे अपनी न्यारी कुटिया बनेगी। वसुधा सितार बजाएगी और मैं जगल से लकडी बीनकर लाऊगा । दूध के लिए एक गाय रख लूगा या गाववालो से दूध ले आया करूगा । शिकार पकेगा । नदी मे सध्या समय जल-क्रीडा करेगे, दोनो मिलकर । वह बिल्कुल एक कवि का जीवन होगा । फूलो के ही अलकार होगे, और मैं भी फूलो का मुकुट पहनकर उसके सामने जाऊगा । वसुधा हो या और कोई स्त्री हो । स्त्रियो का कोई टोटा थोडे ही है ।

राघवेन्द्र इस प्रकार से मनमोदक खाने लगा । नही, इस मूर्ख स्त्री को किसी भी हालत मे, यदि वह सग चलना भी चाहे, तो नही ले जाना है । यह तो बाधक होगी, न कि साधक । एकाध रात के लिए ऐसी स्त्री कोई बुरी नही है, पर हमेशा के लिए इसका साथ करना बहुत ही कष्टकर रहेगा ।

पर यह आ क्यो नही रही है ? कही पुलिस आ जाए तो आफत हो जाए । पुलिस ने तो पहले से सूची बना रखी होगी, और अब छापा मारने ही वाली होगी । सचमुच यह औरत बडी मूर्ख है । शायद ऐन मौके पर इसके मन मे मेरे बारे मे कुछ सन्देह उत्पन्न हो गया हो । दस-बीस हजार के ज़ेवर तो होगे ही । बनता सूर्यकुमार बहुत ईमानदार है, पर दो साल मे कुछ-न-कुछ तो बनाया ही होगा । कई काग्रेसी बहुत मालामाल हो रहे है ।

यह आती क्यो नही ? अजीब बात है !

स्वय भी डूबेगी और मुझे भी ले डूबेगी । क्या गहनो का लोभ छोडकर मैं चलता हो जाऊ ? अपना सामान तो मैंने पहले ही हटा रखा है । ऐसी जगह कि किसीको कानोकान खबर नही हो सकती ।

उसे बहुत बुरा लग रहा था । स्त्रियो मे बस यही खराबी है कि वे मौका नही देखतीं और हर अवसर पर व्यर्थ मे देर करती हैं । न छापा मारे सही, पुलिस का पहरा तो लग ही गया होगा । इतनी ही भलाई है कि पुलिसवालो को मालूम है कि सूर्यकुमार यहा नही है । अब तो उनकी घडी-घडी की खबर रखी जा रही होगी ।

यह उठ खडा हुआ और बेचैनी से चहलकदमी करने लगा। इस समय भीतर जाकर बेचैनी दिखाना ठीक नही होगा। फिर वह साला टाम ! उस दिन से वह भीतर ही नही गया, यानी बुलाने पर ही भीतर जाता है। टाम को वह कितना सीधा समझता था, पर वह कितना दुष्ट निकला और कीनेबाज़। उस दिन से देखकर ही घुर्र-घुर्र करने लगता है और पूछ के अग्रभाग को धीरे-धीरे हिलाता है, जैसे अभी टूट पडकर घेघा पकड लेगा। आखिर जानवर ही है, कोई एतबार नही। फिर इस समय अधिक दिलचस्पी दिखाई तो कही, यो तो यह स्त्री बेवकूफ है, इसके मन मे सन्देह न हो जाए। मुझे तो यह दिखाना चाहिए कि मै गहने छिपाने का काम अपने ऊपर लेकर इनपर एहसान कर रहा हू।

फिर भी क्रोध आ ही रहा था। वह टहलते-टहलते रुक गया। एक जोडे गुलदान मे लगे हुए फूलो को देखता रहा। उठाकर गुच्छो के एकमात्र गुलाब को सूघा, फिर उसे दिखाई पड गया कि अरे ये दोनो गुलदान तो चादी के बने है। नकद उधार से अच्छा होता है—इस नीति के अनुसार उसने फूल और पत्तिया जगले से बाहर फेक दी, पानी गिरा दिया और दोनो गुलदानो को अपने थैले मे कपडे के अन्दर रख लिया। जब सारे गहने ही लिए जा रहा हू तब दो गुलदानो को छोडकर क्या करूगा ? इनसे तो फौरन पचास रुपये नकद मिल जाएगे, फिर बाद को दिल्ली जाकर चादनीचौक मे एक-एक करके बेचूगा। सब इकट्ठे बेचने जाऊगा तो चोरी का माल समझकर कम देगे।

उसने घडी की ओर देखा तो श्रीमती सूर्यकुमार को भीतर गए दस मिनट हो चुके थे। आखिर यह हो क्या गया ? उसने आवाज़ दी—मैं आऊ क्या ?

उधर से जैसे कुए के अन्दर से कोई आवाज़ आई, जिसमे घबडाहट थी। वह टाम के डर को तिलाजलि देकर भीतर चला, तो टाम उसे देखकर गुर्राने लगा। तब श्रीमती सूर्यकुमार ने टाम को सटी मारी। सटी खाकर टाम पीछे हट गया, पर बहुत दूर नही गया। वही से वह उस तरह देखता रहा, जैसे वह नीम पर के बन्दर को घूरा करता है, और पूछ का अग्रभाग मन्द वायु से प्रताडित पत्तो की तरह आन्दोलित होने लगा। श्रीमती सूर्यकुमार बोली—भैया, मैं तो कही की न रही !

—क्यो ?

राघवेन्द्र के स्वर मे घबराहट थी। उसे ऐसा लगा कि वह बेहोश होकर गिर

पडेगा। क्या चोर गहने ले गया ? इस हरामजादे टाम को गोली मार देनी चाहिए। बोला—क्या ? क्या हुआ ? गहने कहा है ?

श्रीमती सूर्यकुमार उस बडे-से सन्दूक के पास खडी थी। वह बिल्कुल खुला था। उसके अलावा खखोए हुए कपडो, साडियो पर एक बक्स खुला हुआ रखा था, जिसमे कुछ भी नही था। राघवेन्द्र समझ गया था, पर निराशा के अतिरेक के कारण वह अपनी आखो पर विश्वास नही करना चाहता था। उसे तो ऐसा लग रहा था, जैसे वह डूब गया। कहा तो कैसे-कैसे मनमोदक खा रहा था और अब यह कडवा घूट ! श्रीमती सूर्यकुमार सन्दूक की तरफ दिखाती हुई बोली—इसमे तो कुछ नही है। एक भी चीज़ नही है।

—कैसे चला गया ?

श्रीमती सूर्यकुमार बोली—चाबिया तो हर वक्त मेरे पास रहती है। कभी चोर भी नही आया। टाम के होते हुए तितली भी तो नही आ सकती।

राघवेन्द्र कितना भी कल्पना-विलासी हो, पर वह सारी परिस्थिति समझ गया। चाबी लेकर चोरी हुई। उसे लगा कि मुझ ही पर कही सन्देह न करे। एक तो निराशा, तिसपर चोर समझे जाने का डर, सो भी बिना कारण। यदि माल लेकर फरार हो पाते तो बदनामी का कोई डर नही था। मूर्ख लोग ही बदनामी से डरते हैं, बुद्धिमान आदमी कभी बदनामी से नही डरते। आखिर सुख्याति यदि हमेशा बनी रही और उसका फायदा उठाकर किसी दिन कुछ कर नही पाए, तो फिर उससे क्या लाभ !

बोला—चाबिया आपके पास थी तो गहने गए कैसे ? टाम, देखिए, मुझपर गुर्राता है, और चोर आकर सब कुछ कर गया। इसे तो गोली मार देनी चाहिए !

निराशा का सारा आक्रोश और क्रोध वह टाम पर उतारना चाहता था। खैरियत यह है कि उसने थैले मे गुलदान रख लिए थे। भागते भूत की लगोटी ही सही। यह कहावत किस बेमौके से चरितार्थ हुई। यदि मालूम होता कि चोर ही माल ले जाएगे, तो मैं ही पहले हाथ साफ कर देता। उस हालत मे पाप भी न लगता। कोई बडी बात नही थी। दिन मे तो टाम कई बार बाहर जाता है। बोला—टाम को गोली मार देनी चाहिए !

पर श्रीमती सूर्यकुमार टाम के सम्बन्ध मे ज़रा भी चिन्तित नही थी। वे रुआसी होकर बोली—मेरा तो सत्यानाश हो गया ! वे जेल जाएगे, चोर गहने

ले गए, फिर मैं और बच्चे !—कहकर वे लगभग रोने लगी।

यह रोना-धोना और समझाना देर तक चलता रहा। ऐसा जानता तो राघवेन्द्र वहा से पहले ही चल देता। पर इस स्थिति मे वह छोडकर जा भी नही सकता था, क्योकि व्यर्थ मैं अपने ऊपर चोरी का इल्ज़ाम लगता था। अजीब फन्दे मे फस गया। खैर, वे गुलदान अपने पास है, नही तो यह तो स्पष्ट है कि उन्हे भी चोर ले जाते।

थोडी देर मे सूर्यकुमार का बडा लडका मोती, जो कालेज का छात्र था, लौटा। उसने जो यह हालत देखी तो पूछा कि क्या मामला है। उसे सारी बात बताई गई तो वह छूटते ही बोला—अरे मा, तुम फिजूल मे परेशान हो रही हो ! उस दफे जब बाबूजी आए थे, तो वे सारे गहने ले गए। मैं ही ढोकर स्टेशन तक पहुचा आया था।

श्रीमती सूर्यकुमार बोली—मुझे क्यो नही बताया !

मोती खुश होता हुआ, जैसे वह अपनी मा से अधिक बुद्धिमान और विश्वास-पात्र हो, बोला—पिताजी ने यह कहा कि स्त्रिया गहनो से अधिक प्रेम रखती है, पर इन्हे अब हटा देना जरूरी है, क्योकि चार-छ दिन मे गिरफ्तारिया होगी, तलाशिया होगी, कुर्किया होगी।

मोती की मा निराश होती हुई बोली—तो क्या उन्होने मेरे गहने आन्दोलन मे लगा दिए ?

मोती ने राघवेन्द्र की तरफ देखते हुए कुछ रुककर कहा—नही, कही छिपा दिए हैं। बाद को मिलेगे।

सारी समस्याओ का समाधान हो गया। राघवेन्द्र को एक तरफ तो खुशी हुई कि चोरी के सन्देह से बचे, पर दूसरी तरफ यह अफसोस रहा कि सब लोग भीतर-भीतर अपनी निजी भलाई मे लगे हुए है। वही बिना किसी तैयारी के मारा गया। खुशी दिलाने का प्रयास करते हुए बोला—मैं तो जाने क्या-क्या समझ रहा था, खैर अच्छा हुआ

श्रीमती सूर्यकुमार ने कहा—मैं जानती थी कि टाम कभी गलती नही कर सकता ! वह तो एक तितली को भी घर के अन्दर आने नही देता।—कहकर मा और बेटा, दोनो टाम को पास बुलाकर उसके सिर पर हाथ फेरने लगे। मोती तो हाथ फेरता ही रहा, पर मा ने जल्दी से सन्दूक बन्द कर डाला और वह घर के

काम मे लग गई ।

राघवेन्द्र फिर एक बार पैर छूकर और मोती से विदा लेकर गुलदानवाला झोला उठाकर निकल पडा । अभी सारा दिन पडा हुआ था । वह इधर-उधर देखता हुआ सावधानी से सर्राफे की तरफ चला । वहा उसने एक जगह दोनो गुलदान नही बेचे, बल्कि दो को दो दुकानो मे बेचकर जेब गरम करते हुए निकल पडा । कही जाकर देर तक खाना खाता रहा ।

फिर जहा उसने अपना सामान रखा था, वहा जाकर सो गया । असली काम तो सध्या समय करना था । वह तो पता लग ही चुका था कि शिशु अब घर मे नही रहता । ज़रूर फरार हो गया होगा ।

सोने के पहले उसे लगा कि ससार मे सभी बुद्धिमान है । सूर्यकुमार ने गहने छिपा लिए, पत्नी तक को पता नही दिया । शिशु फरार हो गया । अपने राम जहा के तहा रह गए । पर यह साबित कर देना है कि हम भी ऐसे-वैसे नही हैं । परिस्थितियो से लडना हम भी जानते है ।

१३

मुश्ताक ऐसे लोग यह अच्छी तरह जानते थे कि मुस्लिमलीग किसी भी हालत मे सग्रामात्मक कार्यक्रम नही अपनाएगी, फिर भी उसे कभी-कभी यह शका कुरेदती थी कि जिन्ना साहब कही हिन्दू काग्रेस की देखा-देखी ताव मे न आ जाए । आखिर गाधी भी तो जिन्ना की तरह एक बैरिस्टर ही थे और वे धीरे-धीरे परिस्थितियो की थपेड से बदलते चले गए । प्रथम महायुद्ध मे वे अग्रेज़ो के लिए रगरूट भर्ती करते थे, पर इस महायुद्ध मे वे पहले तो युद्ध का उद्देश्य पूछते रहे । पूछते-पूछते अब यह नौबत पहुच गई कि काग्रेस मत्रिमडलो ने इस्तीफा दे दिया । खैरियत यह है कि लीग मत्रिमण्डलो ने इस्तीफा नही दिया और युद्ध-प्रयास मे बराबर हाथ बटा रहे हे, पर साथ ही यह बखेडा लगा दिया कि सरकार के साथ यह सहयोग शर्त के अनुसार है ।

काग्रेस मत्रिमण्डलो के इस्तीफा देते ही ब्रिटिश सरकार ने दमनचक्र जारी कर दिया था और सैकडो लोग गिरफ्तार हो गए थे । मुसलमान भी गिरफ्तार हुए थे, पर वे ही लोग जो अपने को कम्युनिस्ट कहते थे । मुश्ताक को इससे कोई

परेशानी नही थी, बल्कि खुशी थी । उसे लगता था कि केवल मुसलमान होना ही यथेष्ट नही है, लीगी होना ज़रूरी है । जो मुसलमान लीगी नही है, वे इस्लाम के शत्रु है । वे जेल जाए इसीमे मुसलमानो की भलाई है । जमियत-उल-उलमा का रुख भी ठीक नही था । उसने बिना शर्त पूरी कराए ब्रिटिश सरकार की मदद करने से इन्कार किया है । उसके अनुयायी भी गिरफ्तार हो जाए तो कोई हर्ज नही है । वह स्वय फिर भी कुछ शकित था कि कही जिन्ना साहब वातावरण से प्रभावित होकर कुछ कर न बैठे । सच तो यह है कि मुश्ताक जिन्ना साहब को समझ नही पाया था ।

इस चिन्ता के साथ ही साथ उसे कई और भी चिन्ताए थी । खुदा-खुदा करके उस कथित नवाब से छुट्टी मिली थी, पर अब इस अब्दुल्ला का वबाल अपने साथ लग गया है । यो तो रज़िया ने बार-बार कसम खाई थी कि अब्दुल्ला का उसपर कोई प्रभाव नही है, पर ज्योही अब्दुल्ला से उसकी चार आखे होती है, त्योही वह इस तरह से उसके पीछे चल देती है, जैसे उसके गले मे कोई अदृश्य फदा डाल दिया गया हो । उसके पास से लौटकर पहले अकडती है, फिर हमेशा की तरह रात को कपोल पर कपोल रखकर सधि हो जाती है ।

मुश्ताक ने एक-दो बार हिम्मत करके अब्दुल्ला का सामना किया, पर कुछ मतलब हल नही हुआ । आप यहा कैसे ?—इस प्रश्न के उत्तर मे वह दात निपोर-कर कह देता है—मेरी फर्म की यहा ब्राच है, उसीका मुआयना करने आया था, तो कहा कि आप लोगो से मिलता चलू । अपने से तो मिल्लत की कोई खिदमत बन नही पडती, इसलिए आप ही लोगो की खिदमत कर लेता हू ।—कहकर सोने का सिगरेटकेस सामने फैला देता है—लीजिए ।—जैसे कोई उसकी सिगरेटो का भूखा हो, और साथ मे वही पुरानी दिल्लगी करता है—देखिए, मैं अपनी फर्म की सिगरेट नही पीता, जैसे डाक्टर अपना इलाज नही करता !—कहकर बत्तीसी निकाल देता है ।

सिगरेट तो लेनी ही पडती है । खुदा की कसम पीता बहुत अच्छी सिगरेट है । मुख्तसर मे शुक्रिया कहकर छुट्टी कर लेता है, पर अब्दुल्ला की आखे किसीको खोजती होती है, जैसे हवाई अड्डे की चक्कर काटती हुई रोशनी कभी दाये, कभी बाये तरगित होकर हवाई जहाजो को खोजती रहती है । मन मे तो आता है कि साले को तमाचे रसीद किए जाए कि मुह पिचक जाए, पर शराफत का तकाज़ा

यह है कि मुस्कराया जाए और कहा जाए—अरे साहब, आपका खानदान तो लीग के खास खम्भो मे है। उन्हीपर उसकी इमारत खडी है।

अब्दुल्ला की आखे किसीको खोजती रहती हैं। न पाकर फिर वह मुस्कराकर कहता है—मोहतरिमा कहा है ?

तो यह है असली मतलब ? इस हरामजादे को, ज़रूर ही साला हरामजादा होगा, तमाचे मारकर मुह बिगाड देने की इच्छा होती है। इसे न लीग से मतलब, न इस्लाम से ! इतनी बडी लडाई हो रही है, उससे इसे कोई मतलब नही है, बस इसे तो औरतबाज़ी से मतलब है। शराफत के कारण कहना पडता है—वे भीतर है, आप आइए।

वह फौरन भीतर चला आता है और फिर दोनो मे बातचीत शुरू होती है। पहले रज़िया छिपाती है कि वह खुश हुई है, पर जल्दी ही वह खुशी छिपा नही पाती। उसकी हर रग हसने लगती है, आखे खिलखिलाती हैं, होठ फडफडाते होते हैं खुशी से। दोनो प्रेमी उसके अस्तित्व को भूल जाते है, जैसे मुश्ताक दुम हिलाता हुआ कोई कुत्ता हो जिसकी तरफ ध्यान देने की कोई ज़रूरत नही है।

ऐसा कई बार हो चुका है। मजबूरी से उसे वहा से उठ जाना पडता है। उसके फौरन बाद दोनो उठते है और पास ही कही खडी मोटर पर फुर्र हो जाते हैं। फिर घटो बाद जब रज़िया लौटती है, तो उसकी आखो मे लाल डोरे होते है। अभी तक उन आखो मे कोई सपना बसा होता है। चेहरे पर खुमार स्पष्ट होता है। पूछने पर कहती है—माने ही नही, तो जाना पडा। इन्कार तो कर नही सकती थी, क्योकि वे मेरे राज़दा जो है।

राजदा के नाम पर मुश्ताक का क्रोध कुछ शान्त तो होता है कि कोठे पर बैठनेवाली वेश्या किसके साथ जाती है, या सोती है, इससे अपने को क्या मतलब। क्या आता-जाता है ! पर मन नही मानता और ऐसा लगता है जैसे किसीने उसकी विधवा भाभी के साथ बलात्कार किया हो जबकि ऐसा करने का सर्वाधिकार उसीका है। मुह कडवा पड गया था, फिर भी वह बोला—तुम तो जान-बूझकर ऐसा माहौल पैदा करती हो जिससे वह तुम्हे ले उडता है।

—माहौल ? कैसा माहौल ?

—माहौल यह कि मैं उसके साथ कमरे मे दाखिल होता हू, तो तुम उसीमे इस कद्र घुल जाती हो कि मेरी बात ही भूल जाती हो। अगर मुझसे बातचीत

करती रहो, तो मैं वहा से टलू थोडे ही। मैं नही टलूगा तो वह तुम्हे जाने के लिए कह ही नही सकता, और कहेगा तो साथ ही मुझे भी साथ जाने के लिए कहेगा।

रजिया राजी हो गई। बोली—अरे, तुमने पहले क्यो नही बताया ? यह तरकीब अच्छी है। हम लोगो को यह बात अब तक सूझी क्यो नही ! अब की देखना

फिर दोनो मे सन्धि हुई। उस सन्धि पर चुम्बनो के ठप्पे लग गए और आलिगनो के द्वारा सन्धिपत्र की स्याही जैसे सोख्ते से सुखाई गई। फिर भी थोडी देर बाद मुश्ताक को ऐसा लगा कि उसके हाथ तो जेवर का मखमली डिब्बा-मात्र लगा, जेवर तो कोई और उडा ले गया। वह खाली डिब्बे को लेकर क्या करे, शहद लगाकर चाटे !

अगले दिन प्रतापगढ मे लीग की सभा थी। उसमे धुआधार तकरीरे हुई। काग्रेसी वजारतो की तुलना फरऊन के शासन से की गई। बताया गया कि काग्रेसी वजारतो के अधीन मस्जिदो के सामने जान-बूझकर बाजा बजाया जाता रहा है, मुसलमानो को हिन्दू बनाने और शुद्धि करने का कार्यक्रम चोरी-चोरी काग्रेस की चश्मपोशी से सर्वत्र चलता रहा, उर्दू को दबाया जाता रहा।

मुश्ताक ने बहुत जोर के साथ कहा—डेमॉक्रेसी या जम्हूरियत के माने है—मेजॉरिटी, अक्सरियत का राज यानी हिन्दू राज। इसीलिए जिन्ना साहब यह कहते आ रहे है कि हिन्दुस्तान के लिए जम्हूरियत का तरीका ठीक नही है। काग्रेसी वजारतो ने मुसलमानो के इस डर को अपनी वजारतो से साबित कर दिया। अल्लाह का हजार शुक्र है कि कुछ ऐसा तो हुआ जिससे काग्रेसी वजारतो को इस्तीफा देना पडा। मुसलमानो के लिए यह बहुत ही अच्छा हुआ। यह मुसलमानो के लिए योमे-नजात रहा।

जब मुश्ताक यहा तक कह चुका तो जनता मे एक जोडी आखो की तरफ उसका ध्यान एकाएक चला गया। वह चौक पडा, क्या वह नवाब आ गया ? नही, यह वह नही, यह तो अब्दुल्ला है। उसे बहुत क्रोध आया और उसने तेजी के साथ आवाज चढाकर ललकार के साथ कहा—काग्रेस से तो खुदा खुदा करके छुट्टी मिली, पर हम मुसलमानो की भलाई तब तक नही, जब तक हममे ऐसे लोग है जो मजहब की आड लेकर तमाम तरह के शिकार खेलते रहते हैं, जो चन्दा भी देते हैं तो उसका मतलब रयाकारी होता है। असल मे उनके दिल मे कोई रहम

नही होता। ऐसे लोगो को जब हम अपने चमन से छाटकर निकाल दगे, तभी कौम और मिल्लत की भलाई है।

लीगी जनता ने कुछ हद तक तो अपनी बुराई सुनी, पर जब मुश्ताक अपनी भडास निकालने के लिए इसीपर बोलने लगा, तो चारो तरफ से लोग आपस मे बातचीत करने लगे और कुछ देर मे ही जो बुजुर्ग सदर की जगह पर बैठे थे, वे जल्दी-जल्दी उगलियो से अपनी सफेद दाढी को कघी करने लगे। कोई भी जनता अपनी बुराई एक हद तक ही सुनना पसन्द करती है। दो-चार लोग एक कोने से उठे, तो दो-चार दूसरे कोने से, और भीड इस तरह से छटने लगी जैसे भालू वाला जब भालू के सारे नाच दिखाकर फिर अन्त मे भालू से कहता है कि जमूरे, तू यह सब क्यो कर रहा है, तो भालू खडा-खड़ा फौरन पेट के पास अगला पजा ले जाता है, यद्यपि उसे पता नही होता कि इसका क्या अर्थ है।

तब सभापति ने भीड को बैठाने के बहाने उठकर कहा—आप लोग जाइए नही। अभी शहीदे-आज़म की बीबी मोहतरिमा सियामादेवी की तकरीर होगी, जो हिन्दुओ की बदकारियो पर रोशनी डालेगी।

मुश्ताक स्थिति समझकर बैठ गया और शहीदे-आज़म की बीवी मोहतरिमा सियामादेवी का भाषण शुरू हो गया। जो लोग उठ खडे हुए थे, वे लौट आए और अपनी-अपनी जगह पर बैठ गए।

सियामा का भाषण बहुत सफल रहा क्योकि शहीदे-आजम की बीवी ने कल्पना के बाग चुन-चुनकर ऐसे-ऐसे तथ्य पैदा किए, जिनके सम्बन्ध मे किसीने कभी सुना भी नही था, जैसे कवि कल्पना से आसमान के तारे तोडकर अपनी प्रियतमा के गले मे माला के रूप मे पेश कर देते है, समुद्र से उसके पैर पखरवाते हैं और चाद को उसके सामने झेपते हुए दिखाते है, उसी तरह से वक्ता ने यह बताया कि मुसलमानो को चिढाने के लिए काग्रेसी लोग नकली शादी के बहाने जुलूस निकालते है और मस्जिद के सामने बाजा बजवाते है। नकली शादी का अर्थ भी समझाया गया यानी असली शादी नही, एक मर्द तो घोडे पर चढकर वर बन जाता है, और कोई दुलहिन नही होती। कहा जाता है कि बरात है। इसी तरह ब्याहकर दुलहिन ले जाने का भी ढोग रचा जाता है। श्रोताओ को कही यह धोखा न रह जाए कि यह कैसे मालूम हुआ कि इस तरह के जुलूस निकाले जाते हैं, इसलिए शहीदे-आज़म की बीवी ने यह बतलाया कि मैने खुद देखा एक ऐसी

दुलहिन को। वह मर्द था। यही नही, उसके चेहरे पर हमारे मोहतरिम सदर की तरह लम्बी दाढी भी थी। इसपर बहुत कहकहा हुआ, क्योकि श्रोताओ को यह पता लगा कि पहली बार किसीने उन्हे सत्य का साक्षात्कार कराया। अध्यक्ष ने झेपकर दाढी पर हाथ फेर लिया, इससे व्याख्यान का असर और भी गहरा हुआ।

जब काग्रेसी किस तरह मुसलमानो की शुद्धि कर रहे थे, इसकी मिसाले देने पर वह आ गई, तो उसने इसी प्रकार बहुत-सी ऊल-जलूल घटनाए बताई—जब काग्रेसी महासभाई बन जाते है तो वे खद्दर उतार देते है, बस फिर उन्हे कौन पहचान सकता है। करुणरस के द्वारा वीररस उत्पन्न करने के लिए सीनाजोरी के साथ यह बताया गया कि अगली मर्दुमशुमारी मे पता लग जाएगा कि किस तरह इस बीच काग्रेसी मन्त्रिमडलो ने लाखो मुसलमानो को तरह-तरह के लालच और डर दिखाकर हिन्दू बनाया, इसलिए काग्रेसी वजारतो के इस्तीफा देने से मुसलमान बच गए।

रजिया का भाषण हमेशा की तरह सफल रहा। बीच-बीच मे तालियो की गडगडाहट होती रही। किसीने उठने का नाम नही लिया और अध्यक्षजी ने एक बार भी दाढी को कघी नही की और वे स्तब्ध होकर बुत बने बैठे रहे, मानो उन्हे गौरव हो रहा हो कि ऐसी सभा मे वे सभापति तो बने।

मुश्ताक को एक तो अब्दुल्ला की उपस्थिति का कष्ट रहा कि कल यह रायबरेली मे था और आज यह पीछे-पीछे छाया की तरह प्रतापगढ आ गया और अब यह दुष्ट उसी प्रकार से आ जाएगा। पर आज उसने तय कर लिया कि कुछ करना ही है। धनी का बिगडा हुआ लडका-भर है, और बनता लीगी है !

थोडी देर बाद जब सभा समाप्त होने के बाद चाय-पानी हो ही चुका था, तो देखा गया कि अब्दुल्ला हमेशा की तरह आ धमका। आज वह एक हल्के सूट मे था, यद्यपि जाडा शुरू हो चुका था। दात निपोरता हुआ बोला—आज तो आपने कमाल कर दिया !

मुश्ताक को यह बहुत बुरा लगा क्योकि एक तरह से अध्यक्ष मौलाना मुजिबुर्रहमान साहब ने उसे बैठा दिया था, फिर भी प्रशसा सुनकर पसीजते हुए बोला—जी हा ! सब आप लोगो की मेहरबानी है, नही तो मै भला किस लायक हू।—कहकर उसने स्वय ही कहा—भीतर चलिए, भाभीजी से मिलिए।

जब यह दुष्ट अगले ही वाक्य मे यही अनुरोध करनेवाला है, तो इसे क्यो न

खुद ही कह दिया जाए, क्योकि आज तो इससे कोई डर नही है। आज साले को वह सबक देना है कि याद करे! अब्दुल्ला बोला—हा-हा, उन्होने भी बडा कमाल किया। वह जो दाढीवाली बात कही, वह इतनी अच्छी लगी कि मुझे लगा कि मौलाना मुजिबुर्रहमान भी शरमा रहे है। आपने देखा न कि किस तरह लोगो ने तालिया पीटी? आपकी भाभी साहिबा मे गजब का जादू है! मै तो इसीलिए आप लोगो के साथ प्रोग्राम बनाता रहता हू, शायद इसीसे कुछ सवाब हाथ लग जाए। यहा तो बस इतना ही कर सकते है। क्या करू बुरी तरह फसा हुआ हू!

दोनो भीतर गए तो कथित भाभी साहिबा बाल खोलकर प्रसाधन कर रही थी। यद्यपि भीतर से बाहर की सारी बाते सुनाई पडी होगी, पर भाभी साहिबा ने मासूमियत से यह दिखाया कि कुछ पता नही। अब्दुल्ला का स्वागत करती हुई बोली—वाह, खूब रहा! आप यहा भी आ गए? मैंने कल भाईजान से सुनाया, तो उन्होने कह रखा है कि आज अगर आपने दावत दी, तो वे भी मुर्गमुसल्लम मे शरीक होगे।

अब्दुल्ला का चेहरा फक पड गया, पर उसने कहा—हा, क्यो नही, क्यो नही, बहुत खुशी होगी! क्या फर्क पडता है।...

मुश्ताक समझ गया कि गुरुमन्त्र काम कर गया। आज बेटा को छठी का दूध याद करा देना है। खूब खाऊगा, साथ ही मुह पर इसका मज़ाक उडाऊगा। खुलकर खेलूगा। सारी बेशर्मी और चालाकी धरी रह जाएगी।

अब्दुल्ला बोला—हा, क्यो नही, क्यो नही! खाने-पीने मे तो मजा तभी आता है, जब अच्छे लोग साथ मे खाना खा रहे हो।—कहकर वह एक कुर्सी पर बैठ गया। सियामादेवी से बोला—आपका तकरीर बहुत ही अच्छी रही। दाढीवाली बात सुनकर हम लोट-पोट हो गए। क्या ऐसा सचमुच हुआ था? खुदा की कसम बडा मज़ा आया! असल मे ऐसा नही हुआ होगा, हिन्दुओ मे इतनी अक्ल कहा? मैं आपकी अक्ल को दाद दू या हिन्दुओ की अक्ल को?

मुश्ताक ने योजना के अनुसार ज़बर्दस्ती बातचीत मे घुस पडने के लिए कहा—जब भाभीजी ने कहा तो जरूर हुआ होगा! इनकी निगाह बहुत तेज़ है। आए दिन ऐसी बाते बहुत हुआ करती है।

सुनकर अब्दुल्ला लोट-पोट हो गया। बोला—मुश्ताक साहब, आप भी गज़ब करते हैं! भला ऐसा कही हो सकता है? अगर इन्होने, कोई बात हुई और उसे

कहा, तब उसमे इनका क्रेडिट क्या है ? क्रेडिट तो इसमे है कि बात हुई न हो, और कह दी जाए ।

मुश्ताक ने सोचा अच्छा मौका हाथ लग गया । योजना तो योही पूरी हो गई । वह नाराज़ होता हुआ बोला—इसके माने ये हुए कि इन्होने झूठ कहा ?

अब्दुल्ला इस तरह के व्यर्थ के वाद-विवाद मे पडने के लिए तैयार नहीं था । उसका चेहरा उतर गया । उसने सोचा कि शायद ये लोग षड्यन्त्र करके बैठे है । उसके गोरे चेहरे पर यन्त्रणा की रेखाए कई बार उभरी और मिटी । सियामादेवी ने उन रेखाओ को देखा तो वे बोल पडी—अब्दुल्ला साहब ठीक तो कह रहे है । मैंने तो लोगो को हसाने और गुस्सा दिलाने के लिए कहा था । हसाने मे झूठ और सच क्या !

मुश्ताक ने जो यह सुना तो उसे पहले तो आश्चर्य हुआ, फिर क्रोध आया कि देखो, तय तो कुछ हुआ था, और अब्दुल्ला का हिन्दुओ की तरह सफाचट चेहरा, बडी-बडी आखे और नया सूट देखकर यह बिल्कुल बदल गई ! बोला—तो क्या आपने (यो तो वह तुम करके बात करता था) हज़ारो आदमियो के सामने झूठी बात कही !

रज़िया ने एक बार मुश्ताक को देखा, फिर अब्दुल्ला को । बोली—मैंने तो कहा, हसने हसाने के लिए बात कही गई !—कहकर उसने मुह फेर लिया ।

अब्दुल्ला स्थिति ताड गया, समझ गया कि इनमे किसी प्रकार मिलीभगत नही है । बोला—चलिए भाभीजी, हम लोग कही घूम-घाम आए, तब तक इनका गुस्सा काफूर हो जाएगा ।

रज़िया अभी-अभी थोडी देर पहले मुश्ताक से जो बात तय हुई थी, उसके अनुसार बोली—चलिए, आप भी चलिए ।

पर अब्दुल्ला उठ खडा होता हुआ बोला—नही-नही, इनके चलने की कोई जरूरत नही है । जब इनमे इतना सेन्स आफ ह्यूमर नही है कि यह समझ सकें कि किस मौके पर झूठ बोलना जायज़ है, तो फिर इनका-हमारा साथ नही हो सकता ।

रज़िया भी उठ खडी हुई थी, पर वह बोली—यही बैठिए, भाईजान समझ नही पाए । अब्दुल्ला साहब, आप तो नाराज़ हो गए !

अब्दुल्ला फिर भी नही माना । बोला—मैं नाराज नही हुआ, पर इनको

समझना चाहिए था कि ऊची सोसाइटी मे भी हसने-हसाने के लिए बात को बढाकर कहना कोई बुरा नही समझा जाता। आखिर आर्ट क्या है ? वह तो किसी बात को बढाकर कहना है। जब तक बढाया नही जाएगा, तब लुत्फ कैसे पैदा होगा ? चलिए, हम लोग चले। आपको प्रतापगढ शहर दिखा लाए। खाना आप हमारे साथ ही खाइएगा।

मुश्ताक देख रहा था कि रज़िया क्या करती है। उसे भरोसा था कि रजिया अवश्य इन्कार करेगी, पर अरे, वह तो हमेशा की तरह उसके साथ चल निकली। उसने मुडकर मुश्ताक के साथ आख भी नही मिलाई। जब दोनो चले गए और अब्दुल्ला की मोटर निकले जाने की सुपरिचित आवाज़ हुई, तो मुश्ताक को ऐसा लगा जैसे किसीने तमाचे मारकर उसका मुह टेढा कर दिया हो और उसे रोता छोड गया हो। रजिया को शहीदे-आज़म की बीवी और भाभी का दर्जा देना बिलकुल गलत रहा, पर कथित शरीफ औरतो मे कोई ऐसी मिली नही जो यह रगल ओढना कबूल करती। कई शरीफ घर की औरते बुर्का लगाकर लीग के प्लेट-फार्म से बोलती जरूर है, पर लोग महज़ इज्जत की वजह से उनकी रटी हुई तक-रीरें सुनते है, पर यह तो ऐसी है कि हर बात मे बात पैदा करती है। सफेद झूठ बोलती है, पर लगता है कि सच बोल रही है। लोग उस दाढीवाली बात पर कितना हसे ! पर साथ ही यह औरत गज़ब की बेईमान है। उसकी बातो का कोई एतबार नही। झासे देना, पट्टी पढाना, मुगालता पैदा करना, सचाई को दबाना और झूठ को दूध की तरह साफ और सफेद करके पेश करना, यह तो इसके बायें हाथ का खेल है। पता नही अब्दुल्ला के साथ यह कौन-सा खेल खेल रही है। अब्दुल्ला तो मशहूर बदमाश है। वह जरूर ही कुछ-न-कुछ गुल खिलाएगा।

मुश्ताक के लिए एक-एक मिनट काटना मुश्किल हो गया। वह मन ही मन कल्पना कर रहा था कि वे शहर देखने तो क्या खाक गए होगे। इस शहर मे धरा ही क्या है ! कुछ पक्के बेढगे मकान है, और कुछ रद्दी दुकाने है। वे जरूर ही अब तक मोटर से उतरे होगे और अब्दुल्ला ने हाथ-वाथ पकडना शुरू किया होगा। ••

मुश्ताक ने दरवाज़ा बन्द कर लिया। मेज़बान के नौकर से बोला—मैं कुछ जरूरी चिट्ठिया लिख रहा हू। खाने के वक्त मुझे बुला लेना।

इस तरह वह उन लोगो से बचा जो व्याख्यान के बाद नेताओ से दो बाते करने मे अपनी श्रेष्ठता समझते है। कभी आटोग्राफ लेते हैं , लेते हुए कहते है कि

कोई खूबसूरत फिकरा लिख दीजिए। मुश्ताक पहले-पहले ऐसे मौको पर शेर के टुकड या तैश दिलानेवाला कोई वाक्याश लिख देता था। एक वाक्य यह होता था—जैसे 'हिन्दू सब मुसलमानो को शुद्ध करना चाहते है।' पर अब वह थक गया था। अब तो जब कोई वाक्याश लिखने को कहता था, तो वह 'बिस्मिल्ला अर्रहमानेर्रहीम' लिख देता।

कोई इस लिखने पर कह देता था, कोई खूबसूरत फिकरा लिखिए, तो कहता —क्या इससे भी कोई खूबसूरत फिकरा हो सकता है?

आटोग्राफ का शिकारी निराश होकर लौटता था, पर मुह से कुछ कह नही सकता था। मुश्ताक को इस प्रकार के काम मे अब कोई रस नही मिलता था। वह मन ही मन अब सन्देह करने लगा था कि असल मे लोग सियामादेवी का हस्ताक्षर लेने आते हे, पर वह भी साथ ही होता है, इसलिए वे रहम खाकर कहते थे—कुछ लिख दीजिए।

यह औरत ज़रूरत से ज्यादा चालाक है। कुछ कम चालाक होती तो ज्यादा अच्छा रहता। यह ज़रूर उम्मीद कर रही होगी कि अब्दुल्ला उससे निकाह कर लेगा, पर भला ऐसे लोग कही निकाह करते है! ऐसे लोग हरामखोरी और हराम-कारी मे ही विश्वास रखते है। इन्हे औरतो का अकाल थोडे ही है। पता नही क्यो यह इसका पीछा कर रहा है। वह नवाब तो फिर भी (पता नही साला नवाब था या कोई घसियारा!) शर्मदार था। चोरी-छिपे आता था। इस तरह सीनाज़ोरी नही करता था। वह तो भिखारी की तरह आता था कि टुकडे दो टुकडे मिल जाए, पर यह तो छाती पर सवार हो जाता है और फिर पिस्तौल दिखाकर ले जाता है। पिस्तौल नही तो और क्या है! उसे मालूम है कि सियामादेवी असल मे कोन है। बस इसीपर वह उसे ब्लैकमेल करता है। मुझमे भी ऐसे बोलता है जैसे मैं साले की फर्म का कोई नोकर होऊ। उसे याद रखना चाहिए कि आखिर मेरी नसोमे वही खून दौड रहा है, जो शहीदे-आजम यूसुफ मेथा, जो न जाने कितने अंग्रेज़ो को कत्ल कर चुके थे और हसते-हसते फासी पर चढ गए थे।

मैं भी बदमाशो और बदकारो का खून कर सकता हू। उसे यह विचार बहुत पसन्द आया। ऐसे बदमाश को जान से ही मार देना चाहिए। मुल्क और मिल्लत के लिए ऐसे लोग साप की तरह है, जो देखने मे तो डसते नही हैं, पर धीरे-धीरे अपना ज़हर सारे समाज के शरीर मे मिलाते रहते हैं। मेज़बान क्या समझ रहे

होगे! आस-पास के लोग क्या समझ रहे होगे! खैर, यहा से तो एक दिन मे कूच कर जाना है। लोग कुछ विशेष भाप नही पाएगे, पर आज की तकरीर करनेवालो मे दो शख्स ऐसे है जो अब्दुल्ला को पहचानते है, और जानते है कि पहले भी सियामादेवी को मोटर पर ले जाता रहा है। वे क्या समझ रहे होगे, और उनसे बात फैलने मे कितनी देर लगती है! लाहौलवलाकूवत! कैसी गन्द फैला रखी है!

मुश्ताक ने चुपचाप दरवाज़ा खोला। कही कोई नही था। खाने की अच्छी सुगन्ध आ रही थी। मेजबान बेचारा बडा शरीफ है। पर अब्दुल्ला तो शरीफ नही है। उसने फिर दरवाज़े पर सिटकनी चढा दी और अपना सूटकेस खोलकर वह कोई चीज ढूढने लगा। सामने ही नोटो की एक गड्डी रखी थी जो महज़ इस टूर की आमदनी थी। यह रकम और बडी हो सकती थी, यदि रज़िया ने धीरे-धीरे आमदनी का पचास फीसदी लेने पर ज़िद न की होती। उसने गड्डी की तरफ लालच-भरी दृष्टि से देखा। फिर उसने घडी की तरफ देखा तो रज़िया को गए एक घण्टा हो चुका था और खाने के लिए जो टाइम दिया गया था, उसमे एक घण्टा और रहता था।

पर अपने को तो कतई भूख नही है। बस भूख है, तो बदला लेने की। उसने नोटो की गड्डी को एक कोने मे रख दिया और फिर से खोजने लगा। कई प्रचार-सम्बन्धी उर्दू पुस्तिकाए मिली, जिनके अस्तित्व की बात वह भूल चुका था। भक्तो ने आकर अपनी-अपनी पुस्तके और पुस्तिकाए नेता को समर्पित की थी। रजिया को दी हुई प्रतिया भी इसीमे थी, क्योकि रजिया का कहना था कि उसके सूटकेस मे साडियो के अलावा किसी चीज़ के लिए कोई जगह नही है! उसके मुह से घृणा की एक फुफकार निकली।

वह फिर से खोजने लगा। अरे, क्या हुआ? अभी कल तक तो मौजूद था, और आज कहा चला गया? वह जल्दी-जल्दी कपडे, पुस्तके उलटता रहा। बार-बार घूमकर वे ही चीजे हाथ मे आती रही। असली चीज़ का कही पता नही था। तो क्या किसीने निकाल लिया? या गडबड मे कही छूट गया?

यह ज़िन्दगी अच्छी नही है। हर समय दौड-धूप लगी रहती है। वह फिर से कपडो को उलट-पुलटकर देखने लगा। अब की बार कपडो के अन्दर भी देखने लगा, तो एकाएक वह वस्तु दिखाई पड गई जिसकी तलाश थी।

उसने उसे हाथ मे उठा लिया और म्यान से निकालकर उसकी घोर परीक्षा करने लगा। बस, एक वार काफी है उसकी गुस्ताखी-भरी चमकती आखो को बुझा देने के लिए! फिर यह मोटर मे ले जाना और बदमाशिया करना भूल जाएगा! फिर बेटा को पता लगेगा कि मुझमे सेन्स आफ ह्यूमर है या नही!

रज़िया कहती है कि अब्दुल्ला ने मुझे पहचान लिया है। उसने मुझे दालमण्डी के कोठे पर देखा था।

पर जब अब्दुल्ला यहा से उसे ले जाता है, तो वह रज़िया को नही ले जाता, बल्कि शहीदे-आजम की बीवी को ले जाता है। वह देवर के सामने भाभी को ले जाता है, उसपर बलात्कार करने के लिए। बहुत बडा जुर्म है!

इस प्रकार वह व्यक्तित्व का अपमान ही नही करता, बल्कि पुरुषत्व को चुनौती भी देता है। चुनौती स्वीकार है! उसने छुरे को चूम लिया और नोटो की गड्डी जेब मे रख ली कि पता नही कब कैसा काम पडे। फिर वह दरवाज़ा खोलकर निकला। घडी देखी और जिधर मोटर गई थी उधर चल पडा। उसे मालूम था कि अब्दुल्ला की कम्पनी का दफ्तर, बल्कि वितरण-केन्द्र कहा है।

वह दरवाजा भेडना भूल गया था, यह बात उसे एकाएक याद आई। पर अब उसे किसी बात की फिक्र नही थी। लीग के एक शत्रु को, एक कम्युनिस्ट को खतम करना था। यह कम्युनिस्ट वाली बात अच्छी याद आई। मन्त्रिमण्डल ने जब से इस्तीफा दिया है, तब से कई भूतपूर्व क्रातिकारी और कम्युनिस्ट गिरफ्तार किए गए। कोई नजरबन्द किया जा रहा है तो कोई कुछ। कम्युनिस्ट तो इस्लाम का दुश्मन होता है। इस्लाम का ही क्यो, सभी धर्मो का। यह बात अच्छी याद आई।

वह चलता गया।

आधे घण्टे बाद मुश्ताक प्रतापगढ की कोतवाली मे एक कुर्सी पर बैठा हुआ था। सामने पता नही दरोगाजी थे या मुशीजी थे। कुछ भी हो, जहा तक मुश्ताक का सम्बन्ध था इससे कुछ फर्क नही आता था। उसे तो बयान देना था। कोई भी लिखे। इससे क्या आता-जाता है! उसने कहा "मेरा नाम मुश्ताक है"

कहकर वह रुक गया। वह सोच रहा था कि भाई का परिचय देना उचित होगा या नही। ऐसे मामले मे क्या लाभ है? फिर सियामादेवी का परिचय देना पडेगा, और पुलिस से तो कुछ छिपा नही सकते। इसलिए कहना पडेगा कि सियामादेवी नकली है, पर इन बातो से क्या मतलब? यह कहने कि क्या ज़रूरत है कि

अब्दुल्ला का उसकी भाभी से कोई ताल्लुक था ? उसके सारे विचार गडबडा गए। वह यहा आया ही क्यो ? शायद ठीक नही रहा। अपनी मुसीबत आप बुलाई।

मुश्ताक ने देखा कि दो जोडा आखे सर्चलाइट की तरह उसके हृदय के अन्तरतम प्रकोष्ठो को विदीर्ण करने का प्रयत्न कर रही है। बयान लिखने के लिए उद्यत कलम को स्याही मे बोरते हुए मुशीजी या दरोगाजी ने कहा—हा, आपको हम जानते है। आज आपकी तकरीर हुई। अब आगे बताइए, आप क्या कहना चाहते है ?

मुश्ताक के सारे विचार एक-दूसरे से उलझ गए। उस भयकर भीड मे से एक विचार को निकालकर सामने रखना असम्भव लगा। भला वह यहा क्यो आया ? उसने कहा, क्योकि कहे बिना कोई चारा नही था—मैं एम० एल० ए० हू, यह तो आप गालिबन जानते ही होगे। •

कहने के बाद उसमे जैसे आत्मविश्वास लौट आया, जैसे उसने यह न कहा हो कि मैं एम० एल० ए० हू, बल्कि किसीने उसीसे कहा हो—तुम एल० एल० ए० हो, लीग के एक मशहूर लीडर हो, तुम्हारी तकरीरो के लिए अवाम बेचैन रहता है। परेशान क्यो होते हो ? तुम्हारा कौन क्या बिगाड सकता है !

मुशीजी ने कुछ अदब के साथ कहा—जी हा, मुझे मालूम है। हम लोगो का काम ही यह है कि

कहकर वह मुस्कराया, पर साथ ही उसने स्याही मे फिर से कलम बोरकर लिखने की उत्सुकता दिखलाई। उस उद्यत कलम ने जैसे मुश्ताक को बिजली का कोडा मारा। वह बोला—आप जानते है न कम्मू मिया की बडी भारी फर्म है, सारे हिन्दुस्तान मे उसके जाने कितने दफ्तर हैं।

मुशी को जैसे एकाएक धक्का-सा लगा, कहीं इस शख्स का दिमाग तो नही फिर गया है ! आखिर कम्मू मिया की फर्म से, उसके तम्बाकू के कारोबार से पुलिस को क्या वास्ता ! बोला—जी हा, जी हा।—पर उसने कलम नीचे रख दी और देख लिया कि अपने भागने का रास्ता ठीक है या नही, दूसरी तरफ यह भी देख लिया कि अपना बैटन कितना दूर है। कुछ ठीक नही। बडे आदमी भी कभी कभी पागल हो जाते है। कट्टर मुसलमान होते हुए भी मुशीजी यह समझते थे कि लीगी आधे पागल होते हैं। उनकी पन्द्रह साल की सर्विस थी, भला वे कैसे इन झगडो को सही समझ सकते थे ! बोले—जी हा, जी हा।—कहकर उन्होने ध्यान से मुश्ताक को देखा। यह भी देखा कि यह सचमुच वही व्यक्ति है कि नही,

जिमने व्याख्यान दिया था । यह भी तो हो सकता था कि कोई पागल आकर अपने को मुश्ताक बताए ।

मुश्ताक आधा पछता रहा था कि वह यहा क्यो आया । अब्दुल्ला से बदला लेना तो ठीक है, समझ मे आता है, पर थाने मे आने की क्या जरूरत थी ! इससे क्या फायदा होगा ? फिर कुछ-कुछ यह भी अफसोस हो रहा था कि रजिया तो कोठे पर बैठने वाली थी ही, उसे सती बनाकर रखने की चेष्टा व्यर्थ है । उसके लिए इस हद तक जाना और अपने को गिराना, अपने राजनैतिक जीवन को दाव पर रख देना बिलकुल गलत है । इसका कोई अर्थ नही होता । लोग क्या कहेगे !

मुशीजी ने कलम उठा ली थी, पर उसे स्याही मे नही बोरा था । उसे उन्होने कलम की तरह नही, बल्कि छुरे की तरह थाम रखा था कि मौका पडे तो एक वार इसीसे हो जाए । यदि वार आख मे बैठे, तो काम ही बन जाए , सब पागलपन भुला दिया जाएगा !

मुश्ताक ने समझ लिया कि अब यहा से लौटा नही जा सकता । यदि लौटने की कोशिश करेगा, यानी बयान दिए बिना, तो सम्भव है कि पुलिस उसके पीछे लग जाए । फिर क्या फायदा रहेगा ! अब तो एम० एल० ए० होने का भी कोई अथ नही है, क्योकि शायद विधान-सभा की बैठक ही न हो । फिर एम० एल० ए० लोगो की पूछ कैसे हो ! बोला—वे कम्मू मिया है न

मुशीजी ने बीच ही मे टोकते हुए कहा—आप अपनी बात कहिए । कम्मू मिया या उनकी दुकान से हमे कोई मतलब नही ।

अब की बार मुशी के स्वर मे कुछ रुखाई थी, इतनी कि मुश्ताक उस घबडाहट की स्थिति मे भी उसे पहचान गया । जिद के साथ बोला—कम्मू मिया के खानदान मे एक अब्दुल्ला है, जो बहुत ही खतरनाक आदमी है ।

मुशीजी का धैय अब जाता रहा । वे बैठे ही बैठे चुपचाप बैटन की तरफ कुर्सी को जरा-सा हटाते हुए और कलम को अन्तिम रूप से छोडते हुए बोले—जी हा, अब्दुल्ला है । कौन नही जानता ! पर उनसे आपका या मेरा क्या मतलब है ? वे रईस है, ठाट-बाट से रहते है, उनसे क्या मतलब ?

मुश्ताक को भी अब सचमुच ऐसा ही लग रहा था कि अब्दुल्ला से उसे कोई मतलब नही यानी उतना ही मतलब है जितना कि एक ही वेश्या के कोठे पर अलग-अलग समय मे आनेवाले लोगो मे होता है । रजिया तो महज पेशेदारी

दृष्टि से लीग के प्रचार-कार्य मे शामिल हुई थी। यह बात दूसरी है कि वह अपनी नव-नवोन्मेषशालिनी बुद्धि के कारण उस कार्य मे बहुत सफल रही थी, पर उसके पीछे इस तरह अपने को बर्बाद कर देना, और वह भी इस प्रयास मे कि वह एक-मात्र उसीकी होकर रहे, बिलकुल गलत रहा। आवेश मे आकर न इस तरह सोचना चाहिए था, न इस तरह काम करना चाहिए था। यह दो कौडी का मुशी अपने को बहुत बडा लग रहा है, वह केवल इसीलिए न कि वह आज यहा पर याचक बनकर खुद फसकर आया है। मुशीजी उसकी तरफ टकटकी बाधकर देख रहे थे, जैसे डाक्टर रोगी को देखता है। पर उसे ऐसा लगा कि वे व्यग्य कर रहे हैं। लौटने का मौका नही था। बोला—अब्दुल्ला साहब भी यहा आए हुए हैं। आपको शायद मालूम न होगा।

—अब्दुल्ला साहब से हमे कोई मतलब नही! वे न लीडर है न दस-नम्बरी। हमे तो लीडरो और दसनम्बरियो से वास्ता है।

इस कथन से मुश्ताक को जैसे रास्ता सूझ गया। बोला—वे दसनम्बरी तो नहीं, पर उससे भी खतरनाक हैं। आपने यह जो कहा है कि उनसे कोई मतलब नही, सो यह बताइए कि उनको कोई कत्ल करे या वे किसीको कत्ल करे तो आपको इससे मतलब नही ?

मुशीजी की दिलचस्पी बढ गई, पर वे कलम की तरफ हाथ बढाने की बजाय खडे हो गए। चारो तरफ अच्छी तरह देखते हुए बोले—मैं नही समझा बात समझ मे नही आई।

मुश्ताक भी खडा हो गया। बोला—वे दसनम्बरी तो नही पर कम्युनिस्ट है, यह आपको मालूम है ?

मुशीजी ने उसी प्रकार खडे-खडे कहा—भला वे कैसे कम्युनिस्ट हो सकते हैं! वे तो करोडपति हैं। उन्हीका नुकसान है। अगर शौकिया कम्युनिस्ट है भी तो मुझे या आपको क्या मतलब ?

मुश्ताक को याद हो आया कि किस प्रकार वह छुरा लेकर अब्दुल्ला को, और हो सके तो साथ मे रजिया को मारने के लिए चला था, पर जहा उन दोनो के होने की उम्मीद थी, वहा वे नही मिले थे। इधर-उधर खोजता रहा। घूमते-घूमते किसी बिन्दु पर उसका जोश ठण्डा पड गया और छुरा रखकर वह थाने मे इस इरादे से आया था कि ऐसी कोई रिपोर्ट लिखाई जाए जिससे अब्दुल्ला पर पुलिस की

निगरानी आदि शुरू हो जाए ताकि वह फिर रजिया का पीछा करने से खौफ खाए। बोला—आप मुसलमान होकर यह कैसे कहते है कि वह अगर कम्युनिस्ट है तो आपको कोई मतलब नही ? आप जानते होगे कि कम्युनिस्ट लामजहब और मुनकिर होते हे। ऐसे लोग इस्लाम के लिए काग्रेस से ज्यादा खतरनाक है—कहकर उसकी समझ मे आ गया कि इस घुटे हुए अग्रेजो के गुलाम को इस्लाम के नाम पर कुछ बताना व्यर्थ है। बोला—कम्युनिस्ट वे लोग है जो पटरिया उखाडने और तार काटने का नारा दे रहे हे। वे तो अग्रेजी राज के सबसे वडे दुश्मन है !

अब मुशीजी खडे से बैठ गए। यह पागल नही था, बल्कि बेवकूफ था, या जो भी हो, इससे कोई खतरा नही है। बोला—आप कुछ बता सकते है कि उन्होने तार काटने या पटरिया उखाडने के काम मे किसी तरह मदद पहुचाई हो ?

—क्यो नही ?—कहकर कल्पना से काम लेते हुए उसने कहा—मैं क्यो यहा आया हू ? मैं इसलिए यहा आया हू कि यो तो वे हम जहा-जहा जा रहे है, वहा-वहा चल रहे हैं। देखने मे लीग के मुअतकिद लगते हैं, पर असल मे वे तार काटने और पटरिया उखाडने की तहरीक को जोर पहुचा रहे है। खूब रुपये और प्लास बाट रहे है। मैंने सुना कि जो सिगरेटो के पार्सल आते है, उनसे प्लास और रस्सी की सीढिया भेजी जा रही हैं। मुझे कोई मतलब नही, पर ऐसे लोग जब लीग की आड लेते हे, तब गुस्सा आता है।

मुशीजी की कलम उसी तरह से चालू हो गई थी, जैसे सामने हरी-हरी दूब देखकर बकरी के जबडे चालू हो जाते है। जल्दी-जल्दी बयान लिखना समाप्त कर वे बोले—आपने अपनी आख से भी कुछ देखा या सब सुनी-सुनाई बाते है ?

मुश्नाक बैठता हुआ बोला—वाह, मैंने अपनी आख से देखा। बात यो हुई कि मैं बाराबकी मे उनके दफ्तर मे गया तो उन्होने मुझे कुछ सिगरेट देनी चाही, बोले—बिलकुल ताजी सिगरेट पिलाऊगा।—कहकर अपने मुलाजिम से उसी दिन कानपुर से आया हुआ एक पार्सल खुलवाया, तो उसमे से सिगरेट तो निकली, पर साथ ही प्लास निकले।

मैंने पूछा—ये प्लास कैसे ?

तो वे झेपकर बोले—कारखाने मे काम आती हैं।

मैं इतना बुद्धू तो नही हू कि इसे मान जाता। कानपुर मे, जहा सिगरेट बनती हैं वहा मुमकिन है औजारो मे प्लास भी होते हो, पर तार काटने के प्लासों का

वहा भी होना अचम्भा ही माना जाएगा।

मुशीजी की कलम हवा से बातें कर रही थी। उन्हे ऐसा लग रहा था कि आज उन्हे कोई ऐसी खबर मिली है, जिसकी हेडक्वार्टर मे कद्र समझी जाएगी। अब तक केवल इस सम्बन्ध मे भूतपूर्व क्रातिकारियो तथा ऐसे ही सदिग्ध लोगो के इर्द-गिर्द जाच की मशीन काम कर रही थी। काग्रेस मन्त्रिमण्डल के इस्तीफा देने के दिन ही दूर देहात से भी तार काटने और पटरियो को उखाडने की खबरें आ रही थी। यह नही पता था कि इसमे अब्दुल्ला ऐसे लोग भी शरीक है। हिन्दुओ मे तो बडे-बडे लोग इसमे शरीक होगे, यद्यपि इसका प्रमाण नही मिला है। इस जिले के बनिया-बक्काल तो ऐसी बातो से बहुत घबडाते है। अपने को दूसरे ज़िलो से कोई मतलब भी नही है। अब्दुल्ला का इस ज़िले मे आना अच्छा नही रहा। अब हर पार्सल को देखना पडेगा। एक नई मुसीबत बन गई। पर ख़ैर-ख्वाही तो मानी जाएगी।

मुशीजी की कलम रुक गई थी क्योकि मुश्ताक की समझ मे नही आ रहा था कि वह आगे क्या आविष्कार करे। इसलिए वह किसी विषय के अभाव मे उसी टेक पर लौट गया, जिसपर वह बार-बार लौटा करता था। बोला—लीग किसी आरगेनाइज़ेशन से पीछे नही है। मौका पडेगा तो वह सब कुछ कर सकती है, इन्कलाब भी कर सकती है, पर जब तक वह आफीशियल तौर पर इन्कलाब को अपना तरीका करार नही देती, तब तक उसके साथ ऐसे लोगो के नाम जाना, जो उसकी पॉलिसी की मुखालिफत करते है और बेवकूफी मे आकर हिन्दुओ और कम्युनिस्टो का साथ देते है, बहुत ही गलत बात होगी। इसीलिए मैं आपसे यह बात बताने आया था। उम्मीद है कि आप मुझे किसी तरह घसीटे बगैर इस खबर का इस्तेमाल कर सकेंगे।

मुशीजी ने ऐसी कोई आशा नही दिलाई, पर इसके विरोध मे भी कुछ नही कहा। कलम को स्याहीदान पर टिका देने के बाद बोले—और कुछ कहना है ?

मुश्ताक आवेश मे यहा आ गया था। छुरा मारने निकलकर अन्त मे जासूस का काम करने के कारण उसकी आत्मा उसे कुछ कचोटने लगी थी। शायद आत्मा उतनी नही कचोट रही थी जितना कि थाने का यह वातावरण। पुराने कागजात की जाने कैसी उकता देनेवाली बू हवा मे लहर दे रही थी। पकडकर लाए हुए लोगो के दीवारो से टकराए हुए हाहाकार और क्रन्दन, साथ ही जासूसो का

विश्वासघात, सब मिलकर उसके स्नायुमण्डल पर दमित करनेवाला असर पैदा कर रहे थे। उसने यह सोचा था कि पहले छुरा भोकूगा, फिर थाने मे हाजिर होकर बयान दूगा कि लीग के कल्याण के लिए मैने ऐसा किया। पर वह साला मिला ही नही। नतीजा यह हे कि वह अपने को इस अत्यन्त अजीब और भ्रामक स्थिति म पा रहा था।

वह खडा होकर बोला—मुझे और कुछ नही कहना है। पर उम्मीद है कि आप एक मुसलमान के नाते इस पर मुनासिब कार्रवाई करेगे।

मुशीजी ने मुसलमान वाला चारा निगलने से इन्कार किया। बोले—एक बात तो बताइए, इस वक्त उनके दफ्तर की तलाशी ली जाए तो प्लास बरामद होगे ?

प्रश्न सुनकर मुश्ताक का हृदय धक् से हो गया। प्लास क्या, वहा तो काटी भी नही मिलेगी। शायद ही उनके दफ्तरो मे क्लिप और आलपीन से बढकर कोई चीज निकले। उसने किस मुसीबत मे अपनी जान फसा ली, यह उसे अब पता चला। बोला—साहब, मैं यह सब नही जानता। मै यहा के दफ्तर मे गया भी नही, पर मैने एक आम बात बता दी कि वे तोड-फोड की तहरीक मे शामिल हैं। बाकी बातो का पता लगाना आपका काम है, हमे इससे कोई खास मतलब नही है। जितना मतलब था, उतना मैं बता चुका, क्योकि मैं चाहता हू कि लीग की हिफाजत हो, गलत और लगो किस्म के अनासार उसे नुक्सान न पहुचा सके। बस मेरा और कोई मतलब नही है।

कहकर वह एकदम से उठ खडा हुआ। उसे लगा कि अन्तिम वाक्य कहकर उसने अपने को मुखबिरो और जासूसो की श्रेणी से निकलकर डिप्लोमैटो और कूटनीतिज्ञो की श्रेणी मे रख दिया है। राजनीति मे काम करनेवाले लोगो के लिए झूठ अनुचित नही है।

उसने फिर पीछे की ओर मुडकर नही देखा, और सीधा मेजबान के घर पर पहुचा, जहा लोग उसकी प्रतीक्षा कर रहे थे। लोगो ने उसे देखते ही कहा—आप कहा गए थे ? आपकी भाभी साहबा कहा है ?

उसे यह पता लग गया कि अभी तक रजिया लौटी नही है, इससे उसे फिर क्रोध आया और फिर एक बार इच्छा हुई कि वह छुरा लेकर निकल पडे। उसकी आखो के सामने उस दृश्य की झलक कौध गई जो इस समय किसी बन्द कमरे के

अन्दर घटित हो रहा होगा। साले ने अपने दफ्तर मे कुछ नही रखा। पता नही उसे कहा उडा ले गया है! करोडपति आदमी है, उसके पास जगह की क्या कमी है! सभी जगहे उसके लिए खुली है। सभी रास्ते उसके लिए आसान है। या अल्लाह! अगर किसी तरह हिन्दुओ के जुल्म से बचे, तो जो अपने सपने का वतन बनेगा, उसमे अगर ऐसे जालिम सरमायेदार रहे, तो फिर क्या फायदा होगा? मलाई-मलाई तो ये लोग खाएगे, और अपने को सिर्फ कटोरी का धोवन पीने को मिलेगा। उसने कहा—मै ज़रा चहलकदमी के लिए निकल गया था। थोडी मेहनत अच्छी रहती है।

मेज़बान साहब ने कहा—जी हा, जी हा! आपकी भाभी साहिबा कहा गईं? उनका लोग बडा इन्तज़ार कर रहे हैं।

मुश्ताक ने मेजबान के चारो तरफ देखा, तो उनके चारो तरफ आठ-दस अर्ध-देहाती सम्भ्रान्त लगनेवाले मुसलमान खडे थे। यह देखकर उसे खुशी नहीं हुई। लगा कि इनमे कई अब्दुल्ला होगे, तकरीर सुनकर जिनके मन मे इश्क चर्राया होगा। कुछ रुखाई के साथ बोला—अपने कम्मू मिया के खानदान के वे अब्दुल्ला साहब है न! उनके साथ गई है। उन्हे समझा रही होगी कि लीग के खर्च के लिए महीने मे लाख दो लाख दिया करे, तो क्या हर्ज है।

मेज़बान बहुत प्रभावित हुए। बोले—जी हा, वे दे सकते है। वे कितने बडे आदमी है!

यद्यपि मुश्ताक ने ही यह प्रसग चालू किया था, पर उसे बडा आदमी लफ्ज़ खराब लगा। बोला—बडे आदमी ख्वाक है! यह आप कह सकते हैं कि बडे आदमी के बेटे है। इन्होने क्या किया है, दस-बीस लाख फूक ही दिया होगा! यह कहिए कि मुसलमानाने-हिन्द उनकी सिगरेट के अलावा कोई दूसरी सिगरेट पीते नही है, इसीलिए उनका दिवाला नही पिटा। उन्हे चाहिए कि वे अपनी सारी आमदनी लीग को दे, पर एक बार जब जिन्ना साहब कानपुर मे इनके घर गए थे, तब सिर्फ बीस हज़ार दिया था, बाकी कभी एक हज़ार से आगे नही बढते।

मेज़बान तथा उसके साथी सुनकर बहुत प्रभावित हुए, क्योकि इस छोटे-से शहर मे दस-बीस हज़ार का दान बहुत बडा था, फिर भी एक साहब पूछ बैठे—वे चन्दा वसूल करके कब तक लौटेगी?

मुश्ताक को जैसे इस प्रश्न मे व्यग्य का पट मालूम पडा। बोला—हर मौके पर

यह सोचना पडता है कि किस काम से ज्यादा फायदा रहेगा।

—जी हा। पर जब हम लोगो के शहर मे तशरीफ ले आई है तो हम लोगो का भी तो उनपर कुछ हक है। हे-हे-हे-हे !

मुश्ताक को लगा कि हक शब्द का कोई अन्तर्निहित अर्थ है। उसे ऐसे लोगो की हकीकत मालूम है। वह नवाब, हरामजादे का क्या नाम था इस्तगफारुल्ला, वह भी ऐसे ही आया था। बोला—"मुझपर तकरीर का बडा असर पडा। ऐसा लगा कि फिर अरब की तरफ से ठण्डी हवाए आई।"

—अब उस हरामज़ादे से पूछो कि साले तूने ज्योग्राफी भी पढा है ! अरब से भला ठण्डी हवाए कैसे आएगी ? ठण्डी हवा तो हिमालय से आ सकती है। इब्तदा तो ऐसा रहा, और फिर उसने जैसे जो कुछ किया, यह मालूम है। अब्दुल्ला भी ऐसे ही आया, अब ये आए है। नाराज़ होकर जैसे अब्दुल्ला पर का सारा गुस्सा उतारते हुए बोला—आपको मुझसे कोई खिदमत लेनी हो तो बताइए, मोहतरिमा तो शायद खाना खाकर ही आए। सरमायेदारो की यह भी एक चालाकी है कि कोई कुछ काम मे जाता है तो वह काम तो करते नही, खिला-पिलाकर और मीठी बाते वापस कर देते है। बिना खिलाए वह थोडे ही मानेगा !

मेज़बान ने दु खी होकर कहा—पर उनके खाने का इन्तज़ाम तो यहा गरीब-खाने मे भी था।

—मजबूरी है। जो पब्लिक की खिदमत करने लगा, उसका कुछ भी अपना नही रहता। उसे सभी कुछ मकसद को सामने रखकर करना पडता है।

बहुत देर तक मेज़बान और बुलाए हुए लोगो ने शहीदे-आज़म की बीवी की प्रतीक्षा की। अन्त मे जब रात के दस बज गए, तब मुश्ताक ने लगभग आज्ञामूलक ढग से मेज़बान से कहा—मै कह चुका कि आप उनका इन्तज़ार न करें, वे खा-पीकर ही आएगी, हम लोग खा-पी ले।

अच्छी-खासी दावत रही। पता नही कहा से मेज़े और कुर्सिया लाई गई थी। मुश्ताक गुस्से मे ज्यादा खा गया। गुस्सा उसे बराबर आता ही रहा, क्योकि अन्य मेज़ो से जब भी कहकहा लगता था, तो सुनाई पडता था—हा-हा-हा-हा ! उनका तो कुछ भी अपना नही है। जो पब्लिक की खिदमत करे, उसका अपना तो कुछ होता ही नही !

१४

सध्या समय जब राघवेन्द्र उर्फ पुरन्दर की आखे खुली, तो उसने पहले तो स्नान किया, फिर नये रेशमी वस्त्र धारण किए। सूर्यकुमार को किसीने इत्र की शीशी भेजी थी, उसे यह समझकर सूर्यकुमार तक नही पहुचाया था कि देशभक्त आदमी है, उन्हे शृगार की इन चीजो से क्या वास्ता! राघवेन्द्र ने उस शीशी से इत्र निकालकर कपडो मे लगाया, कान पर लगाया और फिर उसीको उगली से छू-छूकर चारो तरफ लगा दिया। इसके बाद उसने बाकायदा अपना सूटकेस भर लिया और बिस्तर बाध लिया। अपने मेजबान से कहा—मैं किसी भी वक्त रात को आकर सामान ले जाऊगा। मुझे रात को यहा नही रहना है।

सब कुछ कर लेने के बाद जब वह चलने लगा तो उसे प्यास-सी लगी। जब इस प्रकार रेशमी कपडे पहन लिए, इत्र लगा लिया, दाढी की एक-एक खूटी प्रयास करके निकाली, तब प्यास लगना स्वाभाविक है, पर यह प्यास न तो चाय की प्यास थी, न कॉफी की प्यास थी, बल्कि यह तो वह प्यास थी, जो काग्रेसियो के लिए वर्जित थी। पर अब उस सम्बन्ध मे उसके मन पर कोई ब्रेक नही लगा हुआ था, क्योकि अब, जबकि वह फरार हो रहा है, तो वह काग्रेसी कहा रहा। वह तो अब स्वतत्र है!

तो क्या वह कही रुककर एकाध पेग या कुल्हड, क्योकि इस समय आर्थिक हाल पतला है, चढा ले? पर जब उसने सोचा कि उसके सामने इस समय लक्ष्य क्या है, जब उसे वसुधा के सुन्दर मुखडे की याद आई, तो मन पर ब्रेक लग गए और उसने नुक्कड पर खडे होकर पान के खुशबूदार बीडे मे ही सन्तोष किया।

कई बार ऐसे सन्तोप करना ही पडता है। जीवन नाम है समझौते का। बडी विचित्र है इसकी धारा। कभी तो यह पत्थर और चट्टानो से टकराकर उफनती और उबलती हुई चलती है, तो कभी समतल भूमि पर नूपुर बाधकर, यहा तक कि पगचाप का कण्ठ रुद्ध करके नीरवता मे अपने मे आप समाकर चलती है कि किसी-को कानोकान अभिसार का पता नही होता, यहा तक कि अपने को भी नही। माना कि मदिरा का नशा सब नशो का बादशाह है, पर प्रेम के मुकाबले मे उसका दर्जा तुच्छ और हेच है।

पुरन्दर, अब उसे पुरन्दर कहना ही ठीक होगा, क्योकि वह राघवेन्द्र का चोला सूर्यकुमार के घर पर छोड आया था, और अपने को अब ससार के प्रसिद्ध प्रेमिको मे समझ रहा था। वह उर्वशी का प्रेमिक पुरूरवा, दमयन्ती का प्रेमिक नल, सीता का प्रेमिक राम (यो तो रावण भी प्रेमिक था), जूलियट का प्रेमिक रोमियो और अत्यन्त आधुनिक काल मे पार्वती का प्रेमिक देवदास था, जो सब बाधाओ की चट्टानो को तोडते हुए, सब विघ्नो के उत्तुग शिखरो को लाघते हुए, दैत्यो की तरह डग भरते हुए अपनी प्रेमिका की ओर धावित हो रहा था। कितनी ही विपत्तिया आई, कितनी ही चन्द्रमुखियो के मुखडो ने उसे प्रलुब्ध किया, जैसे ऋषियो को अप्सराए तपस्या से च्युत करने के लिए प्रलुब्ध करती है, पर वह था कि अपने लक्ष्य से च्युत नही हुआ। पथ मे कई बार भटक गया, पर लौटकर फिर आ गया अपनी अक्षरेखा पर।

थोडी ही देर मे वह उस चिरपरिचित घर के पास पहुच गया जहा वसुधा रहती थी, जहा कभी वह तपता था गगन का एकमात्र सूर्य बनकर। दूर से उसने वह घर देखा तो उसका मन उसी प्रकार से उल्लसित हो गया जैसे दीर्घयात्राओं के बाद घर लौटनेवाले व्यक्ति का मन अपना स्टेशन देखकर होता है। उसके मन में मिश्री घुलने लगती है। मुह मे जो पान था, वह खत्म हो चुका था, इसलिए उसने खडे होकर एकसाथ चार बीडे लगवाए और पानवाले मे बोला—पिपरमेट और छोटी इलायची ज़रूर डाल देना।

तमोली पान बना ही रहा था कि उसने फिर एक बार चारो तरफ देखा, तो उसे लगा कि नीम के नीचे खडा एक सदिग्ध प्रकार का व्यक्ति उसे कुछ अधिक ध्यान से देख रहा है।

वह चौक पडा, पर अधिक नही, क्योकि उसने सूर्यकुमार के गहने नही चुराए थे, और अब तक गुलदान भी गल गए होगे। फिर भी उसे कुछ खटका लगा कि उस व्यक्ति को मुझे इस प्रकार ध्यान से देखने की आवश्यकता क्यो पडी। यदि वह कोई स्त्री होता, तो बात समझ मे आती। पुरन्दर अपने को बहुत सुन्दर पुरुष मानता था, पर यह व्यक्ति क्यो घूर रहा है? तो क्या किसी प्रकार का कोई खतरा है?

इस चिन्ता से, उसके मन की कढाही मे जो केवल मिठास ही घुल रही थी, उसमे कही एक ककड पड गया, पर थोडी देर मे उसने बलपूर्वक उस ककड के

चारो ओर चीनी लपेट दी। फिर वही वर्जित प्यास लगी। ऐसे समय थोडी-सी मिल जाए, तो वह बहुत अच्छा रहता है। पर उसे अपना लक्ष्य नही भूलना चाहिए। वह तो सूर्य-चन्द्र की तरह अपने लक्ष्य की तरफ प्रभावित हो रहा है।

उसने पान ले लिया और उन्हे गाल के एक तरफ डालकर आनुष्ठानिक ढग से चूना मागा, तम्बाकू की खुशबूदार गोलिया ली, पैसे निकालकर दिए, फिर सामने मौका देखकर जहा पहले से लोगो ने थूक रखा था, थूककर बोला—पान अच्छा नही है!

पर यह तो चिरन्तन शिकायत थी। न तमोली ने उसे देखा और न उसने फिर तमोली की तरफ देखा। वह अपने अभिसार की अन्तिम मजिल मे था। वह अतिम शिखर को पार करके डग भरने ही वाला था कि उसपर एकाएक कई तगडे आदमी टूट पडे, और जब उसे होश आया कि क्या हुआ, तो उसने देखा कि एक पुलिस अफसर उसकी छाती पर पिस्तौल तानकर सामने खडा है, बोला—हैंड्स अप !

पुरन्दर को ऐसा लगा कि जैसे स्वर्ग की ललनाओ के मधुर आलिगन से उसे एकाएक नरक की भडकती हुई आग मे सरपट धकेल दिया गया हो। उसने हाथ ऊचे कर दिए। जल्दी से उसकी तलाशी ले ली गई। पर उसके पास कुछ रुपयो के अलावा कोई चीज़ नही निकली। तब पुलिस अफसर ने पिस्तौल को अपने चमडे के केस मे रख दिया और बोला—थाने मे तशरीफ ले चलिए।

पुरन्दर बहुत ही दु खी हुआ। बोला—जरूर कोई गलती हुई है। आप मुझे क्यो गिरफ्तार कर रहे है?

कहने को तो उसने कह दिया, पर उसे डर यही हो रहा था कि गुलदान बेचते वक्त किसीने सराफे मे देख लिया, और अब आफत का यह पहाड टूट पडा। व्यर्थ मे उसने चालीसेक रुपये के गुलदानो का लोभ किया। इससे तो अच्छा था, किसी राजनैतिक मामले मे गिरफ्तार हो जाते। इज्जत तो बनी रहती, बोला—दारोगा-जी, मुझे आप नही पहचान रहे है?

पुलिस अफसर बोला—पहचान क्यो नही रहे है? बिना पहचाने ही गिरफ्तार कर लिया? बहुत दिनो से हम लोग आपके पीछे पडे है, पर आप हाथ आते नही थे। अब पक्का सबूत मिल गया।

सबूत के नाम से पुरन्दर भडक गया। गुलदानो के लोभ ने सर्वनाश कर दिया। न तो देशभक्तो मे ही रहे और न प्रेमिको मे। यह तो बिरादरी ही बदली जा रही

है। लोग कहेगे 'चोर' था। बोला—आप मुझे नही जानते ? मैं मत्रीजी के घर पर हू। उन्हीकी तरफ से सर्राफे मे गया था।

पुलिस अफसर आत्मविश्वास के साथ बोला—हम आपको खूब पहचानते है। फोटो भी अच्छी तरह मिला लिया है। आप श्रीकान्त शिशु है न ?

अब पुरन्दर की बाछे खिल गई, भय से व्यर्थ मे सिमटा जा रहा था। अब जान मे जान आई, भय दूर हुआ। बोला—अरे साहब, आप किस फेर मे पड गए ! मैं शिशु-विशु कोई नही हू, मै राघवेन्द्र हू।

पुलिस अफसर बोला—मै आप लोगो के हथकडो को खूब जानता हू। मुझे कोई नया न समझिए। आप तो अब जाने क्या-क्या बताएगे, पर चलिए थाने मे, वहा सब निपटारा हो जाएगा।—कहकर उसने पुलिसवालो को इशारा किया, और उन लोगो ने फौरन उसके हाथ मे हथकडिया डाल दी। रेशमी कुर्ता, इत्र, पान का बीडा, तम्बाकू की गोलिया, और ये हथकडिया ! फिर भी वह निरुत्साह नही हुआ। शिशु के धोखे मे वह गिरफ्तार हुआ है, छूट तो जाएगा ही।

कही वह भागने की चेष्टा न करे, इसलिए उसके एक कधे से होते हुए जनेऊ की तरह एक चमडे का पट्टा भी डाल दिया गया। पुरन्दर ने एक बार वसुधा के घर की तरफ लोलुप दृष्टि से देखा, और बकरा जैसे कसाईखाने की तरफ जाता है, उस तरह से चुपचाप चलने लगा। वह समझ गया कि इन लोगो से तर्क-वितर्क करना अरण्य मे रोदन की तरह है। जो कुछ बातचीत हो, थाने मे ही हो। उसे विश्वास था कि वहा जाते ही दूध का दूध, और पानी का पान हो जाएगा।

उसे आशा थी कि थाने मे कोई ऐसा थानेदार मिलेगा, जो जान-पहचान का निकलेगा और उसे देखते ही कहेगा—अरे राघवेन्द्रजी, ये लोग आपको कहा पकड लाए ! छोडो जी, इन्हे फौरन छोड दो। ये शिशु नही है।

कितने ही थानेदार उसकी जान-पहचान के हो चुके थे, और उनके साथ उसकी आन्तरिकता 'आप' का नाला लाघकर तू-तडाक करने की सीमा तक पहुच गई थी। उसे आशा ही नही, विश्वास था कि ऐसा ही कोई थानेदार मिल जाएगा, तब हथकडी और पट्टा डालनेवाले इस अहमक पुलिस अफसर को एक हाथ लेने का मौका मिलेगा। पर वहा तो थानेदार ही नदारद था ! प्रतिवाद के बावजूद उसे थाने की हवालात मे बन्द कर दिया गया। उसके सयम का बाध अब टूट गया। वह नाराज़ होकर बोला—मैं कहता हू कि मैं शिशु नही हू। उस साले से मेरा

कोई ताल्लुक नही, फिर तुम लोगो ने मुझे हवालात मे क्यो बन्द कर दिया ?

जो सन्तरी पहरे पर था, उसने कहा—साहब, अगर आप वह फरार नही हैं, जिसके नाम पर आप गिरफ्तार हुए है, तो आप छोड दिए जाएगे। आप क्यो हल्ला कर रहे है ? ये आपको छोडनेवाले नही है।—कहकर आवाज़ धीमी करते हुए बोला—पूरे कसाई है !

छोडनेवाले नही है, सुनकर वह आगबबूला हो गया। बोला—काग्रेस मन्त्रि-मडल के जाते ही तुम लोगो ने अधेरखाता शुरू कर दिया। बुलाओ, कौन है तुम्हारा थानेदार, मैं उससे बात करूगा क्या मुझे कोई ऐरा-गैरा समझ रखा है ?

पर सन्तरी ने इसका कोई उत्तर देना उचित नही समझा। वह बन्दूक लेकर पहले की तरह टहलने लगा, और कभी व्यग्य-भरी दृष्टि से पुरन्दर को, और कभी अगाध विश्वास के साथ सीखचो के बाहर लगे हुए ताले को देखने लगा। पुरन्दर कहता जा रहा था—मुझे गौसखा इन्स्पेक्टर जानते है, तारासिह डिप्टी सुपरिंटेडेंट जानते है, और यह अधेर हो रहा है कि तुम लोगो ने एक बदनाम क्रातिकारी के एवज़ मे मुझे बन्द कर रखा है।

सन्तरी अपनी सात साल की सर्विस मे बहुत तरह के हवालातियो को देख चुका था। सबसे खराब वे हवालाती होते है, जो चुप्पी साधकर सीखचो के अन्दर बैठ जाते है, या पीछे के जगले से आकाश की तरफ टुकुर-टुकुर देखते रहते हैं। इनके साथ समय नही कटता है। ऐसे लोगो के मुकाबले मे वे हवालाती कही अच्छे होते है, जो कुछ बकते-झकते रहते हैं। इनकी बाते सुनकर तथा इनसे बाते कर पहरा बहुत जल्दी खत्म हो जाता है।

यह आदमी पढा-लिखा है, सफेदपोश है, पर यह जो कुछ कह रहा है, वह बहुत अजीब है। ऐसा तो नही कि कभी कोई गलत आदमी पकडा नही जाता, है, पर इसमे घबडाने की क्या बात है ? उसे लगा कि यह तो ब्रिटिश साम्राज्य के मूल सिद्धान्तो को ही चुनौती दे रहा है, और उसके एक अदने प्रतिनिधि के नाते उसका यह कर्तव्य है कि वह ताल ठोककर मैदान मे आ जाए। वह सारी बाते सुन चुका था। बोला—साहब, आप जब शिशु नही है, तो आप उनकी गली मे क्या कर रहे थे ?

पुरन्दर को बडा क्रोध आया। बोला—इसके माने यह हुए कि जितने भी लोग

वहा होकर आते-जाते है, पान खाते है, चाहे वे हजारो की तादाद मे हो, वे सबके सब शिशु हो गए ? यही अक्ल लेकर तुम लोग क्रान्तिकारियो से लोहा लेने चले हो ? म कुछ नही सुनता, तुम फौरन थानेदार को बुलाओ !

सन्तरी ने देखा मनबहलाव की जगह और ही गुल खिलना चाहता है। वह कछुए की तरह फिर अपनी खोल मे प्रविष्ट हो गया और फिर से टहलने लगा। सीखचो के सामने से गुजरते हुए रुखाई से बोला—साहब, मैं जगह छोडकर नही जा सकता, हुक्म नही है।—कहकर वह फिर टहलने लगा, एक लौहमय यन्त्र की तरह, जिसमे प्राणतत्त्व का नितान्त अभाव हो।

पुरन्दर ने देखा कि रात हो रही है, और कही थानेदार साहब रात को नही आए और सही परिचय नही मालूम हुआ तो रात-भर हवालात मे सडे बिना नही बचेगे। अब तक आवेश के कारण उसे किसी प्रकार की कुछ बू आदि मालूम नही हुई थी, पर अब उसे लगा कि यहा पेशाब की और शायद टट्टी की बहुत तेज बदबू आ रही है, और उसके साथ-साथ इस कोठरी के अन्दर तरह-तरह के अप्रिय, भोडे और दुश्चरित्र लोगो के पसीने और सास की हीक आ रही है। उसे स्मरण हो आया कि कहा तो वह सूटकेस और बिस्तरा बाधकर आया था, और वसुधा को लेकर किसी पहाडी इलाके की तरफ यात्रा करनेवाला था और कहा हवालात की यह मक्खियो से भिनभिनाती बदबूवाली कोठरी मे जकड गया।

इसी समय एक मच्छर उसके मुह पर आ बैठा और उसने काट खाया। लगा कि उसने अपना डक मज्जा तक पहुचा दिया। उसने मच्छर को मारने के इरादे से बडे ज़ोर से एक थप्पड अपने मुह पर मारा , फिर हथेली देखी कि मच्छर नही मरा, और ऊपर से यह थप्पड खाने को मिला जिसे शायद सन्तरी ने भी देख लिया, तो उसे बहुत गुस्सा आया। वह सीखचो के पास आकर चिल्लाकर बोला—थाने-दार को बुलाते हो कि नही ? मैं अभी सीखचो पर सिर दे मारता हू।—कहकर वह पागल की तरह दौडकर कोठरी की दीवार तक गया, जैसे दौडकर सीखचो से सिर टकराने को उद्यत ही हो। सन्तरी फौरन सीखचो के पास आया और उसने एक हाथ सीखचो के भीतर डाल कर मानो उसे रोकने का कोशिश करते हुए बोला—देखिए, मैं कोशिश करता हू। आप कोई गलत कदम न उठाए, नही तो बहुत ही मुश्किल हो जाएगी। कम-से-कम मुझ गरीब पर रहम खाइए ! मेरी ड्यूटी मे खुदकशी न कीजिए • !

पुरन्दर खुदकशी के नाम से सम्भल गया और वह सीखचो के पास आकर बोला—तो जल्दी से बुलाओ। यहा बदबू आ रही है। मैं इसमे एक घण्टा भी रहने के लिए तैयार नही हू।

यह शायद उसने इसलिए कहा कि एक घटे से पहले भला क्या छूटेंगे। खैरियत यह हुई कि उसी समय एक दूसरा सिपाही उधर से आया, तो सन्तरी ने उसे अलग बुलाकर सारी परिस्थिति समझा दी। सुनकर वह सिपाही पुरन्दर को घूरकर, मानो वह कोई गैंडा हो, चला गया।

थाने की घडी मे टन्-टन् करके सात बजे। इसके बाद अद्धा भी बज गया। तब पुरन्दर की बेचैनी का पारा फिर चढ गया। वह चिल्लाकर बोला—तुम्हारा थानेदार आता क्यो नही ? क्या वह नौकरी करता है या फोकट मे काम करता है ? थानेदार को तो थाने मे रहना चाहिए !

सन्तरी ने प्रश्न का कोई उत्तर नही दिया, पर नम्रतापूर्वक बोला—साहब, मैंने तो आपके सामने ही आदमी भेज दिया। आठ बजे मेरा पहरा बदलेगा, उस वक्त मैं खुद थानेदार साहब के बगले पर जाऊगा और उनसे सारी बात कहूगा। आप चिन्ता न करे। मेरी एक जबान है।

सुनकर पुरन्दर को पक्का सन्देह हो गया कि यह तो पहरा बदलने पर चूतड झाडकर चल देगा और कुछ नही करेगा, इसलिए तैश मे आकर बोला—तुम तो चले जाओगे, और मैं इसी गन्द मे बन्द रह जाऊगा !

सन्तरी आश्वासन देते हुए बोला—साहब, एतबार पर ही सारी दुनिया कायम है। अगर आप मेरा एतबार न करे, तो मै क्या कर सकता हू !

पुरन्दर ने भी सोचकर देखा कि मै कुछ कर नही सकता, व्यर्थ मे सिर जगले से दे मारना ठीक न होगा, क्योकि जब मैं शिशु के धोखे मे गिरफ्तार हुआ हू, न कि गुलदानो की चोरी के मामले मे, तो मै देर-सवेर मे छूट ही जाऊगा। आखिर साला थानेदार रात्रि को एक दफे तो आएगा ही। तब छूट ही जाऊगा। वह इसी तरह सोच रहा था कि उधर कुछ आहट हुई। सन्तरी ने कहा—शायद आ गए। देखिए, कहकर वह तनकर टहल-टहलकर पहरा देने लगा।

पर लगभग उसी समय एक दूसरा व्यक्ति पकडकर लाया गया और वह भी इसी कोठरी मे बन्द कर दिया गया। जाने क्यो पुरन्दर को बहुत बुरा लगा। जब तक अकेला था इतना बुरा नही लगा था, पर एक चोर या उठाईगीर के साथ एक

इसे ताले, जगले, अडगडे ही पसन्द हैं। बडे-बडे लोग इसे समझाते रहे। बाहर इसे 'मुक्त बन्दी सहायक समिति' ने एक बार रोज़गार भी दिलाया, पर इसका जी ऊब गया और इसने एक दिन अपने मालिक से कहा—आप हमारे खिलाफ रिपोर्ट कर दे कि मैं कुछ चुराकर भाग गया। मेरा जी नही लगता।—मालिक ने इसे बहुत समझाया, पर नतीजा यह हुआ कि यह एक दिन सचमुच चादी के कुछ बर्तन लेकर भाग गया। जाकर उन्हे बेच भी लिया। खूब शराब पी, कोठे पर गया, पर वहा से भी कुछ चुराकर भाग रहा था कि भडुओ ने पकड लिया। यह उन दिनो की बात है, जब कानपुर मे भयकर दगा हुआ था और चमूपति आदि लोग जेल आए थे। चमूपतिजी ने भी इसे बहुत समझाया था।

उस हवालाती ने इन सारी बातो को उसी प्रकार से लिया जैसे मच पर बैठा हुआ नेता अपना परिचय सुनता है।

उसने पुरन्दर को करुण नेत्रो से देखते हुए कहा—अब तुम छूट जाओगे। मै अपने को शिशु बताऊगा। दो शिशु तो एकसाथ नही हो सकते, उसी तरह जैसे दो जगदीश नही हो सकते। 'दुइ जगदीश कहा ते आए ' ' सुना है न ? इसलिए तुम छूट जाओगे। मुझे ये लोग समझ रहे है कि मैं बलखण्डी दोबारा हू, पर नही, मै शिशु हू। आई ऐम शिशु ! आई ऐम चाइल्ड ' !

थाने की घडी मे टन्-टन् करके आठ बज गए और साथ ही दूसरा सन्तरी आ गया। उसने बन्दूक की गोली की पेटी सम्भाली। पहलेवाला सन्तरी पुरन्दर से बोला—मैं सीधे थानेदार साहब के यहा जा रहा हू। उन्हे भेजकर ही घर जाऊगा। आप चिन्ता न करे।

इसपर बलखण्डी ने कहा—हा-हा, पण्डतजी, आप यह भी कह दे कि असली शिशु पकडा गया और हवालात मे बन्द है। वह अपने कमरे मे अकेला रखना मागता है !—अन्तिम वाक्य को उसने साहबी ठाट से कहा।

सन्तरी बोला—चुप बे, बलखण्डी, तू तो हर दफे यही कहता है कि मै बल-खण्डी नही हू, कोई और हू। तू चोर है, शिशु क्रान्तिकारी है।

सन्तरी तो चला गया। पर बलखण्डी तुरन्त ही डरकर बोला—नही भाई, तुमने पहले क्यो नही बताया कि शिशु क्रान्तिकारी है ? मै चोर, उचक्का, गिरह-कट, सेंधमार ही सही, पर मै क्रान्तिकारी नही बनूगा। ना बाबा, उसमे बहुत सज़ा होती है। मैं तो समझता था कि तुम पढे-लिखे आदमी हो, किसी छोटे-मोटे मामले

मे आए होगे। तुम तो बडे गुरुघण्टाल निकले! एकदम रि-वो-ल्यू-श-न-री! अरे बाबा नही...!

पुरन्दर को बडी घृणा हुई और वह यन्त्रचालित की तरह पीछे हट गया, पर जाता कहा! छोटी-सी कोठरी थी। पुरन्दर को लगा कि पेशाब, पसीने और अपरिचित सासो की बू बहुत तेज़ हो गई है, जैसे उसके शरीर के हर रध्र मे यह तेज बू समा गई हो। वह कैसी-कैसी आशाए लेकर सूर्यकुमार के घर से चला था और यहा आकर रग मे भग हो गया। उसे कितनी निराशा हो रही थी। दिमाग बदबू मे फटा जा रहा था, तिसपर इस दोबारे का साथ!

एक बार तो इच्छा हुई कि अपना सारा क्रोध इसी बलखण्डी नामक व्यक्ति पर उतारे। बलखण्डी सूखा-सा दुबला-पतला आदमी था। व्यक्तित्व उसका नितात नीरस था, सिवा इसके कि उसकी आखे बडी चमकदार थी। बीच-बीच मे ऐसा लग रहा था कि हवालात की कोठरी के अर्ध-अधेरे मे उसकी आखे बिल्लियो या कुत्तो की आखो की तरह चमक रही है। इच्छा हुई कि ज़ोर से चिल्लाए। आखिर उसे डर किस बात का था! उसके साथ सरासर अन्याय हुआ था। जब वह शिशु था ही नही, तो उसे शिशु समझकर इस बदबूदार सीलन-भरी कोठरी में एक दोबारा अपराधी के साथ बन्द करने का किसीको क्या हक था? वह चिल्लाकर बोल उठा—सन्तरी, सन्तरी, इधर आओ!

टहलते हुए सन्तरी ने कुछ क्षण तक जैसे सोचा कि उसकी बात माननी चाहिए या नही, बोला—क्या बात है? आप चिल्लाते क्यो हैं?

पुरन्दर के कुछ कहने के पहले ही बलखण्डी बोला—मुझे बाबूजी कह रहे है कि तुम अपने को शिशु बताओ तो मै छूट जाऊ, पर मैं तैयार नही हू, इसीसे बाबूजी नाराज़ हो रहे हे।—कहकर वह टिप्पणी के रूप मे ठठाकर हसा।

पुरन्दर नाराज होकर बोला—क्यो बे, मैंने तुझे कब कहा कि अपने को शिशु बता? तू तो खुद ही बता रहा था।

बलखण्डी बेशर्मी से बोला—सिखाने से न बता रहा था? नही तो मैं न पढा, न लिखा, मूरख आदमी ठहरा। करिया अच्छर भैस बराबर! क्या खाकर क्रान्तिकारी बनूगा!

पुरन्दर उसका जवाब देने जा रहा था, पर जवाब देते हुए एकाएक ऐसा लगा कि सन्तरी दोनो के झगडे का आनन्द ले रहा था। इसलिए उसने बलखण्डी की

ओर से मुह फेरकर रुखाई के साथ सन्तरी से कहा—आप थानेदार साहब को बुलाए, नही तो मेरा जो जी चाहेगा, वही करूगा ।

वह अभी आगे कुछ कहता, पर पता नही क्या हुआ । बलखण्डी एकाएक बहुत जोर से रोने लगा और चिल्लाकर कहने लगा—अरे, मुझे बचाओ ! यह क्रान्तिकारी मुझे मारे डाल रहा है । स-त-री-जी, द-रो-गा-जी, दु-हा-ई ह ! इसके पास बम जरूर होगा ।

उसकी चीख-चिल्लपो सुनकर किसीने थाने के अन्दर सीटी बजा दी । फिर तो भयकर कुहराम ही मच गया । सब सिपाही, जो वर्दी मे थे, तो दौड ही पडे, जो सिपाही क्वार्टरो मे धोती-लुगी, जाघिया पहने हुए थे, वे भी हाथ मे लाठी, बैटन, जिसके जो कुछ लगा, लेकर दौड पडे और सब लोग ढूढते-ढाढते वही पहुचे । बलखण्डी ने जब अपने को सफल पाया, तो वह और जोर से चिल्लाने लगा—स-त री-जी, द-रो-गा-जी, दु-हा-ई है ! इसके पास ब-म्-म् है ।

थानेदार साहब भी दौड आए । सब ने उनके लिए जगह छोड दी । अभी तक बलखण्डी चिल्ला रहा था—स-त-री-जी, द-रो-गा-जी, दु-हा-ई है ! इसके पास ब-म्-म् है !

थानेदार लाखनसिह घुटा हुआ पुराना आदमी था । उसने आते ही पूछा—क्या कोई हवालाती भाग गया ?

जब सुना कि 'नही', तो वह एकदम आश्वस्त हो गया । वह दौडना छोडकर धीरे-धीरे पूछता-पाछता हवालात की कोठरी के सामने आया । सन्तरी ने सलाम किया और प्रश्नसूचक दृष्टि के उत्तर मे बोला—हुजूर, कोई बात नही है । मैं खडा ही था । यह दोबारा एकाएक चिल्लाने लगा । न इसको किसीने मारा, न कुछ कहा ।

लाखनसिह ने बलखण्डी से कहा—तुम क्यो चिल्ला रहे थे ? क्या तुम्हे मालूम नही है कि यह जुर्म है ? तुम तो नये नही हो जो कानून न जानो ।

बलखण्डी सीखचो के पास आया, तो देखा गया कि उसका मैला कुर्ता उसी प्रकार से फटा हुआ है जैसे भयकर गुत्थम-गुत्थे के बाद होता है । उसका चेहरा भी उत्तेजित था । बोला—हुजूर मुझे सौ जूते मारिए, पर मुझे इस क्रान्तिकारी के साथ बन्द न कीजिए । इसके पास बम है । इन्होने मुझसे कहा कि तुम अपना नाम शिशु बताओ, और मैं अपना नाम बलखण्डी बताऊगा । मेरा तो, हुजूर, जेल मे ही

घर है, इसलिए मैंने कहा कि जो इतने से किसीका भला होता है, तो मुझे क्या लेना-देना है! पर जब मुझे यह मालूम हुआ कि शिशु एक खतरनाक क्रान्तिकारी का नाम है, तब मैंने कहा—'मैं बलखण्डी ही रहूगा।' तब उन्होने मुझे मारा-पीटा और बम से मारने का डर दिखाया। यह देखिए, सारे कपडे फाड दिए। मैं गरीब आदमी, अब क्या करूगा! जाडा कैसे कटेगा!

लाखनसिंह ने ड्यूटीवाले सन्तरी की ओर प्रश्नसूचक, साथ ही रूखी दृष्टि से देखा तो सन्तरी बोला—साहब, सारी बाते झूठी है। कोई भी बात नही हुई, इसने खुद कुर्ता फाडा है। कुर्ता यो ही फटा था।

बलखण्डी फौरन बोला—हुजूर, अब सच्ची बात बतानी पड रही है?—कहकर उसने पुरन्दर की तरफ इशारा करते हुए कहा—ये बडी देर तक सन्तरी से गुपचुप बातचीत करते रहे। मैंने इतना ही सुना कि कुछ भागने भूगने की बात-चीत हो रही है। मैंने सोचा कि कही ये लोग मुझसे भी भागने के लिए न कहे। मैं चोरी-चमारी भले ही करू, पर हवालात से भागने की बात मै कभी नही सोच सकता। मैं सब कानून जानता हू।

लाखनसिंह बिल्कुल समझ नही पाया कि इसमे कितना सत्य और कितना झूठ है। उसने पुरन्दर से पूछा—सुना, तुम मुझे बुला रहे थे?

पुरन्दर को बहुत खराब लगा कि वह मत्रीजी का खास आदमी, और उसे एक टुच्चा थानेदार 'तुम' करके सीखचो के बाहर से सम्बोधित कर रहा है। वह बदबू-दार सीलन भरी कालकोठरी मे एक चोर के साथ बद है और थानेदार उसे हेच कौडी-मात्र समझ रहा है। पर वह सहजात बुद्धि से समझ गया कि इस समय रोब दिखाने का मौका नही है। बोला—मैंने इसलिए आपको बुलाया था कि मैं श्रीकात शिशु के धोखे मे गिरफ्तार किया गया हू, पर मैं कतई वह व्यक्ति नही हू। मेरा नाम राघवेन्द्र है। कविता मे मैं अपना नाम पुरन्दर रखता हूं।

लाखनसिंह ने पुरन्दर उर्फ राघवेन्द्र उर्फ शिशु को सिर से पैर तक ध्यान से देखा। इतना तो समझ मे आ गया कि बलखण्डी के साथ इस व्यक्ति को रात के समय रखना ठीक नही होगा। सम्भव है कि बलखण्डी ने जो कुछ कहा हो, वह सारी बातें झूठी हो, पर वह क्रान्तिकारी नाम से डर गया है, इसलिए रात-भर हल्ला मचाएगा। बोला—मैं दफ्तर मे जाकर कागजात देखता हू।

लाखनसिंह चला गया। थोडी ही देर मे ताला खोलकर पुरन्दर को निकाला

गया और हथकडी डालकर लाखनसिंह के सामने पेश किया गया। लाखनसिंह कुछ कागजात और उनके साथ नत्थी फोटो देख रखा था। बोला—यह देखिए, आपका फोटो।

इस बीच वह तुमसे आप हो चुका था। यह देखकर पुरन्दर को कुछ इत्मीनान हुआ, पर साथ ही फोटो हाथ मे लेकर वह सन्न-सा रह गया। अरे, पुलिसवालो के पास यह फोटो भी मौजूद है! इस फोटो मे शिशु और वे एकसाथ बैठे हुए थे।

लाखनसिंह ने इनमे से उसे दिखाते हुए कहा—देखिए, यह आप है, आप हैं कि नही?

—जी हा, मैं हू।

—नीचे देखिए क्या लिखा है।

पुरन्दर ने पढा—श्रीकान्त शिशु और पुरन्दर स्कूल मास्टर षड्यन्त्रकारी।
—लाखनसिह ने कहा—अब तो आप नही कहेगे कि आप शिशु नही है? माफ कीजिएगा, जब कोई क्रान्तिकारी गिरफ्तार किया जाता है, तो वह यही कहता है कि मैं फलाना नही हू।

पुरन्दर अभी सुन चुका था कि बलखण्डी भी ऐसा करता है। उसको ऐसा लगा कि पैरो के नीचे से धरती खिसक रही है। उसे भय हुआ कि थाने के इस वातावरण मे बधा कही वह स्वय भी यह न भूल जाए कि वह शिशु नही पुरन्दर है। बोला—मैं कब कह रहा हू कि मैं इस फोटो मे नही हू, पर मेरे साथ जो बैठे है, वे शिशु है न कि मै।

—जी हा, यही प्रपच है! वे पकडे जाते तो वे अपने को पुरन्दर बताते और कहते कि मैं गलत आदमी हू।

लाखनसिह ने मुशीजी को, जो जल्दी-जल्दी कुछ खानापूरी कर रहे थे, इशारा किया और वे तेजी से उर्दू मे कुछ लिखने लगे।

पुरन्दर को बडा अटपटा लगा और अब तक उसे भय नही था पर अब उसे भय भी होने लगा। बोला—साहब, मैं एक नही, सौ गवाहिया दिला सकता हू कि मैं शिशु नही हू, पुरन्दर हू। पर मैंने स्कूल मास्टरी बहुत दिन पहले छोड दी। अब मैं पार्लियामेटरी सेक्रेटरी सूर्यकुमारजी के पोलिटिकल पी० ए० के रूप मे रहता था। उनका प्रोपेगैंडा करता था।

लाखनसिंह ने आश्वासन देते हुए कहा—आप डरते क्यो है! आपपर कोई

मुकदमा नही चलेगा। शायद आप नजरबन्द कर लिए जाए।—कहकर उसने एकाएक गीयर बदलते हुए पूछा—जो आप शिशु नही है, तो वहा उस गली मे आप क्या कर रहे थे ?

पुरन्दर बताना तो नही चाहता था, पर जब उसने देखा कि बिना सारी बात बताए छुटकारा नही है, तो वह बोला—देखिए साहब, मै कभी क्रान्तिकारी नही रहा। मैं शिशु की सुन्दरी स्त्री पर आसक्त था, इसीलिए क्रान्ति की बाते करता था। जब वह भद्रसेन पर हमले वाले मामले मे गिरफ्तार हो गया और उसे सजा हो गई ··

—आपको तो '११०' मे सजा हुई थी। भद्रसेन वाले मामले मे कहा हुई थी !

पुरन्दर का हृदय धक से हो गया। उसने देखा कि कुछ कहना-सुनना व्यर्थ है, फिर भी अन्तिम प्रयास के रूप मे तिनके का सहारा लेते हुए बोला—शिशु को जब सजा हो गई तो मैने उसकी पत्नी को रख लिया। इसके बाद जब वह लौटा, तो उसने अपनी पत्नी वापस ले ली। अब जब कि वह फरार हो गया है, तो मैं फिर उसकी पत्नी पर कब्ज़ा करने जा रहा था कि आपके सिपाहियो ने मुझे गिरफ्तार कर लिया।

पुरन्दर ने एक साम मे यह सारी बात इस आशा से कह डाली कि शायद निश्च्छल सत्य से स्वय ही ऐसी ज्योति छिटकेगी कि उसके सामने मिथ्या सन्देह का सारा अन्धकार छट जाएगा और लाखनसिंह के मन मे दया का नही तो न्याय का अकुर फूटेगा, पर वह तो एकदम से नाराज हो गया। बोला—तब तो तुम बड़े बदमाश हो, विश्वासघातक हो। चलिए मुशीजी, जल्दी से इन्हे रेज़ीडेण्ट मजिस्ट्रेट के सामने पेश करके जेलखाने भेज दीजिए।

पुरन्दर समझ गया कि वह लडाई हार चुका है। थानेदार क्रान्ति और देशभक्ति का विरोधी हो, यह तो समझ आता है, पर यह एकाएक बडा भारी नीतिवादी बन गया, जबकि खूब घूसखोरी करता होगा, जैसाकि इसके तोदियल चेहरे से ज्ञात होता है। यह बहुत ही आश्चर्य की बात रही, फिर भी जो व्यक्ति धीरे-धीरे रस्सी के सहारे कुए के अन्दर डाला जा रहा है, उसकी ही तरह अन्तिम प्रार्थना के रूप मे बोला—साहब, मैं जो कुछ भी हू, बदमाश हू, बदकार हू, पर मैं शिशु तो नही हू। आप मुझे क्यो जेल भेज रहे है ?

लाखनसिंह एकदम से खडा होकर बोला—इस वक्त बडी कडी हिदायते है। दूसरे वक्तो मे हम और तरीके पर चलते थे, अब हम और तरीके पर चल रहे है।

हम एक खूख्वार दुश्मन से भयकर लडाई कर रहे है। देखिए मेरी पच्चीस साल की सर्विस हो गई। अगर जर्मन आए तो मेरी क्या हालत होगी ? सोचिए। इसलिए हम कोई जोखिम उठाने को तैयार नही है। आप शिशु है, तब तो ठीक ही है, अगर नही भी हैं, तो जो कुछ आपने माना, उससे तो आप बहुत खतरनाक आदमी है। आप जैसो का जेल से बाहर रहना लडाई के लिए खतरनाक है। नजरबन्द रहेगे तो आप मुझसे और लाखो हिन्दुस्तानियो से अच्छे रहेगे। मुशीजी, जल्दी से इन्हे मजिस्ट्रेट के सामने पेश कराकर जेल भेज दीजिए।

कहकर वह उत्तर की प्रतीक्षा किए बिना उठ गया और दो सिपाहियो ने आकर उसके कन्धे पर से जनेऊ की तरह चमडे का पट्टा डाल दिया। हथकडिया तो पहले से ही पडी थी, जो हवालात की कोठरी से निकालते वक्त लगाई गई थी।

१५

जब से काग्रेसी मन्त्रिमण्डलो ने त्यागपत्र दिया था, तब से जयराम बहुत खुश था, क्योकि वह यह समझता था कि मन्त्रिमण्डलो से काग्रेस के हट जाने से, वर्णाश्रम-धर्म पर सरकारी सतह पर अछूतोद्धार का जो भयकर जबडातोड पहाड टूट-सा पडा था, वह टल गया। अब कम से कम कानून बनाकर अथवा सरकारी दबाव डालकर कथित समाज-सुधार का कोई कार्यक्रम लादा नही जाएगा। रहा निजी तौर पर कुछ करने की बात, सो काग्रेस के बहुत प्रभावशाली होने पर भी, इस समय काग्रेसियो की जान के लाले पडे हुए है, अतएव काग्रेसी मन्त्रौषधिरुद्धवीर्य सर्प की तरह कुछ नही कर पाएगे, बल्कि सम्भव है कि इस बीच उन्होने सरकारी शक्ति का दुरुपयोग कर जिन मन्दिरो को अछूतो के प्रवेश के द्वारा अपवित्र किया था तथा कुल मिलाकर जो एक अधार्मिक धारा चालू कर दी थी वह उलटी तरफ बहने लगे।

फिर भी उसके मन मे एक खटका यह लगा था कि काग्रेस मन्त्रिमण्डल तो गए, पर मुस्लिमलीगी मन्त्रिमण्डल जहा जहा थे, चालू है, और वे युद्ध-प्रयास मे बराबर मदद दे रहे है। अवश्य बीच-बीच मे मुहम्मदअली जिन्ना कुछ-न-कुछ ऐसी बात कह देते थे, जिससे यह भनक निकलती थी कि लीग केवल खानबहादुरो और खानसाहबो यानी जीहुजूरो की जमायत नही है। जिन्ना को हर समय यही

भय लगा रहता था कि कही सरकार काग्रेस से कोई समझौता न कर ले, और जब भी उन्हे यह लगता था कि शायद भीतर-भीतर कोई अण्डा सेया जा रहा है, तो वे उसके विरुद्ध अन्दाज़ से तीरन्दाज़ी करते रहते थे। उनका कुछ ऐसा विचार था कि तीर लगे तो तीन, नही तो तुक्का है। जयराम भी जिन्ना से उस हद तक सहमत था कि काग्रेस को हिन्दुओ के पक्ष से बोलने का कोई अधिकार नही है, पर वह लीग के हथकण्डो से भी कुछ-कुछ चौकन्ना रहने लगा था।

जयराम स्वप्न मे भी यह नही चाहता था कि पठानो या मुगलो का राज्य लौट आए। वह तो अग्रेज़ो से ही खुश था। पर इन दिनो उन्होने जो काग्रेस को अधिकाधिक अधिकार सौपना शुरू कर दिया था, विशेषकर धार्मिक मामलो मे हस्तक्षेप करने की प्रवृत्ति को बढावा दिया था, वह उससे मर्माहत था। असल मे जयराम को राजनीति से कुछ लेना-देना नही था, वह तो साफ कहता था कि राजनीति के लोग न तो धर्म मे हस्तक्षेप करे, और न धर्म के लोग राजनीति मे हस्तक्षेप करें। उसके निकट जीवन के इन दो प्रकोष्ठो के दरवाजे भले ही एक दूसरे से मिले हुए हो, पर उनके बीच एक दीवार थी, जिसके अस्तित्व को अस्वीकार करना दोनो मे से किसीके लिए भी लाभजनक नही था।

पर लीगी धर्म को राजनीति मे घसीट रहे थे। उनका घसीटना फिर भी उस प्रकार से आपत्तिजनक नही था, जैसे गाधीजी का धर्म मे हस्तक्षेप था। जिन्ना धर्म और राजनीति का जो काकटेल तैयार कर रहे थे, वह भारत मे इस्लाम के लिए घातक होने के बजाय उसका पोषक था। कोई यह तो नही कहता था कि किसीको आखिरी पैगम्बर करके मानने की धारणा ही कूडमगज़ी का परिचय देती है, और न कोई यही कहता फिर रहा था कि सैयद, मुगल, पठान, शेख—इनमे शादी-ब्याह के मामले मे जो जाति-भेद है, उसे मिटा दिया जाए। वहा तो मुस्लिम स्वार्थो की बग्घी मे धर्म और राजनीति को घोडो के रूप मे बडे कौशल के साथ जोता जा रहा था। इसके विपरीत गाधी तथा अपने को क्रान्तिकारी बतानेवाले दूसरे लोग बिना समझे-बूझे युगो से चली आई हुई ऋषि-मुनियो की परम्परा को बिगाडने पर और हिन्दुओ को भी एक प्रकार का ईसाई बनाने पर तुले थे।

मुस्लिमलीग की इसी श्रेष्ठता के कारण जयराम को और भी खटका लगा था कि मुसलमान तो अपने पैगम्बर के समय से बराबर नई-नई विजय प्राप्त करते जा रहे है, यद्यपि जिन्ना स्वय न दाढी रखता है, न नमाज पढता है, फिर भी वह

दाढी रखनेवाले नमाजियो और कट्टर मुसलमानो को तथा उनकी विचारधारा को बल पहुचा रहा है। जयराम अपने मित्रो से इन्ही बातो का जिक्र किया करता था। पर कोई परिणाम निकलते हुए दिखाई नही पडता था। हिटलर भी पता नही क्यो धीरे-धीरे सारे काम कर रहा था। पोलैण्ड को जीतने के बाद उसका जोश ठण्डा पड गया था। ऐसा लगता था कि आर्यत्व के नाते उससे जो आशाए थी, वे अब बहुत कुछ धुधली होती जा रही थी।

इतने मे जिन्ना ने यह नारा दिया कि २२ दिसम्बर शुक्रवार का दिन योमे-नजात के रूप मे यानी मुक्ति-दिवस के रूप मे मनाया जाए। जयराम के मन मे खटका था, वह अब भयकर चिन्ता के रूप मे परिणत हो गया—तो क्या मुसलमानो और अग्रेजो का गठबन्धन कुछ रग लाने जा रहा है? काग्रेस तो अभी यही पूछते समय नष्ट कर रही है कि ब्रिटिश सरकार के युद्ध-सम्बन्धी उद्देश्य क्या है! और इधर पता नही अन्धेरे मे क्या खिचडी पक रही है। वह पुराने मित्रो से तो बिलकुल निराश हो चुका था। स्वामी लालनाथ एक धूमकेतु की तरह चमककर पता नही आकाश के किस कोण मे विलीन हो गए थे। अपने सगी-साथी, सभी मार्ग मे बैठ गए थे। यहा तक कि जिससे वडी आशाए बधी थी, वह हिटलर भी पता नहीं किस उधेडबुन मे पडा हुआ था। जब वह इतना धीरे-धीरे चल रहा था, तो भारत पहुचते-पहुचते तो न जाने कितने साल लग जाएगे। इस दु ख मे भी जयराम को यह याद करके हसी आई कि 'कौन जिएगा तेरे जुल्फ के सर होने तक ?'

वह योमे-नजात के विषय मे जितनी ही अधिक जानकारी प्राप्त करने लगा, उसे उतनी ही अधिक निराशा हुई। पर उसने अपने मन को समझाया कि यदि लीग के लिए मुक्ति-दिवस है, तो मेरे लिए भी तो मुक्ति-दिवस है। क्योकि मैं मन्दिर मे बैठकर रोज यही मनाया करता था कि हे भगवान, किसी प्रकार इन काग्रेसियो से छुटकारा हो, जो देश को गारत करने पर तुले है।

असली हिन्दुओ के लिए तो मुक्ति-दिवस था, पर वही घटना लीग के लिए भी मुक्ति-दिवस हो, यह बात एक हद तक जयराम की समझ मे नही आई, और जब निर्दिष्ट तारीख को उसने देखा कि एक नही, दो नही, तीन नही, बल्कि हजारो की सख्या मे मुसलमान ईद के दिन की तरह सजकर ईद से कही अधिक जोश के साथ मस्जिदो मे जा रहे हैं, जगह-जगह मुसलमानो के प्याऊ खुल गए है, जिनपर रग-बिरगी झण्डिया लगी है, लोग पान खाए हुए है और इत्र की महक आ रही

है, उसे लगा कि कोई ऐसी बात हो रही है, जो होनी नही चाहिए, पर वह कौन-सी बात थी, यह उसकी समझ मे नही आया।

उसने दिन-भर खाना नही खाया और सध्या समय एक हद तक भेप बदलकर वह लीग की उस सभा मे जा पहुचा जो काग्रेस के जुल्म, दमन और अन्याय से मुक्ति के उपलक्ष्य मे हो रही थी।

वह चुपचाप सभा के अन्दर बैठ गया। उसने अपनी सारी जिन्दगी मे कभी ऐसा नही किया था। वह तो हिन्दुओ की कथित नीच जाति से बचता था। मुसलमानो मे सटकर बैठना तो उसके लिए अकल्पनीय था, पर आज वह स्वय इस सभा मे मौजूद था।

वह जानना चाहता था कि मामला क्या है, कहा तक उसके मन मे जो खटका उठा है, वह उचित है, और कहा तक अनुचित। उसने देखा कि पडाल पर बडी-बडी सफेद दाढियोवाले कई मौलाना, खसखसी दाढी और चमकदार आखोवाले युवक तथा एक स्त्री भी मौजूद थी। इस सभा मे भी स्त्रियो की सख्या काफी थी, पर उनके लिए अलग प्रबन्ध था। मर्दो और स्त्रियो के बीच पर्दा पडा हुआ था। बार-बार उसकी आखे पडाल पर बैठी हुई उस अकेली स्त्री पर जा रही थी। दूर से वह उसे कौमुदी की तरह एकाध बार लगी, पर जब ध्यान से देखा तो वह कौमुदी नही थी, फिर भी कौमुदी से उसका चेहरा कुछ-कुछ मिलता था, इसमे कोई सन्देह नही था। क्या यह सम्भव है कि यह कौमुदी ही हो ? उसे देखे हुए कई साल, लगता था कि एक युग हो गया। इस बीच वह बदल गई हो तो ?

सोचते ही सारे राजनैतिक और धार्मिक विचार गायब हो गए और वह टकटकी बाधकर उस स्त्री को देखने लगा। यह तो प्रत्यक्ष की बात है कि वह अपने पति के साथ कानपुर आई थी और उसने उसे मकान के लिए कहा भी था, सम्भव है उसे मुसलमान भगा ले आए हो और उसके पति को मार डाला हो। एक क्षण के अन्दर ही ये सारे विचार उसके मन मे कौंध गए, पर उसने ध्यान से देखा तो लगा कि नही ऐसा नही हो सकता, फिर भी उसका मन बिना कारण दुखी हो गया, बोझिल तो वह पहले ही से था।

इस समय एक दाढीवाले मौलाना बडे जोश के साथ कुरान की आयतो की आवृत्ति कर रहे थे। न तो उसे कुछ समझ मे आ रहा था, न उसके इर्द-गिर्द बैठे लोगो की कुछ समझ मे आ रहा था, पर सब लोग बडे प्रेम के साथ उसकी ओज-

मयी आवृत्ति सुन रहे थे। जयराम को भी एकाग्र तन्मयता का दिखावा तो करना ही पडा, नहीं तो उसके लिए खतरा था, इसे वह अच्छी तरह समझता था। टोपी के अन्दर अपनी शिखा छिपा रखने पर भी किसी भी समय ज़रा भी सन्देह होते ही टोपी उतर सकती थी, टोपी के बाद धोती। उसके बाद खुफिया के रूप मे मृत्यु। लाश का कुछ पता ही नही लगता। मुक्ति-दिवस एक हिन्दू के रक्तस्नान से सार्थक हो जाना। वह चुप मारे बैठा रहा, आयते सुनता रहा।

मौलाना शायद पूरा सूरा ही सुना देना चाहते थे, पर दूसरे लोग भी अपनी-अपनी करामात दिखाने को व्याकुल थे, यह मोलाना अपने सामने पडाल पर एका-एक बढी हुई क्रियाशीलता से समझ गए और उन्होने जैसे-तैसे मनमारे होकर आवृत्ति समाप्त कर दी। उनका स्वर देर तक गूजता रहा। बैठ जाने के बाद लोगो ने उनका कोई नाम बताया, जिसके अन्त मे रहमान आता था, पर जय-राम ने इसे कोई महत्त्व नही दिया। उसकी देग मे तो और ही विचार सुगबुगा रहे थे।

इसके बाद एक और मौलाना उठे, जिहोने कुछ और आयते सुनाईं, पर वे जनता की स्थिति ताड गए थे, इस कारण बहुत सक्षेप मे ही आवृत्ति समाप्त करके चले गए। तब एक युवक, नही-नही, लगभग अधेड व्यक्ति उठा और उसने सारी परिस्थिति समझानी शुरू की। उसका वक्तव्य यह था कि आज मुसलमानाने-हिंद के लिए बडी खुशी का मौका है क्योंकि काग्रेस ने अपने मन्त्रिमण्डलो को इस्तीफा दिलवा दिया। गत दो-ढाई वर्षो से अक्लियत होने के नाते मुसलमानो पर वह जुल्म हुआ, वह जुल्म हुआ कि जिनकी मिसाल तवारीख मे नही मिल सकती। हर बहाने मुसलमानो को नीचा दिखाया गया, मुसलमानो के सामाजिक और धार्मिक जीवन मे हस्तक्षेप किया गया और उनके राजनैतिक और आर्थिक अधिकारो को पैरो तले रौंदा गया। लीग ने पीरपुर कमेटी के ज़रिये से काग्रेस मन्त्रिमण्डलो के विरुद्ध अपनी शिकायते सामने रखी, पर काग्रेस ने इसकी कोई सुनवाई नही की।[१] नतीजा यह कि जुल्मो-सितम बढता ही रहा, और अब तो हालत यह पहुच गुई थी कि या तो मुसलमान सबके सब हिन्दू बन जाते या वे मुल्क ही छोडकर चल

१ असल मे काग्रेस ने इन अभियोगों पर पूरी जाच की और राजेन्द्रप्रसाद ने यह चुनोती दी कि यदि स्पष्ट शिकायते लाई जाए तो निष्पक्ष ट्रिब्यूनल द्वारा जाच कराई जा सकती है।

देते। गाधी ने हमारे रहबर जिन्ना से योमे-नजात न मनाने के लिए सन्देश भेजा था, पर यह कैसे होता कि एक सताई हुई कौम अपनी नजात की खुशी न मनाती! •

इसी लहजे मे वक्ता, जिसके सम्बन्ध मे लोगो ने बताया कि वह कोई मशहूर बैरिस्टर है, बहुत देर तक बोलता रहा, और जहा भी वह यह कहता कि मुसलमान हिन्दू बनते-बनते रह गए, वहा ललकार के साथ गगनभेदी के रूप मे अल्लाहो-अकबर के नारे बुलन्द होते रहे। जयराम काग्रेस का इतना जबर्दस्त विरोधी था कि उसे इस अत्यन्त अपरिचित तथा एक हद तक अप्रिय वातावरण के बावजूद आरम्भ मे ऐसा लग रहा था कि काग्रेसियो ने न केवल हिन्दुओ के धर्म मे हस्तक्षेप किया है, बल्कि मुसलमानो के धर्म मे भी हस्तक्षेप किया है, पर जब उसके इर्द-गिर्द बार-बार अल्लाहो-अकबर के नारे उठने लगे, उसके मन मे कुछ भय का सचार हुआ और काग्रेस के प्रति द्वेष की ज्वाला कुछ धीमी पड गई। वह टकटकी बाधकर उस महिला की तरफ देखने लगा जो पडाल पर बैठी हुई थी। यदि यह कौमुदी होती, तो वह निश्चय ही उसका उद्धारक बनता। उसके पति को मारकर इसे मुसलमानिनी बना लिया गया, और अब इससे शायद कोई व्याख्यान दिलाया जाए। उसका मन ललकारकर कहने लगा, मैं इसका उद्धारक बनूगा। अवश्य बनूगा, चाहे कुछ हो जाए।

पर साथ ही उसे खटका हुआ—अरे, वर्णाश्रम के पवित्र और सनातन नियमो के अनुसार मैं इसका उद्धार कैसे कर सकता हू! मान लो इसपर मुसलमानो ने बलात्कार किया हो, जैसाकि उन लोगो ने अवश्य किया होगा, तो फिर उसका उद्धार कैसे हो सकता है? तो क्या, हे भगवान, वे ही लोग सही मार्ग पर है, जो छुआछूत, जात-पात मिटाने पर और सनातनधर्म को सुधारने पर तुले हुए है? यह कैसा भोडा विचार मेरे मन मे आ रहा है! यह शायद यहा बैठने का असर है। अरे!...

वक्ता एक-एक वाक्य तौलकर बोल रहा था और लीग के मुकदमे को इस तरह से एक-एक नुक्ता करके, जैसे एक-एक ईंट करके इमारत बनाई जाती है, तैयार कर रहा था कि श्रोताओ के हृदय मे उसकी जडे गहरी उतरती जाए। अब वह लीग की युद्ध-सम्बन्धी नीति के सम्बन्ध मे बोल रहा था कि हम बर्तानिया को मसीबत मे फसा देखकर उसका फायदा नही उठाना चाहते। हम पूरी तरह से

युद्ध-प्रयास मे मदद दे रहे है, और देंगे, पर यह बात साफ कर दें कि हम यह नही चाहते कि लडाई जीत ली जाए, तो हमे फिर बेहूदी अक्सरियत के भेडिये के हवाले कर दिया जाए। यह मुल्क हमारा है क्योकि हमने इसे तेगो-तलवार से जीता है। अग्रजो के बाद इसपर अगर किसीका हक है तो हमारा ही है। हमीसे उन्होने यह मुल्क लिया था, और अगर वे किसी तरह इस मुल्क को छोडना चाहते है, तो दयानतदारी का तकाजा है कि वे इसे हमे ही सौपकर जाए। और कुछ किया गया, तो हम उसे अपने खिलाफ कार्रवाई समझेंगे।

जयराम को व्याख्यानो मे कोई दिलचस्पी नही रह गई थी। इन सभीकी रेंक एक-सी थी। एक और वक्ता आया। उसने भी लगभग उन्ही बातो को दुहराया, जिन्हे पूर्ववक्ता ने कहा था, पर उसने अपनी जान मे एक महान जुल्म की बात और बताई, वह यह कि किसी काग्रेसी प्रान्त के एक गाव के स्कूल मे लडकों को चरखा चलाना भी सिखाया जाता था। वक्ता ने यह तो नही कहा कि इस प्रकार उनसे कोई अधार्मिक कृत्य करवाया गया, पर श्रोताओ पर यह असर पडा कि जैसे हरएक बच्चे को सुअर का गोश्त खिलाया गया है, और लोगो ने इस जुल्म का प्रतिवाद करने के लिए ललकार के साथ फिर एक बार अल्लाहो-अकबर के नारे लगाए।

जयराम ने देखा कि आस-पास के लोगो मे जोश बढता ही जा रहा है। उसके मन मे एक भय-सा होने लगा कि कही हम पहचान लिए गए तो! तो कौमुदी की तो इतनी ही दुर्गति हुई कि उसे मुसलमान बनाया गया, पर उसे जान से मार डाला जाएगा। जयराम ने इस समय तक यह निष्कर्ष निकाल लिया था कि यह कौमुदी नही है, और कोई हिन्दू स्त्री है, फिर भी इस स्त्री का वही इतिहास होगा, जिसकी उसने कल्पना की थी। भय तो बढा, कौतूहल ने भी ज़ोर मारा, और जानने की इच्छा हुई कि आगे क्या होता है।

वह वक्ता चर्खा-सम्बन्धी जुल्म और मस्जिद के सामने बाजा बजाने-सम्बन्धी महाजुल्म पर व्याख्यान देकर बैठ गया। तब लोगो ने चिल्लाकर कहा—सियामादेवी, सियामादेवी!

तब वही—न युवक, न अधेड बैरिस्टर फिर से उठा, और बोला—आपके सामने जो खातून बैठी हुई हैं, ये सियामादेवी नही है। हमने सियामादेवी को बुलाने की बहुत कोशिश की, जैसाकि आपने हमारे इश्तहारो मे देखा होगा, पर हम

उन्हे बुला नही सके क्योकि मोहतरिमा पहले ही से कही और के लिए वादा कर चुकी थी। पर जो खातून अब आपके सामने आएगी, वे कम जोशीली नही है। वे हैदराबाद दक्कन की है। वे अब आपके सामने तकरीर करेगी।

हैदराबाद दक्कन सुनते ही जयराम का कलेजा धक् से हुआ, तो क्या यह वही कौमुदी है? तो वह स्वप्न नही था? तो सचमुच वह मन्दिर मे आई थी, और उसने मकान मागा था, और फिर उसी बीच उसके पति को मारकर मुसलमानो ने उसे भगा लिया था, और अब तालीम देकर उससे व्याख्यान दिलवा रहे है? जयराम की इच्छा हुई कि वह अपने स्थान से दौडकर पडाल की ओर जाए और उस महिला से कहे—डरो मत कौमुदी, मै तुम्हारा उद्धार करूगा!

वह बैरिस्टर अब भी उस महिला का परिचय देने मे लगा हुआ था। बोला—इनका नाम तबस्सुम है, तबस्सुमजहा! ये भरतनाट्यम की तालीम भी पा चुकी हैं…।

अरे, तो इसमे तो कोई सन्देह नही कि यह कौमुदी ही होगी, क्योकि ऐसा तो कभी सुना नही गया कि किसी मुसलमान लडकी ने भरतनाट्यम की तालीम ली। जयराम को पहले मामूली सन्देह था, अब लगभग विश्वास हो गया कि यह वही है, और ईश्वर उसे इस सभा मे इसीलिए ले आए है कि दोनो का मिलन हो। पर साथ ही बहुत-से सन्देह थे। एक तो विधवा, तिसपर मुसलमानो के द्वारा बलात्कृता—ऐसी हालत मे वह उसे कैसे ग्रहण कर सकता है? इस प्रकार दो परस्पर-विरुद्ध आवेगो मे बधकर वह जहा का तहा बैठा रहा, पर उसका मन बहुत ही दुखी रहा।

यह व्यक्ति इतना बोल क्यो रहा है? इतना लम्बा परिचय क्यो दे रहा है, और परिचय कहा दे रहा है, यह तो अपनी ही तकरीर झाड रहा है। एक बार व्याख्यान दे चुका, फिर भी जी नही भरा, और अब व्यर्थ मे सबका समय नष्ट कर रहा है। उसे सामने आने देता, ताकि जल्दी से यह तय हो जाए कि यह है कौन! तबस्सुमजहा तो बिलकुल कृत्रिम नाम मालूम हो रहा है। नाम ही चिल्ला-चिल्लाकर बता रहा है कि असली बात छिपाई जा रही है। यो तो इस सभा मे खुल्लम-खुल्ला हिन्दुओ को धमकाया जा रहा है, और स्पष्ट शब्दो मे यह कहा जा रहा है कि अग्रेजो के बाद भारत मे फिर मुसलमानो का राज्य होना चाहिए। फिर भी कितने भी बेशर्म और बेगैरत हो, सभा मे यह तो नही कहा जा सकता कि इस

दक्षिणी स्त्री के पति को मारकर भगाया गया और इसे मुसलमान बना लिया गया। पहले-पहल कौमुदी ने कुछ प्रतिरोध किया होगा, पर समझ गई होगी कि कोई उसे लौटकर हिन्दू धर्म मे नही लेगा, अपने परिवार वाले भी उसका त्याग कर देंगे, इसीलिए वह वही करती रही, जो उससे कहा जाता रहा। हे भगवान, यह क्या देखना पड़ा!

वह आदमी अब भी अपनी मनहूस तकरीर जारी रखे था। कह रहा था— निज़ाम और दूसरे मुसलमान नवाबो, सरदारो और राजाओ को भी दिल खोलकर हमारी मदद करनी चाहिए, क्योकि हमारा राज्य होने पर उन्हीको सबसे ज्यादा फायदा है।

जयराम को लगा कि यह आदमी बहुत बेतुका और अप्रासगिक भाषण देने-वाला आदमी है। यह लडकी हैदराबाद की है, तो बस यह निज़ाम पर पहुच गया। बोलने का शौक भी एक मर्ज़ है। इतनी अपार जनता के सामने बोलने का एक नशा, एक सरूर होगा।

खैरियत यह है कि अब यह बैठ रहा है। वह महिला अब धीरे-धीरे माइक के सामने आकर खडी हुई। जयराम उसे आख फाड-फाडकर देख रहा था। कौमुदी इतने सालो मे अगर कुछ बदल गई है, कुछ लम्बी हो गई है, उसका शरीर कुछ भर गया है तो इसमे कोई आश्चर्य की बात नही है। यह बिलकुल स्वाभाविक है।

यदि सम्भव होता तो जयराम बिलकुल पास जाकर देखता कि यह कौन है, पर वह इतनी दूर था कि वह किसी निश्चित मत पर नही पहुच सका, फिर भी वह अपने सारे अस्तित्व को आखो मे एकत्रित करके टकटकी बाधकर उसकी तरफ देखता रहा। उसका मन न जाने कैसे तरल मधुर रस से आप्लुत हो चुका था, पर साथ ही बहुत-सी चिन्ताए थी।

मन एक बार तो कहता था कि यह कौमुदी ही साबित हो, साथ ही दूसरी बार कहता था, यह वह न हो, नही तो कितनी ही ऐसी समस्याए उठ खडी होगी, जिनका कोई समाधान सूझ नही रहा था। ऐसे सकट मे उसका प्राण फसा था कि शायद कुछ अभिव्यक्त हो गया, तो बगलवाले मुसलमान ने कहा—क्या आपकी तबियत कुछ खराब हो रही है?

वह एकदम से सभल गया।

सचमुच वह घबडाकर घुटनो के बल बैठा हुआ था, उठने को तैयार। बोला—

जी नही, एक पुराना दर्द है। दगे के जमाने मे लाठिया खाई थी।

कहने को तो उसने कह दिया, पर एकसाथ जब दस-बीस आखे उसकी तरफ उतनी ही तेज सर्चलाइटो की तरह उठी, तो वह समझ गया कि मैने गलती की। उसके सौभाग्य से उसी समय महिला ने अपना व्याख्यान शुरू किया और सब लोगो का ध्यान उस तरफ चला गया। फिर शायद इस मजमे मे जो लोग मौजूद थे, उनमे से हज़ारो ऐसे थे, जो लाठिया खाने के अतिरिक्त दगो मे अन्य उपलब्धियो का गर्व कर सकते थे।

वह महिला ज्योही बोली, त्योही जयराम समझ गया कि यह हर्गिज़ कौमुदी नही है। अब तो उसे अपने ऊपर आश्चर्य होने लगा कि कैसे उसने यह कल्पना कर ली थी कि यह कौमुदी है। कहा दक्षिण भारत और कहा कानपुर! फिर वह नैष्ठिक हिन्दू, और कहा यह मुसलमाननी! खैर, यह भी दक्षिण की है। निज़ाम की कृपा से उत्तर भारत के बहुत-से मुसलमान जाकर दक्षिण मे बसे है, उन्हीमे से यह होगी।

वह कह रही थी—आज मुसलमानाने-हिन्द के लिए बडी खुशी का दिन है। हमारे परचम का चाद और सितारा गहन से निकल गया इत्यादि-इत्यादि।

इतना कहना था कि बडे ज़ोरो से तालिया बजी। फिर तो उस महिला के हर वाक्य पर लोग तालिया बजाने लगे। जयराम कुछ सुन रहा था, कुछ नही सुन रहा था। कोई नई बात तो थी नही। उस बैरिस्टर ने जो बाते कही थीं, उन्हीकी पुनरावृत्ति हो रही थी। कौमुदी-सम्बन्धी चिन्ता, यानी उसके उद्धार करने की चिन्ता और ज़िम्मेदारी और शायद रोमास दूर हो चुका था। इस कारण अब वह फिर अपने मन की गहराइयो मे आधारभूत समस्याओ मे उतर गया। उसने गाधी को हिन्दू धर्म का शत्रु समझकर उन्हे मारने के लिए घर मे बम का कारखाना खोला था, दक्षिण भारत मे जाकर कौमुदी नाम की जोशीली तरुणी के हाथ मे छुरा देकर उसे गाधी को मारने के लिए भेजा था। एक पूरी टोली बनाई थी, पर क्या हुआ था! वह सफल नही हो पाया था। अब वह सोच रहा था कि क्या सफल होना अच्छा रहता। बहुत ही भारी सन्देह था—अपने विचारो तथा अपने मार्ग के सम्बन्ध मे—तो उसका सारा दृष्टिकोण ही गलत है?

फिर भगवान ने गीता मे यह क्यो कहा कि मैंने चार वर्णो की सृष्टि की? फिर सनातनधर्म वर्णाश्रमधर्म क्यो कहलाता है? शताब्दियो से छुआछूत का झडा

क्यो फहरा रहा है ? तो क्या कर्म और जन्मान्तरवाद का सिद्धान्त ही गलत है ? कर्म-सिद्धान्त यह अच्छी तरह व्याख्या कर देता है कि एक व्यक्ति धनी होकर क्यो पैदा होता है, और दूसरा इतना निर्धन क्यो होता है कि रोटी के लाले पडे होते है। एक को सारी सुविधाए मिलती है, दूसरे को कोई सुविधा नही मिलती। एक स्वस्थ और सुपुरुष होकर पैदा होता है, दूसरा कोढी और चिररोगी होता है। एक ब्राह्मण, और दूसरा अछूत होता है। यह कर्म के कारण है।

वह महिला इस समय कह रही थी—इस्लाम सब मजहबो से बढकर है, क्योकि इसमे सब बराबर है। हर जुमे को हम मस्जिद के अन्दर सोशलिज्म का सबक पढते है, क्योकि उस दिन शाह और गदा एकसाथ खडे होकर परवरदिगारे-आलम का सिजदा करते है। हमे इसके लिए मार्क्स और लेनिन से कुछ नही सीखना है, सलामत रहे हमारे हजूर अलहजरत सलैअल्ला अलैवसल्लम!—जयराम ने सुन लिया, और फिर उसके विचार सरकने लगे, और वह उनमे खो गया। कर्म-सिद्धान्त से बढकर बराबरी का सिद्धान्त कौन-सा है ? कर्म-सिद्धान्त किसीको न राजा मानता है, न किसीको रक। लोग तो राजा और रक अपने कर्मो के कारण ही बनते है। हर व्यक्ति को इस सिद्धान्त मे समान सुविधा प्राप्त है—कर्म करे और राजा बने। इस जन्म मे कर्म करो, और अगले जन्म मे उसका फल चखो। साधारण वृक्ष भी तो देरी से फल देते हैं।

नहीं, कर्म-सिद्धान्त मे कोई नुक्स नही था। नुक्स था हमारे कार्यक्रम मे। यदि सब लोग मुसलमान और ईसाई बनते चले गए, जैसाकि जब से ईसाई और मुसलमान इस देश मे आए हैं, क्रम चल गया है, तो फिर वर्णाश्रम धर्म चलेगा किसको लेकर ?

बडी कठिन समस्या है। शायद गाधी ने यही सब सोचकर । अरे, मै क्या सोचने लगा! बार-बार ये क्या विचार आ रहे है!

इसके बाद सभा मे क्या हुआ और क्या नही हुआ, इस तरफ जयराम ने विशेष ध्यान नही दिया। जब वह रात दस बजे अल्लाहो-अकबर के गगनभेदी नारो के घेरे से निकलकर सडक पर पहुचा, और बिलकुल अकेला हो गया, तो वह जयराम नही रह गया था, जो गाधी जी पर बम फेकने गया था। उसके मन मे बहुत-से सन्देहो के काटे छिदने लग गए थे। उसे लगा कि अब तक उसने जो कुछ सोचा, समझा और किया, सबमे कोई न कोई मौलिक गलती है। उसके मन मे कई शब्द एक के बाद एक तेजी के साथ बहते चले गए, जैसे नदी का पानी निकल जाता

है, फिर भी नदी रह जाती है, हर मिनट होनेवाले कायाकल्प और आमूलचूल परिवर्तन के बाद भी। स्वामी लालनाथ कौमुदी गाधी जिन्ना हिटलर और अब ये वक्ता खसखसी दाढीवाला युवक बैरिस्टर दाढीवाले मौलाना, जिनके चेहरो से सौम्य भव्य भावना छिटकने की बजाय लोभ की ललकार और लपट बरस रही थी। पता नही इस लपट मे क्या जल कर राख बन जाए, और क्या साबित बच जाए!

वह सडक पर ऐसे चलने लगा जैसे उसका कोई घर ही न हो। मन का घर तो रह ही नही गया था। मन से वह शरणार्थी हो गया था, ऐसा शरणार्थी जिसे अपने ही घर से घोर घृणा उत्पन्न हो गई हो, साथ ही जिसे बाहर की हवा काट रही हो। यदि हिटलर जल्दी आ जाता, तो सब समस्याओ का समाधान हो जाता, पर हिटलर ने पोलैण्ड मे जितनी तेजी दिखलाई, उसके बाद वह उतनी ही कच्छप-गति दिखला रहा था। अब क्या होगा?

वह अपने को एक ऐसे व्यक्ति की तरह अनुभव करने लगा जिसके घर मे आग लग गई हो, और जिसके हाथ मे छूछा घडा हो, और उसे भरने के लिए कोसो मे कही पानी का नाम न हो। वह दमकल बनने को तैयार था। अकेले प्राणी उसने क्या नही किया?

क्रान्तिकारियो के पास गया तो उन्होने बडा स्वागत किया कि नया रगरूट फसा है, पर जब उन्होने उसका उद्देश्य सुना, तो बम बनाना सिखाना तो दूर रहा, उन्होंने उसे अपने से दूध की मक्खी की तरह दूर निकालकर फेक दिया। किसीने भी यह नहीं कहा कि हम तुम्हारा बायकाट कर रहे है, पर किसीने पास फटकने नही दिया। कोढी की तरह उसे पास आते देखकर ही लगभग छलाग लगाकर, जैसा स्प्रिंग से ही सम्भव है, भागकर खडे होने लगे। फिर भी उसने आशा नही छोडी। सीने को लोहे के तारो से बाधकर फिर मार्ग पर चलना शुरू किया।—एकाकी यात्रा जैसी वह अब कर रहा है। पता लगाया—बदमाशो से, पटाखे बेचनेवालो से बमबनाने की प्रक्रिया सीखी, और सीखी ही नही, अपने बनाए बम से गाधी की हत्या का प्रयास किया। हत्या नही कर पाया, पर आस्था का तार तो अटूट रहा।

पर अब?

अब तो कुछ भी सूझ नही रहा था। घुप्प अधेरा था। भीतर और बाहर।

घर जाने की इच्छा नही हुई। क्यो, घर क्यो जाए? वही चख-चख! कोल्हू

के बैल की तरह बहुत ही सकीर्ण दायरे मे यशोदा का घूमना, सोचना, जीना और दूसरो पर भी दबाव डालना कि तुम ऐसा ही करो, और न करने पर तरह-तरह का सन्देह करना, उलाहना लगाना, गालिया देना !

ससार मे कैसी-कैसी घटनाए हो रही हैं। रातोरात राष्ट्रो के भाग्यो मे उलट-फेर हो रहे हैं, व्यक्ति जगल मे लगी हुई दावाग्नि के सामने पत्तो की तरह उड रहे है, जल रहे हैं, नाबूद हो रहे है। पर इनसे अपना कोल्हू नही छूटता !

उसने सामने देखा तो वह अलगू उर्फ चमूपति के घर के सामने खडा था। दरवाजे पर अर्ध अन्धकार मे भी दिखाई पडा, लिखा था—उमाशकर। यह चमूपति के बाप का नाम है। वह ठीक ही चमूपति के घर के सामने खडा है, पर क्यो खडा है ?

चमूपति उसका कौन है ? वह इसके पास क्यो आया ? दोनो के मत बिलकुल नही मिलते। एक उत्तरी ध्रुव की ओर जाता है, तो दूसरा दक्षिणी ध्रुव की ओर। फिर भी चमूपति जानदार तो है, साथ ही उसके साथ कुछ नौजवान भी होगे। यो तो अपने साथ भी कई थे, पर मायाराम जब से अलग हुआ, तब से अपनी टोली बिखर गई। एकाकी यात्रा सबको पसन्द नही आती, न सबके वश की बात है। सब हथेली पर सरसो जमाना, तुरन्त मुनाफा करना चाहते हैं।

उसने जोर से पुकारा—अलगू भाई अलगू भाई ·!··

लगता था घर मे लोग सो चुके थे। उमाशकर अपनी कूटनीति मे सफल रहा। कही लडका फिर झगडे बखेडे मे न फस जाए, इसलिए उसने उसकी शादी कर दी थी, और उस शादी का नतीजा जो होना था, सो हुआ था, उसकी भी टोली खत्म हो गई थी। असल मे उसकी टोली तभी खत्म हो गई, जब सिद्धनाथ ने, जैसाकि उसका कहना था, भग का गोला खाकर, पुलिस मे बयान दे दिया।

उसने जोर से पुकारा—अलगू भाई अलगू भाई ·!··

दरवाजा खुला और अलगू सामने दिखाई पडा। अलगू जयराम को सामने खडा देखकर एकदम से चौंक पड़ा, जैसे उसके सामने उसका पुराना जीवन आकर खडा हो गया था, जिसे वह बहुत पहले ही तलाक दे चुका था। अब वह नगर-पालिका मे एक अच्छे, यानी उम्र की दृष्टि से अच्छे पद पर था। न उसे राजनीति से मतलब रह गया था, न धर्म से। हा, वह जब-तब लोगो को उस युग की कहा-निया सुनाया करता था, जब वह चमूपति था और भूतकाल को भुनाकर भविष्य

को सुधारने-सवारने मे सलग्न था। बोला—अरे पण्डिजी, आप इतनी रात को कैसे ? मेरा अहोभाग्य !

चमूपति को जाने कैसे पता था कि जयराम बम आदि बनाता था और वह उस दल से सयुक्त था, जो समय-समय पर गाधी पर हमले किया करता है। फिर बोला—आप कैसे ? इतनी रात को ? मेरा अहोभाग्य !

सोचकर उसने फौरन जयराम को घर के अन्दर कर लिया कि बाहर कोई खडा हो, तो न देख पाए। वह उसे अपने कमरे मे ले गया जो कदाचित् उसके सोने का कमरा भी था। व्याख्या के तौर पर वह बोला—श्रीमतीजी मायके गई हुई हैं।

—बच्चे ?

—बच्चे अभी नही हैं।

जयराम ने व्यर्थ के शिष्टाचार मे समय नष्ट करना नही चाहा। वह एक साम मे इस बीच की सारी महत्त्वपूर्ण घटनाए, विशेषकर आज की सभा की बात सुना गया।

सारी बातें कुछ अतिरजित रूप मे सुनने के बाद भी चमूपति की आखो मे वह चमक नही दिखाई पडी, जिसकी जयराम को आशा थी। क्या विवाह करने से आदमी इतना बदल जाता है ? मेरा भी तो विवाह हो चुका, कई बच्चो का बाप भी हू, पर इस तरह बुझा हुआ बल्ब तो नही हो गया हू। बडी निराशा हुई, फिर भी बोला—बोलो भाई, अब क्या हो ?

चमूपति समझ गया कि उससे किस प्रकार की बातो की आशा की जा रही है। बोला—मैं तो अब इन बातो पर सोचता ही नही। इक्के-दुक्के प्रयास से कुछ हो नही सकता, और समस्या बहुत बडी है। देखिए, गणेशशकर विद्यार्थी इसी कानपुर मे शहीद हुए, उनके रक्त से यहा की भूमि रजित हुई, पर उससे किसी मुसलमान का हृदय परिवर्तन नही हुआ, कुछ रजिश ही बढी, और दिन-ब-दिन बढती जा रही है। सारे मुसलमान लीग के साथ है, दस-बीस हजार को छोडकर, और लीग सब तरह से एक प्रतिक्रियावादी सस्था है, जो मुस्लिम राज्य का स्वप्न देखा करती है। फिर क्या हो सकता है ! जब हो नही सकता, तो मैं ही क्यो फोकट में पिसता रहू ?

जयराम परिस्थिति तो समझ गया, फिर भी बोला—यही तो मैं तुमसे बात

करने आया हू । पुरानी बातें भुला दो । तुम मुझे बदला हुआ आदमी समझो । मैं उन दिनो क्या, आज सवेरे तक यह समझता था कि वर्णाश्रम-धर्म को बचाने के लिए छुआछूत को बचाना यानी जात-पात की पद्धति को बचाना बहुत ज़रूरी है, पर अब तो मैं देख रहा हू कि हिन्दू धर्म ही खतरे मे है । भाई मेरे, मैं भी शादीशुदा हू, रोटी मुझे भी कमानी पडती है, कुछ सोचो तो सही । यदि हम लोग सुधि नही लेगे, तो कौन सुधि लेगा ? हमे और कोई साथी नही दिखाई पडा, इसलिए मैं तुम्हारे पास आया ।

चमूपति जमुहाई लेते हुए बोला—रात बहुत हो गई है, और अब महायुद्ध भी छिड गया है । हम लोग इक्के-दुक्के क्या कर सकते हैं ! आप न हो कल आइए, फिर कुछ विचार करेगे ।

कहकर उसने, कम से कम जयराम को ऐसा ही लगा, दरवाज़े की तरफ एक कदम बढाया और एकसाथ एक के बाद एक तीन जमुहाइया ली, और फिर चुटकी से जमुहाई का जैसे विज्ञापन करते हुए बोला —कल मिलेंगे । आप कष्ट न करें, मैं ही आ जाऊगा ।

जयराम समझ गया कि उसने चमूपति के सम्बन्ध मे जो कुछ सुना था, वह सही है । शादी के बाद इसके विपदन्त झड गए हैं, और अब यह एक साधारण घरघुसू रोटीकमाऊ मिट्टीखोर केंचुआ बन गया है, जिसे यशोदा ऐसे लोग सद्-गृहस्थ कहते है । इससे कुछ नही होने का, यह तो साड का गोबर हो गया, जो केवल कडा पाथने के ही काम आ सकता है । बोला—अच्छा, कल किसी समय मिलेगे, पर यह तो बताओ कि तुम्हारे दूसरे साथी—सिद्धिनाथ, ज्योतिप्रकाश आदि कहा गए ? क्या उनका कुछ अता-पता है ?

चमूपति जमुहाइ लेकर चुटकी बजाते हुए बोला—सिद्धिनाथ को तो सज़ा हो गई थी, वह छूट गया होगा । ज्योतिप्रकाश अपने मज़े मे है ।

जयराम और नही ठहरा । मज़े मे है का अर्थ वह समझ गया । मज़े मे है का माने यह है कि नौकरी मिल गई, शादी हो गई, बच्चे पैदा कर रहे है, मिट्टीखोर केचुआ बन गए हैं । सम्पूर्ण स्वार्थी जीवन व्यतीत कर रहे है, धर्म चाहे डूब जाए, और देश मे चाहे आग लगे ! जैसे चमूपति मज़े मे है, उसी तरह ज्योतिप्रकाश भी मज़े मे होगा, और उन दिनो ये दोनो कितने चहक रहे थे ! रुस्तमे-हिन्द बने हुए थे । गाधीजी ने जब साम्प्रदायिक निर्णय मे अछूतो को हिन्दुओ से अलग करके

दिखाए जाने पर अनशन किया था, उस समय ऐसा लगता था कि महात्माजी के बाद इन्हीका नम्बर है। उन दिनो जब जयराम ने कहा था—'महात्माजी की मति मारी गई है, वह असत्य को सत्य करके दिखा रहे हैं।—तो ये उसपर टूट पडे थे और उसकी नाक से खून आने लगा था। मारने के बाद फिर ज्योतिप्रकाश ने यह भी कहा था—इसको साले को टागकर ले चलो, और पुरई की औरत का पेशाब पिलाओ!

अब पेशाब कौन पी रहा है? जयराम हसा।

जयराम बिना कुछ कहे दरवाज़े के बाहर निकल पडा, और मन ही मन सोचकर हसा कि अब कहा लीडरी, अब सब अपनी-अपनी बीवी का पेशाब पी रहे है, और साले कहते क्या है कि मजे मे है! मज़े मे रहने की इसी कायरतापूर्ण, क्लीब, कामुक, कारोबारी धारणा के कारण देश का सर्वनाश हुआ, धर्म का पतन हुआ! जयराम इस समय अपने को इन सब लोगो से कही श्रेष्ठ मानव, लगभग अतिमानव समझ रहा था।

उस रात को उमे नीद नही आई। कभी उसका मन लीग की उस सभा में पहुच जाता, और अल्लाहो-अकबर के नारे के इर्द-गिर्द गिद्ध की तरह मडराने लगता, तो कभी वह अतीत के उस दृश्य मे पहुच जाता, जब वह चमूपति, ज्योतिप्रकाश आदि के हाथो पिटा था और उसकी नाक से खून जारी हो गया था। उस समय बहुत बुरा लगा था, पर आज उसे लग रहा था कि वही रक्तदान दे सकता है। बाकी जो लोग उस समय शेर बने हुए थे, वे तो आज अपनी बीवियो के लहगो मे घुसे हुए हैं। कही पर अब उसे कौमुदी की भी याद नही आ रही थी—याद आ रही थी तो केवल अनुप्रेरणा देनेवाली देवी के रूप मे।

अगले दिन जब वह उठा तो सूरज काफी चढ चुका था और बहुत देर हो गई थी। वह हडबडाकर उठा और मुह-हाथ धोकर बिना नाश्ता-पानी किए घर से निकल पडा। वह सीधे हनुमान मन्दिर पहुचा, जहा इन दिनो सिद्धिनाथ रहता था, जैसे वे पण्डितजी कभी रहा करते थे, पर दगे के दिनो मे अन्तर्धान हो गए थे।

जयराम रात-भर करवटें बदलने के बाद इस निश्चय पर पहुचा था कि उस पुरानी टोली मे से किसीसे यदि आशा है तो सिद्धिनाथ से। बाकी सब लोग इतिहास मे अपना हिस्सा अदा करके अब उन पटरियो की तरह हो चुके थे, जिनपर

अब कोई गाडी नही चल सकती। उनमे जग लग चुका है, कही-कही से फिश-प्लेट उखड गया है।

जयराम को देखकर सिद्धिनाथ को उतना ही आश्चर्य हुआ, जितना सिद्धिनाथ की लम्बी दाढी और बडे-बडे केश देखकर जयराम को। दोनो एक दूसरे के सामने कुछ देर तक प्रश्नचिह्नो की तरह खडे रह गए।

जयराम ने पहले कुशल-प्रश्न पूछा, फिर उसे कल की सभा की बात सुनाई। फिर लगभग उन्ही बातो को दुहराया जिन्हे उसने रात्रि के अन्धकार मे चमूपति से कहा था। सुनकर सिद्धिनाथ ने कहा—अलगू क्या बोला ?

—बोलेगा क्या ! अब उसकी अच्छी-सी शादी हो गई है, नौकरी मिल गई है, फिर उसे करना क्या है ! उसे अब कोई फिक्र नही है।

सिद्धिनाथ घनी काली दाढी के अदर से बच्चो की तरह मुसकराया। बोला—मैंने शादी नही की •

कहकर वह फिर मुसकराया और जयराम को आसन देते हुए बोला—मेरा अहोभाग्य है कि आप पधारे !—वह और भी कुछ कहने जा रहा था, पर एकाएक जैसे कोई अदृश्य ब्रेक लग गया, और बोला—आप क्या सोच रहे है ?

जयराम ने थोडे मे अपना सारा इतिहास कह सुनाया,—किस प्रकार साथियो से निराश होकर उसने बम बनाने का कारखाना प्रस्तुत किया, किस प्रकार उसने गाधी पर हमले किए और कराए, किस प्रकार उसने दक्षिण भारत की यात्रा की एक दक्षिणी युवक से (यहा उसने कौमुदी को युवक बना दिया, जैसाकि मायाराम से किया था) गाधीजी पर हमला कराना चाहा था, पर वह सफल नही हुआ। अन्त मे उसने कल की सभा की बात बतलाई जिसमे कानपुर के सब वर्ग के मुसलमानो ने योमे-नजात मनाया था।

सिद्धिनाथ चारो तरफ देखकर बोला—मैं भी उस सभा मे मौजूद था। सबसे ज़्यादा खतरनाक तो वह औरत थी।

जयराम को लगा कि अब लग्गी ठोस ज़मीन से लगी है, अब कुछ होकर ही रहेगा। बोला—अच्छा, तुम भी मौजूद थे ?

अब सिद्धिनाथ से रुका नही गया। बोला—और भी बहुत-से लोग मौजूद थे।• •

जयराम समझ गया कि और लोगो से क्या मतलब था। दोनो में रासायनिक

तरगो का आदान-प्रदान हुआ। जयराम बोला—मै तो पहली ही बार गया, और मेरी आखे खुल गईं। मैं बदल गया।

सिद्धिनाथ ने अन्धेरे मे टटोलते हुए कहा—आप तो पहले अछूतो के विरुद्ध थे न ? याद है न, बहुत सालो की बात हुई।

जयराम ने प्रश्न की काट को ढाल से बचाते हुए कहा—मैं अछूतो के विरुद्ध कभी नही रहा। लोग मुझे गलत समझते रहे। मै तो इतना ही कहता था कि यदि कर्म और जन्मान्तरवाद के सिद्धान्त सही है, तो अछूतो को अछूत होने से घबडाना नही चाहिए, क्योकि वे जहा पूर्वजन्म के कर्मो से अछूत हुए है, वे वही इस जन्म के कर्मो से अगले जन्मो मे ब्राह्मण बन सकते है।

सिद्धिनाथ ने तर्क बचाने के लिए कहा—जाने दीजिए, अब तो आप बदल गए है न ? यह तो समझ रहे हैं न कि हमे काग्रेस से कही बढकर खतरा लीग से है। उधर अग्रेज भी है।—कहकर फिर सिद्धिनाथ अपनी कछुए की खोल मे लौट गया। अग्रेजवाली बात शायद न कहना ही अच्छा रहता। बोला—अकेला चना भाड नही फोड सकता। हम सगठित होकर ही कुछ कर सकते है। गाधी अछूतो को जैसे और जिस प्रकार भडकाते रहे हैं, उससे हिन्दू धर्म की जड नही कटती। अछूत भी अपने ही भाई है। पर गान्धी और दूसरे कथित क्रान्तिकारी, साम्यवादी और समाजवादी लोग मुसलमानो को जिस तरह बढावा दे रहे हैं, उससे देश को भारी नुकसान होगा। इस पहलू से हम ज्यादा चिन्तित है। मुसलमान तो फिर से मुस्लिम राज्य लौटाने, और यदि उसमे असफल हो, तो देश के टुकडे करने पर तुले हुए है। बहुत बडी बात है कि आप स्वय ही अपने तजुर्बे से इस नतीजे पर पहुच चुके है। हमे एक तरफ अन्तर्घाती मारो से हिन्दू धर्म की रक्षा करनी है, दूसरी तरफ हमे काग्रेस आदि सस्थाओ की मुस्लिम-प्रीति से होनेवाली क्षतियो से बचना है। गान्धी समझते है कि यदि वे अपने को, और अपने लोगो को हाथ-पैर बाघ-कर मुसलमानो के हाथो सौंप दे, तो उनका हृदय परिवर्तित होगा।

सिद्धिनाथ शून्य को चुनौती-सी देते हुए फिर बोला—यह बताइए कि राजपाल, श्रद्धानन्द, भोलानाथ, गणेशशकर विद्यार्थी, और जो दूसरे हिन्दू शहीद हो चुके है, उनके कारण किस मुसलमान का हृदय-परिवर्तन हुआ ? थोडे-से राष्ट्रीय मुसल-मान है, उनपर कहा तक भरोसा किया जा सकता है ? मैंने कल उस सभा मे कई राष्ट्रीय मुसलमानो को भी देखा, जो सबके साथ जोर से नारे लगा रहे थे। ऐसी

हालत मे हमारा कर्तव्य बहुत ही कठिन हो जाता है।

जयराम ने कहा—मैं इसीलिए तुम्हारे पास आया कि कुछ मिलकर सोचा जाए

दोनो कई क्षणो तक चुप रहे, जैसे एक-दूसरे को तौल रहे हो। फिर सिद्धिनाथ बोला—मैंने तो शादी नही की, यही मन्दिर मे पडा रहता हू। अखाडे मे दो-तीन घण्टे सवेरे, और शाम को दो तीन घण्टे बीतते है। पापी पेट भर ही जाता है। इन्ही विषयो पर सोचा करता हू।

कुछ कहते-कहते वह रुक गया, फिर अन्तिम रूप से जैसे किसी निश्चय पर पहुचते हुए बोला—उद्देश्य यह है कि हिन्दू जाति, हिन्दू धर्म और हिन्दू सभ्यता की रक्षा करते हुए प्राचीन हिन्दू राष्ट्र की सर्वांगीण उन्नति की जाए। इस सम्बन्ध मे एक ही सस्था है—राष्ट्रीय स्वयसेवक सघ, जिसके नेता महाराष्ट्र के एक डाक्टर के० बी० हेडगेवार हैं। हम लोग हिन्दू राष्ट्र की बात सोचा करते हैं।

उस दिन जयराम को इतना ही बताया गया। सिद्धिनाथ ने कहा—कल से आप अखाडे मे आया करिए। वही सारी बाते धीरे-धीरे आपपर खुलती जाएगी, पर याद रखिए कि हमारी सस्था सैनिक सस्था है। इसमे हुक्म मानना बहुत जरूरी है। यो तो आप मेरे बडे और पूज्य हैं, पर मैं जिस भी नौजवान को आपका नेता मुकर्रर कर दूगा, उसके अधीन आपको रहना पडेगा। फिर आपको नागपुर, पूना या लाहोर मे आफिसर्स ट्रेनिग कैम्प मे भेज देगे। मुझे बहुत खुशी है कि आप हम लोगो मे आ गए।

उस दिन से जयराम राष्ट्रीय स्वयसेवक सघ का सदस्य हो गया। पर यह बिल्ला लग जाने पर भी उसके मन मे पूरी शान्ति नही थी। वह सिद्धिनाथ को पसन्द नही करता था, पर वह अकेले भी तो कुछ कर नही सकता। वह इस नतीजे पर पहुचने के लिए विवश हो चुका था।

१६

यद्यपि एलिस चाहती थी, बहुत चाहती थी कि वह नर्स बने, वह दिवाकर से ऐसा कह भी चुकी थी, पर अपनी मा की तबीयत देखते हुए वह अपने सम्बन्ध मे किसी प्रकार का निर्णय नही कर सकी। उसे आश्चर्य पर साथ ही खुशी हुई कि

श्रीमती टामस के सम्बन्ध मे उसकी यह जो धारणा थी कि वह इतनी कमजोर है कि लडाई छिडते ही उनके हृदय की गति रुक जाएगी, वह गलत निकली। वह सारी खबरें चाव से पढती थी। उनका उसपर कोई विशेष असर नही होता था। यह अच्छा तो था कि मा की तबीयत ठीक है, पर एलिस इसी कारण कुछ कार्य नही कर सकी।

अंग्रेज जाति लडाई के लिए पूरी तरह तैयार थी। अभी विशेष कोई असुविधा नही हुई थी, पर असुविधाओ का भय तो था ही, फिर भी किसीके माथे पर शिकन नही थी। सब सुखी थे और समझ रहे थे कि वे इतिहास-निर्माण मे भाग ले रहे हैं। सबसे आश्चर्य की बात है कि बच्चे भी लडाई के लिए कमर कसे हुए ज्ञात होते थे। दिवाकर से एलिस नर्स बनने की बात कह चुकी थी, पर वह मा के कारण कुछ नही कर सकी थी।

मा जब-तब यह पूछ बैठती थी—कहा, जर्मनी ने आक्रमण तो हमपर नही किया ?

सचमुच लडाई अजीब ढग से चल रही थी। हिटलर ने मित्रपक्ष द्वारा युद्ध-घोषणा के बावजूद यह घोषणा-सी कर दी थी कि पश्चिमी मोर्चे पर जर्मन फ्रासीसियो के विरुद्ध पहली गोली नही चलाएगे।[1] आशका यह थी कि युद्ध-घोषणा करते ही रात्रि के अधकार मे लुपटवाफे के हवाई जहाज़ लन्दन पर हमला करेंगे, पर युद्ध-घोषणा के बाद वाली रात को लन्दनवासियो के यह आशका करने पर भी कि हमला होगा, न तो कोई हवाई हमला हुआ और न बम गिरा। विलहेल्मस्ट्रासे (जर्मन वैदेशिक दफ्तर की सडक) ने बल्कि यह आश्वासन दिया कि अभी तक ऐसी एक भी गोली नही चली, और बराबर जर्मनो की ओर से लाउड-स्पीकर पर फ्रेंच सैनिको से यह कहा जा रहा था कि यदि तुम लोग हमपर हमला नही करोगे, तो हम तुमपर हमला नही करेंगे। साथ ही पोलैण्ड के विरुद्ध जर्मन युद्ध-यन्त्र की रक्ताक्त जययात्रा जारी रहा। पोलैण्ड की रीढ तोडती हुई उसकी गाड़ी निकल गई।

श्रीमती टामस न तो राजनीति से कोई सम्बन्ध रखती थी और न उनकी किसी वाद से कोई सहानुभूति थी, फिर भी वे बार-बार अपनी बेटी से यह कहती थी —यह कैसी लडाई है कि कई दिन निकल गए, पर कोई लडाई नही हो रही है ?

१ 'बर्लिन डायरी', पृष्ठ १५१

स्वय एलिस को भी इसपर बहुत आश्चर्य था, पर वह, विलियम, जो स्पेन के युद्ध मे क्रान्तिकारियो की ओर से भाग लेकर शहीद हो गया था, गार्डन, जो उस युद्ध से बचकर अब यूरोप के किसी अज्ञात स्थान मे गुप्तचर का काम कर रहा था, तथा एक हद तक दिवाकर के कारण परिस्थिति को कुछ-कुछ समझ रही थी। वह मा से कह देती थी—हिटलर इग्लैण्ड या फ्रास से लडना नही चाहता। वह रूस से लडना चाहता है, पर कूटनीति की गति कुछ ऐसी वक्र रही है कि न तो हिटलर खुश है, और न हमारे मित्रपक्ष के पेशेवर राजनीतिज्ञ। हिटलर को इतिहास के हाथो वह नाच नाचना पड रहा है, जिसे वह नाचना नही चाहता।

यद्यपि पोलैण्ड के लोगो ने बडी बहादुरी से लडाई की, पर वे जर्मन सेना के प्रलयकालीन ज्वार के सामने ठहर नही सके। केवल नात्सी सेना ही अधिक शक्ति-शाली निकली, यह बात नही, बल्कि जर्मनो की रणनीति भी बिल्कुल चकाचौंध पैदा करनेवाली थी। पहले के युद्धो मे जीतते हुए आगे बढने की प्रथा थी, पर अब की बार जर्मनो ने एकसाथ नौ स्थानो से आक्रमण किया। जर्मन वायुसेना ने पहले सप्ताह मे ही पोलैण्ड की सेना की रीढ तोड दी। पोलो के पास तोपखानो की भी कमी थी। उनमे एकसाथ सौ पैंजरो का सामना करने की शक्ति नही थी। पोलो के पास कुछ अच्छे हवाई जहाज थे, पर जर्मन गुप्तचर विभाग ने पहले ही से उनका लेखा-जोखा प्रस्तुत कर लिया था, इसलिए बहुत-से हवाई जहाज तो हवा मे उड पाने से पहले ज़मीन पर ही चकनाचूर कर दिए गए।

पोलैण्ड की समाप्ति मे रूस ने भी भाग लिया, पर सोवियत सेनाए वही तक आगे बढी, जहा तक बढने का पहले से तय था। उन्होने पहले विलना पर कब्ज़ा किया, फिर वे जर्मनो से ब्रेस्तलितोवस्क मे मिले। इसपर एलिस ने मा को व्याख्या के रूप मे बताया—यही पर प्रथम महायुद्ध मे लेनिन के नेतृत्व मे बोलशेविको ने एक अपमानजनक सन्धिपत्र पर हस्ताक्षर किया था। अब इतने दिनो बाद उन्होने फिर अपनी भूमि पर अधिकार कर लिया, पर दुर्भाग्य यह है कि यह सब पोलैण्ड के दामो पर हुआ, ऐसे हुआ कि रूस से शायद ही कोई सहानुभूति करे। यह तो पोलैण्ड की पीठ पर छुरी भोकना हुआ।

पर मा क्रास का चिह्न बनाते हुए बोली—क्या न्याय है, और क्या अन्याय है, हम क्षुद्र प्राणी क्या जाने! तुम्हीने तो बताया था कि किसीसे तुम्हे मालूम हुआ कि माशल वोरोशिलोव ने पोलैण्ड की ओर मित्रता का हाथ बढाते हुए कहा था

कि विलना और लेम्बर्ग पर रूसियो का अधिकार होगा, तभी यह मित्रता कुछ असरदार हो सकती है।[1]

युद्ध की गति पर इसी तरह से मा-बेटी मे बराबर विचार-विनिमय होता रहता था। एक दिन एलिस ने मा से कहा—यदि आप अनुमति दे, तो मै कोई काम कर लू।

मा बोली—तुम कर लो। मेरे कारण न रुको। मै अपनी तीमारदारी आप कर सकती हू।

पर उसी दिन रात को वे बीमार पड गई, इतनी बीमार पड गई कि डाक्टर, जो प्राप्त थे, चिन्तित दिखाई पडे। बेटी को ऐसा लगा कि मा लज्जित है, और बीमार इस कारण हुई है कि मरकर बेटी को मुक्त करना चाहती है। यह विचार आते ही वह अधबेहोश मा के सामने रोने लगी। रो-रोकर कहने लगी—मा, तुम अच्छी हो जाओ, मैं कही नही जाऊगी! मेरे पिता तो युद्ध मे खेत आए ही थे, विलियम भी मारा गया! मैं न जाऊगी तो क्या है?

वह ऐसा कई बार बोली, फिर भी मा की हालत बिगडती चली गई, यहा तक कि एलिस ने रेडियो सुनना भी बन्द कर दिया। डाक्टर कुछ आशा नही दे रहे थे। बीमारी विशेष कुछ नही थी, कम से कम डाक्टरो का यही कहना था कि अत्यन्त कमजोरी है, कोई भी इन्द्रिय ठीक से काम नही कर रही है। यकृत ठीक नही है, फेफडा कमज़ोर है, मूत्राशय धीमा काम कर रहा है, मेदा जवाब दे रहा है। डाक्टर बोले—असली बात यो है कि रोगिणी मे जिजीविषा बहुत कमज़ोर पड गई है।

एलिस जानती थी, यानी वह सन्देह करती थी कि एकाएक जिजीविषा के अत का कारण क्या है। उसके पिता टामस विगत महायुद्ध मे मारे गए थे, इसके बाद अब दूसरा महायुद्ध आ गया, श्रीमती टामस को इसीका गम था। उनकी यह पति-भक्ति किसीकी समझ मे नही आती थी। बहुत-सी अग्रेज स्त्रियो ने प्रथम महा-युद्ध मे मृत अपने पतियो का थोडा-बहुत गम मनाकर शादी कर ली थी, यद्यपि

---

१ चर्चिल ने अपनी आत्मकथा में लिखा है—"यद्यपि रूसियों ने अभी हुई बातचीत में अत्यन्त बेईमानी का परिचय दिया है, फिर भी मार्शल वोरोशिलोव ने पोलैण्ड से यह जो कहा था कि उससे दोस्ती करने के लिए विलना और लेम्बर्ग पर रूसियों का अधिकार होना जरूरी है, बिलकुल ही उचित सैनिक अनुरोध था।"

शादी का बाजार बहुत गर्म हो चुका था और युवको का दाम बहुत बढ चुका था। कइयो ने शादी करने मे असमर्थ रहकर कोई कामचलाऊ समाधान कर लिया था, पर श्रीमती टामस टस से मस नही हुई थी।

इसीलिए श्रीमती टामस के एक भूतपूर्व असफल प्रेमिक ने फिर से असफल होने के बाद उन्हे बुद्ध की वह मूर्ति दी थी, जो वह भारत से चुराकर लाया था और उनसे कहा था—तुमको तो इनके देश मे पैदा होना चाहिए था, जहा स्त्रिया युद्ध मे जानेवाले पतियो के लौटने की आशा न होने पर जौहर-व्रत करके अग्नि-प्रवेश करती थी।

एलिस को इन बातो का ब्योरा मालूम नही था, पर वह यह जानती थी कि मा साधारण अग्रेज औरतो से भिन्न है, पर वह भी तो उनसे भिन्न थी। उसके रक्त मे सुगबुगाहट मची रहती थी, कुछ करने की। विलियम ने उसके जीवन मे वह तत्त्व दिया था, जो उसे अपने बाप और मा से नही मिला था। त्यागपरायणता के साथ उसने चिन्तन की प्रवृत्ति पाई थी। केवल त्याग नही करना है, केवल परम्परागत ढग से देशभक्ति और साम्राज्यभक्ति को ही अन्तिम शक्ति नही मानना है, अपनी जाति, अपने राष्ट्र के परे भी सत्य है, सारे ससार मे सत् और असत् का, देवो और असुरो का सग्राम चल रहा है, उसमे भाग लेना है। किसी भी रूप मे सही, अत्यन्त साधारण सेवा के जरिये से ही सही।

मा की बीमारी के दिनो मे वह पहले से अधिक चिन्तनशील हो गई। समय पर मा को दवा पिलाती, एनिमा देती। वह घर मे ही नर्स, सोलहो आने नर्स, बन गई थी। मा के जीवन का काटा, जीवन और मृत्यु के बीच की रेखागणित की रेखा पर टिका हुआ था, कभी जरा-सा नीचे को जाता तो लगता कि सब समाप्त हो गया, तो फौरन ही वह काटा लौटकर जीवन की ओर चला जाता था। डाक्टर ने कहा—ऐसी स्थिति मे, चाहे जितने दिन यह स्थिति बनी रहे, कोई निश्चित बात नही कही जा सकती।

मृत्यु ने जैसे मा का एक हाथ थाम रखा था, और जीवन ने दूसरा हाथ। एक फेफडा जीता था, तो दूसरा मर जाता। मृत्यु और जीवन अपनी इस इकरस रस्साकशी से ऊबकर कभी-कभी हाथ जरूर बदल लेते पर रस्सी न छोडते। एलिस को लगता कि एकाएक मा की बीमारी बढने के लिए वह जिम्मेदार है। वैसी हालत मे एक फूक भी पलडे को भारी कर सकता था। उसे जितना ही

इसका पश्चात्ताप होता, वह मृत्यु के साथ उतना ही अधिक सग्राम करती। वह एक पेशेदार नर्स से अच्छी सेवा कर रही थी, ऐसा डाक्टरो ने भी कहा।

एक दिन जब वह इसी तरह मा के पास बैठकर गहन चिन्तन मे डूबी हुई थी, तो उसे लगा कि बाहर कोई आया है। डाक्टर आया होगा, समझकर वह उठी, पर उसके आने का तो कोई समय नही था। देखा, एक वृद्ध खडा था। वह व्यक्ति बोला—क्या यही श्री टामस का घर है?

एलिस ने कहा—जी हा।—कहकर वह चुप हो गई, क्योकि उसे ऐसा लगा कि यह शायद पिताजी के कोई मित्र है, जो बीस-पच्चीस साल बाद किसी उपनिवेश से लन्दन आकर अपने पुराने मित्रो की तलाश कर रहे है। बोली—जी हा '। पर वे तो स्वर्गीय हो चुके है। आप किससे मिलने आए है?

उस व्यक्ति ने बिलकुल विचलित न होकर कहा—आप शायद उनकी बेटी है?

—जी हा, कहिए क्या काम है?

वह व्यक्ति कुछ थका हुआ था। वह चारो तरफ देखकर एक कुर्सी पर बैठ गया, फिर बोला—आप विलियम को जानती थी?

एलिस का चेहरा कडा पड गया, शायद गुप्तचर विभाग से पाला पडा है। स्काटलैण्ड यार्ड! यो वह अपने को एक देशभक्त अग्रेज़ मानती थी, उसे स्काटलैण्ड यार्ड से कोई शका नही थी। रहा विलियम, सो उसने भी इसी प्रकार देश के विरुद्ध कुछ नही किया था। वह स्पेन के गृहयुद्ध मे प्रजातन्त्रवादियो की तरफ से फासिस्टो के विरुद्ध लडकर शहीद हुआ था। अग्रेज़ उस चित्र मे आते ही नही थे। फिर भी स्काटलैण्ड यार्ड की तरफ से विलियम के सम्बन्ध मे किसी भी तरह की पूछताछ हो, सो भी उससे, यह उसे विशेष रुचिकर प्रतीत नही हुआ। बोली—जी हा, वे स्पेन के गृहयुद्ध मे शहीद हो गए। वे मेरे मित्र थे।

उसने जान-बूझकर शहीद शब्द का प्रयोग किया। वह व्यक्ति कतई विचलित नही हुआ, बल्कि जैसे नदी सुन्दर सगमरमर के घाट की सराहना करने के लिए खडी नही रहती, उसी तरीके से वह बूढा विलियम का प्रसग सम्पूर्ण रूप से छोडकर बोला—तो आप गार्डन को भी जानती होगी?

एलिस अब समझ गई कि असली बात गार्डन के सम्बन्ध मे है। तो क्या गार्डन कही गिरफ्तार हो गया और गेस्टापो के अत्याचार से पीडित होकर उसने

कोई ऐसी बात कह या कर दी, जिसकी जाच हो रही है। बोली—जी हा, वह भी विलियम के साथ यहा दो-चार बार आ चुके है।

—उनसे अलग वे कभी नही आए ?

एलिस सोचकर बोली—आए होगे। अवश्य आए होगे। पर स्मरण नही।

तब वह वृद्ध कुछ चिन्ता मे पड गया, बोला—क्या आप मुझे पीने को कुछ दे सकती हैं ? माफ कीजिए।

उस व्यक्ति ने जो कुछ कहा, उन शब्दो मे तो नही, पर उसकी चाल-ढाल मे कोई ऐसी व्याकुल प्रार्थना थी कि एलिस ने उसके सामने शराब की एक पूरी बोतल और गिलास रख दिया। बोतल देखते ही वृद्ध की आखे चमक उठी। उसने जल्दी से थोड-सी शराब पी, आखे और अधिक चमक उठी, फिर वह बोला—गार्डन ने आपके नाम से एक पत्र भेजा है, मैं उसीका वाहक होकर आया हू।

—क्या आप उनसे मिले थे ?

—नही। वह एक लम्बी कहानी है, जो आपको इस पत्र मे ही मालूम होगा। —कहकर उसने एक पत्र निकालकर दिया और साथ ही कुछ लिखकर एक छोटा-सा कागज़ भी दिया और बोला—इस पत्र के कुछ हिस्से साइफर मैं हैं, जिसकी चाभी यह है। आप चाभीवाले शब्द को याद कर ले, उसका उच्चारण न करे और फौरन इसे फाड डाले।

एलिस ने फौरन ही छोटावाला कागज़ फाड डाला। वृद्ध उठने को हुआ, पर एलिस को लगा कि वह अनिच्छा के साथ उठ रहा है, बोली—आप थोडी-सी शराब और ले, फिर जाए।

वृद्ध की आखे चमक उठी। उसने फौरन ही कापते हुए हाथो से गिलास मे शराब डाली और अबकी बार कुछ ज्यादा डाली, फिर एक घूट पीकर बोला—मैं जाऊ कहा ? हम लोगो के लिए जाने की कोई जगह, हा, कोई जगह नही है।—कहकर उसने शराब का बाकी हिस्सा पी डाला।

एलिस गार्डन का पत्र पढने के लिए व्याकुल हो रही थी, पर इस वृद्ध को भी, जिसके सम्बन्ध मे अब सारे सन्देह दूर हो चुके थे, इस प्रकार सक्षिप्त रूप से विदाई देते हुए अच्छा नही लग रहा था। वृद्ध बहुत सताया हुआ लगता था, बोली—क्या बात है ? क्या मैं आपकी किसी प्रकार सहायता कर सकती हू ?

वृद्ध दु खी होकर बोला—हमारी सहायता कौन कर सकता है ? ईश्वर की

निर्वाचित जाति के हम हैं, पर हमारा कही ठिकाना नही है, मेरा बेटा भी गार्डन के साथ गिरफ्तार है।—कहकर वृद्ध ने खाली गिलास की तरफ देखा जैसे खाली गिलास उसके जीवन का प्रतीक हो।

अबकी बार एलिस ने स्वय उसके गिलास मे शराब डाली, साथ ही बोल उठी—क्या गार्डन बन्दी है ?

—हा। बन्दी है और यहूदी-रूप मे बन्दी है। पर वह तो यहूदी नही है, इसलिए छूट जाएगा, पर मेरा बेटा मारा जाएगा, क्योकि वह यहूदी है। उसीके पत्र के साथ गार्डन का वह पत्र आपके नाम आया था, मैं उसीको देने के लिए आपके पास आया। मेरा बेटा शायद अब तक मार डाला गया हो।—कहकर उसने जैसे डूबने से बचने के लिए तिनके के रूप मे गिलास की ओर हाथ बढाया।

एलिस ने कुछ औपचारिक रूप से और कुछ आशावादी ढग से कहा—नहीं, आप ऐसा क्यो सोचते है ? जिन लोगो ने इनकी चिट्ठी चोरी से निकालने मे मदद दी है, उन्हीमे से कोई उन्हे भागने मे भी मदद दे सकता है। जीवन बहुत ही अद्भुत है।—कहते-कहते उसे याद आया कि मा की दवा का समय हो गया। वह उठकर जाते हुए बोली—माफ कीजिए, मेरी मा बहुत बीमार हैं, मैं उन्हे दवा देकर आती हू, आप तब तक पीजिए। किसी भी हालत मे न जाइएगा। इसे आप अपना ही घर समझे।

जब वह लौटी, तो अहारन कोहेन सारी शराब पी चुका था। उसका चेहरा तृप्ति से तमतमा रहा था। देखकर एलिस का मन सन्तोष से पसीजकर फैल गया। बूढा जैसे, क्या कहना है, इसीकी आवृत्ति कर रहा था। एलिस को सामने देखते ही बोल उठा—चार हजार वर्ष पहले हमारा यह सग्राम शुरू हुआ था। न जाने कितनी सदियो तथा सहस्राब्दियो से दौरे ज़मा हमारा दुश्मन रहा, फिर भी हममे कुछ ऐसी बात है कि हमारी हस्ती नही मिटती। रोमनो ने हमारे देश पर कब्जा किया, फिर भी जुडा का राज्य स्थापित हुआ, पर जो रोमन सेनाए हारकर लौटी, उसने हर शहर मे यहूदियो का कत्लेआम किया। बेइतार मे जो अन्तिम युद्ध हुआ था, उसमे इतने बच्चो और स्त्रियो की हत्या की गई कि रक्त की एक नदी बह निकली, जो एक मील तक बहती रही। हमारे एक नेता की जीते जी खाल निकाल ली गई और हमारे एक दूसरे नेता को ज़जीरो मे बाधकर रोम ले जाया गया, वहा शायद उन्हे सिंह को खिलाया गया, या पता नही वे कोई

और नेता थे। फिर भी हमने जीना जारी रखा और रोमनो तथा ग्रीको के मिट जाने के बाद आज भी हम जिन्दा है।

एलिस ने सान्त्वना देते हुए कहा—हिटलर केवल यहूदियो का नही, बल्कि मानवता का शत्रु है

बूढे पर इस वक्तव्य का कोई प्रभाव नही पडा क्योकि बूढे की आखो मे शायद यहूदियत ही मानवता का सबसे मूल्यवान अश था, बोला—मैंने अपने बेटे को मना किया था कि वह काण्टीनेण्ट मे न जाए, पर वह नही माना, बोला कि मैं तो इसीलिए जा रहा हू कि यहूदी भाइयो से कहू कि आप फौरन हिटलर का राज्य छोडकर भाग जाए, पर हुआ यह कि यहूदी नही निकल पाए, उल्टा वह पकडा गया। पता नही 'मुस्सादआलियाबेत' के नेताओ की अक्ल मारी गई है या क्या, उन्होने ही मेरे बेटे को इस काम के लिए भेजा।

एलिस समझ नही पा रही थी कि किनका जिक्र है, अहारन यह समझकर बोला—'मुस्सादआलियाबेत' एक सस्था है, जो यहूदियो को फिलिस्तीन मे ले जाकर बसाने का प्रयास कर रही है। पर फिलिस्तीन के ब्रिटिश शासक यह नही चाहते कि वहा यहूदियो की सख्या मे वृद्धि हो। इसलिए 'मुस्सादआलियाबेत' यहूदियो को गैर-कानूनी ढग से ही ले जा रही है।

बूढे ने यन्त्रचालित की तरह गिलास की तरफ हाथ बढाया, पर वह खाली था, तब एलिस ने फौरन एक दूसरी बोतल लाकर सामने रख दी और बोली—पीजिए। आप अपने बेटे के विषय मे चिन्ता न करिए। जब उसके साथ गार्डन है तो आप यह समझ लीजिए कि ब्रिटिश साम्राज्य के सारे साधन उन्हे उपलब्ध होगे।

बूढे ने गिलास मे शराब डालकर दो घूट पीया, फिर बोला—हम लोग रोमनो से लडे, ईसाइयो से लडे, मुसलमानो से लडे, पर हिटलर और ही इस्पात का बना है। मुझे अपने लोगो के विषय मे कम ही भरोसा है।—कहकर बुड्ढा उठ खडा हुआ—मैं तो भूल ही गया था कि मुझे और भी काम करने है। इसके अलावा मैं बडा बेवकूफ हू कि मैंने तुम्हे चिट्ठी पढने नही दी। मैं फिर कभी इधर आऊगा। शराब के लिए धन्यवाद।

बुड्ढे के जाते ही एलिस ने एक बार जाकर मा को देखा और फिर पत्र निकालकर पढना शुरू किया। गार्डन ने ऐसे पत्र लिखा था, जैसे वह किसी होटल मे हो। उसने लिखा था—

"क्या तुम विश्वास करोगी कि मैं, जिससे बढकर कोई ईसाई नही हो सकता (एलिस समझ गई कि ये शब्द इसलिए लिखे गए है कि यदि कही पत्र पकड जाए, तो भी वाछित असर पैदा हो), एक यहूदी कार्यकर्ता के रूप मे पकडा गया हू ? मैंने बहुत कहा कि भाई, मैं पक्का रोमन कैथोलिक हू पर किसीने नही सुना और मुझसे जो प्रश्न आदि पूछे गए, उनसे मैं इस नतीजे पर पहुचा हू कि वे मुझे 'मुस्सादआलियाबेत' के एक नेता के धोखे मे गिरफ्तार किए हुए है। दु ख है कि इस सम्बन्ध मे जो सबसे बडा प्रमाण हो सकता था, वह मेरे विरुद्ध चला गया। मेरे कपडे उतारकर देखा गया तो मै यहूदी पाया गया, यहूदी या मुसलमान, क्योकि यही दो जातिया है, जिनमे वह विशेष सस्कार होता है। जब मुझे बताया गया कि मेरे शरीर ने ही मुझे झूठा प्रमाणित किया है, तो मैं आश्चर्यचकित रह गया, क्योकि मुझे तब तक उसका कुछ ज्ञान नही था। सुना है कि इतिहास मे एक प्रसिद्ध व्यक्ति ऐसे हुए हैं, जिनका यह सस्कार जन्मना हो चुका था। ससार के इतिहास मे मैं दूसरा व्यक्ति हू, जिसमे यह विशेषता पाई गई।

"जब शरीर ही अपने विरुद्ध गवाही दे और निश्चित गवाही दे कि रोने भी न दे, तब कोई क्या कर सकता है ? तो मैं यहा एक यहूदी षड्यन्त्रकारी के रूप मे बन्द हू। मेरा बहुभाषाविद् होना भी मेरे विरुद्ध गया है। गेस्टापो का कहना है कि यह भी यहूदियो की विशेषता है। इस प्रकार तुम देख रही हो कि गुण ही अवगुण सिद्ध हो रहे है। खैर, छोडो इन बातो को। जो होगा सो होगा। यदि गोली मारनेवाली टुकडी का सामना करना है या गैस-कक्ष मे घुटकर मरना है तो इससे कुछ नही आता-जाता कि मैं रोमन कैथोलिक समझा जाऊ या यहूदी।

"इस लडाई की गति शुरू से ही बहुत अजीब रही। हिटलर जिस रूप मे लडाई चाहता था, उस रूप मे लडाई नही आई। उसने ऐसा रूप धारण किया, जो उसे नापसन्द है। वह चाहता था कि कुछ ऐसा हो जाए कि लडाई का रूप ही बदल जाए और उसे अग्रेजो तथा फ्रेचो से न लडना पडे। युद्ध के लिए तैयार दो सेनाओ में गोली चलने की बजाय लाउड स्पीकर से एलान होते रहे। जर्मन सेना की ओर से फ्रेच भाषा मे लाउड स्पीकर पर कहा जाता रहा कि यदि तुम्हारी तरफ से गोली न चली, तो हम गोली नही चलाएगे। मुझे एक ऐसा आदमी मिला, जिसने कहा कि फ्रेचो ने एक बैलून उडाया था, जिसमे यही बात लिखी थी।[1]

---

१ 'बर्लिन डायरी', पृष्ठ १५३

"मैं ८ सितम्बर को वारसा मे मौजूद था, जब जर्मनो ने वहा प्रवेश किया और बैंड पर 'डायट्सलैण्ड यिबर आलेस' और 'हारस्ट वेसेले' गीत गाए गए। अभी तक जर्मनो की ओर से पश्चिमी मोर्चे पर एक भी गोली नही चलाई गई थी। इसके साथ ही राइनलैण्ड के किसी कारखाने पर एक भी बम नही गिराया गया था।

"बराबर सधि की चेष्टा चालू थी, इस अर्थ मे कि हिटलर सधि चाहता था। वह चाहता रहा कि इग्लैण्ड और फ्रास जर्मनी से युद्ध न करे। मैने स्वय जर्मन अखबारो मे देखा तो उनमे यही स्वर था—इग्लैण्ड और फ्रास हमारी पश्चिमी दीवार के विरुद्ध लडकर अपने रक्त का अपव्यय क्यो करना चाहते हैं? पोलैण्ड राष्ट्र तो मिट चुका है, फिर उसके साथ सधिपत्रो का क्या अर्थ है? जर्मन मन को इस प्रकार से तैयार किया गया है कि उनमे से सभी समझते है कि सधि होकर रहेगी। पोलैण्ड मे लोग यह समझ रहे है, जैसे कयामत आ गई है। कई लोग खुलेआम कह रहे हैं कि पोल उच्च कमान ने ठीक से काम नही किया, इसने अपनी सर्वोत्कृष्ट सेना को पोसेन के इर्द-गिर्द केवल प्रारम्भ मे ही नही, उस समय भी क्यो रखा, जब जर्मन वारसा के पीछे पहुच गए थे? कई लोगो ने मुझसे कहा कि यदि पोल सेना विश्चुला नदी के इस पार आकर जम जाती, तो वे लडाई को जाडे तक खीच सकते थे, और तब तक बर्फ और कीचड से जर्मन सेना को खुद ही रुकना पडता।

"जब थोडी-बहुत लडाई शुरू भी हुई, तब भी जर्मन उस प्रकार निर्मम होकर लड नही रहे थे, जिस प्रकार वे पोलो के विरुद्ध लडे। यह एक अजीब बात है कि फ्रेंच सेना का एक लेफ्टिनेन्ट लुई पाल देशानेल जर्मनो के हाथो मारा गया और उसकी लाश जर्मनो के कब्जे मे आई, तो उसे दफनाते समय जर्मन सैनिक बैण्ड ने फ्रेंच राष्ट्रीय गीत 'मारसेलेस' गाया। देशानेल के पिता फ्रास के राष्ट्रपति रह चुके थे, पर वह युवक जर्मनी के विरुद्ध एक टुकडी का नेतृत्व करता हुआ मारा गया था। उसे इस प्रकार सम्मान के साथ दफनाने का कोई कारण नही था। लगता है कि इन सारी बातो का उद्देश्य एक ही है और उनके पीछे एक ही इच्छा निहित है कि मित्रपक्ष अब भी बाज आए।

"हिटलर का हर कदम, यहा तक कि हर चितवन और हर शब्द सोचा-समझा हुआ और सुनियोजित होता है, पर वह भी गलती कर सकता है, यह इससे प्रमाणित होता है कि वह वास्तविक दानत्सिक युद्ध के आरम्भ मे ही यह कह डाला, 'हम

घुटना नही टेकेगे।' अभी तो हिटलर का सितारा बुलन्दी पर था और उसकी जीत पर जीत हो रही थी, फिर उसने ऐसा क्यो कहा ? ऐसा लगता है कि हिटलर के सेनापतियो मे इस युद्ध के सम्बन्ध मे बहुत मतभेद है।

" वान फ्रिट्त्स पुराने सेनापतियो मे थे, पर वे युद्ध के आरम्भ मे ही एक महीने के अन्दर मर गए। यह मृत्यु स्वाभाविक नहीं थी, ऐसा यहा के सभी विदेशी सवाददाता खुले आम कह रहे है। फ्रिट्त्स इस कारण नात्सी सेनापतियो मे प्रमुख हो गया था कि नात्सियो को एक ऐसा प्रधान चाहिए था जिसमे सैनिक ज्ञान के साथ-साथ दृढता हो। रणनीति के सम्बन्ध मे फ्रिट्त्स का ज्ञान उच्चकोटि का समझा जाता था। फ्रिट्त्स हिटलर का परम मित्र था, इस अर्थ मे कि उसीने कप्तान रैम नामक व्यक्ति तथा उसके साथियो से हिटलर का छुटकारा यह कहकर करवाया कि ये जिस सेना का सगठन कर रहे थे, उसका उद्देश्य हिटलर को ही समाप्त करना है। फिर भी फ्रिट्त्स नही बच सका। या तो हिटलर के हुक्म से फ्रिट्त्स को गोली मार दी गई या वह जीवन से इतना ऊब चुका था कि उसने प्रकारान्तर से आत्महत्या कर ली या ऐसी स्थिति मे अपने को डाला जिसमे आत्महत्या की जरूरत ही नही पडी।

" जिस दिन जनरल वान फ्रिट्त्स को दफनाया गया, उस दिन मैं बर्लिन मे ही था। पानी पड रहा था, सब लोग ठण्ड से ठिठुर रहे थे और अधेरा छाया हुआ था। इधर जो भी खास व्यक्ति खेत रहता, उसके सम्बन्ध मे अखबारो मे सरकारी रूप से यह प्रकाशित होता था—'फियरेर के लिए मृत्यु पाई।' पर फ्रिट्त्स के विषय मे लिखा था—'पितृभूमि के लिए मृत्यु पाई।' यह सभीने देखा कि हिटलर इस अन्त्येष्टि क्रिया के समय मौजूद नही था। हवा मे कई तरहकी अफवाहे तैर रही हैं। मालूम हुआ कि फ्रिट्त्स मर कर इस गडबड झाले की स्थिति से मुक्त होना चाहते थे और उन्होने तीन पत्र छोडे हैं। साथ ही जर्मन सैनिक मण्डल मे यह कहा जा रहा है कि यद्यपि जो घाव उन्हे लगा था, वह काफी गम्भीर होने पर भी वह ऐसा नही था कि उसका इलाज न हो सके। कहते है कि उनके एडजुटेण्ट ने उन्हे कहा कि हम आपको युद्धक्षेत्र से हटाकर पीछे की ओर इलाज के लिए ले जाना चाहते है, पर उन्होने सख्ती के साथ पीछे जाने से मना कर दिया। ठीक इलाज न हो पाने के कारण इतना रक्तस्राव हुआ कि वे मर गए। भीतर ही भीतर कुछ पक रहा है।

"जिस दिन वारसा ने घुटना टेक दिया, उस दिन मैं बर्लिन मे ही छिपा हुआ था। मैं नाट्यगृह मे गया, वहा वेबर का एक नाटक लगा हुआ था। पर पोलैण्ड के पतन से मैं भीतर ही भीतर इतना उत्तेजित था कि मुझे कुछ अच्छा नही लगा। लगता है कि पोलैण्ड के लोग यूरोप के हर झगडे मे कष्ट झेलने के लिए पैदा हुए है।

"बडी कठिनाई से ज़ारशाही से उनका छुटकारा हुआ और अब एक पागल आदमी के कारण या यो कहना चाहिए कि दुष्ट पडोसियो के कारण उनपर यह मुसीबत टूट पडी। नाटक का सगीत अच्छा था, पर मुझे अच्छा नही लगा। जब सुन ही नही रहा था, तब अच्छा क्या खाक लगता?

"हा, नाटक के दौरान जो कागज बाटा गया और जिसमे यह लिखा था कि यदि हवाई हमला हुआ, तो हमे क्या करना चाहिए, बहुत मज़ेदार था। इसमे लिखा था कि दर्शको को हवाई हमले की सूचना मच से दी जाएगी और जिस पक्ति के लिए जो तहखाना या केलर निर्दिष्ट था, उस पक्ति के लोग उसी मे चले जाए। हवाई हमला समाप्त होते ही दर्शक अपने तहखानो से निकल आए और नाटक वही से शुरू होगा जहा वह रुक गया था।

"पर मैं तो नाटक के बीच मे ही चुपके से उठकर चला आया। कई लोगो ने मेरी तरफ देखा, पर मेरे पहले भी कई लोग उठ चुके थे, इसलिए कोई खास बात नही थी।

"थोडे दिनो के बाद युद्ध कुछ-कुछ गरमाने लगा था और हिटलर के अन्तरग लोगो मे यह कहा जा रहा था कि लडाई पाच साल के लिए है। खाने-पीने की चीज़ तथा लगभग सभी ज़रूरी चीज़ो मे राशन की पद्धति चालू कर दी गई थी। हिटलर ने फिर भी राईखस्ताग (ससद) मे अपने शान्ति-प्रस्ताव रखे। इन शान्ति-प्रस्तावो का लहजा वही था, जो हर नये हमले के अन्त मे होता था। तुमको याद होगा कि जब हिटलर ने १९३६ मे राईनलैण्ड मे प्रवेश किया था, तब से इस प्रकार के शाति-प्रस्ताव आते ही रहे। हिटलर ने इन नये शान्ति-प्रस्तावो में यह कहा कि ब्रिटेन और फ्रास पूर्वी यूरोप मे जर्मनी के लेबेन्सराऊम से बाहर रहे। किसीने इसपर कोई ध्यान नही दिया। अब यह हथकण्डा चलने वाला नही था।

"जर्मनी के अन्दर काफी असन्तोष है। सैनिक नेता तो यह समझते है कि इस प्रकार देश को युद्ध मे डालना ज्यादती है, पर जनता भी अपने ढग से अनिच्छा

दी। मैंने बताया कि मैं एक उपन्यासकार के नाते अन्तरग सामग्री खोज रहा हू, पर वे माननेवाले कब थे, वे बोले—तुम जर्मन हो, हो सकता है कि कुछ साहित्य से तुम्हारा सम्बन्ध भी हो, पर तुम यहूदी हो इसलिए तुम्हारी किसी बात पर हम विश्वास नही कर सकते। यहूदी होना ही सब दोषो का आगार होना है।

"मुझसे पूछा गया था कि ८ नवम्बर को हिटलर पर जो हमला हुआ था, उसके सम्बन्ध मे मै क्या जानता हू। हुआ यह कि हिटलर उस दिन म्युनखेन (म्युनिच) मे अपने दल-बल सहित भाषण देने के बाद निकल गए तो उसके बारह मिनट बाद भयकर धडाका हुआ, पर यह धडाका, जैसा कि मुझे जेल से बाहर ही पता लग गया था, न तो ब्रिटिश गुप्तचर विभाग द्वारा कराया हुआ था और न किसी पागल का कार्य था, बल्कि ऐसा लगता है कि हिटलर और हिमलर ने ही षड्यन्त्र करके यह धडाका किया, ताकि लोगो पर यह रोब बैठे कि हिटलर तथा उसके साथी दिव्य जीवन के अधिकारी हैं। कई बार नेता अपनी घटी हुई मर्यादा को बढाने के लिए जनता के सामने इस तरह का नाटक रचा करते है, इससे प्रमाणित किया जाता है कि वे स्वय ईश्वर नही, तो ईश्वर के दूत और राष्ट्र के ईश्वरप्रेरित कर्णधार है, अतएव विजय अनिवार्य है।

"मुझपर कोई भी प्रमाण नही है, पर मैं यहूदी हू, अतएव मुस्सादआलियाबेत का सदस्य हू, बस यही दो अभियोग है, जिनका मैं कोई उत्तर नही दे पा रहा हू। जब शरीर ने ही मेरे साथ धोखा किया तो मैं क्या करू? कोहेन और मैं लगभग एक ही सडक पर गिरफ्तार हो गए।

"कोहेन के पास रीबेनत्राप द्वारा लिखी हुई पुस्तक 'युद्ध के आरम्भ पर अभिलेख' पाई गई, जिसपर गेस्टापो बहुत ही रुष्ट है। अजीब बात है कि यह पुस्तक वैदेशिक मत्रालय का प्रकाशन है, और इसमे युद्ध के सम्बन्ध मे नात्सी दृष्टिकोण की व्याख्या की गई है, पर कोहेन को बार-बार पूछा जा रहा है—तुम्हे यह पुस्तक कहा से मिली? तुमने इस पुस्तक मे जहा-तहा लाल पेन्सिल से चिह्नित किया है, उनका क्या अर्थ है इत्यादि-इत्यादि।

"यह तो उसी प्रकार की बात हुई जैसे सोवियत रूस मे किसीके पास मार्क्स की रचना 'पूजी' पाई जाए और इसपर उसे सताया जाए। यदि देखा जाए तो यह रिबेनत्राप की पुस्तक हिटलर के 'माइनकाम्फ' (मेरा युद्ध) से ज्यादा महत्त्वपूर्ण है, क्योकि इसमे यह प्रमाणित करने की चेष्टा की गई है कि युद्ध की सारी

ज़िम्मेदारी मित्रपक्ष की है।

" कोहेन के पास पुस्तक की जो प्रति पाई गई है, उसमे एक जगह पेन्सिल से 'ल्यिगेन लार्ड' यानी 'झूठो का सरताज लार्ड' लिखा पाया गया है। सारे जर्मनी मे इस समय चर्चिल का यह उपनाम-सा हो गया है। चर्चिल के प्रति जर्मनो का यह विद्वेष 'ल्यिगेन लार्ड' के अतिरिक्त कई अद्भुत रूप भी ले चुका है। अखबारो मे चर्चिल का नाम डब्ल्यू० सी० कर के आता है। इसमे कोई बुराई नही है, पर मेरी तरह जो लोग जर्मन भाषा जर्मनो की तरह जानते हैं, उन्हे ज्ञात है कि हर परवाने पर डब्ल्यू० सी० लिखा होता है। पर कोहेन ने यह शब्द उस स्थल पर लिखा है, जहा यह लिखा है कि वरसाई सधिपत्र के बाद बर्तानिया ने ज़र्मनी के द्वारा पैरो पर खडे होने के हर शान्तिपूर्ण प्रयास का विरोध किया।

" गेस्टापो का यह कहना है कि यद्यपि 'ल्यिगेन लार्ड' चर्चिल का उपनाम है, पर इस मौके पर कोहेन ने उसका उपयोग रिबेनत्राप अर्थात् हिटलर अर्थात् पितृभूमि अर्थात् मानव जाति के विरुद्ध किया है। कोहेन के सम्बन्ध मे एक भयानक बात यह प्रमाणित हो गई है कि वह यहूदी होने के साथ ही अग्रेज है। तुम समझ ही रही होगी कि इसका अर्थ क्या है।

" कोहेन पर इन अभियोगो के अतिरिक्त यह भी अभियोग है कि वह विदेशी रेडियो प्रसारणो को सुनता रहा है। लडाई छिडते ही इस भयकर अपराध के लिए अच्छे-खासे ईसाई जर्मनो को भी लम्बी सज़ाए दी जा चुकी है। कोहेन बेचारा मास्को रेडियो सुनता हुआ पकडा गया। उसने कहा कि मैं एक मित्र देश का रेडियो सुन रहा था, फिनलैण्ड पर रूस ने जो आक्रमण किया, उस सम्बन्ध मे मुझे जानकारी लेनी थी, इसी कारण मैं मास्को रेडियो सुन रहा था, पर गेस्टापो का कहना है कि मित्र और शत्रु का कोई प्रश्न नही है। कानून के अनुसार सभी विदेशी राष्ट्रो का रेडियो वर्जित है। नही मालूम कि क्या होगा, पर मुझे कोई चिन्ता नही है।

' लगता है, सभी जर्मन बी० बी० सी० सुनते है। इसके कई प्रमाण हमे मिले है और कई कहानिया बन गई है। लुफ्टवाफे के एक कर्मचारी की मा को यह खबर मिली कि उसके बेटे का कुछ पता नही और शायद वह मर गया है, पर दो दिन बाद बी० बी० सी० ने जर्मन कैदियो की जो सूची प्रसारित की, उसके अनुसार उसका बेटा बन्दी था। अगले दिन ही उस महिला को मित्रो के आठ पत्र

मिले, जिनमे यह लिखा था कि उसका पुत्र जीवित है। मा ने आठो व्यक्तियो का नाम पुलिस को दे दिया और आठो विदेशी रेडियो सुनने के लिए गिरफ्तार कर लिए गए।

"इसी प्रकार एक युवक नौसेना अधिकारी के पिता-माता को भी इसी प्रकार की खबर दी गई थी। शोक-सन्तप्त मा-बाप ने इसपर गिरजे मे अन्त्येष्टि क्रिया की व्यवस्था की, पर श्राद्ध के दिन जिम बूचड से गोश्त खरीदा जाता था, उसने आकर गृह-स्वामी से चुपके से बात की, फिर मोदी आया, उसने भी बात की, तय हुआ कि श्राद्ध किया ज़रूर जाए, नही तो मा बाप पकडे जाते थे। श्राद्ध के बाद घर लौट कर अन्तरग रिश्तेदारो ने शैम्पेन की बोतलो से शोक मनाया।

"यही बहुत बडी बात रही कि बडा दिन जेल के बाहर मनाया गया, नया साल भी बाहर ही बीता। हिटलर ने नये साल के लिए जर्मन जाति को बहुत बडी-बडी आशाए दिलाईं, पर जर्मनो ने जिस बुरी तरह उस रात को शराब पी (यद्यपि हिमलर ने एक बजे रात को ही सारे रेस्टोरेन्ट नियमपूर्वक बन्द करवा दिए), उससे जाहिर है कि उन्होने हिटलर के नव वर्ष के सन्देश को विशेष महत्त्व नही दिया।

"उस दिन रात को एक बहुत मज़ेदार घटना हुई थी। मैने एक प्रसिद्ध रेस्टोरेंट में पुराने वर्ष को विदाई दी, इसके बाद एक अन्य रेस्टोरेण्ट मे जाकर एक घटे बैठा। लगभग दो बजे कूरफिरेस्तनदाम मे मैं एक टैक्सी मे कूद गया, साथ ही उसमे दूसरे दरवाज़े से एक जर्मन, उसकी पत्नी और बारह साल की लडकी कूद आई और यह तय हुआ कि हम किराया आधा-आधा देंगे। अभी यह बातचीत हो ही रही थी कि एक सैनिक तथा उसके साथ एक लडकी ड्राइवर के बाये वाले दरवाजे से घुस पडे।

"हम लोग थोडी ही दूर गए थे कि एक पुलिसवाले ने हमारी टैक्सी रोकी और कहा कि इस तरह बेकार मे पैट्रोल जलाना मना है। तब हम सब लोगो ने मिलकर समझाया कि बारह साल की लडकी बीमार है, इसपर पुलिसवाले ने हमको चलने दिया। हम लोग थोडी ही दूर चले होगे कि उस सामने की सीट वाले सैनिक को दौरा-सा आया। वह ड्राइवर से बोला कि गाडी रोककर मुझे उतार दो, तब उसके साथ वाली लडकी चीखने लगी, पर ड्राइवर शायद इतनी अधिक शराब पीए हुए था कि वह गाडी चलाता ही रहा। थोड़ी देर मे सामने

की सीट का वातावरण पीछे भी फैल गया और वह बच्ची भी चीखने लगी। फिर उसकी मा चिल्लाने लगी और इसके बाद उसका बाप भी चिल्लाने लगा। शायद अब शराबी ड्राइवर के लिए अति हो चुकी थी, उसने गाडी खडी कर दी और दोनो पार्टिया उतर गईं और आपस मे लडने लगी कि तुमने मेरा साल बिगाड दिया। जब मैंने यह झगडा बढते देखा, तो मैंने ड्राइवर को इशारा किया और किसी तरह हमारी जान बची।[१]

"इस प्रकार मेरा नया साल शुरू हुआ था। ऊपर से जर्मन बिल्कुल शान्त बने हैं, पर धीरे-धीरे वास्तविकता का अन्धकार उनके आगनो तथा हृदयो मे उतर रहा है। हिटलरी प्रचार की कुप्पी से यह अन्धकार रुक नही रहा है, धुआ ही बढ रहा है।

"मैंने अपने को सब तरह से तैयार रखा था, पर यह कभी नही सोचा था कि मुझे यहूदी समझा जाएगा। यहूदी समझा जाना उसी प्रकार से है, जैसे शत्रु पक्ष का सदस्य होना। डा० ले नामक सरकारी प्रतिनिधि ने यह स्पष्ट कह दिया है कि हमारा यह युद्ध केवल पूजीवादी ब्रिटिश या फ्रेंच के विरुद्ध नही है, बल्कि यहूदियो के विरुद्ध धर्मयुद्ध है, हमारे लिए इग्लैण्ड और यहूदी सामान्य शत्रु हैं। स्मरण रहे कि यह डा० ले वही सरकारी ठप्पेवाले मनीषी है, जिनका कहना है कि जो कुछ फ्यूरेर कहते है, वही सत्य है। ऐसी हालत मे हम दोनो का ईश्वर ही मालिक है।

"मैं जिस कार्य के लिए यहा आया था, उस सम्बन्ध मे बहुत थोडा कर पाया, हा, मैं जर्मन प्रचार-कार्य, जर्मनो की मनोवृत्ति तथा जर्मनो की गिरती हुई आर्थिक पद्धति के सम्बन्ध मे एक विशेषज्ञ बन गया हू। रूस के साथ जर्मनी के गठबन्धन से बहुत ही अजीब परिस्थिति पैदा हो गई है। यह मित्रता दोनो पक्षो के लिए साप छुछून्दर की गति हो गई है, न तो छोडते ही बनता है और न निगलते ही। जनता को वर्षो से यह बताया गया था कि रूसी और जर्मन एक देवासुर सग्राम मे लगे हुए है, पर अब बिल्कुल ही दूसरा राग अलापना पड रहा है।

"स्पेन मे जर्मनो ने रूसियो के विरुद्ध लडाई की। यहा यह मालूम हुआ कि टोमा नामक एक जर्मन उच्च सैनिक अधिकारी स्पेन मे लडने के लिए भेजा गया था। उसके अनुसार केवल छ सौ सैनिक ही स्पेन मे भेजे गए थे। अवश्य इसमे

१ 'बर्लिन डायरी', पृष्ठ २०२

प्रशासन तथा हवाबाजो को नही गिना गया है। इन लोगो ने फ्रैको की सेना को प्रशिक्षित किया। टोमा के अनुसार रूस की तरफ से जो व्यक्ति भेजे गए थे, वे बाद को मार्शल कोनियेफ नाम से मशहूर हुए।[1]

" इस सम्बन्ध मे एक अजीब बात और भी ज्ञात हुई कि रूसियो ने स्पेन के युद्ध मे महज विचारधारागत उद्देश्य से भाग नही लिया था, बल्कि वे नये अस्त्रो तथा रणनीति का रिहर्सल और परख करना चाहते थे। असली लडाई तो स्पेन मे ही ठन चुकी थी, पर विलियम की तरह कितने लोगो ने इस महान तथ्य को समझा था? मुझे भी यह जानकर इसलिए खुशी हुई कि मैं जिन्दा हू और मैंने वह लडाई जारी रखी है।

" कुछ भी हो जर्मनो को रूसियो को मित्र रूप मे देखने मे काफी दिक्कत हो रही है, इसलिए सरकारी तौर पर कई तरह के मनोवैज्ञानिक अस्त्र काम मे लाए जा रहे हैं जैसे स्लोवाकिया और बोहमिया से जो आटा-मक्खन आदि आ रहा है, उनके पैकटो पर सरकारी आज्ञा से 'रूस मे प्रस्तुत' लिखा जा रहा है। इस प्रकार रूस को मित्र-रूप मे चित्रित करने के प्रयास के साथ-साथ सबको यह शिक्षा दी जा रही है कि असली शत्रु तो इग्लैण्ड है। कहते हैं, स्कूलो मे शिक्षक 'हाइल हिटलर' (हिटलर की जय) के साथ-साथ अब एक वाक्याश और कहने लगे हैं—'गोट स्ट्राफे इग्लैण्ड' (भगवान इग्लैण्ड को सजा दे)—इसपर छात्रो को एक स्वर मे कहना पडता है—ईश्वर सजा देगा।

" मैं कुछ दिनो से समझ रहा था कि लडाई लम्बी चलेगी। यह तो सभी समझ चुके है, पर इसकी तैयारी के लिए सरकारी तौर पर हिटलर के गुर्गे और भाडे के दार्शनिक, जो नार्डिक जातियो की श्रेष्ठता और पवित्रता का गीत गाते नही अघाते, वे स्वीकृत सदाचार के दायरे से बाहर निकल जाने की सलाह देंगे। अब यह खुल्लमखुल्ला कहा जा रहा है कि आर्य जर्मन स्त्रियो तथा तरुणियो को चाहिए कि वे अधिक से अधिक गर्भ धारण करें। यह पितृभूमि के प्रति महान कर्तव्य है। ऐसा करते हुए वे विवाह की रेखा लाघ जाए, तो कोई हर्ज नही, बशर्ते कि आर्यो मे ही सम्बन्ध हो। हिमलर की तरफ से तो यहा तक घोषणा हो चुकी कि आर्य रक्त के सब वैध और अवैध बच्चो का अभिभावक राष्ट्र बनेगा और इसमे किसी तरह का भेदभाव न बरता जाएगा।

१. 'दि जर्मन जनरल्स टाक', पृष्ठ ७८

"क्या इग्लैण्ड मे कोई ऐसी बात सोच भी सकता है ? असली बात यो है कि हिटलर पूरे जोश से लड नही पा रहा है, पर यदि उसे अपने को बचाना है तो लडना पडेगा। मैं समझ रहा था कि माजिनो रेखा पर लडाई नही होगी। होगी, दूसरे ढग से। इसीलिए मैं इस नतीजे पर पहुचा कि हिटलर बेल्जियम या हालैड अथवा दोनो पर हमला करेगा। पर मुझे भी स्वप्न मे यह ख्याल नही था कि हमला डेनमार्क और नार्वे पर होगा। जर्मनी मेरे लिए बहुत गर्म हो गया था, यद्यपि किसीको मुझपर और कुछ होने का शक नही हुआ। यदि मैं एक बार भी शक करता कि मेरे शरीर की बनावट ऐसी है कि मुझे यहूदी समझा जा सकता है, तो मैं अवश्य भाग निकलता।

"पोलैड मे यहूदियो पर अत्याचार शुरू हो गया था। सभी क्षेत्रो, यहा तक कि गावो से यहूदी पकडकर आ रहे थे। उन्हे फासी पर चढाया जा रहा था और गोलियो का शिकार बनाया जा रहा था। एक जाल-सा डालकर सारे यहूदी पकडे जा रहे थे। यहूदियो को यह हुक्म दिया गया कि वे अपनी बाहो पर दाऊद के सितारे की एक सफेद पट्टी बाधे। कुछ यहूदी तो भाग निकले, कुछ ने तो ईसाई परिवारो मे ईसाई की तरह रहना शुरू किया, पर बहुत कम ईसाई परिवार ही इस प्रकार का जोखिम उठाने के लिए तैयार हुए।

"मैं सारी परिस्थितियो का अध्ययन करने के बाद कोपेनहेगेन पहुच गया, पर वहा मैं अभी दो दिन भी नही रह पाया था कि देखता क्या हू कि हिटलर ने एकदम से डेनमार्क पर कब्जा कर लिया। मैंने फिर भी सोचा कि जर्मन होने के नाते मुझे कोई खतरा नही है, पर मुझे क्या पता था कि वहा का हर जर्मन गिना हुआ था। मैं जर्मन तो माना गया, पर उस गिनती मे नही था, इसलिए मैं गिरफ्तार हो गया। डेनमार्क और नार्वे पर हिटलर ने 'उनकी स्वतन्त्रता की रक्षा के लिए' हमला किया था।

"गिरफ्तार तो मैं केवल सदिग्ध जर्मन के रूप मे हुआ, पर बाद को शरीर ने मुझे यहूदी प्रमाणित किया। खैरियत यह है कि कोपेनहेगेन से मैंने अपने मित्रो को सारी बाते लिख दी थी, फिर भी तुम यह पत्र उन्हे दे देना।

"क्या विलियम की तरह मेरी भी गति होगी ? मुझे कोई डर नही है, पर सच कहू तो यहूदी के रूप मे मारा जाना मुझे पसन्द नही है। यह एक अजीब बात है कि मृत्यु किसी भी रूप मे हो एक ही है। पर अपनी तरजीह बता दी। मैं जानता

हू कि यह तरजीह बहुत अयौक्तिक है, पर जो बात है सो है। देखा जाए, ईश्वर की क्या इच्छा है!"

एलिस ने यह पत्र कई बार पढा। वह समझ गई कि कोहेन और गार्डन मृत्यु-सकट मे हैं। वह चाहती थी कि उनके लिए कुछ करे, पर कुछ कर नही सकती थी। जब स्पेन मे विलियम को ले जाकर गोली मारनेवाली टुकडी के सामने खडा कर दिया था तो गार्डन उस समय क्या कर पाया था? अन्ततोगत्वा कोई किसी-का साथ नही दे सकता। सब केवल अपने-अपने क्षेत्र मे ही लडाई लड सकते है। यही एकमात्र तरीका है। न सबका एक मोर्चा हो सकता है, न सब एक हथियार से ही लड सकते हैं। अलग-अलग मोर्चा और अलग-अलग हथियार।

जिसका पुत्र कैद है, उस वृद्ध पर क्या बीत रहा होगा। खैर, गार्डन ने तो जान-बूझकर अपने को जोखिम मे डाला था, विलियम के साथ गोली मारनेवाली टुकडी के सामने खडे होकर गोली न खा पाने के प्रायश्चित्त या क्षतिपूर्ति मे वह जान-बूझकर उसी लडाई को जारी रखने के लिए आग मे कूद पडा था, पर कोहेन? कोहेन तो केवल यहूदियो को फिलिस्तीन भेजने गया था। वह युद्ध-प्रचार करने नही गया था, बल्कि पलायन-प्रचार करने गया था।

एलिस इन्ही विचारो मे खोई हुई बह रही थी कि उसे एकाएक स्मरण हो आया कि पत्र की एकमात्र अधिकारिणी वह नही है, बल्कि उसे स्काटलैड यार्ड के विशेषज्ञो के हवाले करना है, शायद वे इसका कुछ अधिक अर्थ निकालकर अधिक उपयोग कर सके। कम से कम इसका कुछ उपयोग तो हो सकेगा। उसने टेलीफोन से खबर कर दी, तो उधर से जब असली अधिकारी मिला, तो उसने कहा—हा, मैं आपके पास आ ही रहा था, मैं अभी आता हू।

एलिस को पहले तो आश्चर्य हुआ, पर फौरन ही यह आश्चर्य खुशी मे परिणत हो गया। इस 'आ ही रहा था' का बहुत बडा अर्थ है। इसका अर्थ है कि यदि शत्रु जागरूक है, तो मित्र भी कम जागरूक नही है। कहा, न जाने किस जरिये से, चोरी से यह पत्र आया और उसका पता स्काटलैड यार्ड को लग गया।

थोडी ही देर मे एक युवक अधिकारी आया। उसने पत्र लेते हुए कहा—दूसरा पत्र कहा है जो अहारन के लिए था? वह तो हमे अभी तक नही मिला। दोनो पत्र एकसाथ ही आए थे।

एलिस ने पूरी बात बता दी और गवाहो के रूप मे दो खाली बोतलो की ओर

इगित किया। सब कुछ सुनकर और चाय तक पीने से इन्कार कर वह युवक पत्र लेकर चला गया, कह गया—'मुस्सादश्रालियाबेत' से हमे कोई डर नही है, पर वह जिस नीति को लेकर चल रहा है, यह हमारी सरकारी नीति के विरुद्ध है। हम कई कारणो से फिलिस्तीन मे यहूदियो की सख्या बढाना नही चाहते।

एलिस को स्मरण हो आया कि अभी-अभी जो बुड्ढा अहारन गया, उसका तो यही रोना था कि यहूदियो के लिए ससार मे कोई स्थान नही है। सुरक्षा के जबडे की तरह निरन्तर बढते हुए नात्सी साम्राज्य मे, और केवल नात्सी क्यो, फासिस्ट साम्राज्य मे यहूदियो के लिए कोई स्थान नही था। रूस मे अब यहूदियो के विरुद्ध प्रोग्रोम (दगे) अतीत की कहानी बन गए थे, पर वहा यहूदियो को मार्क्सवाद की घुटी पिलाकर समाजवादी बनाया जा रहा था, इधर ब्रिटिश साम्राज्य मे भी उनका कोई स्थान नही था।

पोलैड पर नात्सियो का साम्राज्य स्थापित होने के साथ वहा के घेट्टो (गन्दी बस्तियो) मे अछूतो की तरह रहनेवाले यहूदियो के सामने फिर एक बार वही नज़ारा आ गया था, जब दो हज़ार वर्ष पहले यरूशलम मे बेबिलोनियनो तथा रोमनो के द्वारा उनके मन्दिर तोडे गए थे। वही से राष्ट्र के रूप मे यहूदियो का बिखरना शुरू हुआ था, जिसकी स्मृति मे अब भी यहूदी प्रति वर्ष 'तिसा बआब' त्योहार मनाते थे।

पर अहारन ने अपना पत्र पुलिस को दिया क्यो नही ? यह भी तो गलत बात थी। बर्तानिया मे तो यहूदियो के साथ किसी तरह का भेदभाव नही है, इस कारण एक अग्रेज़ यहूदी के नाते बूढे का यह कर्तव्य था कि वह पत्र स्काटलैड यार्ड मे भेज देता, साथ ही यह भी बताता कि किस साधन से यह पत्र आया है, क्योकि शायद उस साधन से युद्ध का कुछ अन्य काम होता।

एलिस बैठी-बैठी यही सब सोच रही थी कि उसने चौककर घडी की तरफ देखा, तो मा के दवा पीने का समय फिर आ गया था। वह जल्दी से उठी और उसने मा का दवा देनी चाही, पर मा ने कहा—ठहरो !

मा की आखो मे अब वह शून्य दृष्टि नही थी। वह बोली—कौन आया था ?

एलिस ने कहा—दवा पी लो, फिर बताऊगी।

तब मा ने दवा पी ली और उत्कर्ण होकर प्रतीक्षा करने लगी। एलिस ने सक्षेप मे बूढे अहारन के आने से लेकर स्काटलैड यार्ड के युवक अधिकारी तक,

सब बातें सुनाईं। मा ने सब कुछ सुनकर चुप्पी साध ली, जैसे वह भीतर ही भीतर कुछ टटोल रही हो, किसी चीज़ को खोज रही हो जो खो गई है।

एलिस उसका चेहरा देखती रही, जैसे मछली मारनेवाला अपने सूत से बधे हुए शोले की तरह तैरनेवाली चीज़ को देखता रहता है। थोडी ही देर मे मा बोली—रक्त की प्यासी यह धरती कितने बलिदान लेगी, कुछ समझ मे नही आता ! क्या मनुष्य जाति कभी उस मज़िल पर पहुचेगी, जहा खडी होकर वह कह सके कि अब बलिदानो की ज़रूरत नही है ?

एलिस समझ गई कि मा को पिता की याद आ रही है, और अब यह चिन्तन और जुगाली घण्टो चलेगी। जब चुप्पी चलती है, तो कई दिन निकल जाते हैं, और जब बोली का फौवारा जारी हो जाता है, तो वह फिर बहने ही लगता है।

खैरियत यह है कि उसी समय टेलीफोन आ गया। उधर से स्काटलैंड यार्ड का वही युवक बोल रहा था—माफ कीजिए, श्री अहारन की चिट्ठी अभी मिली, वे स्वय दे गए। माफी माग रहे थे कि पुत्रशोक के कारण दिमाग ठीक से काम नही कर पा रहा है।

एलिस ने पहले से कुछ सोचा नही था, पर वह अनायास ही बोल पडी—क्या आपके एजेण्ट उनको छुडाने के लिए कुछ नही करेंगे ?

युवक हसा। झेंप की गम्भीरता-भरी हसी। बोला—हम तो सारे ससार को नात्सी अत्याचारो से मुक्त करने की चेष्टा कर रहे हैं।—कहकर उसने किसी प्रकार के शिष्टाचार के बिना टेलीफोन खडाक से बन्द कर दिया।

१७

मुश्ताक चाहता था कि रज़िया उर्फ सियामादेवी से छुटकारा हो, पर दोनो का कुछ ऐसा जोडा बन गया था कि न वह उसे छोड पाता था, न वह उसे छोड पाती थी। मुश्ताक ने स्वयं ही तो उसे बढाया था। कोठे पर बैठनेवाली टकैहा औरत को उसने शहीदे-आज़म की बीवी बना दिया था, पर उस स्त्री मे भी कुछ दुष्प्रतिभा थी, जिसके कारण वह जब भी किसी सभा मे बोल देती थी, तो चारो तरफ वाह-वाही होने लगती थी। मुश्ताक ने कई बार चाहा कि वह कोई स्टट करे और उससे आगे निकल जाए, पर उसके मुकाबले मे वह कभी सफल नही

रहा। लोग उससे इस प्रकार बर्ताव करते थे मानो सियामादेवी का देवर होना ही उसका सबसे बडा पुरुषार्थ है। शहीदे-आज़म का भाई होना और लीगी एम० एल० ए० होना जैसे कोई महत्त्व का ही नही है।

लडाई जारी थी। हिटलर की जीत पर जीत हो रही थी। हिन्दुओ के नेता गाधी हर समय यही कह रहे थे कि मैं ब्रिटिश शासको के साथ समझौता करने के लिए तैयार हू, पर साथ ही वे जाने कैसी-कैसी बाते कर रहे थे। हाल ही मे गाधी ने 'क्या यह युद्ध है ?' नाम से एक लेख लिखा था जिसमे उन्होने बताया था कि भारत मे ब्रिटिश साम्राज्य के चार स्तम्भ हैं, जो बडे धैर्य के साथ निर्मित हुए हैं। ये स्तम्भ हैं—गोरो के हित, सेना, रजवाडे और साम्प्रदायिक विभाजन।

अन्तिम तीन का उद्देश्य प्रथम को सुरक्षित रखना था, इसलिए उस लेख मे यह कहा गया था कि इन चारो स्तम्भो को ढहा लिया जाए, तभी यह माना जाएगा कि साम्राज्य समाप्त हुआ या साम्राज्यवादी मनोवृत्ति का अन्त हुआ।

मुश्ताक को तो इस लेख मे कुछ तत्त्व नही दिखाई पडा था, यद्यपि जिन्ना ने इसपर यह लिखा था कि यदि गाधी तर्क पर चलते है तो उन्हे चाहिए कि वे केवल यह माग रखें कि भारत से ब्रिटिश सगीन हटा लिया जाए, ताकि यहा के लोग पूर्ण स्वतन्त्रता मे यह तय कर सके कि वे भारत मे आत्मनिर्णय की कौन-सी पद्धति को लागू करना चाहते है।

बहुत सीधी-सादी बात थी, मुश्ताक ने इसपर इतना ही कहा था कि गाधी एक ही सास मे भौंकते और खोकते हैं। अगर उनमे दम है तो आन्दोलन चलाएं। धमकिया न दें। इसपर सभा मे थोडी-बहुत तालिया बजी थी, पर जब सियामा-देवी उठी तो उसने अपने हमले मे दूसरी ही बात कह डाली, जिससे तालियो की गडगडाहट खत्म होने मे नही आती थी।

वह बोली—गाधी गोल-मोल बाते इसलिए कहता है कि वह जानता है कि उसकी सारी फरफराहट और लीडरी इस वजह से है कि अग्रेज़ यहा पर है। अगर अग्रेज न रहे और साथ ही उसकी फौज न रहे, तो यहा राज्य उसी तबके का होगा, जो सबसे बहादुर है, यानी मुसलमानो का राज्य होगा। कायरो का राज्य न कभी हुआ न होगा। सियारो की तादाद ज्यादा हो सकती है, पर जगल मे शेर का ही राज्य होता है।

सियामादेवी ने लखनऊ की लीगी जनता को ललकारते हुए कहा—जब

अनार्यों के इस देश मे थोडे-से आर्य आए थे, तो उनकी तादाद कितनी थी ? फिर जब महमूद गजनवी आए, तो उनकी फौज कितनी बडी थी ? फिर भी उन्होने बार-बार हमला किया और यहा के लोगो के छक्के छुडा दिए। इसके बाद जब बाबर आए, तो उनके साथ कितने मोमिन थे ? तादाद से कुछ नही होता, असली बात है बहादुरी, लगन, शहीद बनाने और बनने के लिए तैयारी और मुस्तैदी !

इसपर तालियो की गडगडाहट के बीच अल्लाहो' अकबर के गगनभेदी नारे लगे। वह बोली—अगर गाधी मे कोई सच्चाई है तो उसे चाहिए कि वह चार खम्भो मे से वह खम्भा हटवा ले, जो असली है, यानी फौज। फौज हट जाए तो फिर क्या होगा ?—कहकर उसने ललकार-भरी आवाज मे अपने चेहरे पर आए हुए बालो के बादलो को हटाकर मानो सत्य का साक्षात्कार कराकर पूरा चेहरा दिखाते हुए कहा—मैं अपनी तरफ से कुछ नही बताऊगी। आप ही बताइए कि क्या होगा ?

इसपर दो-तीन मिनट तक अल्लाहो-अकबर के हृदय दहलानेवाले नारे लगते रहे। वह खडी-खडी सत्य और सुन्दर की साक्षात् प्रतिमूर्ति की तरह धीरे-धीरे मुस्कराती रही, फिर तडपकर बोली—होगा वही जो होना चाहिए ! बहुत सीधी-सादी बात है। अंग्रेजो ने मुसलमानो से राज्य लिया, इसलिए इसाफ का तकाजा यह है कि राज्य उन्हीको वापस मिले, पर गान्धी यह नही चाहता, इसीलिए वह तमाम तरह के हीले और बहाने कर रहा है, कभी पूरी बात नही कहता। जिन्ना साहब ने इसीको अपने बयान मे साफ किया है, और उन्होने यही कहा है कि अगर गाधी ईमानदार हैं, तो वे अंग्रेजो से कहे कि वे यहा से बराय मेहरबानी तशरीफ ले जाए।

सियामादेवी का व्याख्यान इतना सफल रहा कि मुश्ताक उसके मुकाबले मे अपने को बहुत क्षुद्र अनुभव करने लगा। अब्दुल्ला के विरुद्ध पुलिस मे रिपोर्ट भी लिखाई थी, पर उसका बाल बाका नही हुआ। होता भी कैसे, दो चार गोदामो में तलाशी हुई, तो वहा से प्लास या पटरी उखाडने के औजार बिलकुल नही मिले और जो मिले, यानी जो सामान इस प्रकार का मिला भी, जिसका तार काटने और पटरी उखाडने से कोई सम्बन्ध जोडा जा सकता था, वह उन-उन गोदामो में दस साल पहले से, यानी लडाई छिडने के पहले से मौजूद था।

यहा भी अब्दुल्ला ने वही बेजा हरकत की कि व्याख्यानो के बाद वह रजिया

को मलीहाबाद मे अपना घर दिखाने के बहाने उडा ले गया था। कौन नही जानता कि कम्मू मिया मामूली शेख थे, पर अब उनके खानदान वाले मूछें रखते हैं और अपने को मलीहाबादी पठान बताते है, क्योकि रुपयो के बल पर वे अपने घर कई पठानिया ले आए थे। जिन लोगो ने अपनी लडकिया दी थी, वे भला कैसे मानते कि उन्होने लालच मे आकर अपनी लडकिया दी। इसलिए वे भी कहते थे कि कम्मू मिया के परदादे रोटी-रोजी की तलाश मे कानपुर चले गए थे। असल मे वे यही के पठान हैं।

इस तरह अब्दुल्ला बराबर एक काटे की तरह चुभ और खटक रहा था, जिसे किसी तरह निकाले नही बनता था। उसका मन सम्पूर्ण रूप से इन्ही प्रश्नो मे उलझा हुआ था। रजिया एक मामूली वेश्या थी, उससे किसी प्रकार के सतीत्व क्या, शराफत की भी आशा करना दुराशा-मात्र था। फिर भी जब उसे लोगो के सामने शहीदे-आजम की बीवी करके परिचित कराया जाता था, तो कुछ तो ख्याल रखना चाहिए। अजीब हालत थी। यदि वह उसकी असलियत खोल देता, तो एक तो अपने को झूठा कहना पडता, और दूसरे अपनी ही हेठी होती। लोग तो यह समझते नही कि प्रचार-कार्य की दृष्टि से और लीग को बल पहुचाने के लिए यह सारा प्रपच रचा गया था, वे यही कहेगे कि रुपयो के लिए यह सब हुआ था।

एक तरीका यह था कि रजिया को सभाओ मे बुलाना बन्द कर देते। एक दफे बन्द कर दिया भी, पर यह अब्दुल्ला जहर की पुडिया है। इसने उसे मुश्ताक के जरिये नहीं, बल्कि सीधा निमन्त्रण दिलवा दिया। ऐसा करना तो इसके बायें हाथ का खेल है, क्योकि कम्मू मिया को धन्यवाद, कि उसकी शाखाए सर्वत्र मौजूद हैं, और जहा नहीं भी मौजूद है वहा व्यापारिक सम्बन्ध है।

रामगढ मे जहा अन्तिम काग्रेस हुई थी, वहा न तो लीग की कोई कान्फ्रेस हुई, और न और कोई बात, पर अब्दुल्ला ने उसे राची मे निमन्त्रण दिला दिया। कान्फ्रेस कराते क्या लगता है। वहा से, यह तो बाद को मालूम हुआ, रजिया और अब्दुल्ला चुपके-चुपके काग्रेस मे पहुच गए और वहा तमाशा देखते रहे। सुनकर मुश्ताक भी उनके पीछे-पीछे रामगढ पहुचा, पर वहा उस भयकर भीड मे भला क्या पता लगता!

काग्रेस जैसी हुई, सो हुई, वहा सुभाष बोस और सहजानन्द के नेतृत्व मे जो समझौता विरोधी सम्मेलन हुआ, वह किसी तरह काग्रेस से कम नही था, बल्कि

उसमे भीड ज्यादा उमडी पडती थी। मुश्ताक भीड देखने नही गया था। न उसको काग्रेस मे ही कोई दिलचस्पी थी, व समझौता-विरोधी सम्मेलन मे। हा, सुभाष बोस मे कुछ दिलचस्पी थी, पर वह भी हिन्दू ही था, इस कारण कहा तक भला होता! बस, भलाई सिर्फ इतनी ही थी कि वह गाधी को नाको चने चबवा रहा था, पर जिस तरह यह विरोध हो रहा था, वह लीग के किसी मतलब का नही था। सुभाष और स्वामी सहजानन्द तो देश को सग्राम की ओर समेटना चाहते थे। सग्राम का मकसद वही था—हिन्दू राज्य! भारत मे लोकतन्त्र का कोई अर्थ नही होता, क्योकि लोकतन्त्र का अर्थ है—हिन्दू राज्य!

मुश्ताक तो अब्दुल्ला को खोजने के लिए ही गया था। पर वहा अब्दुल्ला का कहीं पता नही मिला। अब्दुल्ला के पास मोटर थी, और रुपये थे, चाहे जितने खर्च करता, पर मुश्ताक को तो बसो और पावो का ही सहारा था, क्योकि इधर उन दिनों और कोई सवारी नही मिली। जो सवारी रही भी होगी, उसे काग्रेस तथा समझौता-विरोधी सम्मेलन के लोगो ने अपने लिए रिज़र्व कर लिया होगा।

मुश्ताक बैठे-बैठे यही सब सोच रहा था। उसका मन कडवा हो रहा था कि एक नौजवान पहुचा, जैसेकि तकरीरो के बाद लोग हमेशा पहुचते है। मुश्ताक ने अस्सलामालेकुम के जवाब मे वालेकुमअस्सलाम कहकर चेहरा कडा बना लिया, पर वह युवक भला इतने से कहा माननेवाला था।

उसने प्रश्न दे मारा—मैंने सुना कि आप रामगढ मे तशरीफ ले गए थे। कुछ बताइए न कैसा क्या रहा!

मुश्ताक को बहुत बुरा लगा कि वह तो अपनी व्यथा से कराह रहा है, भीतर ही भीतर कलेजा कबाब हुआ जा रहा है और इसने आकर बेतुका प्रसग छेड दिया—रामगढ मे क्या हुआ, जिसका सिर न पैर! आखिर हम रामगढ गए, तो इसमे कौन-सी बात है! लाखो लोग गए। जो कुछ हुआ सो अखबारो मे छपा, मै कोई विशेष सवाददाता थोडे ही हू। बोला—जी हा, अपने को तो सभी तरह की जानकारी रखनी पडती है।

युवक यह नही समझा कि मुश्ताक टालना चाहता है। उसने कहा—वहा पर हिन्दू राज्य की कोई बात हुई?—कहकर उसने आखे विस्फारित करके मुश्ताक की ओर देखा मानो उसके उत्तर पर बहुत कुछ निर्भर है। बोला—आपने कुछ सुना?

मुश्ताक ने कहा—ऐसी बातें खुलेआम थोडे ही की जाती है। जो कुछ वहा हुआ सो अखबार मे छपा। असली बातें तो छिपकर की जाती है।

पर युवक बडा जिद्दी था, बोला—आप तो भेस बदलकर गए होगे। आपने जरूर कुछ सुना होगा।

उसी समय दो चार भक्त किस्म के श्रोता और आ गए। पहले से जो युवक बैठा था, उसने दात निपोरकर सर्वज्ञता के लहजे मे कहा—मैं इनसे रामगढ काग्रेस की असली खबरें पूछ रहा हू। आप भेस बदलकर काग्रेस और ऐण्टी-काम्प्रॉमाइज़ कान्फ्रेस मे गए थे।

सच्ची बात तो यो थी कि यद्यपि मुश्ताक लगभग तीन दिन रामगढ मे रहा, और वह हर समय भीड मे ही रहा, पर उसने न कुछ विशेष सुना, न कुछ विशेष देखा, क्योकि उसका ध्यान तो अब्दुल्ला और रज़िया को खोजने मे केन्द्रित था। वह कही ज्यादा देर ठहरता ही नही था, पर जब उसने देखा कि इतने लोग उसकी बातें सुनने के लिए लालायित हैं, और स्टट के तीर छोडने का अच्छा मौका है, तो वह अपना निजी दु ख एक हद तक भूल गया और रहस्यमय तरीके से बोला—सब बातें खुलेआम बताने लायक नही होती। सियासत का तकाज़ा कुछ और होता है।

सब लोग मुश्ताक के और पास आ गए। वे समझ गए कि बताने को बहुत कुछ है, पर मुश्ताक साहब सारी बात बताना नही चाहते। पहले वाले युवक ने सरलता के साथ आखे फाडकर कहा—कहिए तो दरवाजा बन्द कर दू? यहा सब अपने ही आदमी हैं।—कहकर उसने उपस्थित सब लोगो को फिर से परीक्षण की दृष्टि से देखा और बोला—सब पुराने लीगी हैं।

मुश्ताक सोच रहा था कि क्या कहा जाए, पर कुछ सूझ नहीं रहा था। एका-एक वह बोल पडा—सब ड्रामा था!—कहकर वह मुस्कराया।

—ड्रामा कैसा?

—ड्रामा भी दोहरा था। एक तो अग्रेज़ो को धोखा देना, और एक अवाम को!

उपस्थित श्रोता कुछ आशाए लेकर आए थे, पर यह आशा लेकर नही आए थे कि इतनी बडी बात सुनने को मिलेगी कि रामगढ काग्रेस क्या थी, कि महज़ ड्रामा थी। मुश्ताक ने आखो मे रहस्य समोकर कहा—पहला ड्रामा तो यह था

कि सरकार को यह ख्याल दिलाया गया कि काग्रेस तहरीक शुरू करना ही चाहती है। गाधी ने जो तकरीर की, उसका कुछ भी मतलब निकाला जा सकता है। ये लोग मुसलमानो की तरह बहादुर नही है, पर कुदरत ने इसीलिए चालाकी दे रखी है जिससे ये कई दफा बाज़ी मार ले जाते हैं। गाधी ने, जैसाकि आपने अखबारो मे पढा होगा—अपनी तकरीर मे यह कहा कि लाखो की तादाद मे काग्रेस के मेम्बर है। आखिर इस बात को कहने का मतलब क्या था? यही न, कि सरकार को डराया जाए। इसके अलावा गाधी ने वही पुराना राग अलाप दिया कि मैं १६१८ तक सरकारपरस्त रहा, मैं इतना सरकारपरस्त था कि मैंने लार्ड चेम्सफोर्ड को लिखा कि एम्पायर की तरफ मेरी वफादारी उसी दर्जे तक है, जैसे एक अग्रेज़ की है। फिर उसने वही ढोग-भरी बाते शुरू की, कि मेरे नज़दीक हिन्दू-मुसलमान, पारसी, हरिजन सब एक है। इन बातो को कहने का मकसद यह था कि सब हिन्दू राज की बात भूल जाए और उसका साथ दें। क्लाइमेक्स के तौर पर गाधी ने यह कहा कि मैं तो समझौते का ही पुतला हू, अगर ज़रूरत होगी तो मैं सौ बार वायसराय के पास दौडूगा। यह सब तरकीब थी, कि फिर से वज़ारते वापस मिल जाए और मुसलमानो को सताने का प्रोग्राम फिर चालू हो जाए।

पहले वाला युवक बीच मे बोल उठा—यह सब तो हमने अखबार मे पढा है, पर ड्रामा क्या है, यह समझ मे नही आया।—कहकर उसने अपने वक्तव्य के समर्थन की आशा से साथियो को देखा।

मुश्ताक नाराज़ हो गया, पर नाराज़गी छिपाते हुए बोला—ड्रामा यह था कि लडने की कोई मशा नही थी, और दिखाया कि लडने को तैयार है। पैतरे इस तरह के थे मानो अभी-अभी लड पडेगे, पर यह तमाशा करते-करते भी लगभग एक साल होने को आया। उधर सुभाष बोस और सहजानन्द से कह दिया कि तुम लोग एक ऐसी काफ्रेस करो, जिससे यह ज़ाहिर हो कि लाखो आदमी सत्याग्रह करने को तैयार है। सुभाष बोस ने यह ड्रामा खूब अच्छी तरह खेला। भीतर ही भीतर दोनो मे मिलीभगत है। ऊपर से झगडा! रात को सब लोग चोरी से मिलते थे।

मुश्ताक का चेहरा सफलतापूर्वक झूठ बोलने के हर्ष से तमतमाने लगा। काश, वह यह बात आज की सभा मे कह पाता, तब तो वह रज़िया को मात दे देता। खैर, वहा न सही, यहा चार आदमियो मे ही बता दिया। फैलते-फैलते बात फैलेगी,

कुछ तो हुआ ! उसने कहा—देखिए, मैं आप लोगो से बहुत राज़ की बाते बता रहा हू, कही किसी ऐसी-वैसी जगह उसे अफशा न कर दीजिएगा। हिन्दुओ को अगर मालूम हो गया कि हम लोग भेस बदलकर उनके राज़ो का पता लगा रहे हैं, तो वे होशियार हो जाएगे। आगे फिर एक भी बात मालूम नही होने की।

—आपने गाधी और सुभाष को मिलते देखा ?

—हा, हा, सब रात को छिपकर मिलते रहते थे, और यो दिन मे एक-दूसरे के खिलाफ ऐसी इश्तआलअग्रेज़ तकरीरे करते थे, मानो जानी दुश्मन हो !

—मकसद ?

—मकसद यह कि सरकार को यह दिखाया जाए कि तुम काग्रेस की बात नही मानोगी तो सुभाष बोस और सहजानन्द से पाला पडेगा। इस तरह वे अपनी वज़ारतो को वापस पाने की साज़िश को कामयाब बनाना चाहते है।

सभी श्रोता बहुत खुश थे कि उनका समय नष्ट नही हुआ और राज़ की कुछ ऐसी बातें मालूम हुई जो हर मुसलमान को मालूम नही हो सकती। पहले वाला युवक ही सबके प्रवक्ता के रूप मे काम कर रहा था। बोला—मेरी तो आखें खुल गईं ! मैं अब समझ गया कि हज़रत मुहम्मदअली जिन्ना ने 'टाइम एण्ड टाइड' के लिए वह आर्टिकल क्यो लिखा था। आप मुझे नही जानते, इसलिए मैं बता दू कि मैंने दो साल पहले पोलिटिकल साइस मे एम० ए० किया था और अब यही एक कालेज मे लेक्चरर हू। मैं यह समझ नही पाया था कि उसमे जिन्ना साहब ने यह क्यो लिख दिया कि हिन्दुस्तान के लिए मगरिबी जम्हूरियत ठीक नही है। मैं समझता था कि जम्हूरियत सभी मुल्को के लिए ठीक है, पर जहा लोग अभी कबीलो के ढग पर सोचते है, खुलेआम एक दूसरी कौम को दबाने के लिए साज़िशें करते है, उर्दू, जोकि कुदरती कौमी ज़ुबान है, उसकी जगह हिन्दी की नादिरशाही चलाना चाहते है, जहा खुलेआम कुलटुरकाम्फ[1] जारी है, वहा जम्हूरियत के कोई माने नही होते !

मुश्ताक ने प्रोत्साहन पाकर कहा—बिल्कुल सही है, इसीलिए लीग की तरफ से बार-बार चेतावनी दी जा रही है कि सरकार काग्रेसकी माग पर कानस्टीचूएण्ट एसेम्बली (सविधान सभा) न बुलाए, क्योकि वह तो एक तरह से हाथ-पैर बाधकर सारी अक्लियत (अल्पसख्या) को हिन्दू अक्सरियत के हाथो मे सौंप देना

१ सास्कृतिक जेहाद

होगा। इसके अलावा वह सूबो मे चाहे जो कुछ दे, पर मरकज (केन्द्र) मे अभी जिम्मेदारी न दे। इसीलिए लीग की तरफ से यह कहा जा रहा है कि हिन्दुस्तान मे एक नही, दो-दो कौमे है। अगर जिम्मेदारी देनी ही है, तो ये दोनो कौमे मिलकर बैठें और एक ऐसा ढाचा निकालें, जिसमे दोनो की भलाई हो।

मुश्ताक ने रामगढ का जो काल्पनिक अन्दरूनी ब्यौरा सुनाया और उससे जिस प्रकार जिन्ना साहब के लेख का समर्थन हुआ, वह उसके लिए बहुत ही हृदय गुदगुदानेवाली बात थी। अफसोस यही रहा कि रजिया न हुई, नही तो वह अपने कानो से सुनती। यद्यपि सभाओ मे वह उस प्रकार के स्टट नही कर पाता, जैसा-कि वह कर लेती है, पर चाहने पर वह वैसे नही, उससे बढकर स्टट कर सकता है। आज अब्दुल्ला मौजूद होता तो लुत्फ आ जाता। उसे भी मालूम होता कि हा, बुद्धि की दीप्ति और प्रतिभा किसे कहते हैं। असली प्रतिभा तो सिर पर चढकर बोलती है। धन ही सब कुछ नही है।

थोडी देर और बक-बकाकर भक्तजन चले गए। शायद वे उस राज को जल्दी-जल्दी फैलाने के लिए व्यग्र थे, जिसके सम्बन्ध मे उन्हे विशेष चेतावनी दी गई थी, कि वे सारी बाते ऐरो-गैरो मे न फैलाए। पोलिटिकल साइस का वह युवक लेक्चरर बहुत ही खुश होकर लौटा था, क्योकि उसके मन के सारे सन्देह दूर हो गए थे।

यह तो हुआ, और मुश्ताक को इसका पता था कि उसने बहुत बडा कार्य किया है, पर जिस हद तक उसे अपनी प्रतिभा के सम्बन्ध मे निश्चित जानकारी हुई, उसी हद तक उसका दुःख बढा। भाई फासी पर चढ गया, मुल्क और मिल्लत के लिए उसने एक भाभी पैदा भी कर दी (जैसे जादूगर हैट से खरगोश निकालते हैं) क्योकि असली भाभी हिन्दुओ के बहकावे मे आ गई थी, या यह कहना चाहिए कि वह कभी इस्लाम पर ईमान लाई ही नही थी। इस तरह वह घर-द्वार छोडकर कहा-कहा की खाक छानता फिर रहा है, फिर भी वह औरत ऐसी बेवफा साबित हुई कि वह जब देखो तब अब्दुल्ला के साथ ही उडी रहती है। न उसे अपनी जिम्मेदारी का ख्याल, न वह उसके प्रति कृतज्ञ है, जिसने उसे कहा से किस अधेरे गार से उठाकर सातवें आसमान पर पहुचा दिया।

ये युवक जो उससे मिलकर अनुप्रेरित और अनुप्राणित होकर चले गए, वे निश्चय ही उसीसे, यानी सियामादेवी से मिलने आए थे, पर उसे न पाकर उससे

मिल गए, यद्यपि उन्होने ऐसा कहा नही। इसमें ईर्ष्या करने की कोई बात नही है क्योकि जिस बुत को लोग आज इस तरह पूज रहे है, वह उसीके हाथो का बनाया हुआ तो है। उसीने एक-एक ज़र्रा इकट्ठा करके, तालीम देकर, रगड-घिसकर उसे बनाया है, जिसके सामने सब सिजदा करते है। माना कि उसमे अपनी कुछ चालाकी भी है, प्रतिभा तो उसे नही कहेगे, पर यदि वह उसे खडे होने की जगह न देता, खडे होने नही देता तो वह किस तरह अपनी पृथ्वी को धुरी से च्युत करके उसकी जगह पर एक नई दुनिया का निर्माण करती, जिसके इन्द्रधनुषी रगो को देखकर सब वाह वाह करते और ईमान लाते है। माना कि अब्दुल्ला धनी है, जवान है, पर वह है कौन ? वह तो रईस का एक मामूली बेटा है। जो कुछ भी उसके पास है, उसमे से कोई चीज उसकी बनाई नही है। यदि मामूली खोचेवाले से कम्मू मिया ने इतना बडा व्यापार कर लिया, यदि उसने अपने बेटो की पठानियो से शादी कर दी, और स्वय डके की चोट पर पठान मान लिया गया, तो इसमे अब्दुल्ला की क्या देन है ? अब्दुल्ला तो कुछ भी नही है, महज एक बुलबुला है, फिर रज़िया उसे महत्त्व क्यो देती है ?

मुश्ताक इन्ही विचारो मे घुलता रहा। उसे कही पर कोई किनारा नही दिखाई पड रहा था। अथाह पानी था। ऊपर भी नील, नीचे भी नील थपेडे। वह सब तरह से सुखी था, पर इस रज़िया ने उसका जीवन दूभर कर रखा था। कहा तो मुश्ताक ने चाहा था कि रज़िया उसकी छाया बनकर उसका अनुगमन करे, उसके हाथ की एक कठपुतली बनी रहे, जिसे जब जैसा चाहे, नाच नचाया जाए, पर हुआ यह अनर्थ है, कि वही उसके हाथ की कठपुतली बन गया है।

सब लोग इज्ज़त करते है, अपनी-अपनी समस्याए सुलझवाने उसके पास आते हे, पर आगन्तुको के साथ थोडी देर बातचीत करने के बाद ही पता लग जाता है कि उनको रज़िया यानी कथित शहीदे-आज़म की बीबी नही मिल पाई, इसीलिए एवज़ी के रूप मे उसीसे बातचीत करके लोग तसल्ली कर लेते हैं। उससे बात करते-करते ऐसे लोग इधर-उधर ताक-झाक करते रहते है, उनके मुह खोलकर न कहने पर भी, असली बात न बताने पर भी समझ मे आ जाता है कि वे किसके लिए आए है। बडा अपमान लगता है कि कैसे है ये लोग, कि असली को नकली, और नकली को असली, काच को रत्न, और रत्न को काच समझते है। जो कौडियो के मोल बिकने लायक है, उसे हीरा समझकर बड़े दर्प के साथ सिर पर धारण

करते है।

माना कि वह बहुत-सी ऐसी मनगढन्त बातो को लीगी जनता के सामने सत्य करके मनवाकर तालिया पाने की प्रतिभा रखती है कि वे कुरान की आयतें ही मालूम होने लगे, एकदम इलहामी, साक्षात् उतरी हुई, पर कहे न वह कोई ऐसी बौद्धिक स्तर की बाते,जैसी उसने अभी-अभी रामगढ काग्रेस के बारे मे लोगो से कही।

और यह अब्दुल्ला ? यह तो कुछ भी नही है, महज एक आवारा है, पर हर समय दाल-भात मे मूसलचन्द बनकर सामने कूद पडता है। गत वर्षो मे उसके कारण बडा मानसिक क्लेश रहा। पहले फिर भी कुछ दुराव-छिपाव, बहाने आदि किए जाते थे, पर अब तो रज़िया कोई पर्दा नही करती। सीधे कहती है—मेरा उनसे जी लगता है, इसलिए मैं जाती हू। असली बात यो है, कि दूसरो के सामने चाहे जो कुछ भी बनू वे मेरी परतो को खोलकर उसमे पैठ जाते है, मेरा काटा निकालकर उसमे शहद का मलहम लगा देते है।

मुश्ताक ने इसपर चेतावनी दी थी कि शरम करो, लोगो के सामने तुम कौन हो, इसका कुछ ख्याल करो, पर वह मुस्कराकर टाल जाती थी। कहती थी—लोगो के सामने मैं वही रहती हू, जो मुझे होना चाहिए, पर अपने-आपको तो मैं धोखा नही दे सकती। रहे तुम, सो तुम्हे मैं इसलिए धोखा नही देना चाहती कि तुम्हें यह मुगालता न हो जाए कि भाभी तुम्हारी ब्याही हुई बीवी है।

इसके बाद खाने का समय आ गया, तो मेहमानो के साथ खाना खाया। खैरियत यह है कि लखनऊ इतनी बडी जगह है, कि यहा न कोई किसीको पूछता है, न याद करता है, फिर भी दो-एक मेहमानो ने पूछ ही लिया कि मोहतरिमा कहा गईं, तो उसने अपने को कहते हुए पाया—वे बहुत ज़रूरी काम से कही गई है। खाना खाकर ही आएगी।

वह पर्दा करे या न करे, अपने को तो पर्दा रखना ही था।

जब तक चले!

१८

स्वामी रामानन्द उर्फ शुक्राचार्य यह समझकर हिमालय-वास को तिलाजलि देकर आए थे कि जल्दी ही कुछ विस्फोट होगा, और अपने को उस होमाग्नि की

लपट मे किसी-न किसी रूप मे योगदान देने का मौका मिलेगा। पर काग्रेसी नेताओं के अन्तहीन वक्तव्यो और वामपथी नेताओ के प्रति-वक्तव्यो से वे क्षुब्ध और व्यथित थे। वे बहुत-से अन्य क्रान्तिकारियो की तरह रामगढ मे बडी आशाए लेकर गए थे, कि दक्षिण पथी कुछ नही करेगे तो सुभाष ऐसे वामपथी अपने समझौता-विरोधी सम्मेलन द्वारा कुछ तो मार्गदर्शन करेगे। पर वहा जो कुछ पका, उससे स्थिति के चेहरे मे कोई विशेष परिवर्तन नही आया।

गाधीजी की बाते तो गोल-मोल रहती थी। उन्होने स्वय ही सत्याग्रह की टेक लगाकर बोलनेवालो का मजाक उडाया था। उन्होने बाइबल से एक उद्धरण देते हुए कहा था—हर कोई जो मुझसे प्रभु-प्रभु कहता है, उसका स्वर्ग-राज्य मे प्रवेश न होगा, पर वह जो मेरे स्वर्ग मे रहनेवाले पिता की इच्छा का पालन करता है, वही स्वर्ग राज्य मे प्रवेश करेगा।

गाधीजी ने कहा था—जो लोग सत्याग्रह-सत्याग्रह चिल्लाते है, वे सभी सत्याग्रह नही कर सकते। केवल सत्याग्रह के लिए कार्य करनेवाले ही आन्दोलन जारी करने की सामर्थ्य रखते है। वास्तविक सत्याग्रही वही है, जो आदिष्ट कार्य करे, और उन बातो से बचे जो निषिद्ध है। यदि सही ढग से सत्याग्रह शुरू किया और चलाया गया, तो उससे स्वतन्त्रता प्राप्त हो सकती है।—उनके सारे वक्तव्य का लुब्बोलुबाब यह था कि जनता तैयार नही है। उन्होने स्पष्ट शब्दो मे कहा था—मैं अनुभव करता हू कि आप तैयार नही हैं।

रामगढ काग्रेस मे जो कुछ भी हुआ, वह मानो इसी सूत्र का भाष्य था। टेक यह थी—सत्याग्रही समझौते से नही घबडाता है, वह हर समय समझौते के लिए तैयार रहता है, और अभी हम तैयार नही हैं।

वहा बडी निराशा और कोफ्त हुई, तब जाकर समझौता विरोधी सम्मेलन के द्वार खटखटाए। वहा वातावरण मे तलवार झनझनाने की आवाज गूज रही थी, पर ऐसा लगता था कि स्वय वामपथी कुछ नही करना चाहते। क्रान्तिकारी दल के लिए तो यह सही रुख था कि जब तक देश मे बडे पैमाने पर कुछ उथल पुथल नही मचती, तब तक स्वय कुछ करना आतकवादी कार्यक्रम के ही समतुल्य होगा। अब की बार दुश्मन के दिल मे दहल पैदा करना ही उद्देश्य नहीं था, और न यही उद्देश्य था कि हिचकिचाते हुए लोगो से यह कहा जाए कि डरो मत, हम भी पीछे-पीछे हैं। अब की बार तो सीधे-सीधे क्रान्ति करना, यानी

शक्ति पर कब्ज़ा करना उद्देश्य था। अजीब बात है कि समझौता-विरोधी सम्मेलन ने यह तो साबित कर दिया, या कम से कम यह प्रमाणित करने की चेष्टा की, कि कांग्रेस समझौता करने पर तुली हुई है, पर उसने जनता के सामने स्वय किसी प्रकार का सग्रामशील कार्यक्रम नही रखा।

सुनने मे सुभाष के वे शब्द बडे रोचक लगते थे। उन्होने कहा था—साम्राज्यवाद का युग लद चुका है, और स्वतन्त्रता, लोकतन्त्र और समाजवाद के उदीयमान सूर्य की किरणे चारो तरफ छिटक रही है। आज भारत इतिहास के एक मोड पर खडा है। हमे चाहिए, पर ऐसा हम इच्छा-मात्र से नही कर सकते हैं कि उस थाती को सम्भाल लें।

सुभाष बाबू ने और भी कहा था, कि नेतृत्व की कसौटी के रूप मे सकट उतरते हैं, पर हमारा नेतृत्व इस कसौटी पर खोटा उतरा है।—सुभाष बाबू न रूसी क्रान्ति का हवाला देते हुए कहा था—जब १९१७ मे रूस मे अक्तूबर क्राति का सूत्रपात हुआ था, तो किसीको भी क्रान्ति के मार्ग के सम्बन्ध मे कोई स्पष्ट धारणा नही थी। अधिकाश बोलशेविक उस ज़माने मे दूसरे दलो के साथ मिलजुलकर सरकार बनाने की बात सोच रहे थे। ऐसे समय मे लेनिन ने सब तरह की मिली-जुली सरकार के विरुद्ध उद्घोष किया, और यह नारा दिया—सोवियतो को सारी शक्ति!

यह सब तो हुआ, पर यह नही कहा गया कि हम अमुक तारीख से कोई कार्यक्रम जारी कर रहे हैं। इसमे सन्देह नही कि समझौता-विरोधी सम्मेलन ने, कांग्रेस के अन्दर जो सडाध पैदा हो गई थी, उसके विरुद्ध एक प्रक्रिया को जारी कर दिया, पर सग्राम के लिए कोई स्पष्ट पुकार नही पेश की। फिर भी इतना तो हो ही गया, कि कांग्रेस के लिए अब समझौते के कूचे मे जाकर उससे आखें लडाना कठिन हो गया।

समझौता-विरोधी सम्मेलन का यही सबसे बडा लाभ रहा, पर इसे कोई स्वतन्त्र रुख तो नही कहा जा सकता। पुराने क्रान्तिकारियो मे से जो लोग अब तक जेल के बाहर मौजूद थे, वे भी यही चाहते थे कि कांग्रेस लडाई छेडे, तो हम भी उस लडाई की आड मे, या यो कहना चाहिए कि उस लडाई को और उग्र तथा घातक बनाने के लिए जनसग्राम के अपने तरीके चालू कर दे। समझौता विरोधी सम्मेलन का भी यही निष्कर्ष रहा।

दूसरे शब्दो मे सभी चाहते थे और समझते थे कि यदि काग्रेस सग्राम से विमुख हो गई तो सग्राम हो तो सकता है होगा भी, अवश्य होगा, पर वह उतना असरदार नही हो सकता। काग्रेस रूपी पहाड धडधडाता हुआ ब्रिटिश सरकार पर टूट पडे, तभी दूसरे लोग उसे एक चालू पटरी से हटाकर क्राति की पटरी पर चालू कर सकते थे। स्वामी रामानन्द इस तथ्य को समझ गए थे, इसलिए अब उनमे काग्रेस के एक प्रस्ताव के प्रति जो तिक्तता थी, वह रह नही गई थी। काग्रेस ने एक प्रस्ताव मे माइकेल ओडायर की जो लन्दन मे हाल ही मे हत्या हुई थी, उसकी निन्दा की थी, और बिल्कुल अपने मार्ग से बाहर जाकर यह कहा था कि कार्यसमिति इस दुर्भाग्यपूर्ण हिंसात्मक कार्य को कोई राजनैतिक महत्त्व देने के लिए तैयार नही है। इतना कहकर ही कार्यसमिति ने सन्तोष नही किया था, बल्कि यह भी कहा था—समिति अपनी दृढ धारणा व्यक्त करना चाहती है कि ऐसे सारे कार्य राष्ट्रीय हित मे बाधक हैं।

स्वामी का विचार था कि काग्रेस कार्यसमिति को इस तरह का प्रस्ताव पास करने का कोई अधिकार नही था, फिर भी उसने ऐसा किया। यदि साधारण अवस्था होती, और भारत स्वतन्त्र होता, और माइकेल ओडायर उसकी किसी अदालत के सामने जलियावाला हत्याकाड के कायर अपराधी के रूप मे पेश होता, तो क्या उसको मृत्युदण्ड नही दिया जाता? या कि स्वतन्त्र भारत की गाधीवादी कल्पना यह है कि उसमे मृत्युदण्ड ही नही होगा? यदि मृत्युदण्ड किसी रूप मे होगा, तो माइकेल ओडायर से बढकर मृत्युदण्ड पाने का अधिकारी कौन हो सकता है, जिसने खडे-खडे सैकडो निहत्थे लोगो को मशीनगन से भुनवा डाला, और भागने तक नही दिया!

जिस समय बिल्कुल अन्तिम सग्राम होने जा रहा है, उस समय भी ऐसी बातें कहकर दष्टि को धुधला बनाने की चेष्टा की जा रही है, जबकि यो तो मुस्लिम तथा कट्टर हिन्दू सम्प्रदायवाद के कारण पहले ही रास्ता अच्छी तरह सूझ नही रहा है।

जो क्रान्तिकारी, या यो कहना चाहिए कि भूतपूर्व क्रातिकारी (क्योकि बीच मे बहुत-से लोगो ने विविध कारणो से राजनीति ही छोड दी थी) जेलो के बाहर मौजूद थे, वे इस बीच मिले थे, और उन्होने एक स्वर से यह तय किया था कि पहली बात तो यह की जाए कि काग्रेस को सग्राम मे कूदने के लिए मजबूर किया

जाए, और जब वह विभिन्न दबाओ से सग्राम मे कूद पडे, तो उसके सग्राम के रूप को इस प्रकार बदल दिया जाए कि भारत मे अग्रेजो का राज्य ही असम्भव हो जाए। अभी सयुक्तप्रान्त के ये क्रान्तिकारी अमिताभ से मिल नही सके थे, पर स्वामी रामानन्द बाकी सब लोगो से, यानी यूसुफ उर्फ महेन्द्र की पत्नी असली श्यामादेवी, अर्चना, विनायक, जीवानन्द, रजततारा आदि से मिल चुके थे, यहा तक कि शिशु और धनजय, जो इस बीच जाने कहा-कहा बहक गए थे, उन सबसे भी सपर्क स्थापित कर चुके थे।

धनजय अब बहुत सुखी था, क्योकि उसने डकैती से जो धन प्राप्त किया था, वह सूद-सहित दल को समर्पित कर दिया गया था, और धनजय मान गया था कि व्यर्थ मे उस धन को उस समय खर्च करने के बजाय इस समय पर्चे प्रकाशित करने, प्लास तथा छोटे अस्त्र-शस्त्र खरीदने मे उसका अधिक अच्छा उपयोग हो रहा था। धनजय ने पैर छूकर अर्चना से माफी मागी थी। कहा था—दीदी, मैं उस समय बहक मे आकर जाने क्या-क्या कह गया! आपके चरित्र पर भी आक्षेप किया, पर अब मेरी समझ मे आ रहा है कि आपने जो कुछ किया, वह देश के हक मे सबसे अच्छा रहा।

दोनो की आखो मे आसू थे। ये आसू केवल भाई और बहन के पुनर्मिलन के आसू नही थे बल्कि ये आसू उस खोए हुए रास्ते को एकाएक फिर से पा जाने की आशा के आसू थे, जिसे खोने के कारण जीवन एक व्यर्थ का भटकाव-मात्र रह गया था।

मानो इसीकोस्पष्ट करते हुए स्वामी रामानन्द उर्फ शुक्राचार्य ने कहा—मैं जाने कहा-कहा भटका, जब मैंने देखा कि आन्दोलन शिथिल पड गया है, और वैयक्तिक आतकवाद के तरीके का पेदा एकाएक निकल गया है, जनता भी जाने किस प्रकार से निस्तेज और आलसी हो गई है, तब मेरे सामने दो ही विकल्प थे—या तो मैं पुरानी लीक पर और थोडा चलू, उस लीक पर जो अब युग को देखते हुए लगभग गोल छेद के लिए चौकोर खूटा बन चुकी थी, और फलस्वरूप जेलखाने मे पहुच जाऊ, या हिमालय की गोद मे भाग जाऊ। मैंने दूसरा विकल्प स्वीकार किया, पर अब बारूद की गन्ध से वातावरण बस जाते ही मेरे हाथ-पैर कुलबुला उठे, मन मे सुगबुगा हट पैदा हुई, और मैं उतरकर चला आया।···

श्यामा के जीवन की धारा तो इससे भी कही अधिक रेतीली बाल मे खो चुकी

थी। वह यो तो कुछ-न-कुछ कर रही थी, जैसे बनिये के पास कोई काम नही होता, तो वह बटखरो को ही तौलता रहता है, पर मन मे तृप्ति नही थी। कबीर के कारण जीवन मे कुछ रगीनी रह गई थी, पर वह रग बहुत ही फीका था। वह शहीद की एक निशानी था, अपने अन्दर की स्फूर्ति के कारण वह नित्य बढता जा रहा था, पर मा के जीवन की शून्यता की किस हद तक पूर्ति करने मे समर्थ था!

अर्चना की हालत तो इससे भी बुरी थी। उसके पास तो निशानी भी नही, प्रेमचन्द की स्मृति-मात्र थी। उसके सम्बन्ध मे वह यह भी दावा नही कर सकती थी कि वह उसका पति, यहा तक कि प्रेमिक था, और अब तो लोग प्रेमचन्द को भूल भी चुके थे। जिसकी फासी के बाद हजारो लोग श्मशान मे गए थे और फूट-फूट-कर रोए थे, आज उसको जाननेवाला कोई नही रह गया था। श्यामा दीदी के पास तो एक निशानी थी, बहुत सुन्दर, खिलखिलाती हुई निशानी, पर उसके पास तो कुछ भी नही था।

क्रान्ति मे ही वह सामर्थ्य थी कि अपनी तरल आग से उसके अन्दर की खाइयो को भर सकती थी। पर वर्षों से कोई विशेष कार्य नही था। क्रान्ति के कोयले ठडे पड चुके थे। हा, निष्ठा के तौर पर विनायक और जीवानन्द के साथ वह मजदूरो मे काम करती थी, पर उसे ऐसा लगता था, जिसे उसने किसीसे कहा नही, कि रूस के मजदूर चाहे जैसे रहे हो, पर यहा के मजदूर तो क्रान्ति मे जरा भी दिलचस्पी नही रखते थे। इसके विपरीत वे साम्प्रदायिकता के पक की बेडियो मे इस प्रकार जकडे हुए थे कि उनके लिए अग्रगति बिल्कुल असम्भव लगती थी।

पर अब फिर से इन सबके जीवन मे वसन्त की सुगबुगाहट आ चुकी थी। न जाने कहा से अलबेली मस्त हवा का एक झोका आया था, और मन के ठूठो मे नये-नये लाल पारदर्शी पत्ते किंचित् मुह निकालकर झाकने लगे थे। यह एक अजीब टोली थी, जिसका सुख बहुत ही अजीब था। शुक्राचार्य जैसे खुर्राट से लेकर धनजय ऐसे अल्पवयस्क तरुण इस टोली के सदस्य थे, पर उनकी रगो मे एक ही खून उछल-उछलकर बह रहा था, एक ही आशा उनके हृदय को सजीवित कर रही थी। जितनी भी तैयारी सभव थी, उससे वसन्त का स्वागत किया जा चुका था। सैकडो रुपयो के प्लास और छोटे-मोटे अस्त्र खरीदकर, केवल खरीदकर ही क्यो, जिस भी तरीके से, चोरी करके, सीनाजोरी करके, उधार लेकर प्राप्त किए जा चुके थे, और अब केवल क्रान्ति की उस बासुरी की ध्वनि की प्रतीक्षा थी,

जिसे सुनते ही सुध-बुध खोकर जिस हालत मे है उसी हालत मे, दौड पडनेवाला था। उसी जादुई वशी ध्वनि की प्रतीक्षा थी। पर वह आने मे नही आती थी।

अन्तहीन सम्मेलन, शिमला मे भेंट, बातचीत, वक्तव्य, प्रतिवक्तव्य, बाल की खाल, यही सब जारी था। नितान्त रूप से हृदय को तोड देनेवाला विलम्ब हो रहा था। माना कि इस बीच तैयारी पूर्ण से सम्पूर्ण हो रही थी, उसमे जो सासे थी, वे एक-एक करके याद आती जा रही थी और उन्हे बन्द किया जा रहा था। सब देरियो को जैसे दूर करने के लिए एक ही उपाय जारी था। पर्चेबाजी!

इन पर्चों मे भारतीय जनता को तरह-तरह से गुदगुदाया, जोश दिलाया, उत्तेजित किया जा रहा था। जो अत्याचार हुए, खून की जो नदिया बही, और अब महाकाल के नियमो के कारण लाल से स्याह पडकर धूल मे मिल चुकी थी, धूल बनकर। उन सब विस्मृति की तह के नीचे दबी हुई नदियो की यादो को मन के अन्तरतम प्रकोष्ठो से निकालकर फिर से लाल करने की चेष्टा की जा रही थी। शहीदो की जो लाशे सड-गलकर स्मृति की धारा के नीचे काई बनकर बैठ गई थी या विस्मृति की मछलियो ने जिन्हे चट कर दिया था, उनकी हड्डियो को बटोर-कर उनपर गोश्त-पोश्त चढाकर फिर से पेश किया जा रहा था, कि यह देखो, तुम्हारे लिए जान दे देने वालो को देखो, इनका क्या तकाजा है! तुमने इन लोगो की चिन्ताओ के सामने खूनी आसुओ से जो प्रतिज्ञापत्र लिखे थे, और कही वे मिट न जाए, इसलिए शहीदो की चिताओ की राख से सोख्ते का काम लिया था—यह देखो, वे प्रतिज्ञापत्र ये हैं। प्राचीन इतिहास से लेकर अति आधुनिक काल तक, यहा तक कि माइकेल ओडायर को लन्दन मे सजा देकर फासी पर झूल जानेवाले सर-दार उधमसिह तक सबकी जबानी बाते कही गईं और केवल भावुकता की बातें ही नही कही गई। किस प्रकार से मैनचेस्टर और लकाशायर की मिलो के स्वार्थ के लिए भारतीय जुलाहो के अगूठे काट डाले गए और शनै-शनै हम किस प्रकार राजनैतिक गुलामी के साथ आर्थिक गुलामी के शिकार हो गए, किस प्रकार से हमारा खून पीकर साम्राज्यवादी जोके फूली और फली, यह सब इतिहास का हवाला देकर, विशेषकर अग्रेज इतिहासकारो का हवाला देकर, जनता के सामने रखा गया। इसके साथ-साथ हर देश के स्वतन्त्रता-सग्राम के वीरो की कहानी लोरियो की तरह जनता के काली बर्फ की तरह सर्द पडे कानो मे गलाकर गरम सीसे की तरह डाली गई, ताकि यदि उसमे नीद का कोई अश अभी मलबे की तरह पडा हुआ हो,

तो उसे झाड़ू लगाकर दूर कर दिया जाए, और जनता अगडाई लेकर, मुह फैलाकर, सीना तानकर, मरने और मारने के लिए सन्नद्ध हो जाए।

यह सब तो जारी था। साथ-साथ जारी था डकैतियो के अलावा सब उपायो से धन प्राप्त करना, ताकि जब आन्दोलन का चक्र एक बार चर्र-चर्र करके चल निकले, तो, फिर उसमे मोबिल-आयल की कमी न पडे। पेट्रोल तो अपना रक्त था, घर की खेती थी, जितना चाहे दिया जा सकता था, पर धन की जरूरत मोबिल-आयल के रूप मे थी, जो पहियो के पुट्ठो को पुष्ट रखता था।

अर्चना पर यह जिम्मेदारी पडी, पडी नही, उसने स्वय माग ली, कि वह जब ला सकती है तो धन लाए, और वह एक दिन उसी कार्य को पूरा करने के लिए दिल्ली रवाना हो गई। इजीनियर सुगनचन्द अपने अध्यापक भाई प्रेमचन्द की शहादत के अध्याय को भूल चुके थे, सिवा इसके कि उनकी बैठक मे भारी-भरकम फ्रेम मे मढा प्रेमचन्द का एक मुस्कराता हुआ चित्र टगा हुआ था, जिसपर एक नातिपुरातन माला पडी रहने के कारण यह स्पष्ट था कि अभी घाव भीतर से पूरा भरा नही था।

अर्चना के पास प्रेमचन्द के छोटे-मोटे कई फोटो थे। पर इतना बडा चित्र कोई नही था। इसलिए जब वह औपचारिकताओ की बावन दीवारे पार करके बैठके मे पहुचकर सुगनचन्द की प्रतीक्षा करने लगी, तो उस चित्र को देखकर उसे स्थान, काल, पात्र विस्मृत हो गए। लगा कि वह एकाएक अपने भूतकाल के कठ-घरे के सामने खडी हो गई, अभियुक्त के रूप मे। सोचकर तो आई थी कि एकदम भीतर चलकर सुगनचन्द की पत्नी और बच्चो से मिलेगी, जैसाकि एक लेडी को करना चाहिए, पर न जाने क्यो इच्छा नहीं हुई। अब लगा कि सम्बन्ध जो कुछ था, वह तो इस व्यक्ति से था, न कि इसके भाई, भौजाई और भतीजे-भतीजियो से। उन तक सम्बन्ध के रबर को खीच ले जाने मे कुछ इतरता ज्ञात हुई, जैसे रथ के सिहासन से किसी देवता को घसीटकर बेत की दफ्तरी बू से लैस कुर्सी पर बैठा दिया जाए। वह बैठक मे ही प्रतीक्षा करने लगी और उसने साधारण आगन्तुको की तरह नाम लिखकर भेज दिया।

फिर चित्र देखने लगी। किसी चित्रकार का बनाया हुआ था, पर बना फोटो से था। चेहरे पर एक व्यग्यभरी अतीन्द्रिय मुस्कराहट थी। प्रेमचन्द ने सारे ससार को व्यग्य की दृष्टि से देखा, और शायद उसने जेल से भी, सारा तैयारियो के

बावजूद इसी व्यग्य को कायम रखने मे समर्थ होने के कारण भागने से इन्कार किया। फासी पर भी वह यही व्यग्य भरी मुस्कराहट को सम्बल बनाकर चढ गया।

कितनी ही स्मृनिया एक के बाद एक नही, बल्कि जिस तरह से इमारत की ईटे भडभडाकर गिरती है, बिना किसी तरतीब और प्रोटोकोल के, उसी तरह उसपर, उसकी चेतना पर अदबदाकर गिरती रही। भूल गई कि वह किस कार्य से यहा आई है। भूतकाल वर्तमान पर हावी हो गया, भविष्य के उस मथन का तो कही पता ही नही था।

पता नही ऐसे कितना समय निकल गया। एकाएक सुगनचन्द पर्दा हटाकर प्रकट हुए और अर्चना के खडे होने पर पहचानते हुए बोले, असल मे कुछ बोल नही पाए, अ-अ-अ-अ करके रह गए। क्या कहे, किस प्रकार सम्बोधित करें, यह समझ नही पाए, क्योकि इस बीच कई शीत और कई वसन्त दनक गए थे। अर्चना ने खडे होकर नमस्ते करके उनके सारे सन्देहो का निरसन करते हुए कहा—अर्चना, मैं अर्चना हू।—कहकर फिर कुछ सोचकर जैसे परिचय की किसी खाई को भरती हुई बोली—कानपुर के डाक्टर अरविन्दकुमार की बहन हू।

सुगनचन्द का चेहरा एक क्षण के लिए बुझ गया। ठीक तो कहती है, डाक्टर अरविन्दकुमार की बहन, क्योकि प्रेमचन्द से कोई स्वीकृत नाता तो था नही। जो था, समाज ने उसपर अपना भारी-भरकम ठप्पा लगाया नही था। फिर वह बहुत पुराना पड गया था। सुगनचन्द ने ध्यान से देखा—क्या अर्चना ने विवाह किया है? नही-नही, ऐसा हो नही सकता। क्यो नही हो सकता, इसका कोई सदुत्तर उन्होने अपने आपको नही दिया, पर ऐसा ही मान लिया। बोले—तुमने बडे दिनो मे खबर ली। चलो, भीतर चलो।

पर अर्चना ने प्रस्ताव के अनुमोदन का कोई लक्षण नही दिखाया। भीतर जाने का कोई उत्साह नही था। यदि क्रान्ति की तैयारी के लिए यहा आना अनिवार्य न हो जाता, तो पहले तो नही लग रहा था, पर अब ऐसा लग रहा था कि यहा आना ही गलत था। भीतर जाकर सुगनचन्द की पत्नी आदि मे गतानुगतिक और औपचारिक ढग से बातचीत करना बहुत गलत लगता था। गलत नही तो इकरस, साधारण, शायद कुछ इतर भी। प्रेमचन्द से उसका सम्बन्ध तो बहुत ही उच्चस्तरीय था, इसलिए उससे उतरकर साधारण स्तर पर प्रेमचन्द

के भाई और भौजाई से मिलकर चूल्हा-चक्की, रोटी-पुआ पर बात करना बहु त ही अस्वाभाविक लगता था।

सुगनचन्द ने टेक को खीचकर अर्थ-सा करते हुए कहा—बहुत दिन बाद तुम इधर आई।

अर्चना ने सोचा कि फौरन ही काम की बात पर उतर आना चाहिए, बोली—कुछ ऐसा ही काम पड गया।

सुगनचन्द बैठ गए। साथ ही अर्चना जिस कुर्सी पर पहले बैठी थी, उसीपर बैठ गई। वह प्रेमचन्द के चित्र की तरफ मुह करके बैठी थी। एक बार उस चित्र पर ध्यान गया, साथ ही सुगनचन्द को देखा, जल्दी-जल्दी दोनो मे तुलना हो गई। एक को इस पलडे पर रखा और दूसरे को दूसरे पलडे पर। प्रेमचन्द के मुकाबले मे सुगनचन्द बहुत मामूली और रग उडे हुए लगे, जैसे समुद्र के सामने गडही लगती है। एकाएक जल्दी से अर्चना के मन मे यह विचार कौध गया कि शायद हर पत्नी को, जो अपने पति से प्यार करती है, इसी तरह पति के अन्य रिश्तेदार बहुत हल्के और मामूली लगते हैं, इसी कारण वह उन्हे बर्दाश्त नही कर पाती। किसी तरह वे रिश्तेदार उसके मानसिक चित्र मे फिट नही बैठते। बोली—कुछ ऐसा ही काम पड गया।

सुगनचन्द आश्चर्य, पर साथ ही शिशु-सुलभ खुशी से बोले—मुझसे काम ?

सुगनचन्द के चेहरे पर बिलकुल शून्यता थी। वे अनुमान नही लगा पा रहे थे कि उनसे भला अर्चना को क्या काम हो सकता है। बोले—मैं तैयार हू, क्या काम हे ? ब-ता-ओ

अभी तो अर्चना ने सोचा था कि फौरन काम की बात ही कर ली जाए, पर जब वह काम की बात करने को हुई, तो उसे लगा कि काम की दृष्टि से ही कुछ देर तक बेकार की बातें करना अधिक उपयुक्त रहेगा। बोली—बताऊंगी। पहले यह तो बताइए कि आपका स्वास्थ्य कैसा है। मैंने तो आपको कोई पत्र भी नही लिखा।

सुगनचन्द के चेहरे पर प्रेमचन्द की वही व्यग्य-भरी मुस्कराहट खेल गई, पर उसका रग बहुत फीका और दबा हुआ था। बोले—मैंने भी तो कोई पत्र नही लिखा। इस बीच मे कानपुर भी कई बार गया था, पर समय नही मिला। व्यर्थ

की दौड-भाग मे ही ज़िन्दगी गुज़र गई ।—कहकर कुछ सोचते हुए बोले—कुछ कर नही पाया ।

'कुछ कर नही पाया' इन शब्दो मे अर्चना को किसी गहरी व्यथा की गूज मिली । एक क्षण के लिए सुगनचन्द और प्रेमचन्द मे जो स्तर का आत्यन्तिक भेद लग रहा था, उसका पारा एकदम से नीचे उतरकर दोनो एक लगे । सुगनचन्द बोले—इजीनियरिंग का काम बहुत ही खराब है । इसमे दिन-रात एक करना पडता है ।—कहकर वे झेंप-भरी हसी हसते हुए बोले—क्या काम है ?

अर्चना ने फिर भी काम नही बताया, बोली—आपका स्वास्थ्य अब तो ठीक लग रहा है, भाभीजी और बच्चे, सब ठीक है न ?—कहकर उसने उस पर्दे की तरफ देखा जिसे हटाकर सुगनचन्द प्रकट हुए थे ।

सुगनचन्द ने कहा—हा, सब ठीक ही हे, कोई खास बात नही है ।—कहकर उन्होने चिल्लाकर नौकर को बुलाया और उसके आने पर कहा—'उनको' भेजो ।

पर 'उनको' भेजना नही पडा । वे शायद पर्दे की आड मे ही खडी थी, सामने आ गईं । फिर से औपचारिकताओ का एक सिलसिला, और प्रश्नो और उत्तरो की एक झडी चली, जिसका अन्त तभी हुआ, जब खाने-पीने की चीज़ें और चाय आ गई । अर्चना को लगा कि गलत दिशा मे कदम रख दिया । अब पता नही इस स्त्री के कारण असली बात करने का मौका मिले या न मिले ।

बातचीत की नाव जिस छिछले पानी मे पहुचकर बैठ गई थी, वहा से उसे उबारकर जल धारा मे ले जाना कठिन तो नही था, पर इस महिला की उपस्थिति उसे बोझिल बनाकर नीचे की ओर खीच रही थी, फिर भी थोडी ही देर मे उसने अनुभव किया कि ये दोनो, पति-पत्नी, बहुत ही उदार चित्त के व्यक्ति है, नीचता इन्हे छू भी नही गई है । पहली घबडाहट के बाद सुगनचन्द बिल्कुल स्वाभाविक रूप से बातचीत करते रहे । प्रेमचन्द का उल्लेख दोनो पक्षो मे से किसीने नही किया, यद्यपि परोक्ष रूप से प्रेमचन्द उन दोनो पक्षो को मिलानेवाले और उनके सम्बन्ध को सार्थकता देनेवाले पुल के रूप मे मौजूद रहे ।

सुगनचन्द ने जब देखा कि अर्चना ने असली बात नही बताई, तो उन्होने अन्धेरे मे ढेले मारने की तरह बता दिया—हमने अपनी पैतृक सम्पत्ति को दो हिस्सों मे तभी से बाट रखा है । सोच रहा था कि किसी सस्था को एक हिस्सा

अर्पित कर दिया जाए। अब तुम आ गई तो बहुत अच्छा हुआ। तुम्हारी सलाह से यह काम सुचारु रूप से होगा।

जब सुगनचन्द ने इस प्रकार से एक बात कहकर पगडडी बना दी, जिससे विषय पर जाना आसान हो गया, तब अर्चना ने धीरे-धीरे सारी बात कह डाली कि किस प्रकार महायुद्ध छिडने से देश के क्रान्तिकारी तत्त्वो मे खलबली मच गई है, किस प्रकार सब लोग चाहते है कि इस मौके का फायदा उठाकर एक ऐसा युद्ध किया जाए, जो अन्तिम युद्ध हो, और भारत स्वतन्त्र हो जाए।

अर्चना ने थोडे मे उस प्रस्तावित सग्राम का खाका भी प्रस्तुत कर दिया। काग्रेस को मजबूर किया जाएगा कि वह आन्दोलन छेडे। सौभाग्य से या दुर्भाग्य से जनता-रूपी अलादीन का चिराग काग्रेस के हाथो मे ही है। 'कुन' उसीको कहना है। वही 'खुल जा सिम-सिम' कह सकता है, पर एक बार काग्रेस ने आन्दोलन छेड दिया, और ब्रेकें खोल दी गई, गाडी पटरी पर चल निकली, तो उसे समझौते की साइडिंग मे जाने न देकर क्रान्ति की खुली हवा मे कुदा देना है। यही क्रान्तिकारियो का, मज़दूर नेताओ का, समाजवादियो और साम्यवादियो का स्वप्न है।

सुगनचन्द इन बातो को सुनते रहे, सुनते रहे, पर वे समझ नही पाए कि अर्चना के आगमन से इन दिवास्वप्नो का क्या सम्बन्ध है। फिर भी एक बात जानकर खुशी हुई, खुशी उतनी नही, जितना कि शायद इत्मीनान, कि अर्चना अब भी उसी मार्ग मे चली जा रही है, जिसमे उनका भाई गया था। सुगनचन्द न तो कभी विद्रोही रहे, और न राजनीति पर कभी कुछ सोचते रहे। ब्रिटिश न्याय मे उन्हे पूरा विश्वास था, और वे समझते थे कि प्रेमचन्द के साथ जो अन्याय हुआ है, वह जेल के कर्मचारियो की ज़्यादती के कारण हुआ। पुलिस अधिकारी को किसी और ने मारा होगा, या वह स्वय मर गया होगा, और सारा दोष उनके भाई पर लाद दिया गया। असली बात यह है कि सुगनचन्द राजनीति के सम्बन्ध मे कभी सर नही खपाते थे। भाई को फासी हो जाने के बाद वे कुछ हतबुद्धि ज़रूर हुए थे, पर उनके विचारो मे कोई विशेष परिवर्तन नही हुआ था।

प्रस्तावित अन्तिम युद्ध की बात सुनते-सुनते उन्हे ऐसे लगा, जैसे वे बीजगणित के किसी ऐसे सवाल के सम्बन्ध मे व्याख्यान सुन रहे हो, जो उनकी बुद्धि के परे है, पर उनकी पत्नी बहुत उत्साह के साथ सारी बातें सुनती रही। वे बीच-बीच मे प्रश्न भी पूछती रही जो सुगनचन्द को बहुत अजीब लगा। इस

कारण वे स्वय भी अर्चना की बातो को और ध्यान से सुनने लगे। अर्चना कह रही थी—यद्यपि काग्रेस को ही पहला धक्का लगाना है, पर सघर्ष को आगे ले जाने के लिए देश के सभी वामपथी दल, युवकसघ आदि तैयार हैं। मुझे विश्वास है कि यह सग्राम अन्तिम सग्राम होगा। अवश्य इसमे बहुत से बलिदान होगे, बहुत-से घर बरबाद हो जाएगे।—कहकर उसने पहली बार सुगनचन्द और उनकी पत्नी के सामने प्रेमचन्द के चित्र की तरफ देखा। ••

थोडी देर तक बातचीत आसन्न सग्राम के वर्णन के इर्द-गिर्द घूमती रही। श्रीमती सुगनचन्द उसी प्रकार खोद-खोदकर प्रश्न करती रही। फिर एकाएक पूछ बैठी—तुम यहा आई होगी तो पुलिस तुम्हारे साथ आई होगी ?

अर्चना को बडा आश्चर्य हुआ। बोली—नही, मै तो पुलिस की आख बचाकर आई हू।

—फिर भी यह तो सम्भव है कि पुलिस तुम्हारे पीछे आई हो, और जान गई हो कि तुम यहा आई हो।

अर्चना बोली—सम्भव है, पर सम्भावना बहुत कम है।

वह बचावात्मक ढग से सम्भलकर बैठ गई। उसे श्रीमती सुगनचन्द के ये प्रश्न अच्छे नही लग रहे थे।

कहा तो वे बडी दिलचस्पी लेकर सब बाते सुन रही थी, और अब एकाएक इस लहजे मे बात करने लगी थी, जैसे अर्चना ने यहा आकर बडी गलती की है, और सबको विपत्ति मे डाल दिया है। अर्चना बारी-बारी से सुगमचन्द और उनकी पत्नी की तरफ देख रही थी, क्योकि उसे लग रहा था कि सुगनचन्द के विचार कुछ और है, और उनकी श्रीमती के विचार कुछ और हैं।

शायद श्रीमती सुगनचन्द यह समझ गई। बोली—देखो अर्चना, तुम और प्रेमचन्दजी जिस तरह के लोग हो, हम लोग उस तरह के लोग नही है। अब यह तो अपना जो कुछ करना है, कर चुके, पर मुझे अपने बच्चो का स्वार्थ देखना है। योही देवरजी को फासी हो जाने के कारण लडको के लिए सरकारी नौकरी का दरवाजा बन्द हो चुका है, अब मै यह नही चाहती कि वे जेल भेज दिए जाए, या ये बुढापे मे जेल काटे। मैं एक स्वार्थी स्त्री हू, और स्वार्थी बनी रहना चाहती हू। जो लोग देवरजी की तरह या तुम्हारी तरह स्वार्थ छोडकर, बिल्कुल परार्थ को लेकर चलते है, वे हमारे पूजनीय हैं, हम उनके चित्र या बुत की पूजा करेगी पर हम न

तो वैसा बन सकती हैं, और न बनना चाहती है। हम जानती है कि हम वैसा नही बन सकती।···

सुगनचन्द अपनी पत्नी के इस प्रकार के बेतुके उद्गारो के लिए शायद तैयार नही थे। वे ब्रिटिश न्याय मे विश्वास रखते थे और अपने ढग से राजभक्त थे, पर यह नही समझते थे कि जो लोग राजद्रोही हैं, वे किसी प्रकार बुरे या वर्जनीय लोग हैं। उनके निकट राजद्रोह भी स्वाभाविक था और राजभक्ति भी। कम से कम वे राजद्रोहियो को राजभक्त बताने के झगडे मे पडना नही चाहते थे। असली बात तो यह है कि वे सब प्रकार के झगडो से बचते थे। वे बीच मे बोल पडे—प्रेम-चन्द ने अपने ढग से काम किया, मैं अपने ढग से काम करता हू, तुम अपने ढग से काम करती हो, यह अपने ढग से काम करती है, इसमे झगडा कहा है ? मेरे भाई फासी पर चढ गए, उससे मेरा कुछ नही बिगडा, तो इनके आने से कैसे बिगड सकता है ? तुम नाहक ही डर रही हो।

श्रीमती सुगनचन्द रुखाई के साथ बोली—तुम्हारा क्यो नही बिगडा ? तुम्हारे साथ के लोग कहा पहुच गए, तुम कहा पडे हो ? यह तो मैं जानती हू, जो भोग रही हू, तुम्हे तो किसी बात का कभी पता ही नही हुआ। मैं सारी बात जानती हू। अब कम से कम लडको का स्वार्थ तो देखना ही पडेगा।—कहकर अर्चना की तरफ देखकर बोली—हमेशा ऐसे सग्रामो मे ऐसे लोग पिस जाते है, जिनका सग्राम से सीधा सम्बन्ध नहीं होता। सीधे सम्बन्ध वाले तो होशियार होते है, और पहले से ही होशियारी बरतते हैं।

अर्चना समझ नही पाई कि अब आगे उसे क्या करना चाहिए। उसे लगा कि उसका आना व्यर्थ हो चुका है। बडे गर्व से वह कह आई थी कि धनजय की डकैती से जितना धन नही मिला, उससे अधिक धन वह योही ले आएगी। किसीने उससे पूछा नही था कि कैसे लाओगी, कहा से लाओगी, पर सबकी शुभेच्छा उसके साथ थी। अब वह जाकर क्या कहेगी ? कैसे मुह दिखाएगी ? शायद यह स्त्री लोभ कर गई। सोचती है, पैसे क्यो दिए जाए ? हिस्सा प्रेमचन्द का ही सही, पर जब प्रेमचन्द के साथ अर्चना का ब्याह नही हुआ, तो उस धन पर एकमात्र अधिकार भाई का ही है।

चाय आदि बहुत पहले ही पी जा चुकी थी। बर्तन आदि भी चले गए थे। अर्चना ने निराशा मे एक बार प्रेमचन्द के चित्र की ओर देखा, फिर वह एकाएक

उठ खडी हुई। बोली—तो मैं जाती हू। आप तो कह रहे थे कि मेरी सलाह की जरूरत होगी, पर अब शायद मेरी सलाह की जरूरत नही रही।—कहकर उसने फिर उस चित्र की ओर देखा, विशेषकर उस व्यग्य-भरी मुस्कराहट की ओर, जो मानो चुनौती देकर कह रही थी—यात्रा एकाकी है। कोई किसीका साथ नहीं देता। स्वतन्त्रता का योद्धा एकाकी यात्री होता है। इसी कारण मैंने जेल से भागने से इन्कार किया। इसी कारण मैं फासी पर चढ गया।

सुगनचन्द भी उसके साथ ही खडे हो गए, पर उनकी पत्नी बैठी रही। सुगनचन्द बोले—हम लोग चिल्लाकर सोच रहे है। इन्होने जो कुछ कहा, वह अन्तिम नही है।

इसपर श्रीमती सुगनचन्द उठकर खडी हो गई और बहुत ही कडाई के साथ बोली—नही, अन्तिम है।—कहकर अपने पति की तरफ चुनौती भरी दृष्टि से देखकर बोली—कान खोलकर सुन लो, मै यह नही चाहती कि तुम इस औरत के साथ कोई सम्बन्ध रखो। मैंने सारी कहानी सुनी है। इसीने मेरे सीधे-सादे देवर को क्रान्तिकारी दल मे भरती किया। इसीने बडे दल से अलग होकर अपना दल बनवाया, और उन्हे फासी पर चढवा दिया। इसका अपना तो कुछ है नही। यह अब हमारा भी सर्वनाश कराएगी। मैं नही चाहती कि इससे कोई सम्बन्ध रखा जाए, क्योकि ऐसा करना हमारे लिए श्रेयस्कर नही होगा।

सुगनचन्द ने अपनी पत्नी को इस प्रकार रणचण्डी रूप मे कभी नही देखा था। वे एकदम अभिभूत हो गए, क्योकि वे इसके लिए कतई प्रस्तुत नही थे। बोले—तुम व्यर्थ मे बात का बतगड बना रही हो। इसके पहले भी कई आन्दोलन चले, और अपना भाई भी फासी पर चढ गया, पर उन बातो से मेरा बाल भी बाका नही हुआ।

श्रीमती सुगनचन्द ने पति के मुह से बात लगभग छीनते हुए हाथ झटकारते हुए कहा—बाल बाका क्यो नही हुआ? तुम्हे क्या पता है। तुमको इजीनियरिंग के सिवा दुनिया मे कुछ आता भी है? यदि यह हमारे परिवार के साथ सम्बन्ध रखेगी, तो हमारा अकल्याण ही होगा। इसके स्वय का कुछ नही है, यह मुझे भी बरबाद करेगी!

अर्चना हतबुद्धि होकर खडी थी। वह समझ नही पा रही थी कि पति-पत्नी के इस झगडे मे उसे भाग लेना भी चाहिए कि नही, यदि लेना चाहिए तो किस

प्रकार। पर सुनते-सुनते उसका धैर्य नष्ट हो गया, और वह पैरो से फन कुचली हुई नागिन की तरह फुफकारकर बोली—यह बात तो सच है, कि मेरे साथ सम्बन्ध रखनेवालो का अकल्याण ही होगा। पर वह अकल्याण, जिसे आप कल्याण समझकर बैठी है, उससे कही श्रेष्ठ है। केवल पेट-भर खाकर अच्छे मकान मे आराम से रह लेना ही परम पुरुषार्थ नही है। मै श्री सुगनचन्द की बडी इज्जत करती हू, पर अपने भाई के मुकाबले मे वे कुछ भी नही हैं। सुगनचन्दजी तभी तक जीवित हैं, जब तक वे जीवित है, पर प्रेमचन्द और उनके पहले और बाद के शहीद, खुदीराम से लेकर चन्द्रशेखर आज़ाद तक, हमेशा याद किए जाएगे और राष्ट्र की चेतना मे बराबर बसे और बने रहेगे।

श्रीमती सुगनचन्द पहले से अधिक नाराज़ हो गईं और आपे से बाहर होकर बोली—तुम शायद छोटे भाई को खाकर अब बडे भाई का सिर चबाने आई हो! जाओ, फिर कभी इस घर मे पैर न रखना। कम से कम तब तक नही, जब तक मैं ज़िन्दा हू!—कहकर उन्होने पति की तरफ चेतावनी और चुनौती-भरी दृष्टि से देखा।

अर्चना ने एक बार सुगनचन्द की तरफ देखा, फिर उस चित्र की तरफ देखा, मुस्कराई, फिर एकाएक लम्बी डगे भरकर घर से निकल गई।

क्या से क्या हो गया, यह समझ मे नही आया। जिन दिनो प्रेमचन्द को फासी हुई ही थी, उन दिनो इस महिला से मिलने का मौका मिला था, पर वह उन दिनो इतनी स्वार्थी और नीच नही थी। शायद इन वर्षों के दौरान या देवर की सम्पत्ति के लोभ के कारण उसका हृदय इस प्रकार सिमट-सिकुड गया था। सुगनचन्द मे कोई परिवर्तन नही लगता था। वे उन दिनो जिस प्रकार अपने काम मे खोए हुए बडे भैया थे, अब भी उसी प्रकार थे। लोभ उन्हे छू भी नही गया था, फिर भी यह स्पष्ट था कि वे अपनी पत्नी के अधीन थे, और कोई स्वतन्त्र मार्ग ग्रहण नही कर सकते थे।

उसने थोडी देर सडक पर चलने के बाद एक तागा ले लिया और स्टेशन के पास वाली धर्मशाला मे चली, जहा वह ठहरी थी। अपने को हरिद्वार से आई हुई तीर्थयात्रिणी करके लिखाया था, और अब ज्वालामुखी की यात्रा पर जानेवाली है, ऐसा धर्मशाला के मुशीजी से कहा था।

तागे पर बैठकर उसने पहली बार घडी देखी, तो उसे बडा आश्चर्य हुआ

कि इस चखचख मे दो घण्टे निकल गए थे। खरी बातचीत बहुत ही आकस्मिक और विह्वल कर देनेवाली प्रतीत हुई। अभी काशी लौट जाने की इच्छा हुई, पर रात के पहले कोई गाडी ही नही जाती थी। तब तक तो यही रहना था।

समय बहुत दीर्घ लगा। इतना समय कैसे कटेगा ? उस महिला के कडे वाक्यो ने उसे भीतर तक चोट पहुचाई थी। शायद इस महिला ने सारे जीवन मे अपने पति के विरुद्ध कभी कोई बात नही कही होगी, जब कहा होगा तो 'हा' ही कहा होगा, पर इस मामले मे वह एकदम रुद्ररूप मे प्रकट हुई।

सच तो है, कि वह उसकी तरह होना नही चाहती। वह अपने पति और बच्चो से बधी रहना चाहती थी। उसका ससार बहुत छोटा था और वह उस छोटे-से कुए मे टरटराकर ही खुश थी। मैंने इतने बडे-बडे सपने देखे, पर मैंने क्या कर लिया ? अकेली पडी हू। आज तो बिल्कुल अकेले लगता है। इतना बडा सग्राम सामने है, पर वह सग्राम मूर्त होकर प्रेमचन्द का रक्त-मास वाला रूप धरकर सामने तो नही आएगा, और न यह कहेगा—क्यो निराश हो रही हो, मैं जो हू !

वह धर्मशाला के कमरे मे जाकर दरवाज़ा बन्द करके लेट गई, और इन्ही विचारो मे खो गई। कब निद्रादेवी ने आकर अपने शीतल हस्तो से उसकी सारी चिन्ताओ को समेटकर उसे अपनी लोरियो से सुला दिया, यह उसे पता नही लगा।

पर नीद मे भी वह पूरी शान्ति न पा सकी। जीवन के दो चित्र थे, दो सम्प्रदाय—एक बिल्कुल क्षुद्र स्वार्थ के कोल्हू के इर्द-गिर्द घूमता था, और दूसरा महासागर मे डुबकियो का लुत्फ उठानेवाला था। तो क्या दो भाई इन दो परस्पर-विरोधी सम्प्रदायो के प्रतीक थे ? पर ऐसा तो नही लगा। उसने बारी-बारी से सुगनचन्द और प्रेमचन्द को तौला, तो वे विरोधी तत्त्व तो नही प्रतीत हुए, बल्कि अक्सर सुगनचन्द के चेहरे पर प्रेमचन्द की हसी ही दिखाई पडी, वही व्यग्य भरी हसी।

पता नही कितनी देर तक वह सोती रही। उसने एकाएक देखा कि दरवाजा खुला, और उसके सामने प्रेमचन्द—नही नही, सुगनचन्द—नही नही, प्रेमचन्द—नही, सुगनचन्द खडे थे और उनके चेहरे पर बिलकुल वही हसी थी, जिससे प्रेमचन्द का चेहरा हर समय झलमलाता रहता था, जो फासी के फन्दे के बाद भी बुझी

नही थी। उसे बडा आश्चर्य हुआ। वह हडबडाकर उठकर बैठ गई। फिर तुरन्त ही खडी हो गई, क्योकि सुगनचन्द के लिए बैठने की कोई जगह नही थी। वह अभी कुछ कह नही पाई थी कि सुगनचन्द दोनो कानो तक फैली हुई मुस्कराहट के साथ बोले—मैं आ गया।

इस वाक्य का क्या अर्थ है, यह पूरा न समझ पाने पर भी अर्चना पुलकित हो गई। उसे लगा, जैसे एकाएक सूर्य की किरणे उसके अन्तरतम प्रकोष्ठो तक बुहार गई, और सारे सन्देह, भय, शकाए सिमट-ऐंठकर भाग गई। अब उसके सामने जीवन के दो तरीके नही, बल्कि केवल एक ही तरीका था, जो इतना जाज्वल्यमान था कि दूसरा तरीका बिल्कुल सुझाई ही नही पड रहा था। पर अर्चना की समझ मे नही आया कि इस वाक्य का क्या अर्थ है, मैं आ गया, इसमे का 'मैं' कौन है और आने मे क्या साकेतिकता है।

दोनो एक-दूसरे को बडे ध्यान से देख रहे थे, पर पहली समस्या जिसका समाधान करना था, और तुरन्त करना था, वह यह था कि सुगनचन्द को बैठाया कहा जाए। खडे-खडे बातचीत तो नही हो सकती थी। शायद इसी सकट को समझकर सुगनचन्द ने कहा—तुम बैठो। मैं खडे-खडे दो बात करके चला जाऊगा।

पर अर्चना बैठी नही, बोली—आप बैठिए, मैं यो ही लेटी हुई थी। आप विश्वास रखिए, मै कोई तकल्लुफ नही कर रही हू। मुझे खडे होने मे कोई कष्ट नही है।—कहकर उसने कही हुई बातो का दृष्टि से समर्थन किया।

पर सुगनचन्द बैठे नही।

थोडी देर तक यही औपचारिकता चलती रही, इसके बाद समझौता इसी-मे हुआ कि सुगनचन्द खाट पर सिरहाने की तरफ बैठ गए, और अर्चना पैताने बैठ गई। औपचारिकता के आक्रमण से छुट्टी पाते ही सुगनचन्द बोले—बचपन से ही मेरी इच्छा थी कि मै देशसेवा करू, पर कुछ ऐसा सिलसिला बनता चला गया कि मै कुछ कर नही सका। अब तुम जो स्थिति बता रही हो, उसमे मुझसे रुका न जाएगा, मैं उसमे सरपट कूद पडना चाहता हू। मेरी समझ मे आ रहा है कि मैने अब तक जो जीवन व्यतीत किया है, वह स्वार्थमय था। उसमे वह रस नही है।

अर्चना को एकाएक ऐसे लगा कि जैसे दरवाज़े के पास कोई छाया दिखाई पडी, पर वह छाया यदि थी, कल्पना की उपज नही थी, तो फौरन ही हट गई।

बोली—प्रेमचन्दजी आपकी बडी प्रशसा किया करते थे। कहते थे—भैया के दिल मे भी एक आग जला करती है, कालेज के दिनो मे उन्होने एक टामी को मारा था, क्योकि उसने केला खाकर उसका छिलका पास से गुज़रनेवाली एक महिला पर फेंका था।

सुगनचन्द का चेहरा तृप्ति की हसी से उद्भासित हो गया। वे बच्चो की तरह खुश हुए, साथ ही ऐसा लगा कि उनकी आखे गीली हो गईं। वे बोले—उसकी सज़ा हमे यह मिली कि मै एक परिवार का बोझ ही ढो रहा हू और रेंक रहा हू, जबकि उसने अपने को सारे ससार तक प्रसारित कर दिया। आज से मै भी उसी रास्ते पर चलूगा।

अर्चना कुछ कहने जा रही थी कि उसे लगा कि फिर दरवाज़े पर एक छाया कौधकर ही लुप्त हो गई। मन बोझिल बन गया। ख्याल था कि पुलिस पीछा नही कर रही है, पर यहा तो कुछ और ही माजरा लग रहा है। बोली—जिस रूप मे भविष्य सग्राम होने जा रहा है, उसमे सहानुभूति रखनेवाले, पर सक्रिय रूप से भाग न लेनेवाले गृहस्थो का बडा महत्त्व है। ऐसे गृहस्थ जितने अधिक होगे, हमे उतना ही लाभ रहेगा। कुछ हद तक ऐसे गृहस्थ अधिक महत्त्वपूर्ण होगे, क्योकि उन्हीकी सख्या पर सग्राम की सफलता निर्भर होगी।

पर सुगनचन्द ने प्रतिवाद करते हुए कहा—नही, मै सक्रिय कार्यकर्ता होना चाहता हू। पर प्रश्न यह है कि मेरे ऐसा बूढा आदमी तुम्हारे कार्य का है कि नही। कुछ तो कर ही सकता हू।

अभी सुगनचन्द वाक्य समाप्त नही कर पाए थे कि वह छाया बिल्कुल दरवाज़े के सामने आकर स्थिर हो गई, तब अर्चना एकदम से उठकर दरवाज़े के बाहर चली गई। उसे बडा आश्चर्य हुआ कि यह छाया किसी खुफिया की नही, बल्कि श्रीमती सुगनचन्द की थी। उसका चेहरा कडा पड गया, पर न चाहते हुए भी उसे उनका स्वागत करते हुए कहना पडा—आइए। आप बाहर क्यो खडी है? मैं आपसे छिपाकर कुछ करना नही चाहती।

इस समय तक सुगनचन्द भी बाहर आ गए थे। उन्हे बड़ा आश्चर्य हुआ कि श्रीमती सुगनचन्द किस प्रकार आ गईं। अभी आधे घण्टे पहले तक वे अपने को जिस प्रकार मुक्त समझ रहे थे, अब उस प्रकार मुक्त नही समझ रहे थे। जैसे वह रस्सी स्वय ही आकर उनके गले मे पड गई थी जिससे

सामने कोई भी ऐसी बात नही रखी थी, जो परिवार को किसी प्रकार तोडे। मैं तो केवल कुछ चन्दा-सा लेने आई थी। पर आपने ही स्थिति ऐसी बना दी कि बाबूजी के लिए असहनीय हो गई, और वे अपने भाई के रास्ते पर चलने के लिए तैयार हो गए। मै तो इतना ही चाहती थी कि आप जहा हैं, वही बने रहे, और हमारी सहायता करे।

श्रीमती सुगनचन्द ने व्यग्य के साथ कहा—जब सग्राम तीव्र हो जाएगा, तो तुम बार-बार आओगी-जाओगी, फिर जोखिम तो उतना ही होगा, जितना सक्रिय कार्यकर्ता बनने से होता है। तो लाभ क्या रहा ?

अर्चना ने सफाई देते हुए कहा—मै एक बार जाकर फिर नही आती। यह तो आप जानती ही है कि कितने वर्षो बाद मिली हू, अब की बार सग्राम बहुत ही तीव्र होने जा रहा है। इसलिए मैने सोचा कि जहा जो भी साधन है, उन्हे दुह लिया जाए, क्योकि अब की बार पूर्णाहुति है। बीच मे रुकना तो है नही।

कहकर उसने सुगनचन्द की ओर देखा। वे बुत बने हुए खाट पर बैठे हुए थे। उनका चेहरा उसी तरह बुझा हुआ बना था, बल्कि उसपर निर्बुद्धिता की राख की एक परत भी पड गई थी। जो थोडी देर पहले प्रमचन्द का भाई ही नही, स्वय प्रेमचन्द लगा था, अब वह अपनी पत्नी से परेशान एक साधारण अधेड-मात्र लग रहा था।

श्रीमती सुगनचन्द अपने पति को देखकर बोली—जो तुम्हे यही सब करना था, तो तुमने शादी क्यो की ? और यदि की, तो अब सबको मझधार मे छोडकर जाने को तैयार क्यो हो ? यदि तुम जी कडा करके पडे रहते, तो मुझे आज इस मनहूस धर्मशाला के फर्श पर न बैठना पडता।—कहकर श्रीमती सुगनचन्द ने इस तरह से चेहरा बना लिया, जैसे वह रोने ही वाली हो, अर्चना और सुगनचन्द दोनो ने सहजात बुद्धि से दरवाज़े की तरफ देखा।

दोनो खुश हुए कि दरवाज़ा पहले से ही बन्द है। सुगनचन्द के चेहरे पर कई रग आए और गए। अन्त मे वे बोले—थोडी देर के लिए भूल जाओ कि हम लोगो के बीच भावरे पडी। पर मैं जब तुम दोनो को देख रहा हू, तो मुझे ऐसा लग रहा है कि तुम दोनो नारीत्व की दो दिशाओ की प्रतीक हो। एक तो तुम हो, जो केवल एक मुर्गी की तरह अपने अण्डे-बच्चो तक ही अपने ससार को सीमित रखे हुए हो, और कुए के मेढक की तरह उसामे टरटराकर खुश हो, और दूसरी

तरफ यह है जो एक लपलपाती हुई ज्वालामयी अनुप्रेरणा की तरह है। दुनिया भले ही न जाने, पर मैं जानता हू कि मेरा भाई प्रेमचन्द किस प्रकार ग्रन्थकीट, घर-घुसू और डरपोक आदमी था। इन्हीने उसको शहीद की मर्यादा दिलाई, और यह नही कि आग लगाकर जमालो अलग खडी हो गई। अब वर्षों बाद भी इनके हाथ मे वही मशाल है जिसे इन्होने प्रेमचन्द के हाथ मे थमा दिया था। मैं यह समझ गया हू कि मेने अब तक जो जीवन व्यतीत किया, वह उस मुर्गे का जीवन था, जो कतवार के ढेर पर खडे होकर यह समझता है कि उसने विश्व-विजय कर ली। रानी, तुमने मेरी आखे खोल दी। अब मैं अपने अन्तिम दिन इन लोगो के साथ कार्य मे लगूगा। तुम जाओ। जा ओ।

श्रीमती सुगनचन्द को आश्चर्य नही हुआ, बोली—ये सब कहने की बातें है कि कोई किसीको भडका सकता है। यदि उसके अन्दर वह पेट्रोल ही न हो, जो भभककर जल सके, तो चिनगारी क्या करेगी! तुम दोनो भाई एक ही तत्त्व के बने हुए हो। मैं हू कि मैंने तुम्हे इतने वर्षो तक सम्भालकर रखा, यहा तक कि तुम्हे भी यह जानने नही दिया कि तुम मे वे तत्त्व ही हैं, पर इसने आकर ही सारा काम बिगाड दिया।—कहकर श्रीमती सुगनचन्द ने अर्चना को ऐसी दृष्टि से देखा, मानो तीसरा नेत्र खोलकर उसे भस्म कर देगी। बोली—क्यो अर्चना, क्या एक परिवार मे एक भाई का बलिवेदी पर चढना काफी नही है? यदि भारत के सब परिवारो से एक लडका देश के लिए बलिवेदी पर चढे, तो क्या नही हो सकता!

अर्चना ने देखा कि अब श्रीमती सुगनचन्द के लहजे मे तिरस्कार का वह टकार नही है, जो पहले था, बल्कि भिक्षापात्र की ही झलक है, तो वह नरम पडकर बोली—मैं तो बाबूजी के पास केवल कुछ पैसो के लिए आई थी, और वह भी इस कारण, कि उन्होने कभी मुझे आशा दिलाई थी कि जरूरत पडने पर मैं पैसे माग सकती हू। आप लोग विश्वास रखे कि इस समय धन की इतनी जरूरत है कि हम भीख मागने मे भी कोई हर्ज नही मानती।

सुगनचन्द ने एक चेक निकालकर अर्चना के हाथ मे दिया, पर अर्चना ने चेक लौटाते हुए कहा—हमें तो जो कुछ चाहिए, नकद चाहिए। इतनी बडी रकम अपने हिसाब जमा करवा-करवाकर हमे देने के लिए एक बहुत बडा आदमी चाहिए, ऐसा बडा आदमी जो जोखिम भी उठाने को तैयार हो। इसलिए आप नकद दीजिए।

श्रीमती सुगनचन्द ने झपट्टा मारकर तो नही, पर कुछ रुखाई के साथ चेक ले लिया, और उसकी तरफ देखकर कहा—देख लिया प्रेमचन्द के भाई को ! वे तो फिर भी दो साल तक जेल के बाहर चले, पर ये तो दो दिन भी नही चल सकते। खुद फसेंगे, और दूसरो को भी फसाएगे। अगर इनको धन देना ही था तो नकद देते, जिससे किसी प्रकार कोई प्रमाण न छूटे।

सुगनचन्द अपनी गलती समझ गए थे। उन्होने चेक लेकर उसे फाडकर वही फेंक दिया, तब श्रीमती सुगनचन्द अर्चना से बोली—प्रमाण नम्बर दो कि ये तुम्हारे किसी काम के नही हैं—चेक के टुकडे यही छोड दिए , यह नही सोचा कि इन्हे इकट्ठा करके और कुछ तो नही, अदालत मे प्रमाण के रूप मे पेश किया जा सकता है।—कहकर उन्होने उन टुकडो को बटोर लिया और उन्हे अपनी साडी के किनारे बाध लिया।

सुगनचन्द ने कहा—तो फिर कैसे होगा ?

अर्चना बोली—मैं यहा ठहरी हुई हू, जब भी बताइए, मैं आ जाऊ। मैं अपना सामान स्टेशन के लॉकरूम मे रख देती हू, और आपसे रुपये लेकर सीधे स्टेशन पहुच जाऊगी। आप समय बता दें।

पर श्रीमती सुगनचन्द ने कहा—तुम अपना सामान लेकर हमारे घर पर चलो, वही से सारी कार्रवाई हो जाएगी। वही से तुम्हे स्टेशन पहुचा दिया जाएगा।

अर्चना ने सुगनचन्द की तरफ देखा। दोनो मे आखो-आखो मे कुछ विनिमय हुआ। थोडी ही देर मे अर्चना बिस्तरा बाधकर श्रीमती सुगनचन्द के साथ मोटर मे बैठ गई।

जब वह सध्या समय कमर के पास एक छोटा-सा पुलिन्दा छिपाकर सुगनचन्द के घर से निकली और टैक्सी पर बैठी, तो वह बहुत खुश थी, खुश केवल इसलिए नही थी, कि वह एक बडी रकम लेकर साथियो मे लौट रही थी, जैसाकि उसने वादा किया था, बल्कि इसलिए भी खुश थी कि यद्यपि सुगनचन्द ने धर्मशाला मे जाकर यह कहा था कि मैं अब देशसेवा के अलावा कुछ नही करूगा, श्रीमती सुगनचन्द के धर्मशाला पहुचने के बाद उन्होने इस सम्बन्ध मे कोई बात ही नही उठाई, और अब वह अकेली जा रही थी। स्टेशन तक भी पति-पत्नी मे से कोई उसके साथ नही आया। टैक्सी मगा दी गई थी, जिसका किराया पहले से दे दिया गया था।

यह धन जिसका लिफाफा उसकी नाभि से लेकर वक्षस्थल तक विस्तृत था, प्रेमचन्द के धन का ही लिफाफा था, प्रेमचन्द—जिसने देश के लिए फासी के तख्ते पर अपना रक्त दान दिया !

उसे बडे गौरव का अनुभव हो रहा था, साथ ही कही भीतर ही भीतर कुछ विषाद के तार भी झकृत हो रहे थे, पर ऊपर जो स्वरलहरी फैल रही थी, उसके मुकाबले मे उन तारो की झकार बहुत ही अवरुद्ध थी, क्योकि अब तो पूर्णाहुति होनेवाली थी, फिर काहे का भय, काहे का डर, हिचकिचाहट कैसी ! अब जो नरमेध यज्ञ होनेवाला है, उसमे अपने को भी होम देना है। हजार रुपये के ये नोट तो तुच्छ है अब तो अपना और अपने ऐसे सैकडो लोगो के खून का सोना तरल होकर बहेगा, और उसमे सारी चिन्ताए, दुविधाए, शकाए बह जाएगी। सुगनचन्द ने क्या सुन्दर ढग से कहा कि वही मशाल मेरे हाथ मे है, जो प्रेमचन्द के हाथ मे थी।

फौरन गाडी मिल गई, और अर्चना रवाना हो गई।

१९

स्वामी रामानन्द को यह पक्की खबर मिली थी कि प्रसिद्ध फरार क्रान्तिकारी, जिनपर शायद तीस हजार रुपये का इनाम था, अमिताभ अब अज्ञातवास से प्रकट होनेवाले हैं। रहेगे तो वे फरार ही। पर इतने दिनो तक वे जो अपने साथियो से भी अलग कही छिपे पडे थे, उससे निकल पडेगे। इस खबर से वे स्वय बहुत उत्तेजित हुए थे, साथ ही श्यामा, जो एकमात्र अन्य व्यक्ति थी, जिसे यह खबर मालूम हुई थी, बहुत उत्तेजित थी।

यो तो सारा कार्य ढग से चल रहा था। युवकसघो, किसान-सभाओ तथा विभिन्न श्रमिक यूनियनों के जरिये से आगामी क्रान्ति का आवाहन किया जा रहा था। लोगो को इसलिए तैयार किया जा रहा था कि ज्योही काग्रेस अपने विलम्बित ताल के बावजूद सग्राम मे कूद पडने के लिए मजबूर हो जाए, त्योही आन्दोलन को क्रान्ति की पटरी पर लगा दिया जाए। इस कार्यक्रम को सभी प्रान्तो के क्रान्तिकारियो, कम्युनिस्टो, युवक तथा किसान नेताओ तथा सभी वामपथी दलो का आशीर्वाद और सहयोग प्राप्त था।

स्वामी रामानन्द आए तो थे आन्दोलन को गरमाने और द्रुतीकृत करने के लिए, पर उन्होने धनजय, शिशु आदि की जो हालत देखी, उससे उन्हे ऐक्सेलेरेटर की बजाय ब्रेक का कार्य करना पडा। वे बार-बार लोगो से कह रहे थे—जिस कारण १८५७ का विद्रोह असफल हो गया, उसको न दुहराओ। एकसाथ विद्रोह की आग भडकानी पडेगी। फुटकर इक्के-दुक्के अग्निकाण्ड से दुश्मन का दमकल लोहा लेने और जूझने की पूरी सामर्थ्य रखता है। हमे अब वैयक्तिक आतकवादी तरीको को छोडकर क्रान्ति का तरीका अपनाना है।

धनजय ऐसे लोग इस नीति के विरोधी थे। उनका कहना था—गाधी सग्राम शुरू करनेवाला नही है। वह तो किसी भी वक्त समझौता कर अलग खडा हो जाएगा, और हम लोग बीच मे टगकर रह जाएगे। हमे उनका मुह नहीं ताकना चाहिए, बल्कि सग्राम के द्वारा ऐसी परिस्थिति पैदा कर देनी चाहिए कि वे समझौता करें तो हास्यास्पद हो जाए। सरकार समझे कि गाधी के हाथ से देश निकल गया, तो कोई गाधी को दो कौडी का न समझे।

शुक्राचार्य उर्फ स्वामी रामानन्द ने इसपर यह कहा था—यही तो हम कर रहे हैं, पर केवल प्रचार-कार्य तक ही हम अपने को सीमित रखेगे। अभी हम न तार काटेंगे, न पटरी उखाडेंगे।

धनंजय ने व्यग्य के साथ कहा था—पर महाराज, आपसे तो छिपा नही है कि तार भी कट रहे हैं, और जहा-तहा पटरिया भी उखड रही है। इलाहाबाद मे तो इस बीच कोतवाली पर झण्डा लगाने का कार्यक्रम भी चल गया, और उसमे हमारे कुछ लोग जेल भी पहुच गए।

शुक्राचार्य ने कहा था—यह अच्छा ही हुआ, इस प्रकार जो काम स्वत स्फूर्त होकर हो जाए, वे हो जाए, पर मुख्य हमला उसी समय होना चाहिए, जब सारे देश मे आन्दोलन के कारण ऐसी स्थिति उत्पन्न हो जाए कि सरकार के और सान ढीले हो जाए। दो-चार जगह तार कट गए और पटरिया उखड गईं, तो उससे हमारे सैद्धान्तिक प्रचार-कार्य को बल ही मिलेगा, क्योकि यह ज्ञात होगा कि प्रचार-कार्य करनेवाले लोग महज बातो के धनी नही हैं, वे सचमुच हमला करने पर तुले हुए हैं। यह तो होगी दुश्मन पर प्रतिक्रिया। इससे हमको लाभ यह हो रहा है, कि एक तो हमारा प्रचार-कार्य इन हमलो के कारण गम्भीर बन रहा है, और दूसरे हमे यह पहले से मालूम हो रहा है कि जब सब लोग मिलकर हमला

बोलेगे, तो उसका धमाका भयकर होगा और उसके सामने ब्रिटिश सरकार के दुर्गद्वार धसकर टूट जाएगे।

बडी कठिनाई से अर्चना, धनजय, हरीश, जयप्रकाश, सुरेश तथा सैकडो ऐसे युवको और युवतियो को रोककर रखा गया था। उनका कहना था कि सारे इतिहास मे क्रान्तिकारी और वामपथी अन्दोलन हर वक्त अग्रदूत का काम करता रहा, अब क्या वजह है कि वह किसी आन्दोलन का पुछल्ला बनकर चले ? इन लोगो को समझाया जा रहा था कि यह तो रणनीति की बात है कि कब पुछल्ला बनकर चला जाए और कब अग्रदूत बनकर काम किया जाए। असली उद्देश्य तो यह है कि अभीष्ट दिशा मे आन्दोलन को ले जाकर अभीष्ट फल प्राप्त किया जाए। इससे कुछ फर्क नही आता कि कभी गाडी नाव पर हो जाए या कभी नाव गाडी पर हो जाए। असली उद्देश्य तो गति है, तीव्र गति, बिजली की तरह गति, ब्लित्स क्रीग स्वतन्त्रता जल्दी से जल्दी प्राप्त करना—यही उद्देश्य है। सग्राम मे लुत्फ तो तभी होगा, जब अर्ध इच्छुक लोगो को भी क्रान्ति के प्रवाह मे घसीटता जाएगा, और उन्हे सीढी के डडे बनाकर ऊपर चढा जाएगा।

पर प्रतीक्षा करते-करते शुक्राचार्य को अब स्वय सन्देह होने लगा था कि वाकई काग्रेस आन्दोलन मे भाग लेगी भी या नही ? उसके मुह मे मन्त्रिमण्डलो का खून लग चुका था, सम्भव है अब यह आन्दोलन का मार्ग ग्रहण ही न करे, सभव है धमकाने तक ही इसकी पूजी हो। जो कुछ हो रहा था, वह तो स्पष्ट रूप से समझौते की तैयारी-मात्र थी। जिन्ना तो खैर गया-गुजरा था ही, और वह शायद जो कुछ कर रहा था, वह ब्रिटिश राजनीतिज्ञो के इशारे पर कर रहा था। प्रथम महायुद्ध के बाद अरब को टुकडे-टुकडे करके ही ब्रिटिश साम्राज्य ने दम लिया था, अतएव यदि जिन्ना उसका एक हद तक एजेण्ट है, तो कोई आश्चर्य की बात नही, पर गाधी भी सग्राम के लिए लालायित नही लग रहे थे। बस, बाल की खाल, अहिंसा की लच्छेदार परस्पर-विरोध से कण्टकित व्याख्या, आत्मशुद्धि-सम्बन्धी उबकाई ला देनेवाली लम्बी-लम्बी लनतरानिया, यही सब चल रहा था। हर वक्तव्य से पहले दिए हुए वक्तव्यो का स्पष्टीकरण न होकर, उनपर या तो हडताल फेरी जा रही थी, या उनपर धुए और कुहरे का और गहरा पर्दा पैदा किया जा रहा था।

शुक्राचार्य के लिए ही नही, दूसरे सभी नेतृस्थानीय क्रान्तिकारियो के लिए

बडा कठिन समय जा रहा था। बगाल से लेकर पजाब तक सर्वत्र !

शुक्राचार्य ने अपने स्वामी रामानन्द वाले रूप मे यह चाहा कि अजय और मृत्युजय तथा सजय और विजय वाले मामले मे कुछ समय दें जिससे वह मामला तय हो जाए, पर उस सम्बन्ध मे दोनो पक्षो मे सम्पूर्ण गत्यवरोध इस माने मे था, कि हेमा माई के दोनो लडको को बाबू रामलाल की मिलो के व्यवस्था विभाग मे अच्छी नौकरी, यानी जो नौकरी वे पहले यहा कर रहे थे, उससे दुगनी तनख्वाह वाली नौकरिया दे दी गई थी। वे अब झगडा करना नही चाहते थे। पूर्ण प्रमाण मौजूद थे, जिसने हेमा माई के साथ बाबू रामलाल का विवाह प्रमाणित था, फिर भी अजय और मृत्युजय किसी प्रकार का कदम उठाने के लिए तैयार नही थे। अजीब हालत थी। सभी तरफ गत्यवरोध था, अपने हको के लिए सग्राम शिथिलता थी, यहा तक कि महायुद्ध मे भी कोई गति नही लगती थी।

इसी समय एक दिन एक दूत ने शुक्राचार्य को कुछ सन्देश दिया। सन्देश के ढग से लगता था कि यह सन्देश अभिताभ की तरफ से आया था। सन्देश यह था कि अत्यन्त साधारण वेश मे, यानी साधु के वेश मे नही, दूत के साथ चले आओ, बहुत जरूरी विषय मे परामर्श करना है।

शुक्राचार्य फौरन ही तैयारी मे लग गए, और रात की गाडी से दूत के साथ युक्तप्रान्त के एक पूर्वी जिले मे पहुचे। वहा सचमुच अभिताभ से भेंट हुई। वे शुक्राचार्य से लिपटकर बोले—तुमने अच्छा किया कि तुम इतने साल हिमालय की गोद मे छिपे रहे, पर मैं अपने को कार्यक्षेत्र से अलग नही ले जा सका। मैं उस दुकानदार की तरह हू जिसकी अपनी दुकान है, इसलिए मुझे कभी छुट्टी नही मिली। मैं कुछ कर नही सका।—कहकर उन्होने शायद अपनी अनजान मे पैरो की तरफ देखा, फिर अलग होकर बोले—खैरियत यह है कि अब वह समय आ गया जिसकी प्रतीक्षा थी।

शुक्राचार्य ने सारी खबरे बताईं और अन्त मे यह कहा—लोग बहुत उतावले हैं, यह समझ मे नही आता कि उन्हे किस प्रकार रोक रखा जाए।

दोनो क्रान्तिकारी नेताओ मे राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय स्थिति पर बातचीत होने लगी। थोडी देर बाद अभिताभ ने कहा—पर मैंने तुम्हे एक दूसरे ही विषय पर बातचीत करने के लिए बुलाया है। मैं बडे धर्मसकट मे हू।

शुक्राचार्य को बहुत आश्चर्य हुआ कि क्या ऐसा भी कोई विषय हो सकता है,

जिसपर अमिताभ को धर्मसकट उत्पन्न हुआ हो! बहुत ही अजीब बात है। वे तो स्वय सकट मोचन हैं, और यही उन्होने गत आठ साल किया है। दीपक की लौ जब बिल्कुल बुझती हुई दिखाई पडती थी और राष्ट्रीय आन्दोलन के पहिये बिलकुल दलदल मे फसे प्रतीत होते थे, सबके उत्साह की फूक निकल चुकी थी, उस समय इन्होने मध्याह्न-सूर्य की तरह प्रकट होकर लोगो के सन्देहजाल छिन्न किए, उनकी नसो मे रक्त की लालिमा दौडा दी, उनमे नई जान फूकी, और गाडी को दलदल से निकालकर फिर से चालू किया।

वे सन्देह मे कैसे पड गए? पूछा—महाराज, मैं तो अपने सन्देहो को दूर कराने के लिए आपके पास आया और आप मुझसे सन्देह दूर कराना चाहते हैं, यह अजीब बात है।

अमिताभ मुस्कराए, बोले—कभी-कभी डाक्टर को भी दूसरे डाक्टर के पास जाना पडता है। सक्षेप मे, समस्या यह है कि कुछ लोग, जो अब तक निरे डाकू थे, वे आगामी क्रान्तियज्ञ मे कुछ कार्य करना चाहते है। क्या उन्हे इसमे लेना उचित होगा? मुझे इधर के डाकुओ का एक प्रसिद्ध सरदार बादल मिला था। कहते हैं, उसके पास चौहत्तर बन्दूकें हैं, इसके अलावा काफी धन है, जन-बल तो है ही।

शुक्राचार्य ने छूटते ही कहा—महाराज, यह भी कोई समस्या है! महर्षि बाल्मीकि डाकू थे। अपनी अपराधवृत्ति छोड देते ही ये डाकू न रहकर क्रान्तिकारी हो जाएगे। उनका धन, उनकी बन्दूकें—सब हमारे लिए बहुत ही उपयोगी होगी, और यदि आपको इसमे कोई हिचकिचाहट है, तो मैं स्वामी रामानन्द के रूप मे उन्हे ग्रहण करने के लिए तैयार हू।—कहकर शुक्राचार्य ने पूरी कथा सुनाई कि किस प्रकार अर्चना ने बाबू सुगनचन्द से एक बडी रकम प्राप्त की। बोले—इसके अलावा आपको यह भी तो याद होगा कि मैनपुरी के महान क्रान्तिकारी नेता गेदालाल दीक्षित ने, और उसके बाद उनके शिष्य रामप्रसाद बिस्मिल ने पेशेदार डाकुओ से सहायता ली थी। उन्हे वे हिस्सा देकर भी डाको मे ले जाते थे। ··

अमिताभ ने गम्भीर होकर कहा—मुझे सब मालूम है, पर उन लोगो ने जो कार्य किया, उसमे उनको तो कोई दोष नही लगा, पर शायद वह अच्छा नही हुआ। यदि डाकू क्रान्तिकारी बन जाए, तो उसमे दोष नही, पर डाकू डाकू ही बना रहे, केवल सामयिक रूप से हमारा कार्य सिद्ध करे, तो उस सम्बन्ध मे हमारी नीति क्या होनी चाहिए, यह है असली प्रश्न।

बात होते-होते रात हो गई। अब भी बातचीत हो ही रही थी कि एक युवक ने आकर अमिताभ के कान मे कुछ कहा। एकाएक अमिताभ जैसे सचेत हो गए। उन्होने युवक को कुछ आदेश दिया, फिर जब युवक चला गया तो शुक्राचार्य से बोले—वह स्वय ही आ रहा है, बातचीत करके फिर निश्चय करेगे।

दोनो नेता प्रतीक्षा की दृष्टि से उधर देखते रहे, जिधर युवक गया था। दोनो के बीच मे एक छोटी-सी मेज रखी हुई थी। अब शुक्राचार्य ने देखा पहले ही से तीसरी कुर्सी भी रखी हुई थी। थोडी ही देर मे युवक के साथ बादल आया। परम्परावर्णित डाकुओ की तरह वह काला-कलूटा, लम्बा-तडगा नही था, बल्कि गोरा चिट्टा, दुबला-पतला साधारण देहाती युवक लगता था। युवक क्या, लगभग अधेड। उसकी मूछे बडी-बडी थी। आखे छोटी होने पर दृष्टि बडी ही पैनी थी। वह चारो तरफ सन्देह-भरी अशान्त दृष्टि से देखता हुआ आया। उसके हाथ मे पिस्तौल थी। जिससे वह खेलता हुआ आया। फिर शुक्राचार्य को सन्देह की दृष्टि से देखकर बैठ गया। अमिताभ ने युवक से इशारा किया, वह फिर जाकर शायद पहरे पर तैनात हो गया। अमिताभ ने शुक्राचार्य का परिचय कराते हुए कहा—ये हमारे दल के बहुत पुराने नेता है। इनका नाम है स्वामी रामानन्द।

डाकू ने शुक्राचार्य को ध्यान से देखा, तो स्वामीजी बोले—मैं कभी-कभी गेरुआ पहन लेता हू।

डाकू ने कहा—मैं भी कभी-कभी गेरुए कपडे पहनता हू। उसी वेश मे मैं कन्याकुमारी तक तीर्थयात्रा कर आया।

अमिताभ ने सीधे ही विषय छेड दिया, बोले—भाई बादल अब हम लोगो की मदद करना चाहते है।

बादल ने चारो तरफ देख लिया, क्योकि खर से कोई आवाज हुई थी। फिर बोला—मुझे हिटलर बहुत पसन्द है। मैं ज्यादा पढा-लिखा नही हू। मिडिल स्कूल मे मास्टर लगा था। जमीदार को किसीने कह दिया कि मेरी पत्नी बहुत खूबसूरत है, बस उसने उसे जबरदस्ती पकडकर मगवा लिया, उसी दिन से मैं डाकू हो गया। पहले तो मैंने गडासे से ज़मीदार और उसके दो कारकुनो को खत्म किया, इसके बाद मैं डाकू बन गया। जमीदारो-महाजनो को लूटकर गरीबो मे बाटता हू। हा, तो कह रहा था कि हिटलर मुझे बहुत पसन्द है। इसलिए मैं आप लोगो की सहायता करना चाहता हू।

अमिताभ ने पिस्तौल से खेलते हुए डाकू के हाथो की तरफ देखते हुए कहा—पर हम लोग हिटलर को पसन्द नही करते, यानी वही तक पसन्द करते है, जहा तक कि वह अग्रेजो को कमज़ोर कर रहा है। हिटलर तो कई देशो को पराधीन बना चुका है, और आगे भी शायद उसका यह काम जारी रहे।

डाकू इससे कुछ प्रभावित नही हुआ, बोला—महाराज, ससार कुछ ऐसा बना है कि इसमे विशुद्ध अच्छाई तो कोई कर नही सकता। मैंने कई बार ऐसे लोगो को मुखबिर समझकर मार डाला, जिनके सम्बन्ध मे बाद को पता चला कि वे मुखबिर नही, बल्कि उनके भाई, भतीजे या अन्य कोई पडोसी मुखबिर था। पर क्या किया जाए! हम कोई जोखिम नही उठा सकते, जिसको भी हम उस समय खराब समझते है, उसको सजा देते है।

शुक्राचार्य कुख्यात डाकू को ध्यान से देख रहे थे। जब वह हिटलर का नाम लेता था, तो उसकी आखे एक हिंस्र ढग से चमक उठती थी। उसके चेहरे पर कई दाग थे, जिनमे से एक जो बायी कनपटी पर था, काफी गहरा था, और उसे देखते ही ऐसा लगता था कि वह मरते-मरते बचा होगा। वह बात करता जाता था, और साथ ही मे पिस्तौल से खेलता जाता था, जिसमे निश्चय ही दस गोलिया भरी हुई थीं जो एक छोटे-मोटे युद्ध के लिए काफी थी। डाकू कह रहा था—जब भगवान ने अपनी सृष्टि मे अच्छाई और बुराई मिला रखी है, तो हम उसे कैसे अलग कर सकते हैं। हिटलर ने उन देशो पर इसलिए अधिकार कर लिया, कि नही तो उसके दुश्मन उनपर अधिकार कर लेते, और तब उसके लिए लेने के देने पड जाते।

डाकू यदि पिस्तौल से न खेलता होता और उसकी बायी कनपटी पर वह चोट न होती, और पृष्ठभूमि के रूप मे यह न मालूम होता कि उसके गिरोह के पास चौहत्तर बन्दूके हैं, तो ऐसा लगता कि बाबू आनन्दकुमार के यहा जिस तरह से काग्रेसी और गैर-काग्रेसी, समाजवादी और साम्यवादी, मजदूर सभाई और हिन्दू महासभाई आपस मे चिल्ला-चिल्लाकर बहस करते हैं, जिन्हे सी० आई० डी० के लोग सुनकर भी नही सुनते, और ऊघने लगते है, यह उसी तरह की एक बहस है। पर डाकू बहुत गम्भीर प्रकृति का मालूम होता था। यह लगता था कि उसमे अपने विचारो को कार्यान्वित करने की सामर्थ्य है, जो वह क्षमता है, जिससे इतिहास के पहिये परिचालित होते है।

अमिताभ बडे धैर्य के साथ, साथ ही सहानुभूतिपूर्वक, जैसा गुरुजन छोटे बच्चो

के प्रयासो की तरफ रुख रखते है, उसकी बाते सुन रहे थे। वही बीच-बीच मे एकाध शब्द कह देते थे। फिर फौवारा जारी हो जाता था, और उसके अन्दर से अविरल गति से वाक्यधारा चालू हो जाती थी। लगता था कि डाकू ने ताजे से ताजे अखबार पढ रखे है, और वह हिटलरी प्रचार-कार्य से पूरी तरह परिचित है। वह इससे पहले अमिताभ से कई बार कह चुका था—भारत के सब डाकू और आप लोग एकत्र होकर कार्य करे, तो मुझे विश्वास है कि हम अग्रेजो को निकाल बाहर कर सकते है।

अमिताभ ने कहा—इसीपर बातचीत करने के लिए सरदार, मैने तुम्हे बुलाया है। हमारे शुक्राचार्य किसी ज़माने मे बहुत डाके डाल चुके है। एक मौके पर, जबकि क्रान्तिकारी गाववालो के द्वारा घेर लिए गए थे, कई बन्दूके लाठियो की मार से बेकार हो चुकी थी, तब इन्होने अकेले गाववालो का मुकाबला किया, जिनमे छुट्टी पर आए हुए दो राइफलधारी सैनिक भी थे। इन्होने एक सैनिक को गोली से मार गिराया, फिर गाववालो को चेतावनी दी, तो वे खुद ही भाग गए।

शुक्राचार्य ने हसते हुए कहा—अरे महाराज, आप मुझे क्यो सारा श्रेय दे रहे हैं। आप न होते तो कुछ भी न होता, क्योकि मेरे पीछे से जो व्यक्ति लाठी लेकर आया था, उसको आपने बिना किसी प्रकार के अस्त्र के न जाने कौन-सा पेच मारा कि वह वही गिर पडा, और बुरी तरह चिल्लाने लगा। असल मे उसीके चिल्लाने से गाववाले भाग निकले। मैं तो आपका एक सैनिक-मात्र था।

सरदार बादल इन कहानियो से कुछ भी प्रभावित नही हुआ, बल्कि उसके चेहरे पर स्पष्ट व्यग्य झलक गया। बोला—आप लोग नामी क्रान्तिकारी है, पर मेरी समझ मे यह आता है कि हिटलर ही के कारण भारत स्वतन्त्र होगा, चाहे हिटलर स्वतन्त्र करे, या हिटलर से लडते-लडते अग्रेज़ इतने कमज़ोर पड जाए कि हम स्वय स्वतन्त्र हो जाए।

अमिताभ ने शुक्राचार्य की तरफ देखा कि यह बात तो बहुत ही पते की कह रहा है। इस रूप मे इस तथ्य को आज से पहले किसीने नही कहा था। सचमुच सबसे बडी ज़रूरत यह थी कि ब्रिटिश साम्राज्यवाद का मदमस्त हाथी किसी प्रकार दलदल मे फस जाए। अब वह फसा है, तभी चारो तरफ आशा की किरणो का छिटकना सम्भव हुआ। फिर भी अमिताभ ने कहा—अब सरदार, यह बताओ कि

हम लोगो मे सहयोग किस तरह हो सकता है। तुम्हारे वीर्य और शौर्य पर तो हमे भरोसा है ही, पर तुम्हारी चौहत्तर राइफलो और लाखो रुपयो का भी हमे लोभ है। क्या यह सम्भव है कि तुम आज से केवल क्रान्तिकारी रह जाओ, डाकू रहो ही नही ? अभी तुम्हारे आने से पहले हम लोग महर्षि वाल्मीकि की बात कर रहे थे। हमारे देश का पहला कवि डाकू था, जो महर्षि भी हो गया।

सुनकर डाकुओ के सरदार ने पहली बार पिस्तौल से खेलना छोड दिया। उसके चेहरे पर जैसे एकाएक अन्धकार की कई परते आ गई, वह हिचकिचाते हुए बोला—महाराज, मैं तो पहले ही बता चुका हू कि हमारे सब साथी इस योग्य नही है कि वे क्रान्तिकारी बने। हमने कई ऐसे लोगो को अपने गिरोह मे भर्ती किया है, जिनके लिए डाका डालना या किसी प्रकार के जोखिम मे पडना धनोपार्जन का जरिया नही है। वे मेरी तरह किसी प्रकार से अपमानित होकर बदला चुकाने के लिए इस ढर्रे पर आ गए है ऐसा नही, बल्कि उनका एकमात्र उद्देश्य दिलबहलाव और निष्ठुरता करना है। उन्हे न स्वतन्त्रता से मतलब है, न परतन्त्रता से। यदि वे परतन्त्रता से भागते है, तो वह केवल इस कारण, कि उसमे निष्ठुरता का मौका नही मिलता।

अमिताभ ने ये सारी बाते पहले भी सुन रखी थी। शुक्राचार्य के सामने केवल उन्हे दुहराया जा रहा था। अमिताभ एकाएक निर्णयात्मक ढग से बोले—फिर तो वे पशु हुए, बल्कि उनसे भी बदतर, क्योकि कई हिंसक पशु ऐसे है, जो बिना भूख के अपने शिकार पर भी वार नही करते।

डाकुओ के सरदार ने पिस्तौल के साथ खेलते हुए कहा—यही कह लीजिए। मैं उन्हे दो पैरो के बुलडाग या अलेसेशियन मानता हू, पर ऐसे लोग बडे काम के है, क्योकि उन्हे अपनी जान की कतई परवाह नही होती। वे डरते है तो केवल बधकर मारे जाने से। बाकी गोलियो के शिकार होने मे उन्हे कोई एतराज नही है।

अमिताभ ने शुक्राचार्य की तरफ देखते हुए कहा—यहा पर आकर हर दफे हमारी बातचीत रुक जाती है। सरदार इनको छोडना नही चाहते, और मैं इनको लेना नही चाहता। हमारा सग्राम अभी तक तो चिरन्तन देवासुर-सग्राम का ही एक हिस्सा है, उसमे हम पशुओ का उपयोग नही कर सकते।

डाकुओ के सरदार ने कहा—पर भगवान रामचन्द्र ने पशुओ का उपयोग किया था।

शुक्राचार्य ने देखा कि क्रान्तिकारियो के महान नेता, सिद्धान्तवादियो मे परम सिद्धान्तवादी, जीवन और तर्क मे कभी पराजय न माननेवाले अमिताभ डाकुओ के इस लगभग अपढ, बल्कि अर्ध-शिक्षित, जो उससे भी खतरनाक है, सरदार के विरुद्ध कच्चे पड रहे थे, पर अमिताभ बोले—पर तुम्ही ने तो कहा कि तुम्हारे ये अनुयायी, जहा निष्ठुरता का अधिक मौका मिलेगा, फौरन उसी तरफ हो जाएगे। इन्हे यह तमीज नही है कि कोन मित्र है और कौन शत्रु।

शुक्राचार्य ने पहली बार बातचीत मे जोर से भाग लेते हुए कहा—तब तो इन्हे किसी भी प्रकार नही लिया जा सकता।

सरदार ने कहा—और हम उन्हे छोड नही सकते।—उसका लहजा बिल्कुल निर्णयात्मक और अन्तिमता का पुट लिए हुए था। बोला—हम लोगो ने परस्पर को कभी न त्यागने की शपथ खाई है।

अमिताभ ने शुक्राचार्य की तरफ देखते हुए कहा—तीन बार तीन जिलो मे बातचीत हो चुकी, और सारा मामला आकर यही अटक जाता है। हम स्वतन्त्रता-सग्राम के नाम पर किसीको भी निष्ठुरता के लिए निष्ठुरता करने का सादा दस्त-खती चेक नही दे सकते। यदि हम कभी कोई हिंसा या निष्ठुरता करते है, तो वह उसी हद तक क्षम्य है, जिस हद तक कि वह एकदम अनिवार्य है। इसीलिए मैंने उस अवसर पर उस व्यक्ति को जुजुत्सु का पेच मारकर सामयिक रूप से लगडा कर दिया था, हमने उसे गोली नही मारी। स्वभाव से निष्ठुर लोगो का हमारे सग्राम मे कोई स्थान नही है, हम तो केवल उतने रक्तपात का स्वागत कर सकते है, जितना बच्चे को जन्म देते समय मा के लिए जरूरी है। यह रक्तपात पवित्र है क्योकि असीम अनुकम्पा के सोते से निकला हुआ है। सरदार, तुम फिर से सोचो, क्या तुम इन लोगो को त्याग नही सकते?

सरदार ने कहा—महाराज, मैं तो कह चुका हू कि मैं उन्हे छोड नही सकता, क्योकि वे हमारे अभिन्न अग है। वे हमे भले ही छोड जाए, पर हम उन्हे नही छोड सकते।

—तो ऐसा कुछ करो कि वे ही तुम्हे छोड जाए।

सुनकर डाकुओ का सरदार बहुत हसा, बोला—महाराज, मैंने तो बताया कि वे कुत्तो की तरह है। वे भला हमे क्यो छोडने लगे! यह नही हो सकता।

अमिताभ का चेहरा थोडी देर के लिए बुझ गया, फिर वे शुक्राचार्य को

सम्बोधित करते हुए बोले—यही वह चट्टान है, जिसपर बार-बार हमारी वार्ता टकराकर टूट गई है। मै तो कुछ समझ नही पा रहा हू, तुम्ही कुछ बताओ।

अब की बार शुक्राचार्य हसे। बोले—महाराज, जब आप इसका समाधान नही कर पाए, तो मैं क्या करू! हा, एक लालबुझक्कडी तरीका सूझ रहा है, वह यह कि मैं इनके उन उन्नीस साथियो को लेकर एक डाकुओ का गिरोह बनाऊ, और इनका उनसे पिण्ड छुडवाऊ।

इसपर बादल खूब जी खोलकर हसा, बोला—महाराज, आप ऐसा करे तो बहुत ही अच्छा हो!

पर अमिताभ ने इस तरफ ध्यान ही नही दिया। वे कुछ गम्भीर बात सोच रहे थे। सरदार के हाथ मे निरन्तर स्थान बदलती हुई पिस्तौल की ओर देखकर उन्होने कहा—सरदार, यह केवल हसी की बात नही है। जब तुम नया जीवन ग्रहण करने जा रहे हो, तो सभी बातो को नये ढग से करना पडेगा। स्वतन्त्र भारत की दृष्टि से सोचना पडेगा। स्वतन्त्र भारत मे डाकुओ के गिरोह के लिए कोई स्थान नही होगा।

सरदार ने पिस्तौल को थोडी देर के लिए नचाना बन्द करते हुए कहा—क्या स्वतन्त्र भारत मे धनी अपने धन की बदौलत गरीबो की मा-बहनो पर दृष्टि डाल सकेगा? क्या अत्याचारी जमीदारो और चमडी से दमडी को प्रधानता देने-वाले महाजनो के लिए स्वतन्त्र भारत मे कोई गुजाइश होगी? यदि होगी, तो डाकू भी रहेगे, और हमारे उन कुत्तेनुमा साथियो की भी जरूरत रहेगी।

अमिताभ ने सरदार को समझाया कि उनके सपने के भारत मे क्या होगा और क्या नही होगा। उन्होने अन्त मे कहा—यदि तुम्हारे साथ जमीदार ने जो कुछ किया, वह स्वतन्त्र भारत मे सम्भव होगा, तो बेशक तुम डाकू बने रहना, और मैं तो कहता हू कि यदि मैं जिन्दा रहा तो मैं डाकू बन जाऊगा। पर पहले स्वतन्त्रता ले तो लो। पता नही इस युद्ध मे कितने वर्ष लगें।

आदर्शो पर बहुत देर तक बातचीत होती रही। अमिताभ ने सरदार को समझाया कि क्रान्तिकारी दल ने जिस समाजवाद को अपना आदर्श मान रखा है, उसका अर्थ क्या है। सब तरह के शोषणो का अन्त होगा—जमीदार द्वारा किसान का, पूजीपति द्वारा मजदूर का, ब्राह्मण द्वारा अछूत का, सैयद द्वारा शेख का, पुरुष द्वारा स्त्री का, इत्यादि-इत्यादि। सबको बराबर सुविधा प्राप्त होगी।

जो उस सुविधा का उपयोग करेगा, वह इजीनियर बनेगा, जो नही करेगा, वह गारा ढोएगा। उसके बाद भी उसे आगे बढने और उन्नति करने की सुविधा बनी रहेगी।

बात करते-करते और स्वप्न देखते-देखते बहुत देर हो गई। देखा गया कि इन दो पुराने क्रान्तिकारियो और डाकुओ के सरदार मे स्वतन्त्र भारत के सम्बन्ध मे कोई मतभेद नही था। सरदार बोला—मैं फिर वही से जीवन शुरू कर सकता हू, जहा से मैंने उसे जबर्दस्ती बदला था, यानी मैं फिर से उस स्कूल का शिक्षक बनने को तैयार हू, पर अफसोस है कि मेरी पत्नी मुझे नही मिलेगी।

इसपर तीनो कुछ देर तक सन्नाटे मे आ गए, जैसे जो सपने देखे गए, वे वास्तविकता से नितान्त अप्रासगिक हो, और उन्हे थिराने का मौका-भर दे रहे हो। पर असली कार्य तो हुआ ही नही था। अमिताभ एकाएक बोल पडे—सरदार, हम लोग तो शेखचिल्ली से बढकर हो गए। अभी तो प्रश्न है, किस तरह मातृभूमि का उद्धार हो। सपना फिर देखा जाएगा।

तीनो के चेहरो पर फिर विषाद की रेखाए उभर आई, क्योकि कोई व्यावहारिक नतीजा तो निकला नही था। भेट व्यर्थ गई थी। शायद अब कभी भेंट ही न हो। वे चौहत्तर बन्दूके और उनके साथ-साथ पता नही कितने बहादुर साथी अब नही मिलेगे। केवल इसलिए कि सरदार भावुक कारणो से अपने कुछ बिलकुल हूस पशुवत् साथियो को मझधार मे छोडना नही चाहता। इस समय साधनो की बहुत कमी है। सधे हुए बहादुर तथा विपत्तियो से खेलनेवाले साथियो की भी कम जरूरत नही है। करेगी तो क्रान्ति जनता, पर जनता को हर समय सही नेतृत्व देने के लिए, यही नही, जो लोग सग्राम शुरू करेगे, उनके हाथो से नेतृत्व छीनकर अपने हाथो मे लेने के लिए ऐसे लोगो की बहुत ही जरूरत है। एक बार डाकू बना कि वह हमेशा के लिए डाकू ही हो गया, न तो यह पौराणिक दृष्टिकोण है और न यह सामाजिक दृष्टिकोण है। पर कुछ पशुवत् लोगो को बिना बदले हुए अपने सग्राम मे कैसे ले लिया जाए, जबकि उनको उससे कोई मतलब नही, जबकि वे पशु के पशु ही बने रहेगे।

अमिताभ ने जमुहाई लेते हुए कहा—सरदार, तो फिर क्या यह समझा जाए कि तुम हम लोगो के साथ सहयोग नही करोगे ?

—कर नही सकते, क्योकि उन्हे हम छोड नही सकते।

अमिताभ उठ खडे हुए, बोले—चलो, हम लोग खाना तो एकसाथ खा ले।—कहकर वे आगे-आगे चले, और पीछे-पीछे सरदार और शुक्राचार्य चले। सरदार बीच मे था। एक अन्य कमरे मे ज़मीन पर तीन आसन बिछे हुए थे। बहुत मामूली खाना परोसा गया। सूखी रोटिया, दाल और एक हरी सब्ज़ी। तीनो ने उसे बडे प्रेम से खाया। खाते समय आपस मे करीब-करीब कोई बात नही हुई, क्योकि अब बात ही क्या रह गई थी। अमिताभ निराश नही थे। थोडी देर पहले उनके चेहरे पर विषाद की जो रेखाए आ गई थी, वे मिट गई थी। उनका सिद्धान्त यह था कि सही कार्य के लिए प्रयत्न करना चाहिए। फिर-फिर करना चाहिए। यदि फिर भी कार्य सिद्ध न हो, तो गम नही करना चाहिए, अपने प्रयासो को अथक रूप से जारी रखना चाहिए, जैसे समुद्र लहरें मारता है।

सब लोग समझ रहे थे कि विदाई का समय आ चुका है। शायद अब कभी भेट न होगी। आज की वार्ता तीसरी थी। पर कोई नतीजा नही निकला था। थोडी देर मे डाकुओ का सरदार दोनो से मिलकर जाने लगा। जाते समय उसने अमिताभ के पैर छुए, बोला—महाराज, एक बात तो मैने बताई नही, अब वह बता देने का समय आ गया है। वह यह कि जब उस रात को ज़मीदार के कारिन्दे आकर गरम बिस्तरे से मेरी पत्नी को छीन ले गए, और मुझे लहूलुहान अवस्था मे दरवाज़े पर शायद मरा समझकर छोड गए, तो मैंने तारो से भरे महाशून्य की ओर देखा और मैं घबडा गया। मुझे लगा कि मै उस महाशून्य मे सरपट गिरता जा रहा हू। कुछ भी सुझाई नही पड रहा था। आकाश जैसे हज़ारो आखो से मुझे व्यग्य कर रहा था। रात ठण्डी थी। मैं धीरे-धीरे उठा और मैंने सोचा कि अब यह मुह क्या दिखाऊगा। इतने मे मुझे चन्द्रशेखर आज़ाद की याद आई, भगतसिह की याद आई, और फिर तो एक के बाद एक कितने ही क्रान्तिकारी और शहीद याद आए। आप याद आए। उसी दिन के अखबार मे पढा था कि आप-पर जाने कितने हज़ार का इनाम है। बस, मेरे जीवन का फैसला हो गया। घर मे एक खुखरी थी, उसीको लेकर मैं निकल पडा। जानता था, बहादुरी से काम नही होने का। बहादुरी से मैं किसी कारिन्दे को मार सकता था, पर जमीदार तक पहुच ही नही सकता था। इसलिए मैंने चालाकी से काम लिया, और घात लगाकर जमीदार की प्रतीक्षा करता रहा। आप सच मानिए, उसे जब मैं पा गया तो मैंने उसके एक कन्धे पर वार किया। दाहिने हाथ के साथ उसका सिर और

सीने का कुछ हिस्सा कटकर अलग हो गया। फिर मैंने दो कारिन्दो को मार डाला। उसके बाद चुनार के जगल मे गायब हो गया।

उसके बाद की कहानी सुपरिचित थी। अमिताभ ने अन्तिम चेष्टा करते हुए कहा—तब तो तुम्हे गुरुदक्षिणा देनी ही चाहिए। चन्द्रशेखर आजाद, भगतसिह, गणेशशकर विद्यार्थी के आदर्शों को कार्यान्वित करने के लिए सहयोग दो।

—मैं दूगा।—चलते-चलते उसने कहा—अवश्य दूगा। आप निश्चिन्त रहे। मैं पहले उन उन्नीस साथियो को एक-एक करके बलिदान करा दूगा, और फिर आकर आपसे मिलूगा। आप लोग तो अभी काग्रेस की राह देखेगे। मैं आज से ही दोनो पुलिस अफसरो, गोरो पर आक्रमण शुरू करता हू। उन साथियो को सामने रखूगा।

जब सरदार यह कहकर अन्धकार मे विलीन हो गया, तो अमिताभ ने कमरे मे लौटते हुए कहा—मै बादल की बहुत सराहना करता हू, कि वह कम से कम जो कुछ करेगा, वह निकट या दूर के स्वार्थ से अथवा वर्ग-स्वार्थ से नही करेगा। पूजीपति चोरी से गाधीजी को चन्दा दे रहे है, ताकि स्वराज्य हो तो उनके कारखानो का और फैलाव हो। मजदूर इसलिए स्वतन्त्रता-आन्दोलन के पक्ष मे हैं, कि वे चाहते है कि उन्हे ज्यादा मजदूरी मिले। पर यह बेचारा बादल तो इसलिए कुछ नही कर रहा है, कि वह और अच्छा डाकू बने, बल्कि वह एक छोटे-से स्कूल का छोटा-सा शिक्षक बन सके। पता नही, इनमे से किनका उद्देश्य पूर्ण होगा।

शुक्राचार्य महान नेता की रहस्य-भरी बातो को पूर्ण तरीके से समझ नही पाए। दोनो बडी रात तक दल की स्थिति के सम्बन्ध मे, और आगामी आन्दोलन के सम्बन्ध मे बातचीत करते रहे।

बादल की बात फिर उठी ही नही।

२०

राघवेन्द्र उर्फ पुरन्दर को स्वप्न मे भी यह ख्याल नही था कि जब उसका किसी आन्दोलन से सरोकार नही है, तब उसे गिरफ्तार कर लिया जा सकता है। शुरू-शुरू मे उसे बडा दुःख रहा कि उसे शिशु के धोखे मे गिरफ्तार किया गया, पर जब उसे बता दिया गया कि वह शिशु के धोखे मे नही, बल्कि शिशु के एक साथी के रूप

मे गिरफ्तार किया गया है, तो उसे और भी कोफ्त हुई। उसे नज़रबन्द करके डाल दिया गया था, और कोई कुछ पूछने को भी नही आता था। उसने जेलर से बार-बार कहा कि मुझे किसी जिम्मेदार पुलिस अफसर या मजिस्ट्रेट से मिलने दिया जाए, ताकि मै अपनी परिस्थिति साफ करू, पर उसे यही कह दिया जाता था कि आप पेटिशन लिख दीजिए, हम उसे आगे बढा देगे।

उसने कई पेटिशन लिखे जिनमे यह साबित करने की चेष्टा की कि मेरा सम्बन्ध किसीभी राजनैतिक दल से नही है, मुझे गलत सन्देह मे पकडा गया है। पर उधर से इन अर्ज़ियो का कोई उत्तर नही आया। यहा तक कि उसे बराबर यह सन्देह रहा कि उसकी अर्ज़िया फाडकर फेक दी जाती हैं। कैदियो से उसे यही खबर मिली थी। उनका कहना था कि जेलवाले यह कतई पसन्द नही करते कि कोई भी अर्ज़ी जाए, इसलिए कैदियो की भारी अर्ज़िया फाडकर फेंक देते हैं।

तीन महीने तक प्रतीक्षा करने के बाद उसके लिए अब और रुकना असम्भव ज्ञात हुआ। उसे भूख बिलकुल नही लगती थी। कई बार यह भी सन्देह हुआ कि शाम को रोज़ बुखार भी आता है, पर जेल के डाक्टर से कहा तो उसने नाडी देखकर आखो की परीक्षा करके और थर्मामीटर लगाकर कहा—आपको कोई रोग नही है। आप फिक्र किया करते हैं, इसीलिए आपकी तबियत ठीक नही रहती। कुछ व्यायाम किया कीजिए, तो सब ठीक हो जाएगा।

पुरन्दर ने झुझलाकर कहा—व्यायाम क्या करू ! इतने छोटे-से हाते मे बन्द रहता हू, व्यायाम क्या हो !

इसपर डाक्टर ने इधर-उधर देखते हुए आखो को लगभग भीचकर कहा—डड-बैठक किया करिए। उसके लिए हाते से बाहर जाने की ज़रूरत नही है।—कहकर वह एक लम्बा-सा मिक्स्चर लिखकर चला गया। कहता गया—इसे पीजिए, देखिए क्या होता है। अवश्य लाभ होगा। डड-बैठक किया कीजिए।

पुरन्दर को यह सारा वार्तालाप और उपदेश बहुत बुरा लगा। वह चाहता था कि डाक्टर कुछ ऐसा लिखे कि इस नज़रबन्द की तन्दुरुस्ती बराबर बुरी तरह गिरती जा रही है, इसलिए इसे छोड दिया जाए।

पर डाक्टर ने ऐसा कुछ नही किया, उल्टे उपदेशो की एक पिटारी उपहार के रूप मे दे गया। जिस परिस्थिति मे वह पकडा गया, उसमे किसीको व्यायाम करने की इच्छा हो सकती है ? अब ये कह रहे हैं कि आप खतरनाक क्रान्तिकारी के रूप

मे गिरफ्तार हुए है, पर जिस दिन गिरफ्तार किया था, उस दिन तो शिशु समझकर ही गिरफ्तार किया था। उचित तो इसलिए यही था कि उसे छोड दिया जाता। भला मै खतरनाक क्रान्तिकारी कैसे हो गया ? मेरा क्रान्तिकारी जीवन सिर्फ इतना ही है कि मैं कभी शिशु के यहा आया-जाया करता था, पर किसलिए आता था, यह तो बाद को साबित हो गया। मज़े की बात तो यह थी कि अपने को भी मालूम नही था कि असली आकर्षण शिशु नही था, था शिशु की पत्नी वसुधा।

फिर किसलिए गिरफ्तार किया गया था ? यह सरासर धाधली नही तो क्या था ? हा, उसके बाद एक बार सत्याग्रहियो की भीड के साथ गिरफ्तार जरूर हो गया था, पर वह जैसी हास्यास्पद अवस्था मे गिरफ्तार हुआ, वह और किसीको पता हो या न हो, पुलिस को तो पता है ही, क्योकि वह स्वय बता चुका है। वसुधा चाहती थी कि मैं क्रान्तिकारी ढग पर कोई साहसिक कार्य करू और प्रेमचन्द से मेरा नाम ज्यादा चमके। इसी जाल से बचने के लिए मैं सत्याग्रहियो की भीड मे होकर जेल पहुच गया, पर वहा से माफी मागकर निकला। यह भी तो पुलिस वालो को मालूम है। जनता भले ही न जाने कि राघवेन्द्र और पुरन्दर एक ही व्यक्ति हैं, जनता तो कुछ भी नही जानती, पर पुलिस को तो मालूम है कि मैं माफी मागकर छूट गया।

इन्ही बातो को सोचते हुए कई और महीने निकल गए।

अखबार पढने मे कुछ समय कट जाता था। हिटलर ने पोलैण्ड तो पहले ही ले लिया था, फिर नार्वे और डेनमार्क ले लिया, और अब फ्रास का पतन हो गया, पर यहा अभी छूटने का कोई ढग नही मालूम होता, ब्रिटेन का पतन हो जाता, तब तो कुछ काम बनता। तब छूट तो जाते, पर पता नही हिटलर के मन मे क्या है। पता नही, वह किधर को दौड पडे। जब ब्रिटेन मित्रपक्ष का नेता है, तो पहले उसीको फतह करना चाहिए था। फ्रास के पतन से आशा तो बधती है, पर बडी लम्बी प्रक्रिया है। जो हो तो मुक्ति मिले, उसके होने मे जाने कितने दिन लगे। अब जेल मे रहना बिल्कुल असम्भव हो रहा था।

एक दिन उसके लिए जेल मे रहना असम्भव हो गया। उसने नम्बरदार भेजकर पता लगाया कि जेल का बडा साहब कब आएगा। पर पता नही लगा। तब उसने एक पर्चा भेजकर जेलर को बुलाया, बोला—मुझे बहुत ही जरूरी बातें करनी है, आप जेल सुपरिंटेण्डेण्ट को मुझसे मिलाइए।

जेलर यो उसे कोई महत्त्व नही देता था, क्योकि अर्जियो से तथा उसके पास काम करने के लिए आनेवाले कैदियो द्वारा दी हुई रिपोर्टो से उसने यह धारणा बनाई थी कि यह बहुत ही घटिया आदमी है। उसका वश चलता तो वह उसे नज़रबन्द न रख करके जाघिया-कुरते मे रहता, पर उसने आज पुरन्दर की आखो मे कोई ऐसी बात देखी, जिससे वह शकित हो गया। उसे लगा कि शायद यह आदमी आत्महत्या की बात सोच रहा हो। बोला—आज नही तो कल आपसे उन्हे अवश्य मिलाऊगा। आप तब तक धैर्य रखें। मेरे लायक कोई सेवा हो तो बताइए।

जेलर भापने की चेष्टा कर रहा था कि इसे सुपरिंटेण्डेण्ट से क्या काम है। पर पता नही लगा। बोला—मेरे लायक कोई सेवा हो तो बताइए।

पर पुरन्दर इससे सन्तुष्ट नही हुआ। नाराज़ होकर बोला—मैं आज ही उनसे मिलना चाहता हू। फ्रास का पतन हुआ है, यह तो आपने पढा ही होगा। ब्रिटेन का किसी भी समय पतन हो सकता है, तब आप कहा जाएगे ?

यद्यपि यह प्रश्न बिलकुल ही ऊलजलूल था, पर उस समय एक के बाद एक हिटलर की विजय होती जा रही थी। इसे देखते हुए ब्रिटेन का पतन कोई असम्भव बात नही थी। ब्रिटेन का पतन माने भारत सरकार का पतन, और भारत सरकार का पतन माने नौकरी चली जाना , केवल यही नही, सम्भव है कि और भी कष्ट पडे।

ठीक तो कह रहा है कि अग्रेज़ तो भाग जाएगे या बन्दी हो जाएगे। अग्रेज़ो का कुछ भी हो, पर भारतीय सरकारी कर्मचारियो का क्या होगा ? काग्रेस राज से तो बचे, पर अब हिटलरी राज मे जाने क्या हो जाए! यह तो स्पष्ट है कि पुरन्दर उर्फ राघवेन्द्र उर्फ शिशु (टिकट पर यही लिखा था) ऐसे आदमी फौरन वीर के रूप मे ऊपर आ जाएगे। इसने जेल के अन्दर कितनी कायरता दिखलाई, यह कौन देखने जाएगा! वह बोला—मैं अभी जाकर उनसे टेलीफोन करता हू। आशा है कि वे आज ही आपसे मिलेंगे।—कहकर उसने दो कदम जाकर फिर पूछा—यदि वे पूछे कि आप किस सम्बन्ध मे मिलना चाहते हैं तो मैं क्या कहू ?

पुरन्दर समझ गया कि जेलर रौब मे आ चुका है। उसने अपना आक्रमण जारी रखते हुए कहा—कह दीजिएगा, फ्रास का पतन हो गया है, इसीपर कुछ बात करनी है।

जेलर की समझ मे नही आया कि बात क्या है। भला जो खबर अखबार मे

छपी है, उसपर बात करने का क्या मतलब होता है! पर उसने पुरन्दर के चेहरे की तरफ देखा, उसपर अभी तक परम गम्भीरता की छाप थी। आत्महत्या नही, शायद और कोई बात भी हो। वह वहा से चला गया। थोडी देर मे अग्रेज सुपरिटेण्डेण्ट मि० कैक्स्टन, जो असल मे डा० कैक्स्टन था, और जिले का सिविल सर्जन था, आ गया और पुरन्दर ने अपनी अर्जियो की नकलो का गुच्छा दिखाते हुए कहा—मैने चार अर्जिया भेजी, बहुत ही महत्त्वपूर्ण विषयो पर, पर उधर से कोई जवाब नही आया। अब फ्रास का पतन हो गया, फिर भी आप लोग इस तरह कान मे तेल डालकर सो रहे है, यह बहुत ही आश्चर्य की बात है।

मि० कैक्स्टन की भौहे तन गईं। फ्रास का पतन किसी भी अग्रेज के लिए सचमुच एक सिर घुमा देनेवाला तमाचा था। रुखाई-भरी मर्यादा से बोला—मतलब क्या है? स्पष्ट बताइए।

तब पुरन्दर अपना पूरा इतिहास बताकर बोला—मै साम्राज्य का मित्र हूँ, और मुझे इस तरह बन्द रखा गया है। इसमे भला कोई तुक है!

कैक्स्टन ने जिम्मेदारी ओढने से इनकार करते हुए कहा—देखिए, हमारे यहा सारे काम विभागो मे बटे हुए हैं। जेल विभाग के ज़िम्मे इतना ही काम है कि जिन लोगो को कैद या नजरबन्द करके यहा भेजा जाता है, हम उनको ठीक से कानून के अनुसार रखे, बाकी कौन दोषी और कौन निर्दोष है, यह देखना पुलिस और कचहरी विभाग का काम है।

पुरन्दर उत्तेजित होकर बोला—भारत मे तो कुछ भी नही है, पर आपके देश मे, और यूरोप के अन्य सभ्य देशो मे, जहा न्याय की पद्धति बहुत ही सतर्क और स्वस्थ है, वहा भी कई बार गलत आदमी को धोखे से सजा हो जाती है।

—जी हा, होता है।—कैक्स्टन का स्वर सम्मान से भरा था।

—जैसे ड्रेइफूस वाला मुकदमा, जिससे सारे ससार मे तहलका मच गया था। मेरा मामला उससे कुछ कम नही है। मैं शिशु नामक एक खतरनाक क्रान्तिकारी की बीवी का प्रेमिक मात्र हू। पर मुझे ख्वाहमख्वाह क्रान्तिकारी समझकर इतने महीनो से बन्द कर रखा है। कोई सुनवाई नही हो रही है। मैं अनशन करके प्राण दे दूगा। आप देख रहे हैं न फ्रास का पतन हो गया है। अब मैं एक मिनट नही रुकने का!

कैक्स्टन कार्य-कारण सम्बन्ध ठीक से समझ नही पाया, पर अधिकतर व्यक्तियो

की तरह वह ऐसे ही मौको पर अधिक प्रभावित होता था जब उसकी समझ मे बात कम आती थी। बोला—पर आप जानते है कि आपके अनशन से जेल-विभाग को परेशानी होगी, जबकि असल मे आपको शिकायत पुलिस और न्याय-विभाग से है। मैं आपकी सूचना सरकार को भेजे दे रहा हू, पर आप कम से कम तीन दिन का समय दीजिए।

पुरन्दर बोला—अच्छी बात है, पर यह याद रखिए कि फ्रास का पतन हो गया। मेरी तो इच्छा थी कि आज ही से, बल्कि इसी वक्त से अनशन कर दू, पर जब आप कह रहे हे तो तीन दिन की मोहलत देता हू।

उसी दिन सध्या समय जब जेल की बैरके बन्द हो चुकी, तो गुप्तचर विभाग का एक प्रसिद्ध अधिकारी टीकाराम पुरन्दर से मिलने आया, साथ मे गारद के दो सिपाही, एक हेड-वार्डर और जेलर थे। टीकाराम पुरन्दर से ऐसे मिला जैसे बहुत दिनो के बिछुडे हुए दो अभिन्नहृदय मित्र मिले हो। पर साथ ही टीकाराम ने चारो तरफ बहुत ध्यान से देखा, क्योकि प्रेमचन्द ने किस प्रकार पुलिस के एक उच्च अधिकारी तसद्दुक को दिनदहाडे मार डाला था, यह टीकाराम को मालूम था। बोला—कहिए, कैसे याद किया ?

पुरन्दर ने गम्भीर होकर कहा—फ्रास का पतन हो गया। फिर भी आप लोग मुझे नही छोड रहे हैं।—कहकर उसने अपनी सारी कथा फिर सुनाई कि किस प्रकार वह महज वसुधा को फसाने के लिए शिशु के यहा आता-जाता था, किस प्रकार वह न चाहते हुए भी सत्याग्रहियो मे मिलकर जेल गया, इत्यादि-इत्यादि।

सुनकर टीकाराम बोला—पर आप शिशु के घर के सौ कदम के अन्दर गिरफ्तार हुए थे, इसका आप क्या कह रहे हैं ? वही बात ?

—कौन-सी बात ?

—यानी आप वसुधा की फिराक मे गए थे ?

पुरन्दर फौरन बोला जैसे डूबते को कोई सहारा मिल गया—जी हा, यही तो कह रहा हू। मुफ्त मे इतने महीने जेल की रोटी खा चुका, अब तो सम्भल जाइए। फ्रास का पतन हो चुका है, ब्रिटेन का पतन भी होने ही वाला है।

टीकाराम भी प्रभावित हुआ, यद्यपि कार्य-कारण सम्बन्ध उसकी भी समझ मे नही आया। उसके मन पर भी डर की कई परते धीरे धीरे बैठ गईं। सचमुच जिन लोगो ने किसी बात की, यहा तक कि भाई-बिरादरी का खयाल न रखते हुए

भी सब तरह से, हर सही और गलत उपाय से साम्राज्य का समर्थन और रक्षा की थी, उन भारतीयो का क्या होगा ? क्या वे क्रान्तिकारियो, कम्युनिस्टो और काग्रेसवालो के रहम पर छोड दिए जाएगे ? हिटलर की निरन्तर होनेवाली जीत के कारण प्रत्येक सरकारी नौकर की राजभक्ति की लौ काफी मद्धिम पड गई थी। वह बिना किसी जोश के बोला—क्या यह खतरनाक बात नही है कि शिशु का अभी तक कुछ पता नही लगा ?

पुरन्दर चुनौती के साथ बोला—शिशु का पता नही लगा, तो उसके लिए मैं कैसे जिम्मेदार ठहराया जा सकता हू ? आप लोग तो बिल्कुल अधेर नगरी चौपट राजा की कहावत को चरितार्थ कर रहे है।

—शिशु का साथी होना भी तो उतना ही खतरनाक है।

—मैने बताया कि मै कभी उसका साथी नही था। मैने तो आपने पूरी बात बता दी। फिर भी आप उसी बात को धुनते जा रहे है।

टीकाराम चिन्तित लगा। वह कुछ सोच रहा था। बोला—आप जो बात बता रहे है, यदि वह सच है तो शिशु के गिरफ्तार हो जाने मे ही आपका लाभ है।

—कौन कहता है कि लाभ नही है ! सौ बार लाभ है। मै यही समझकर तो तमोली की दुकान की परिस्थिति देख रहा था कि शिशु फरार हो गया है।

टीकाराम ने ध्यान से पुरन्दर को देखा, फिर कहा—आप यदि शिशु को गिरफ्तार कराने का वादा करे, तो हम अपनी जिम्मेदारी पर आपको छोडने की सिफारिश कर सकते है।

पुरन्दर जेल-जीवन से बहुत परेशान हो चुका था। वह समझ चुका था कि जेल मे रहना उसके वश का नही है। अब तो यह जीवन इतना खल रहा था कि मालूम होता था कि उसे एक अन्धकार गह्वर मे डाल दिया गया है। अन्धकार निरन्तर बढ रहा है, यहा तक कि धीरे-धीरे कोई अदृश्य शक्ति उस गह्वर की आक्सीजन भी खीचे ले रही है। किसी भी दाम पर इस नरक से मुक्ति आवश्यक थी। वह बोला—मुझे उसका कुछ भी पता नही है, फिर भी जब आप कह रहे है तो मैं उसका पता लगाने का प्रयास करूगा। उसके पकडे जाने से मुझे ही फायदा है। अब मैं आपको क्या समझाऊ बार-बार·· वही बात·

टीकाराम सन्तुष्ट नही हुआ। शायद वह अपनी शक्ति से अधिक वादा कर

गया था, जितना कि उसे करने का अधिकार नही था। उसने घडी देखी, तो समय खत्म हो रहा था, क्योकि बडी कठिनाई से उसे समय मिला था। जेलर ने कहा था—बैरक-बन्दी के बाद भेंट करने का दस्तूर नही है, बिलकुल नियम-विरुद्ध है। फिर भी जब तक मैं दस्तखत आदि कर रहा हू, तब तक पन्द्रह मिनट के अन्दर आप लौट आइए।

पन्द्रह मे तेरह मिनट हो चुके थे, वह उठ खडा हुआ, बोला—देखिए, मै कुछ वादा नही करता, पर आप यह वादा कर रहे है न कि छूटने पर शिशु को गिरफ्तार कराने की चेष्टा करेंगे ?

पुरन्दर को लगा कि उसकी कोई नस तडाक से टूट गई। उस तरफ से कोई वादा नही है, और इस तरफ से वादा है। उसने मन को जल्दी-जल्दी समझाया कि मैं शिशु को अग्रेज़ो के लाभ के लिए नही, बल्कि वसुधा की प्राप्ति का मार्ग निष्कटक बनाने के लिए गिफ्तार कराऊगा। बोला—जी हा, पक्का वादा करता हू, और आशा करता हू कि वह जहा भी होगा, मैं उसे दो महीनो के अन्दर ढूढ़ लूगा।

कहने को तो वह कह गया, पर वह जानता था कि अपना वादा पूरा नही कर सकता, क्योकि जब शिशु इतने महीनो तक गिरफ्तार नही हुआ, तो उसे गिरफ्तार कराना टेढी खीर है। वह न गिरफ्तार हो, पर छूट तो जाए इसी बहाने से। उसे विश्वास नही था कि टीकाराम उसकी सिफारिश करेगा। फिर भी उसने वादा किया। छूटने की एक प्रतिशत सम्भावना तो थी। नही, नही, इस अन्धकार-मय आक्सीजनशून्य गह्वर मे वह एक क्षण भी नही रह सकता।

अगले दिन पुरन्दर छोड दिया गया। जेल के फाटक पर उसे टीकाराम मिला, बोला—देखिए, मैंने अपना पूरा प्रभाव इस्तेमाल करके आपको छुडाया है, वादा पूरा करना न भूलिएगा।

पुरन्दर बहुत कृतज्ञ था। उसके मन मे तलछट के रूप मे जो थोडी सी उधेड-बुन पडी हुई थी, वह भी घुल गई। बोला—अवश्य-अवश्य, पर आप मुझसे मिला न करिए। नही तो काम नही बन पाएगा।

—फिर भी कभी-कभी रिपोर्ट तो दे जाया करिए।

पुरन्दर ने बुदबुदाकर हामी भर दी, और वह चलने को हुआ। इतने मे उसने देखा कि मि० कैक्स्टन जेल से निकलकर आए। वह एक किनारे को हो गया।

पर कैक्स्टन स्वय उसके पास आ गए और बोले—चलिए, मेरे साथ चाय पीकर तब जाइए। चाय का समय भी है।

पुरन्दर ने टीकाराम की तरफ जाने कैसी दृष्टि से देखा, पर टीकाराम जल्दी से अपनी मोटरसाइकिल पर सवार होकर चला गया। पुरन्दर कैक्स्टन के पीछे-पीछे चला।

वह समझ नही पा रहा था कि मि० कैक्स्टन किस उद्देश्य से उसको अपने बगले पर लिए जा रहे है। यह तो स्पष्ट था कि टीकाराम से उनका कोई सम्बन्ध नही था। टीकाराम ने मोटरसाइकिल पर चढते समय डाक्टर कैक्स्टन को जो झुककर सलाम किया था, उसका उन्होने जवाब भी नही दिया था, शायद ज़रा-सी आख झुकाई थी, या शायद नही झुकाई थी।

यह मिलीभगत तो नही थी? कैक्स्टन के सम्बन्ध मे उसने बहुत तरह की बातें सुन रखी थी कि वह बडा झक्की है, कट्टर अनुशासनवादी है, पर बहुत अच्छा डाक्टर है। उसकी जेल मे जो भी कैदी आता था, उसका वह पूरी तरह इलाज करके तभी छोडता था। कई कैदियो का उसने ज़बर्दस्ती आपरेशन करके आख तथा अण्डकोश ठीक कर दिए थे। यद्यपि पहले वे कैदी उससे नाराज़ होते थे, पर नवजीवन पाने के कारण बाद को उसके भक्त हो जाते थे। ऐसा ही एक भक्त उसका सफैया था, जो पुरन्दर के अहाते मे झाडू लगाता था।

पर कैक्स्टन ने उसे इस समय क्यो बुलाया? क्या वह भी कुछ वादा कराएगा?

उसकी कुछ समझ मे नही आ रहा था। शायद वह यह कहे कि शिशु को पकडा देना आपका धर्म है। व्यर्थ मे समय नष्ट करेगा। इसे तो कहना ही था कि हा मैं सब कुछ करूगा। क्या यह टीकाराम से मिला हुआ है? लोग तो कहते हैं कि वह किसी भी प्रकार पुलिस को मदद नही देता। इस जेल से पुलिस को जो कुछ मदद मिलती है, वह जेलर के ज़रिये से मिलती है।

चाय पर बैठते ही थोडी देर मे पुरन्दर को मालूम हो गया कि वह समझ रहा है कि पुरन्दर निर्दोष होने के कारण छूट रहा है, क्योकि उन्होने पहला वाक्य यही कहा—मुझे बडा दु ख है कि निर्दोष होते हुए भी आपको इतने महीने जेल मे रहना पडा, पर आशा करता हू कि आपको मेरी जेल मे कोई कष्ट नही हुआ।

पुरन्दर ने टालने के उद्देश्य से कहा—नही, मुझे कोई कष्ट नही हुआ, मैं आपकी कृपा से बिलकुल आराम से था पर बडा समय नष्ट हुआ और मानसिक

क्लेष तो हुआ ही। आप समझते ही हैं।

मि० कैक्स्टन बोले—मुझ मालूम है कि जेल मे कई निर्दोष व्यक्ति आते है, पर हम कुछ नही कर सकते। सरकार वाली पद्धति एक, और अविभाज्य है। उसमे कही मे भी नुक्स पैदा हो गया कि बाकी सब जगह वह गलती चालू रहेगी। मैंने आपके विषय मे पक्का मत व्यक्त किया था कि आप निर्दोष है, पर पद्धति धीरे-धीरे काम करती है। मुझे बडा दु ख है कि पहले आपकी तरफ मेरा ध्यान नही गया।

इसी सरगम के अन्दर सारी बातचीत चली। तो कैक्स्टन ने उसे केवल इस कारण बुलाया था कि उसके घाव पर मरहम रखे ? यद्यपि ऐसा करने के लिए वह बाध्य नही था। कहा तो इस परम गुणी डाक्टर का रुख, और कहा उस दारोगा का रुख, जिसने उसे गिरफ्तार किया था कि यदि तुम शिशु नही हो, और फिर भी तुम्हे गिरफ्तार किया गया है, तो कुछ आता-जाता नही, क्योकि लडाई छिड गई है। टीकाराम का रुख भी किसी प्रकार भिन्न नही था, बल्कि अधिक नीचतापूर्ण था। जब निर्दोष है तो उसे छोड दो , सो नही, उससे वादा कराते है। जो काम उन्हे स्वय करना चाहिए, और जिसके लिए वे वेतन पाते हैं, जनता की गाढी कमाई के पैसे का, उसे वे दूसरो से कराना चाहते हैं।

जब पुरन्दर कैक्स्टन के बगले से निकला, तो वह वह आदमी नही था, जिसने उसके साथ चाय पीने की दावत स्वीकार की थी। अब वह अपने को बिलकुल ही मजबूर नही समझ रहा था। वादा उसने अवश्य किया, छूटकर वह बहुत गद्गद भी हो गया था, पर वह किसी को गिरफ्तार कराने के लिए बाध्य नही है। सबसे हास्यास्पद बात उसे यह लग रही थी कि वह शिशु को गिरफ्तार कैसे करा सकता है, जबकि सरकार का इतना बडा पुलिस विभाग उसे अन्जाम देने मे असमर्थ रहा।

वह अपने विचारो को समेटने के लिए पैदल चलने लगा और तब तक पैदल चला जब तक कि स्वय सवारी नही मिल गई।

अब प्रश्न था—कहा जाए ? वह जेल से श्रीमती सूर्यकुमार को पत्र लिख चुका था, इस नाते वह जानता था कि सब लोग उसकी गिरफ्तारी से परिचित होगे और उसके सम्बन्ध मे राजनैतिक वृत्तो मे बहुत अच्छी राय बनी होगी। पर अच्छी राय लेकर क्या करे ? उसे ऐसी राजनीति से कुछ लेना-देना नही था, जिसका

अतिम लक्ष्य जेल मे पहुचना था। वह तो सब तरह की राजनीति से भागने के लिए निकला था , बस साथिन ढूढने के फेर मे था, इतने मे उसपर यह विपत्ति टूट पडी और अब जून का महीना खत्म होने को आया। पुलिस विभाग ने ही उसे छोडा है, इसलिए फौरन फिर से गिरफ्तार होने की सम्भावना नही है। इसलिए देखा जाए कि सूर्यकुमार के घर मे क्या हो रहा है। वह शहर का एक स्नायुकेन्द्र है, वहा से सारी बातो का पता लग जाएगा, फिर अपने कर्तव्य का निर्णय किया जाएगा। यह सोचते सोचते उसे एकाएक याद आया कि अपने उस मित्र के पास से बिस्तरा और सूटकेस लेना है। वह वही पहुचा और उसने धीरे-से दरवाजा खटखटाया।

सूर्यास्त होने को था। अतिम किरणे आकाश मे रगो की आतिशबाजिया छोड रही थी, जिसे देखकर इधर-उधर प्रतीक्षा मे खडे बादलो का चेहरा प्रतिक्षण बदल रहा था। उसके दस्तक के उत्तर मे गृहस्वामी निकल आया। वह तपाक से मिलने के लिए आगे बढा, पर उसे लगा कि गृहस्वामी, उसका मित्र कुछ पीछे हट रहा है, इससे उसे निराशा नही हुई। वह समझ गया कि लोग डरे हुए है। जिस तरह गिरफ्तारिया जारी थी, उससे इस प्रकार का वातावरण बनना कोई आश्चर्य की बात नही थी। उसने इत्मीनान दिलाते हुए कहा—मैं जेल से बाकायदा रिहा होकर आया हू। एक क्रातिकारी के धोखे मे गिरफ्तार हुआ था, इतने दिनो मे पुलिस विभाग को पता लगा कि मै राघवेन्द्र हू, और कोई नही।

फिर भी मित्र ने विशेष उत्साह नही दिखलाया। पीछे हटकर दरवाजा खोलते हुए बोला—बडा अनर्थ हो गया। जब मुझे मालूम हुआ कि तुम गिरफ्तार हो गए, तो हम लोगो ने यह समझकर कि पता नही तुम्हारे बिस्तरे और बक्स मे क्या है, उन्हे ले जाकर फौरन गगाजी मे डाल दिया। मैंने बहुतेरा कहा कि देख लिया जाए, पर मेरी पत्नी नही मानी, और सारा सामान गगाजी के हवाले कर दिया गया।—कहकर मित्र ने लम्बी सास खीची।

सुनकर राघवेन्द्र के पाव के नीचे से जमीन खिसक गई। लोग व्यर्थ मे इतना डरते क्यो है। ठीक है, जब मै डरता हू तो इन्हे तो डरना ही चाहिए। निराश होकर बोला—क्या कुछ भी नही बचा ?

उसी समय उसे मित्र के शयनकक्ष का एक हिस्सा दिखाई दे गया, जिसमे से एक बिस्तरे पर उसका वह चिरपरिचित खेस बिछा हुआ था, जो उसे बहुत प्रिय

था, बोला—कुछ भी नही बचा ?

मित्र ने बिना झेपे कहा—जब सब कुछ गगाजी मे डाल दिया, तो फिर बचना क्या था। बडी बेवकूफी हुई। तुम तो कब के क्रातिकारी आदोलन छोड चुके थे, पर पत्नी बोली—तुम जानते नही हो कि वे शिशु के शिष्य है। सब चिह्न नष्ट कर देना चाहिए।

उसी समय शयनकक्ष का दरवाज़ा बन्द हुआ और जब खुला तो दिखाई पडा कि वह खेस नही है, उसकी जगह एक और बिस्तरपोश बिछा हुआ है। गृहस्वामिनी अब पधारी, बोली—हम लोग आपकी तरह निहग नही है, बाल-बच्चेदार है। इसलिए चिन्ता करनी पडती है। खैर, आपको ज़रूरत हो तो एक दरी, एक चादर और एक तकिया दे सकते हैं। समझिए कि देश के लिए यह हमारा क्षुद्र दान होगा।

अन्धेरा हो चुका था। राघवेन्द्र को बहुत बुरा लग रहा था। इन्हीको वह मित्र समझता था। वह गिरफ्तार हुआ जानकर ये उसका बिस्तरा और सूटकेस हडप कर गए। राघवेन्द्र छूट क्या आया, इनपर जैसे विपत्तियो का पहाड टूट पडा। किस प्रकार पलक मारते खेस बदल दी ! कितनी छोटी चीज पर ईमान खो दिया, पर उसी समय उसे गुलदान की याद आई, तो वह सहम गया। वह उठ खडा हुआ और जमुहाई लेता हुआ बोला—जो हुआ सो हुआ, अब मैं सूर्यकुमार के घर जाता हू। देखता हू, वहा क्या परिस्थिति है।—कहकर वह एक बार करुण नेत्रो से उस कमरे की ओर देखकर, जिसमे उसकी खेस आदि चीज़े रखी हुई थी, लगभग बिना कुछ कहे निकल पडा।

मित्र की पत्नी ने शायद चाय पीकर जाने के लिए कहा, पर उसने बुदबुदा-कर रुसवाई से कहा—मुझे जेल के सुपरिण्टेण्डेण्ट डा० कैक्स्टन ने चाय पिला दी हैं। मुझे किसी चीज़ की ज़रूरत नहीं है। धन्यवाद ! ...

इसके बाद वह सीधे सूर्यकुमार के घर पर पहुचा। अब गुलदान की बात उसे बुरी तरह सताने लगी कि कही ऐसा तो नही है कि श्रीमती सूर्यकुमार ने गुलदान गायब होने की बात को उसकी यात्रा के साथ सयुक्त कर दिया हो ? खैरियत यह है कि गिरफ्तारी के समय उसके पास से गुलदान बरामद नही हुआ, नही तो अखबार मे छपता और श्रीमती सूर्यकुमार पढ लेती तो उन्हे रहस्य का पता लग जाता।

श्रीमती सूर्यकुमार से उसे पता लगा कि सूर्यकुमार का कुछ पता नही है। इसका स्पष्ट अर्थ यही था कि वे फरार नही तो अर्धफरार अवश्य हैं। सूर्यकुमार ऐसे लोगो ने फरार होकर पुलिस का कार्य और कठिन कर दिया है। एक तरफ तो पुलिस का कार्य बहुत बढ गया, और दूसरी तरफ उसमे सब तरह के लोगो पर निगरानी करने की जरूरत पैदा हो गई, जिसकी पूर्ति करना करीब-करीब असम्भव था। उसे ऐसा लगा कि वह यह वादा करके छूटा है कि शिशु को गिरफ्तार कराऊगा, पर शिशु और सूर्यकुमार मे उसे अब कोई भेद नही मालूम हो रहा था। यह सब वह मन मे सोचता जाता था, और साथ ही आखो से चारो तरफ देख रहा था कि कोई ऐसी चीज़ है कि नही जिसे लेकर वह बिस्तरे और सूटकेस की क्षति-पूर्ति कर सके। आखिर उसे कुछ करना तो है ही।

श्रीमती सूर्यकुमार ने ही पूछ लिया—तुम्हारा बिस्तर और सूटकेस कहा गया?

इस प्रश्न से राघवेन्द्र चौंक पडा, जैसे वह कह रही हो कि बिस्तर और सूट-केस होता तो मैं उसकी तलाशी लेती। बोला—क्या बताऊ, पुलिस वालो ने सब ले लिया! छूटते समय कुछ भी वापस नही मिला।

श्रीमती सूर्यकुमार आश्चर्य के साथ बोली—पुलिस वाले तो ऐसा कभी नही करते! गिरफ्तारी के समय, सुना है कि सारी चीजो की सूची बनाते है, और छूटते समय कैदी को वे चीजे वापस देते है। हा, ऐसा सुना है कि कभी-कभी कोई कीमती चीज़, जैसे घडी आदि दाब लेते हैं।

राघवेन्द्र की समझ मे नही आया कि श्रीमती सूर्यकुमार कहना क्या चाह रही है। वे पहले से आकर्षक लग रही थी, पर उनके पैर के पास वही अल्सेशियन कुत्ता बिलकुल निश्चिन्त होकर सो रहा था। हा, कभी-कभी एक आख ज़रा-सी खोलकर राघवेन्द्र को घूर लेता था, जिससे यह स्पष्ट हो चुका था कि अब भी पुराना अविश्वास कायम है। राघवेन्द्र बोला—मैंने बहुतेरा कहा कि गिरफ्तारी के समय मेरी जो चीजें थी, उन्हे तो दो, पर जेलवालो ने कहा कि आपके नाम से कोई भी चीज़ जमा नही है। इसके माने यह हुए कि पुलिस वाले ही बिस्तरा और सूटकेस गायब कर गए।

—तो अब क्या होगा?

—होगा क्या? अब भागूगा नही, यही पडा रहूगा। पुलिस वाले गिरफ्तार कर लें तो गिरफ्तार हो जाऊगा।

श्रीमती सूर्यकुमार ने यह प्रस्ताव पसन्द नही किया, बोली—यहा नही, आप लखनऊ जाइए, वही आपका स्थान है, वही से जो कुछ होगा सो होगा। मैं नही चाहती कि किसी तरह से मै गिरफ्तार हो जाऊ, या बच्चो पर आच आए।—कहकर उन्होने टगी हुई दीवारघडी की ओर देखा, और बोली—अब भी लखनऊ की कई गाडिया है, बसे तो अब बन्द हो गई होगी। मै जल्दी चाय बनवा देती हू।

कहकर वे उत्तर का मौका दिए बिना उठकर चली गई, और राघवेन्द्र हतबुद्धि-सा वहा बैठा रह गया। उसे बडा आश्चर्य था कि यह हो क्या रहा है। क्या यह गुलदान की चोरी की बात जान गई है? भला इस तरह से एक शरीफ आदमी पर बिना देखे चोरी लगा देना कहा तक भद्रता है? केवल दोनो घटनाए एकसाथ हुई, इसलिए काकतालीय न्याय से यह समझना कि गुलदान की चोरी उसीने की है, और उसे इतना सत्य मान लेना कि उसीको ध्रुव सत्य समझकर उसकी नीव पर सारे बर्ताव का कोण निश्चित करना, यह बहुत ही गलत है। वह उठा, पर साथ ही अल्सेशियन भी खडा हो गया, और उसे लगा कि यदि उसने बैठक की किसी चीज़ की ओर हाथ बढाया तो वह झपट पडेगा, इसीलिए वह बैठ गया। चाय आई तो उसने केवल एक प्याली चाय पी ली, और कहा—मैं रास्ते मे अपने एक मित्र के यहा गया था, वही खूब चाय पी आया हू। धन्यवाद?

कहकर वह आधी प्याली चाय पीकर उठ खडा हुआ। कुछ समझ मे नही आया। लखनऊ जाने का कोई अर्थ नही होता था। वहा कौन अपना बैठा था! जो कोई जान-पहचान का मिलेगा, वह यही कहेगा—अच्छा हुआ, तुम छूट आए। तुम अमुक टुकडी का नेतृत्व ले लो।—दूसरे शब्दो मे जेल चले जाओ। आज नही तो कल। कल नही तो परसो।

वह वहा से उठा और उसने सोचा कैक्स्टन ने ठीक कहा, पर मैंने किसीका ठेका थोडे ही ले रखा है। जो जैसा करेगा, वह वैसा भरेगा। मेरे वर्षों के मित्र गुप्तजी बिस्तरा और सूटकेस का लोभ नही सम्भाल पाए, मुझपर विपत्ति आई, तो मेरा माल हडपकर बैठ गए। अब भी वह अपने उस प्रिय खेस को कल्पना नेत्रो से देख रहा था, जो गुप्तजी के घर पर बिछा हुआ था और जिसे श्रीमती गुप्त ने बात की बात मे दरवाजा बन्द करके बदल दिया।

वह सीधे टीकाराम के यहा पहुचा।

टीकाराम ने आशा के साथ पूछा—कोई खबर है?

राघवेन्द्र ने रुखाई के साथ कहा—खबर कुछ नही, पर कुछ ऐसा सुराग मिला है कि अनवरगज के रामशरण गुप्त के घर पर क्रान्तिकारी ठहरते है। शायद शिशु वही पर रहता है। बैठक मे सोता है। पत्नी को भी पता नही होता। इतना तो मैं खुद भी जानता हू कि रामशरण बाबू बहुत पुराने क्रान्तिकारी है।

टीकाराम ने सारी सूचना लिख ली और पूछा—क्या आज रात को शिशु वहा होगे ?

—मैं नही जानता, आगे आपका काम है। आप करिए। मैंने आपको रास्ते पर डाल दिया।

टीकाराम ने यह समझ लिया कि पहले दिन के लिए इतनी खबर ठीक है, वह अभी नोट ही ले रहा था कि राघवेन्द्र फिर से बोला—मैं अब शिशु के घर जा रहा हू। कही आपके गण लोग मुझे फिर धोखे मे गिरफ्तार न कर ले।

टीकाराम ने सात्वना देते हुए कहा—आप निश्चित रहे। यदि धोखे से पकडे भी गए, तो आप मेरे ही पास आएगे। अब क्रान्तिकारियो की तफतीश का मामला सम्पूर्ण रूप से मेरे हाथ मे केन्द्रित हो गया है। मैं आपकी सफलता चाहता हू।

थोडी ही देर मे खाना आदि खाकर राघवेन्द्र शिशु के घर के पास उसी तमोली की दुकान पर पहुचा और वहा पान बनवाने लगा। सडक पर के पेड की आड मे वही चेहरा दीख गया, जो गिरफ्तारी के दिन दीखा था। फिर वह चेहरा अन्धकार मे विलुप्त हो गया। दिल धक् से हुआ। उसने कहा—किमाम है क्या ?

फिर वह विधिपूर्वक पान खाने मे जुट गया। तम्बाकू दुगुनी मात्रा मे रखवा लिया और किमाम की कई सीके ली। पान खाकर कुछ दिल ठीक हुआ। वह फिर धीरे-धीरे शिशु के घर की तरफ चला। कभी यह उसीका घर हुआ करता था। एकाध दिन के लिए नही, वर्षों तक, जब तक कि शिशु जेल मे रहा।

रात अधेरी थी।

उसने जाकर धीरे से दरवाजा धकेला, तो वह भेडा हुआ ही था, खुल गया। फौरन उधर से कोई आहट हुई। राघवेन्द्र समझ गया कि वसुधा कही से देख रही है। शायद शिशु यदा-कदा आता होगा, तभी दरवाजा बन्द नही, भेडा हुआ था। वह परिचित रास्ता पकडकर वसुधा के कमरे मे गया। वसुधा ने उसे देख लिया, पर ऐसे बन गई जैसे देखा ही नही। राघवेन्द्र समझ नही पाया कि किस प्रकार का व्यवहार किया जाए। क्या वह अजनबी के रूप मे बातें करे या भूतपूर्व प्रेमिक के

रूप मे या देवर के रूप मे—जैसाकि वह उस युग मे करता था, जब शिशु उसे क्रातिकारी बनाने की चेष्टा कर रहा था और समझ रहा था कि पुरन्दर क्रान्तिकारी बन चुका है।

वसुधा की दृष्टि मे किसी प्रकार का स्वागत नही था। सितार दीवार पर टगा था। उसपर धूल जमी हुई थी। तो क्या इसने सितार बजाना छोड दिया ? कही पर तडाक से एक नस टूट गई, यद्यपि वह कोई सगीतप्रेमी नही था। उसने पुकारा—वसुधा !

उधर से कोई आवाज़ नही आई। केवल चेहरे पर परेशानी का एक पुट दिखाई पडा। राघवेन्द्र ने पुकारा—वसुधा

अब की बार वसुधा ने मुह बिचका लिया, और हवा को ऐसे सूघने लगी, जैसे कोई अजीब गन्ध आ रही हो, पर वह कुछ बोली नही। तब राघवेन्द्र ने कहा —मैं आठेक महीने पहले ही यहा आ जाता, पर गिरफ्तार हो गया, इस धोखे मे कि मैं शिशु हू। पुलिस वालो को यह समझाते आठ महीने लग गए कि मै पुरन्दर हू।

वसुधा हवा को तेजी के साथ सूघ रही थी। सूघना समाप्त करके मुह बिचकाकर बोली—जब सब लोग गिरफ्तार हो रहे हैं, तब तुम कैसे छूट आए ?

राघवेन्द्र निष्प्रभ होकर बोला—यदि मैं अपने नाम से गिरफ्तार होता, तो हर्गिज़ न छूटता। पर मैं तो दूसरे व्यक्ति के धोखे मे गिरफ्तार हुआ। यही कहो कि आठ महीने लग गए इस झगडे मे, नही तो साधारण समय होता तो घटे-भर मे छूट जाना चाहिए था।

वसुधा ने शायद कुछ भी नही सुना। वह अजीब तरह से हवा को सूघ रही थी। एकाएक उठती हुई बोली—मालूम होता है कि कही कोई चूहा या छछूदर मरा है। बडी बदबू आ रही है।—कहकर वह सूघती हुई कमरे की प्रदक्षिणा करने लगी। उसका सूघना केवल नथुनो तक सीमित क्रिया नही था, बल्कि सारा शरीर बुरी तरह आन्दोलित हो रहा था। लग रहा था कि उसे सचमुच बडा कष्ट हो रहा है उस दुर्गन्ध से, जिसका वह ज़िक्र कर रही है। पर पुरन्दर को कोई गन्ध नही लग रही थी। उसने चारो तरफ दो-चार बार सूघा, पर उसे तो कोई गन्ध नही मालूम हुई।

कमरे मे घुसते ही चमेली की पतली बू आई थी, जो शायद वसुधा के बालो का नया तेल है। वसुधा हमेशा बदल-बदलकर तेल लगाया करती थी। इसपर

कितनी ही बार बातचीत पहले हो चुकी है। उसका कहना था—एक तेल लगाने से उसकी बू खो जाती है। अवश्य दूसरो के लिए ट्रेडमार्क हो जाता है, पर अपने को आनन्द नही मिलता, इसलिए मै बदल-बदलकर तेल लगाती हू।

सूघने पर वही भीनी खुशबू मिल रही थी। चूहा या छछूदर का कोई सवाल ही नही था। अपनी भी नाक बहुत तेज है। पर वसुधा अपने अन्वेषण मे लगी हुई थी। वह इस समय एक कोने की सारी चीजो को खखोकर देख रही थी। पर वहा कुछ नही मिला। वह निराश होकर और शायद अपनी भूल समझकर लौट आई, और अपने बिस्तरे पर बैठ गई। पर पुरन्दर उर्फ राघवेन्द्र अभी तक खडा था। बैठने के लिए एक कुर्सी थी, सो उसपर धूल से सना तबले का जोडा रखा हुआ था। राघवेन्द्र बोला—मुझे तो कोई बदबू नही आ रही है। घुसने पर चमेली की बू आई थी। •

वसुधा ने उसकी बातो पर ध्यान नही दिया और उसे बैठने के लिए भी नही कहा, पर पुरन्दर इतने से ही खुश था कि उसे भगाया तो नही गया। शायद महीनो से शिशु फरार है, आ नही पाता, इसलिए देवीजी का पारा कुछ उतरा हुआ है। वसुधा बोली—तुम किस धोखे मे पकडे गए थे ?

पुरन्दर को लगा कि अब बर्फ गल रही है और जल्दी ही पहाड से जीवन-दायिनी शीतल धारा बहने लगेगी। पुलकित होकर बोला—जब लडाई छिडी और मुझे मालूम हुआ कि शिशु फरार हो चुके हैं तब मैंने कहा कि अब मेरी बारी है। मैं आकर नुक्कडवाले तमोली के यहा पान लगवा रहा था कि पुलिस वालो ने मुझे शिशु समझकर गिरफ्तार कर लिया। मैंने बहुतेरा समझाया, पर वे माने नही। आठ महीने की रस्साकशी के बाद मैं छूट पाया।

वसुधा फिर उठ खडी हुई और धौंकनी की तरह सूघती हुई उसी कोने मे गई, और हर चीज़ को फिर से उठा-उठाकर देखने लगी। उसने अपने कार्य को सुविधाजनक रूप से करने के लिए पास ही से तख्ते से कटा हुआ एक डडा-सा उठा लिया और उससे खोद-खोदकर चीजे देखने लगी। पर वह वहा असफल रही।

तब वह दूसरे कोने मे गई। बराबर उसकी सासे धौकनी की तरह चल रही थी। पुरन्दर खडा-खडा सोच रहा था कि इसका दिमाग तो कही खराब नही है कि जहा कोई बदबू नही है, वहा इसे बदबू मालूम हो रही है। वसुधा लकडी के उस टुकडे से खोद-खोदकर चीजो को देख रही थी, पर लगा कि वह असफल रही।

दुःखी होकर वह फिर बिस्तरे पर लौटी और लकडी के उस टुकडे को उसने पलग के पाव से टिका दिया।

पुरन्दर यही सोच रहा था कि अब साधारण भद्रता से काम नही चलेगा। कुछ साहस से काम लेना पडेगा, और यहा अल्सेशियन कुत्ते का भी डर नही था, पूर्ण स्वतन्त्रता थी। वह यही सोचने लगा कि पहला कदम तो यह होना चाहिए कि चलकर खाट पर बैठा जाए और फिर बाते की जाए। अफसोस है कि वह बाहरवाला दरवाजा बन्द नही कर आया, नही तो वह बिल्कुल निश्चिन्त हो जाता। फिर भी अब हिम्मत तो करनी ही है। और किसी उपाय से काम नही बन सकता था।

प्रश्न था, पहला कदम उठाने का। पर वह पहला कदम उठा नही पा रहा था, क्योकि इस बीच वसुधा फिर खडी हो गई थी और वह नथुनो को फैलाकर ज़ोर से धौंकनी की तरह सूघ रही थी। पुरन्दर ने कहा—कही ऐसा तो नही कि बिस्तरे मे ही ऐसा कुछ है जिससे बदबू का भ्रम हो रहा है। क्या मैं मदद करू ?

वसुधा ने कोई उत्तर नही दिया। और वह उस लकडी के डण्डानुमा टुकडे को उठाकर अन्त मे जिस कोने की तरफ गई थी, उस कोने की तरफ चली गई और वहा सूघना खतम कर बोली—यहा तो कुछ भी नही है।

पुरन्दर ने सोचा कि अब साहस करने का मौका आ गया है। वह बोला—मैं खोजता हू।—और वह जाकर बिस्तरा उलटने-पलटने लगा। वसुधा ने एक बार उसे देखा, पर वह अपने अन्वेषण मे व्यस्त रही, और उस लकडी से सब चीज़ो को हटा-हटाकर देखने लगी। कमरा कोई बडा नही था, इसलिए पुरन्दर और वसुधा मे कोई अधिक फासला नही था। पुरन्दर सूघ-साधकर फिर से बिस्तरा ठीक करते हुए बोला—यहा तो कोई बदबू नही मालूम देती, पता नही क्यो तुम्हे बदबू मालूम दे रही है। कितनी देर से बदबू मालूम हो रही है ?

वसुधा को जैसे एकाएक कोई बात सूझ गई, वह बोली—पहले तो बदबू नही मालूम हो रही थी। तुम्हारे आने के बक्त से ही बदबू मालूम हो रही है।—कहकर वह आगे बढी। साथ-साथ बराबर सूघती रही। पुरन्दर बिस्तरा ठीक करके उसके पैताने जमकर बैठ गया था। अब यह कहा जाएगी ? आएगी तो यही बैठेगी। फिर तो कोई बात ही नही है। पर वह इस बुरी तरह सूघ क्यो रही थी? सूघती जाती थी, और रुकती जाती थी, जैसे कोई आविष्कार कर चुकी हो। इसका

दिमाग सही तो है न ? बहुत अजीब ढग से सूघ रही है, और अब तो बिलकुल सामने आकर सूघ रही है। बोली—बिस्तरे से ही बू आ रही है। मैं तो व्यर्थ मे परेशान हुई। बदबू तो बिस्तरे मे थी। कोई छछूदर मरकर सड गया है। चूहे की बदबू हर्गिज इतनी खराब नही हो सकती। बहुत ही बुरी बदबू है। आते निकली आ रही है।

बिस्तरे मे बदबू है, सुनकर पुरन्दर खडा हो गया था, तब वसुधा ने एक-एक चीज़ करके पूरा बिस्तरा उलट डाला, पर कही कुछ नही मिला। फिर भी उसके रग ढग से मालूम हो रहा था कि बदबू उसे लग रही है, और बुरी तरह लग रही है। उसने जब देखा कि न चूहा है न छछूदर, तो उसने बिस्तरा ठीक कर लिया, पर बदबू उसे आ रही थी। बिस्तरा ठीक करते वह उस जगह आ गई थी, जहा पुरन्दर खडा था।

पुरन्दर ने सोचा कि अब वह निर्णयात्मक घडी आ गई है, जब उसे साहस से काम लेना चाहिए। वह हाथ बढाकर वसुधा को अपने आलिगन मे बाधने को तैयार हो गया। इतने मे वसुधा को क्या हुआ, साप से एकाएक डसे जाने पर जिस तरह मनुष्य चौक पडता है, उस तरह से वह चौक पडी और वह पुरन्दर के पास आकर, करीब-करीब उससे नाक लगाकर बोली—अरे, बदबू तो तुमसे आ रही है। नापाक, गन्दे, कुत्ते कही के, अब तक मैं जो बदबू पा रही थी, वह तुम्हीसे आ रही थी, और यह बदबू न चूहे की है न छछूदर की, यह पुलिसवालो की बदबू है!—कहकर उसने वह डडा उठा लिया और एकाएक, इससे पूर्व कि पुरन्दर सम्भल पाए, उसपर कई डडे झाड दिए। बोली—नापाक, कुत्ते, गदे आदमी, तुम देशभक्तो को पकडाने के लिए छूटे हो! तुम्हारे बदन से जो बू निकल रही है, वही यह बता रही है कि तुम गन्दे, नापाक कुत्ते, सूअर हो! मैं इसे खूब पहचानती हू।

पुरन्दर को पहले तो आश्चर्य हुआ, इतना आश्चर्य कि वह जडीभूत होकर दो-चार डडे खा गया, पर जब समझ पाया कि क्या हो रहा है, तब भागने का रास्ता नही था, इसलिए दो-चार-छ डडे और खा गया। फिर वह बेतहाशा भागा और कमरे के बाहर पहुच गया। उसे स्वप्न मे भी यह शका नही थी कि इस प्रकार होगा। वह वहा कुछ देर रुका, पर जब सुना कि अब भी वसुधा पहले की तरह नापाक, गन्दे, कुत्ते, सूअर आदि कह रही है, तो वह निराश होकर रात्रि के अधकार मे निकल पड़ा। वह केवल सहजात बुद्धि द्वारा परिचालित होकर भाग रहा था।

असल मे उसे कुछ सुझाई नही पड रहा था कि क्या से क्या हो गया।

वह जब सुपरिचित तमोली की दुकान के सामने पहुचा, तो उसे ऐसा लगा कि वसुधा ने आवाज के साथ दरवाज़ा बन्द कर लिया, और अब खिलखिलाकर हसने की आवाज़ आ रही थी। शायद बदबू वाली सारी बात ही बनावटी, पहले से सोची हुई और शठतापूर्ण थी। अब वसुधा भी देशभक्तो का नाम लेकर बात करने लगी, यह बहुत अजीब बात थी।

पान खाने की इच्छा हो रही थी, पर उसे लग रहा था कि उसपर डण्डो का कोई चिह्न होगा। अगले तमोली के यहा पान खाना ही ठीक रहेगा, और वही बैठकर चिन्तन भी किया जाएगा। पर वह न तो तमोली की अगली दुकान पर पहुचा, न उससे अगली। वह मूलगज पहुचकर ही रुका। जेब मे काफी रुपये थे, जिनमे वे रुपये भी थे जो गुलदान बेचने से मिले थे। वे जेल मे उसके नाम पर जमा थे, और मिल गए थे।

वह पद्मा के कोठे पर पहुचा। कम से कम यह एक स्थान था, जहा से कोई उसे निकाल नही सकता था, जहा कोई यह बताने वाला नही था कि तुम्हारे बदन से बदबू आ रही है, या तुम देशभक्त नही हो। रात-भर के लिए तो जगह मिल गई, आगे देखा जाएगा। खैरियत है कि पद्मा ने उसका स्वागत किया।

पर पद्मा के स्वागत करने पर भी उसका मन प्रफुल्लित नही हो सका। टीकाराम से वादा करके छूटा था कि शिशु को गिरफ्तार कराऊगा, डा० कैक्स्टन के साथ चाय पी तो खयाल आया कि वह उस प्रकार के वादे से बधा हुआ नही है। वसुधा के यहा गया तो वहा मार खाई, और देशद्रोही करार दिया गया। पद्मा के साथ बैठकर उसने यही तय किया कि शिशु को ज़रूर पकडाऊगा, पर कैसे? उसने चिन्ताओ को भुलाने के लिए पद्मा को घसीटते हुए कहा—इधर आओ!

२१

फ्रास का पतन इतनी जल्दी और इस प्रकार होगा, इसकी किसीको शका नही थी, यद्यपि यह सभी समझते थे कि अन्ततोगत्वा हिटलर के सामने फ्रास ठहर नही सकेगा। इस घटना से भारत के राजनैतिक वृत्तो मे बहुत खलबली मच गई थी। भारत मे ऐसे लोगो की काफी सख्या थी, और वह दिन-ब-दिन बढती जा रही

थी जो यह समझते थे कि हिटलर एक प्रकार के कल्कि का अवतार-सा है, कल्कि का अवतार नही तो उसी प्रकार का कोई ईश्वर द्वारा भेजा हुआ महापुरुष है जो, सारे देशो को विशेषकर ब्रिटिश और फ्रेंच साम्राज्यवाद के जगन्नाथी रथ के पहियो के नीचे पिसनेवाले राष्ट्रो का उद्धारक है ।

अभी तक काग्रेस ने कोई स्पष्ट बात नही कही थी, यद्यपि रामगढ काग्रेस हो चुकी थी, इस कारण जहा देखो, वहा केवल तर्क ही तर्क हो रहा था । बाल की खाल निकाली जा रही थी । यह स्वाभाविक भी था, क्योकि जब कुछ काम नही था, तो लोग क्या करते ? काग्रेसी वृत्तो मे ब्रिटेन का प्रशसक लगभग कोई भी नहीं था । उनके पक्ष मे थोडा-बहुत यदि कोई बोलता था, तो बूढे काग्रेसी नेता आनन्द-कुमार थे ।

जब मई मे आस्टेन चेम्बरलेन को ब्रिटेन का प्रधानमन्त्रित्व छोडना पडा और उनकी जगह पर चर्चिल प्रधानमन्त्री बने, तो उन्होने कहा था कि अब देख लेना, कुछ न कुछ बदलेगा, पर उसके बाद ही फ्रास का पतन हुआ, इस कारण राजेन्द्र आदि जो लोग ब्रिटेन के विरुद्ध बहुत कडवे हो चुके थे, उनकी बन आई और उन लोगो ने व्यग्य के साथ यही कहा कि फ्रास का पतन अब हुआ है, दो-चार दिन मे ही ब्रिटेन का भी पतन होगा । यदि यूरोपीय महादेश और ब्रिटेन के बीच मे समुद्र की वह पतली-सी पट्टी न होती, तो ब्रिटेन अब तक समाप्त हो चुका होता ।

आनन्दकुमार कुछ कह नहीं सके, क्योकि घटनाए इस तेजी से घटित हो रही थी कि सारी भविष्यवाणिया और हिसाब एक तरफ रह जाते थे, और घटनाओं का प्रवाह उफनता हुआ दूसरी ही तरफ निकल जाता था । आस्टेन चेम्बरलेन से ब्रिटेन के लोग खुश नही थे, पर उनका पतन जिस तरह हुआ, और जिस प्रकार चर्चिल उनकी गद्दी पर बैठाए गए, वह एक अजीब घटना थी । विरोधी दल ने केवल युद्ध सम्बन्धी परिस्थिति पर एक वाद-विवाद की माग की थी, जो एक बहुत साधारण बात थी । ऐसा हमेशा हुआ करता है । एक के बाद एक वक्ता सरकार पर हमला करते रहे, और उनके हमलो मे इतना कडवापन और तीव्रता आ गई कि सुननेवाले दग रह गए । लोगो का कहना यह था कि हिटलर से पहले ही हमे ट्रोण्डहाइम पर हमला करके उसे अपने अधिकार मे ले लेना चाहिए था, पर सरकार ने ऐसा नही किया ।

विरोधी पक्ष तो गालिया दे ही रहे थे, उनके साथ-साथ सरकारी पक्ष के लोग

भारत स्वतन्त्र हो जाएगा, पर कुछ लोग यह भी कह रहे थे कि तब बची-खुची ब्रिटिश फौज भारत मे आ जाएगी और भारत ही ब्रिटिश सरकार का प्रधान केन्द्र होगा, जहा से वह लडाई करेगी, जैसाकि पोलैण्ड आदि कई देशो की सरकारे अपने देश के बाहर किसी न किसी स्थान से लडाई यदि कर नही रही थी, तो कम से कम हिटलर के विरुद्ध जहा तक बन पडे षड्यन्त्र कर रही थी। ऐसे समय मे भारत को क्या करना चाहिए, प्रश्न यह था ! और इसीपर हर समय तुमुल तर्क-वितर्क जारी था।

क्रान्तिकारी क्या चाहते थे, यह तो उनमे से जो सबसे नरम तथा खुला अश था, उसके द्वारा परिचालित रामगढ के समभौता-विरोधी सम्मेलन मे प्रकट हो चुका था। पर काग्रेसी भी बहुत परेशान थे। स्वय आनन्दकुमार भी अब कुछ स्पष्ट नही देख पा रहे थे, और यदि देख पा रहे थे, तो वे उसे कहकर फिजूल मे सबसे झगडा मोल लेना नही चाहते थे। गाधीजी हर घटना पर एक-न-एक वक्तव्य देते जा रहे थे। उन्ही वक्तव्यो पर विशेष रूप से झगडा हो रहा था। फ्रास के पतन पर गाधी जी ने यह कहा था—'मैं समझता हू कि अनिवार्य के प्रति सर झुकाकर तथा अर्थहीन पारस्परिक हत्याकाडो मे भाग लेने से इन्कार करके फ्रेच राजनीतिज्ञो ने बहुत भारी साहस का परिचय दिया है।

इस वक्तव्य पर बहुत ही झगडा मच गया था, और श्यामा ने तो यहा तक कह डाला—इतिहास इसके लिए गाधीजी को कभी क्षमा नही करेगा ! एक तो वे अपने देश मे सत्याग्रह भी नही छेड रहे है और व्यर्थ की मीन-मेख और बाल की खाल निकाल रहे है, और दूसरे उन्होने फ्रास के भ्रष्टाचारी राजनीतिज्ञो का समर्थन किया, जो अन्तिम फ्रासीसी तथा अन्तिम बन्दूक तक लडने का नारा देने के बजाय दुश्मन के सामने घुटना टेककर बैठ गए। जब दुश्मन तोपो और हवाई जहाजो से लैस होकर मातृभूमि को पराधीन बनाने, उसे लूटने और पैरो तले रौदने के लिए तैयार हो, तो उस समय घुटना टेक देना, यह तो किसी भी नीति के अन्दर नही आता, पर गाधीजी ने तो हद कर दी !

आनन्दकुमार स्वय सारी बाते नही समझ पा रहे थे, और यही हालत केवल उनकी नही, बल्कि हजारो काग्रेसियो की हुई थी, जो यह समझने मे असमर्थ थे कि हिटलर ऐसे क्रूर और विवेकहीन शत्रु के मुकाबले मे घुटनाटेक नीति किस तरह सफल हो सकती है। उन्होने, जैसाकि वे हमेशा कहा करते थे, कहा—बडो की

बहुत-सी बाते समझ मे नही आती, बाद को ही समझ मे आती है।

पर इससे श्यामा की क्रोधाग्नि शान्त नही हुई। उसने अखबार निकालकर गाधीजी का वह लेख दिखलाया, जिसमे उन्होने लिखा था—स्वतन्त्रता का लक्ष्य ही हास्यास्पद हो जाएगा, यदि उन सबका पूर्ण नाश हो जाए, जो स्वतन्त्रता का उपभोग करनेवाले है। तब तो यह उच्चाकाक्षा की अगौरवमय परितृप्ति-मात्र हो जाती है। फ्रासीसी सैनिक का साहस सुपरिचित है, पर सारा ससार जाने कि फ्रेंच राजनीतिज्ञो ने शान्ति की चाह मे किस प्रकार अधिकतर साहस प्रदर्शित किया। —मैंने यह मान लिया है कि फ्रासीसी राजनीतिज्ञो ने इस कदम को बिलकुल ही सम्मानजनक रूप मे उठाया है। मैं आशा करता हू, हर हिटलर किसी प्रकार की असम्मानजनक शर्त नही लादेगे, बल्कि यह दिखाएगे, कि यद्यपि वे बेरहम होकर लडना जानते है, पर वे बेरहम शान्ति की शर्त नही लगाते।

आनन्दकुमार कुछ कह नही पाए थे कि श्याया ने उसी लेख मे वह हिस्सा पढ़कर सुनाना शुरू किया, और बोली—गाधीजी ने इसी लेख मे लिखा है—पोलो, नार्वेजियनो, फ्रासीसियो और अग्रेजो ने यदि हिटलर से यह कहा होता कि 'तुम्हे नाश के लिए यह सब वैज्ञानिक तैयारी करने की जरूरत नही है, हम हिंसा का सामना अहिंसा से करने को तैयार हैं, इसलिए तुम हमारी अहिंसक सेना को टैंको, लडाकू जहाजो और बमबाजो के बिना ही नष्ट कर सकोगे, तो और ही माजरा होता!

कहकर श्यामा ने करीब-करीब उस पत्र को फेककर मारा और कहा—जो शत्रु तोप तलवार की इस्पाती भाषा के अतिरिक्त कोई दूसरी भाषा नही समझता, उसके सामने अहिंसा की फुलझडिया खिलाना उसी तरह है, जैसे कोई साप या भेडिये का हृदय अहिंसा से परिवर्तित करना चाहे!

आनन्दकुमार को स्वय सन्देह था कि भले ही एक पराधीन और निरस्त्र देश मे अहिंसा जनयुद्ध का एक महान अस्त्र हो, पर हिटलर ऐसे शत्रु के विरुद्ध, जो यहूदी ऐसी पूरी जाति को ही तलवार के घाट या गैस-कक्ष मे ढकेलने के लिए तैयार हैं, अहिंसा कोई अच्छा अस्त्र नही हो सकता, बल्कि उसकी आड मे कायरता ही पनप सकती है। पर अपने सन्देहो का कण्ठरोध करते हुए वे बोले—पोलैण्ड ने तो पूरी लडाई की, पर क्या हुआ! श्रेष्ठतर सैनिक शक्ति के सामने उसे पराजित होना पडा। इसलिए प्रश्न हिंसा या अहिंसा का नही है।

श्यामा लडाकू आवाज़ मे बोली—चाचाजी, इतिहास रह जाता है, पराजित होने मे कोई बुराई नही है। कई बार पराजय बहुत गौरवपूर्ण हो सकती है, और यदि एक-एक ईंट के लिए शत्रु से लोहा लिया गया है और उसे अपने तथा शत्रु के रक्त से सीचा गया है, तो भविष्य की पीढियो के लिए वह हार एक आलोकगृह की तरह हो सकती है।

श्यामा जोश मे न जाने और क्या-क्या कह गई। उसने फ्रास के घुटनाटेक राजनीतिज्ञो को चोर, बदमाश, भ्रष्टाचारी, जितनी भी गालिया उसके मुह मे आई, सब दे दी और अन्त मे बोली—गाधीजी के प्रति इतिहास घृणा की दृष्टि से देखेगा, कि उन्होने उन बेईमानो की सराहना की, जिन्होने अपने प्राण बचाने के लिए अपने देश को हिटलरी साम्राज्य के अन्तर्गत कर दिया। इस सम्बन्ध मे गाधी जी के मत की जो सबसे अच्छी व्याख्या की जा सकती है, वह यह है कि गाधीजी अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति समझ नही पाए, इस कारण वे गलती कर गए।

उसने फिर जोश मे वह लेख ले लिया और उसमे से अन्तिम भाग पढकर सुनाया, जिसमे गाधी जी ने लिखा था—"मैंने इन पक्तियो को यूरोपीय शक्तियो के लिए लिखा है, पर वे हमारे अपने लिए है। यदि मेरे तर्को का कुछ असर हुआ है तो क्या वह समय नही आया कि हम सबल की अहिसा मे अटूट आस्था व्यक्त करे, और यह कहे कि हम शस्त्रो के ज़ोर से अपनी स्वतन्त्रता की रक्षा नही करना चाहते, बल्कि हम अहिसा की शक्ति से उसकी रक्षा करेगे। मैं यूरोपीय परिस्थिति के कारण आत्यन्तिक साहसिकता से मर गया हू। मैं बर्तानिया और हारी हुई जातियो को अहिसा से अधिक कुछ दे नही सकता। मुझे न तो हिटलर के कृत्यो से कोई जोश आता है, और न उन लोगो के कृत्यो से, जो उनसे लडे, या उनसे लड नही पाए। हिटलर की विजय और दूसरो की पराजय के बीच कोई विशेष फर्क नही है। मेरे मन मे कतई सन्देह नही है कि यदि किसी तरह एक पैबन्दयुक्त अहिसक सेना खडी कर दी जाए, तो उससे भी हिटलर के पालो की हवा निकल जाएगी। मुझे उनके न तो हवाई जहाज़ चाहिए, न टैक! उसे हमारे घरो को नष्ट करने की ज़रूरत नही है। हमारी अहिसक सेना उनका स्वागत करेगी, और सम्भव है कि वे आने का साहस ही नही करे। मैं जानता हू कि यह दिवास्वप्न हो सकता है।[1]

१ तेन्दुलकर—पाचवी जिल्द, पृष्ठ ३५४

उद्धरण पढने के बाद श्यामा ने जो व्याख्यान शुरू किया, उसका कोई अन्त ही होने मे नही आता था। खाते-पीते, उठते बैठते जब भी समय मिलता, यह तर्क कई दिनो तक चलता रहा। श्यामा तो एक क्रान्तिकारी शहीद की पत्नी थी, और स्वय क्रान्तिकारिणी रह चुकी थी। इस समय भी वह उन पुराने तथा नये क्रांतिकारियो तथा साम्यवादियो के साथ षड्यत्र मे लगी हुई थी, जो शहरो-गावो की हर दीवार तथा रेल के डिब्बे पर क्रान्तिकारी नारे लिख रहे थे। केवल नारे लिख ही नही रहे थे, प्लास और जो भी अस्त्र हाथ लग रहा था, एकत्र कर रहे थे। पर इन क्रान्तिकारी उपादानो के अतिरिक्त बाकी काग्रेसी भी यानी उनमे से वे जो पदो से चिपक कर रहना नही चाहते थे, गाधीजी के इन वक्तव्यो से बहुत उत्तेजित थे।

काग्रेस के जो लोग ब्रिटिश सरकार से समझौता चाहते थे, वे समझ रहे थे कि यदि हर हालत मे अहिसक ही बना रहना है, यानी युद्ध-प्रयास मे भाग नही लेना है, तो फिर सरकार से किस प्रकार सधि हो सकती है। ब्रिटिश सरकार काग्रेस से सधि केवल एक ही कारण से चाह सकती थी, वह यह कि युद्ध-प्रयास मे काग्रेस हाथ बटाए। यदि उसकी गुजाइश नही रहती तो फिर ब्रिटिश सरकार की तरफ से सधि की कोई माग नही रहती। इस प्रकार गाधीजी की आत्यन्तिक अहिसा के विरुद्ध दोनो प्रकार के लोग हो गए थे—एक तो वे, जो चाहते थे कि काग्रेस लडाई छेडे, और उसे जनक्रान्ति मे बदल दिया जाए; दूसरे वे, जो सरकार से समझौता चाहते थे, और सम्मानजनक समझौता चाहते थे, पर यह समझते थे कि ब्रिटिश सरकार समझौता केवल युद्ध-प्रयास मे सहायता पाने के उद्देश्य से ही कर सकती थी।

आनन्दकुमार ने श्यामा को ये बातें स्पष्ट रूप से समझा दी और कहा—इसीलिए मैं कुछ स्पष्ट राय नही दे पा रहा हू। मै तुम लोगो के तर्को को भले ही न पसन्द करू, पर आगाह कर देता हू कि कई लोग किसी तरह पैबन्दबाजी करके एक सधि करने पर तुले हुए है, जिसमे नाम के लिए कुछ अधिकार भले ही मिल जाए, पर हमारे हाथ मे कोई वास्तविक ताकत नही आएगी, यानी जो ताकत आएगी, वह केवल इसलिए आएगी कि हम ब्रिटिश ताकत को पुष्ट करे। हमारी यह ताकत दूसरे अर्थ मे भी बनावटी होगी, क्योकि यदि हिटलर से सधि हुई, तो उस सम्बन्ध मे भी हमे कुछ कहने का अधिकार न होगा। दोनो धाराओ को अलग रखना

चाहिए। यह नही समझना चाहिए कि जो लोग पोलैण्ड, चेकोस्लोवाकिया, डेनमार्क, नार्वे, फ्रास और ब्रिटेन को अहिसा का पाठ देने पर चिढ रहे है, उनका गाधी-विरोध और पद लोलुप, येन केन प्रकारेण सधि-लोलुप, काग्रेसियो का अहिंसा-विरोध एक ही तत्त्व के बने है।

सारे देश मे ये तत्त्व काम कर रहे थे और स्वातन्त्र्य योद्धाओ मे भयकर बवण्डर-सा मचा हुआ था। उक्त दो विचारो के माननेवालो के अतिरिक्त वैसे लोगो की सख्या भी बराबर बढती जा रही थी, जो यह समझते थे, पता नही कैसे, कि हिटलर वह महावीर है, जो भारत को पराधीनता की बेडियो से मुक्त करेगा। ऐसे विचार समझौतावादियो या कम पढे-लिखे लोगो मे ही नही, ऐसे लोगो मे फैले हुए थे जो अपने को क्रान्तिकारी मानते थे। उनमे भी एक बहुत बडी सख्या, यदि खुलेआम नही तो मन ही मन, हिटलर को उद्धारक के रूप मे मान रही थी।

फिर भी केन्द्रीय तथ्य यह था कि क्रान्तिकारी भी काग्रेस के नेतृत्व मे आन्दोलन छिडने की प्रतीक्षा कर रहे थे, जैसे किसान बादलो की या फोटोग्राफर विशेष आस्मानी रोशनी की प्रतीक्षा करता है।

सारे देश मे काग्रेसी वृत्तो, यही नही, सब राजनैतिक वृत्तो मे वाद-विवाद तेज़ी पर रहा। मानो इसी वाद-विवाद को काग्रेस कार्यसमिति ने अपनी एक घोषणा में व्यक्त करते हुए यह साफ कह दिया कि वह राष्ट्रीय रक्षा के क्षेत्र मे अहिंसा के सिद्धान्त को प्रसारित करने मे असमर्थ थी। कार्यसमिति ने बडी चतुरता से इस मत को इन शब्दो मे व्यक्त किया—यूरोप मे चकरा देनेवाले सिलसिले मे जिस तरह दु खजनक घटनाए घटित हुई है, विशेषकर फ्रास की जनता पर जो दुर्भाग्य का पहाड टूट पडा है, उससे प्रभावित होकर कार्यसमिति को यह अनुभव हुआ है, कि जो समस्याए दूर लग रही थी, वे अब पास आ गई है, और शायद जल्दी ही उनके समाधान की ज़रूरत पडे। अब राष्ट्रीय आज़ादी की प्राप्ति की इस समस्या को इसकी रक्षा और बाहरी और भीतरी अव्यवस्था के विरुद्ध देश की रक्षा की दृष्टि से सोचना है।

इस वक्तव्य से उन लोगो को बहुत निराशा हुई, जो राजनैतिक गगन की ओर बडी आशा से टकटकी बाधकर देख रहे थे। अपनी खेती को बादलो के जीवनदायी जल से लहलहाने का मौका मिलने की बजाय तुषारपात हुआ, जिससे फसल को और भी हानि हुई। यह तो स्पष्ट शब्दो मे ब्रिटेन को यह कहना था कि

तुम मुझे कुछ अधिकार दो, अत्यन्त मामूली ही सही, उसीसे रीझकर हम अहिंसा को तिलाजलि देकर लडाई मे सहायता देगे।

कम से कम श्यामा आदि ने यही व्याख्या की, तब आनन्दकुमार ने मुस्कराकर कहा—तुम लोग किसी भी तरह खुश नही हो सकते। जब काग्रेस अहिंसा पर डटने की बात कहती थी, तब तुम लोग उससे खुश नही थे और अब जबकि काग्रेस ने, किसी रूप मे ही सही, अहिसा को पूर्णत नही तो अशत त्याग दिया है, तब भी तुम लोग खुश नही हो। तुम लोग तो खुश तभी हो सकते हो, जब काग्रेस आन्दोलन छेड दे, और तुम लोगो को उसकी आड मे मनमानी करने का मौका मिले।

कहकर वे हसे, पर यह व्यग्य की तिरछी-तीखी हसी नही थी। असल मे वे भी समझ नही पा रहे थे कि किस-किस प्रकार क्या हो रहा है। वे अहिंसा के इतने कट्टर भक्त कभी नही रहे, कि जो लोग दूसरी तरह से देशसेवा,कर रहे है उन्हे गुमराह या देशद्रोही समझे, पर इस अवसर पर गाधीजी की अहिसा, किसी भी हालत मे अहिसा मे एक विरल मर्यादा और दृप्त तेज था, जो कार्य-समिति की घोषणा मे नही था। यह घोषणा तो भिक्षापात्र का ही दूसरा रूप था, क्योकि एक तरफ तो इस घोषणा मे अहिंसा को त्यागने की इच्छा व्यक्त की गई थी, दूसरी तरफ उसी सास मे यह कहा गया था कि भारतीय स्वतन्त्रता आन्दोलन अहिसात्मक ढग से ही चालू रहेगा।

श्यामा इसपर ज्यादा बिगडी थी। उसका कहना यह था—काग्रेस ब्रिटेन की विजय के लिए अस्त्र ग्रहण करने को तैयार है, बशर्ते कि १९३५ के ऐक्ट के इर्द-गिर्द उसे कुछ टुकडे दिए जाए, और बाद को स्वराज्य देने का वादा किया जाए, पर वह राष्ट्रीय आन्दोलन के क्षेत्र मे क्रान्तिकारी तरीको को निषिद्ध रखना चाहती है। इसका क्या अर्थ हुआ? यह न तो कोई सिद्धान्त हुआ, और न कोई रणनीति!

श्यामा ने और भी कहा—गाधीजी के साथ खुला विरोध भी नही किया गया, बल्कि यह कहा गया कि काग्रेस उनसे जब भी जरूरत होगी, परामर्श और पथ-प्रदर्शन लेती रहेगी। ऐसा कहने का मतलब भी साफ है, वह यह कि कार्य-समिति की घुटनाटेक घोषणा के बावजूद कार्यसमिति को यह शका होगी कि ब्रिटिश सरकार कुछ नही करेगी यानी हाथ तो क्या, उगली भी नही बढाएगी,

इसीलिए इसका रास्ता खुला रखा गया कि फिर से गाधीजी की लक्ष्मणरेखा के अन्दर लौटा जाए। इससे लगता है कि हिसा-अहिसा सम्बन्धी सारी बाते केवल शब्दाडम्बर है, उनमे कोई तत्त्व नही है। सारा ही मौकावाद है।

आनन्दकुमार फिर मुस्कराए और बोले—यदि मौकावाद है, तो इसमे बुराई क्या है ? कम से कम तुम लोगो की नीति के अनुसार तो इसमे कोई बुराई नही होनी चाहिए। लडाई मे कभी पीछे हटना पडता है, कभी आगे बढना पडता है। ऐसा लडाई की आवश्यकताओ के अनुमार होता है। अभी-अभी फ्रास मे जो कुछ हुआ, उसीको लो, तो मालूम होगा कि किस प्रकार परिस्थिति के अनुसार रण-क्षेत्र से भाग निकलना भी वीरता का परिचायक हो सकता हे। डनकर्क मे ब्रिटिश फौज जिस तरह भागकर इग्लैण्ड पहुच गई, चोरी से सारा काम हुआ, उसकी जो रिपोर्ट ब्रिटिश पत्रो मे आई है, उसमे हारकर भागने मे कोई ग्लानि अभिव्यक्त नही है, बल्कि कुछ गौरव का ही लहजा है। ऐसा लगता है, जैसेकि बडा भारी काम कर लिया गया। यदि काग्रेसी नेता परिस्थिति को देखकर कुछ परिवर्तन करते है, तो इसमे तुम लोगो को बुराई क्यो दिखाई पडती है ? यह तो बुद्धिमानी की ही बात हुई कि उन्होने यदि तुम्हारे शब्दो मे भिक्षापात्र आगे कर दिया है, तो उसके साथ ही जादूगरोवाली एक अदृश्य रस्सी भी बधी हुई हे, जिससे मौका पडने पर भिक्षापात्र छूमन्तर हो सकता है। यदि अग्रेजो ने काग्रेस का प्रस्ताव स्वीकार नही किया, तो यह तो तुम लोग मानते ही होगे कि उन्हे निराश होकर बैठ नही जाना चाहिए, बल्कि कुछ करना चाहिए। इस रूप मे यदि उन्होने गाधी-जी को धनुष की दूसरी रस्सी के रूप मे सुरक्षित रखा है कि मौका पडने पर फिर उनके साथ हो जाया जाए, तो यह तो बिलकुल स्वाभाविक है। काग्रेस आत्महत्या नही कर रही है, वह तो केवल विरोधी के दिल को टटोल रही है कि वह कहा तक, क्या करने को तैयार है। तुम लोग जैसा समझ रहे हो, यह कोई मिली भगत नही है , कम से कम जहा तक मैं समझ पा रहा हू।

पर श्यामा आदि आनन्दकुमार से सहमत नही हो सके। उनका कहना था कि गाधीजी और काग्रेस ने मिलकर यह सामयिक नाटक रचा है। यदि बिलकुल रचा नही है, तो कम से कम उसे यह रूप मिल गया हे। नही तो गाधीजी को बिल्कुल अकेला छोड देने, और साथ ही जब ज़रूरत होगी, तो उनके पथप्रदर्शन और नेतृत्व को ग्रहण करने का क्या अर्थ होता है ! मिलीभगत या नाटक रचना

विशेषकर दुश्मन के सामने, कोई बुरी बात नही है, पर यदि उसका उद्देश्य केवल पदलोलुपता है, या क्रान्ति का भय है, तो वह दूसरी बात है।

असली बात यह थी कि काग्रेस के अन्दर के और बाहर के क्रान्तिकारी उपादान, साथ ही वह उपादान जो हिटलर मे विश्वास रखता था, इस बात के लिए बावले हो रहे थे कि किसी तरह सग्राम छिड जाए तो एक बार खुल खेलने का मौका मिले। उन्हे काग्रेस कार्यसमिति की घोषणा से बडी निराशा हुई थी। उन्हे डर यह था कि कही सरकार काग्रेस का प्रस्ताव ग्रहण कर ले, तो ब्रिटिश साम्राज्यवाद के विरुद्ध सघर्ष अपने लोगो के विरुद्ध सघर्ष के रूप मे न हो जाए।

२२

बूढा अहारन इस बीच कई बार एलिस के पास आ चुका था, और उसकी मा श्रीमती टामस से भी मिल चुका था। वह हर बार आता था, और शराब की एक बोतल का सत्कार करके जाता था। एलिस को उसे शराब पिलाने मे बडी तृप्ति का अनुभव होता था। पता नही किन स्नायुतन्तुओ की क्या क्रिया-प्रतिक्रिया हुई थी, विलियम के प्रति उसका जो प्रेम था, वह बहुत कुछ इस बूढे पर आरोपित हो गया था। बेचारा बडा दु खी था। उसका एकमात्र पुत्र फासीघर मे बन्द था। हिटलर की जेलो मे यहूदियो का बन्द होना फासीघर मे बन्द होने के समतुल्य ही था। वह दु खी नही तो क्या होता! पर एलिस ने यह देखा कि अहारन का दुख शायद उतना वैयक्तिक नही, जितना सामूहिक था। कैसर से रोगी बच सकता था, पर हिटलर के चगुल से कोई यहूदी नही बच सकता था। यहूदियो को समाप्त करने के लिए कई तरह के कार्यक्रम सोचे जा रहे थे, पर सब कार्यक्रमो का उद्देश्य जाति के रूप मे यहूदियो को ससार से मिटा देना ही था।

अहारन ने थोडी शराब पीने के बाद गरमाकर कहा—फास का पतन हो गया, इससे फ्रासीसी जाति नही मिटी, न मिटेगी, पर हिटलर को जहा भी फ्रासीसी या अन्य यहूदी मिलेगे, वह उनको मटियामेट करता जाएगा। यहूदियो को किस तरह बरबाद किया जाए यह सोचने मे बडे से बडे जर्मन दिमाग लगे हुए हे। सुना है एस० डी० के प्रधान हाइड्रिख ने यह कहा है कि पहले यहूदियो को पकड-

कर उनकी जान के बदले उनसे धन मागा जाए। इसके बाद उन्हे देश के बाहर भेजा जाए। पहले देश से मतलब केवल जर्मनी था, पर अब हिटलर का यह देश बढता ही जा रहा है। पता नही इसका अन्त क्या होगा।

कहकर बूढे ने दीवार पर टगे हुए मानचित्र की ओर देखा, यद्यपि उतनी दूर से मानचित्र के ब्योरे दिखाई तो क्या पडते होगे, पर फ्रास तो दिखाई दे रहा था। पता नही बूढा क्या सोच रहा था ? शायद सोच रहा हो कि फ्रास के बाद किसकी बारी है। मानचित्र को सरसरी दृष्टि से देखने पर सन्देह यही होता था कि अब ब्रिटेन की बारी है, क्योकि इटली तो हिटलर का अपना ही था, और स्पेन अपना नही तो अपने लोगो का था।

अहारन ने एक घूट पीते हुए कहा—वह वित्तशास्त्री शाख्त है न, उसका कहना है कि धीरे-धीरे यहूदियो के सारे वित्तीय साधनो को चूस लो, फिर वे तो खुद ही समाप्त हो जाएगे। कुछ लोग कहते है कि यहूदियो को मदागास्कर टापू मे भेज दिया जाए। कुछ कहते हैं कि फिलिस्तीन मे भेजा जाए। पर अरबो को खुश रखने के लिए उत्सुक ब्रिटिश राजनीतिज्ञो का यह कहना है कि ऐसा नही होने दिया जाएगा। हिटलर की जीत हो रही है, यह अच्छी बात नही है।—कहकर अहारन ने फिर एक बार मानचित्र की ओर देखा, और वह पीने लगा।

थोडी देर पीने के बाद वह उठकर चला गया। एलिस ने देखा कि हमेशा की तरह वह सारी शराब नही पीकर गया है। यह स्पष्ट था कि फ्रास के पतन के बाद से बूढा बहुत उत्तेजित था। यो कहना चाहिए कि अवसन्न हो गया था। अब उसमे जीवन जैसे बिलकुल भाटे पर था। शायद उसके बेटे को गोली मार दी गई हो। कोई खबर नही मिली थी। स्काटलेण्ड यार्ड को भी कुछ पता नही था। उस जरिये से ही कुछ पता मिला था। ऐसी अवस्था मे बूढे का पस्त हो जाना कोई आश्चर्य की बात नही थी।

अब युद्ध धीरे-धीरे भयकर रूप धारण करने लगा था। हिटलर की वह आशा शायद समाप्त हो गई थी कि किसी तरह सन्धि हो सकती है। अब तो युद्ध का स्पष्ट उद्देश्य किसी प्रकार से पूर्ण विजय प्राप्त करना था। मुख्य विरोधियो मे से फ्रास तो खत्म हो चुका था, इस कारण अब ब्रिटेन की ही बारी थी। अहारन का इस समय इस प्रकार शराब तक छोडकर चल देना समझ मे आता था। लडका शायद मौत के घाट उतार दिया जा चुका था, अब अपने लोगो की बारी थी। बूढे

के रग-ढग से मालूम होता था कि वह अपने जीवन या मृत्यु के सम्बन्ध मे उतना चिन्तित नही था, जितना कि वह इस बात से चिन्तित था कि सारी यहूदी जाति का नाश हो रहा है। पहले अहारन जब आया था, तो उसने जो विचार व्यक्त किए थे, उनसे पता लगता था कि वह पहले अग्रेज है, फिर यहूदी। पर अब हिटलर के कृत्यो से वह अग्रेज कम, और यहूदी अधिक हो चुका था। जो बात उसने फ्रास के सम्बन्ध मे कही थी, वही वह इग्लैड के बारे मे भी सोच रहा था, इसमे सन्देह नही। यदि हिटलर ने ब्रिटेन पर अधिकार कर लिया, तो हजार, दो हजार अग्रेज भले ही मारे जाए, पर अग्रेज जाति बरकरार रहेगी, इसके विपरीत हर यहूदी से पहले तो यह कहा जाएगा कि वह बाह पर एक पट्टी बाधे, जिसपर हज़रत दाऊद का सितारा दिखाया जाए। यही पोलैण्ड मे हुआ था, यही शायद फ्रास मे हो रहा होगा, और अब ब्रिटेन मे यही होगा। फिर इसके बाद बहाने करके यहूदियो को गिरफ्तार किया जाएगा, फिर बहाने के बिना ही गिरफ्तारिया होगी और यहूदियो को समाप्त कर दिया जाएगा। इसलिए बूढे का गम केवल बेटे की मृत्यु का या अपनी मृत्यु का गम नही था।

एलिस ने बोतल तो हटा ली, पर आधे भरे हुए गिलास को उसी तरह मेज पर रहने दिया। उसे हिलाना किसी धार्मिक वस्तु को अपवित्र करने की तरह अक्षम्य प्रतीत हुआ। यह आधा भरा हुआ गिलास किसी हद तक मानव-जाति की परिस्थिति का प्रतीक था, क्योकि वह गिलास अपनी तरल आखो से उस मानचित्र को घूर रहा था, जो दीवार पर सिकुडा हुआ टगा था।

एलिस एकाग्रचित्त होकर उस गिलास की ओर देख रही थी। अभी तक बूढे के कपडो की या शरीर की बू शराब की बू के साथ मिलकर हिलोरें ले रही थी। सचमुच स्थिति बडी गम्भीर थी। जब विलियम स्पेन मे लडने के लिए गया था, तब ससार की स्थिति और थी। उस रणयात्रा मे कुछ रोमास था, पर अब जो हो रहा था, वह निरा कसाईपन था। यद्यपि गहराई से सोचा जाए तो स्पेन मे जो कुछ हो रहा था, वह आरम्भ था और यह उसका ही आगे का रूप था। एलिस ध्यान से उस गिलास की ओर देख रही थी, और इस प्रकार बहुत-सी बाते सोचती जा रही थी। उसकी गोद मे एक पत्रिका खुली हुई पडी थी। वह भी जैसे गिलास और मानचित्र के साथ सारी परिस्थिति के चिन्तन मे खो गई थी। इतने मे मा ने भीतर से कुछ कहा। एलिस दौडी हुई भीतर गई, तो मा बोली—वह आदमी

गया ?

—गया।

—उस लडके का कुछ पता लगा ?

—कुछ नही। कोई खबर ही नही है।

मा गम्भीर हो गई। बोली—सुना करती थी कि त्याग से कुछ न कुछ सिद्ध होता है, पर उस युवक की मृत्यु से क्या लाभ होगा ?

एलिस ने घडी की तरफ देखा, तो दवा का समय हो रहा था, इसलिए उसने मा को दवा दी। दवा का कुछ ऐसा असर था कि वह खाने के साथ ही नीद ला देती थी।

मा की आखे धीरे-धीरे मुदने लगी, पर वे प्रतिरोध कर रही थी। बोली—ब्रिटेन पर हिटलर का कब्जा नही हो सकता! अहारन से कहो कि चिंता न करे।

शब्द अत्यन्त साधारण थे, पर एलिस पर उनका इतना असर हुआ कि उसके रोगटे खडे हो गए और उसकी आखो मे करीब-करीब आसू आ गए। जब उसने मा की तरफ देखा, तो मा निश्चिन्त होकर सो रही थी। दिवाकर का पत्र आया था। उसे वह दुबारा पढने जा रही थी कि अहारन आ गया था। यद्यपि उसमे कोई खास बात नही थी, पर एलिस को इसलिए अच्छा लगा था कि भारत से ताज़ी हवा का यह जो झोका आया था, उसमे एक बडा भारी आश्वासन यह था कि यदि किसी कारण से ब्रिटेन का पतन हुआ, तो भारत से, कनाडा से, न्यूजीलैण्ड से, आस्ट्रेलिया से, कही से भी, या शायद सभी जगह से लडाई जारी रखना सम्भव होगा।

यह बहुत बडी आशा थी। जब हार पर हार हो रही है तो लडाई जारी रख पाने की आशा बहुत बडी आशा थी।

दिवाकर ने यही बात लिखी थी, पर अपने ढग से। उसने लिखा था—हमारे देश के गरमपथी यह समझते है कि देश उनके साथ है, पर देश उनके साथ नही है, हमारे साथ है। इसका प्रमाण यह है लाखो आदमी भर्ती होने के लिए तैयार हैं। काग्रेस के नेता समझते है कि पूजीपति उनके साथ हैं, पर यह भी भ्रम है। भारतीय पूजीपति यदि सौ रुपया छिपकर काग्रेस को दे रहा है, तो वह १०,००० युद्धकोष मे दे रहा है। सब पूजीपति यही कर रहे हैं। पूजीपतियो के इस फरेबपूर्ण आचरण से हमे आश्चर्य नही है, क्योकि हमने ही

काग्रेस को सिर पर चढा रखा है। हमने ही कई साल तक काग्रेस मन्त्रिमण्डल चलने दिए, और अब भी यदा-कदा वाइसराय साहब गाधीजी से मिलते हे। वे तो दयार्द्र होकर शराफत के कारण मिलते हैं या इसलिए मिलते हैं कि थोडे-से लोग जो गुमराह है, उन्हे राह पर लगा दिया जाए, पर काग्रसी इसका फायदा उठाकर यह अफवाह उडाते है कि सरकार उनके सामने घुटने टेकने को है, जिसका और कुछ तो नही, मूर्ख-अनपढ जनता पर यह असर होता है कि काग्रेस कुछ है, जबकि वह है कुछ भी नही।

—मेरे देखते-देखते क्रान्तिकारी आन्दोलन का दीवाला पिट गया। अब भारत मे उस दल का सम्पूर्ण रूप से उन्मूलन हो चुका है। ऐसा हमारी दृढता के कारण हुआ है, न कि किसी और कारण से, जैसाकि क्रान्तिकारी बताते है।

—युद्ध मे जो पराजय हुई है, उसे हम लोग कोई महत्त्व नही देते, सिवा इसके कि यहा के गरमपथियो मे उसका बुरा अर्थ निकालने का प्रयास किया जाता है, पर जो सकटकालीन कानून इस समय लागू है, उनकी बदौलत हम ऐसी प्रवृत्तियो से लोहा ले सकते है। हमे चिन्ता है तो तुम्हारी माताजी की, क्योकि जो हालत होती जा रही है, उसमे उन्ही ऐसे लोगो को हानि पहुच सकती है। मुझे यह जानकर बहुत प्रसन्नता हुई कि लडाई छिड़ने के पहले उनके स्वास्थ्य के सम्बन्ध मे जो आशकाए की जाती थी, वे गलत निकली। हम अपने साथियो को, विशेषकर भारत की स्त्रियो को इसका उदाहरण देकर बतलाया करते हैं कि यहा की स्त्रियो को भी इसी प्रकार वीर बनना चाहिए।

—कुछ भी हो, मेरा वह प्रस्ताव अब भी कायम है। तुम लोग किसी भी समय आ सकती हो, चाहे हम लोगो का व्यक्तिगत सम्बन्ध केवल मित्रता का ही रहे, इससे कुछ आता-जाता नही। तुम अपनी मा को लेकर यहा चली आओ। ऐसा भी कर सकती हो कि मा को यहा छोड जाओ, और कोई कार्य चुन लो। भारत मे भी बहुत-से कार्य ऐसे हैं, जिनसे युद्ध-प्रयास को सहायता पहुचाई जा सकती है। कार्य तो सर्वत्र फैला हुआ है, जहा भी चाहो, कार्य किया जा सकता है। मै और क्या लिखू, इतना ही लिख देना यथेष्ट होगा कि मेरे घर के लोग मेरी शादी के लिए बहुत व्यस्त हो रहे है, पिता उतने नही, जितनी कि मा, पर मैंने स्पष्ट कह दिया कि अभी इसका कोई प्रश्न नही उठता। तुम्हारी मा को मेरी शुभेच्छाए, तथा तुमको अभिवादन भेज रहा हू।

दिवाकर के पत्र मे कोई हृदय को स्पर्श करनेवाली बात नही थी। यह जैसे एक बहुत दूर से आया हुआ अज्ञात भाषा का सन्देश लग रहा था। इसमे सन्देह नही कि दिवाकर ब्रिटिश साम्राज्य का भक्त था, पर उसकी भक्ति पता नही क्यो उस कोटि की नही थी, जिसमे मर्यादा हो। अवश्य गार्डन को ब्रिटिश साम्राज्य का भक्त नही कहा जा सकता, क्योकि वह तो स्पेन के शिशु प्रजातन्त्र को गला घोटकर मारनेवाले हिटलर और मुसोलिनी का विरोध करने के नाते इस युद्ध मे शरीक हुआ है अर्थात् स्काटलैंड यार्ड का शौकिया गुप्तचर बना है।

एलिस ने मन ही मन दिवाकर और गार्डन को तराजू पर रखकर तोला तो दिवाकर बहुत ही हलका लगा। वह तो केवल कैरियरिस्ट यानी नौकरी आदि मे तरक्की चाहनेवाला लग रहा है, जबकि गार्डन उस श्रेणी का था, जिसमे ईसा से लेकर विलियम तक, क्या कहना चाहिए—ससार को पलटनेवाले, उसमे हवा का एक ताजा झोका लानेवाले, अपने खून से ससार की ससृति की मूलधारा मे गरमी लानेवाले आते है। उसने पत्र के सम्बन्ध मे मा से कुछ नही कहा, यद्यपि मा दिवाकर और भारत की बात सुनना पसन्द करती थी। इधर मा का भारत-प्रेम कुछ बढ गया था। यह प्रेम शायद बाद के मोर्चे के रूप मे था या पता नही क्या रहस्य था। पर मा ने यह स्पष्ट कर दिया था कि मुझे भारत मे मरना नही है, मै इसी देश की मिट्टी मे सोना चाहती हू। अतएव दिवाकर के प्रस्ताव का कोई अर्थ नही होता था। रहा यह कि उसने जो लिखा है कि मै शादी नही कर रहा हू, इससे उसके मन मे कुछ खुशी नही हो रही थी। लगता था कि वह नस ही मर गई थी जो दिवाकर का प्रेम-निवेदन सुनकर थिरकने, लरज़ने, पसीजने लगती थी। दिवाकर की भाषा ही क्यो उसका सारा पत्र अब कितना बुझा हुआ लगता था कि जिसकी रोशनी मे अपना चेहरा तो क्या, उसका चेहरा भी दिखाई नही देता था।

मा एकदम सो गई थी। डाक्टर यदि कह देता कि अब यह ये ठीक है, कोई खतरा नही है, तो वह भी उन असख्य युवतियो मे शामिल हो सकती थी, जो इस समय किसी न किसी रूप मे युद्ध मे भाग ले रही थी। पर डाक्टर कहता था कि अन्त किसी भी समय आ सकता है। शरीर बहुत कमज़ोर है, और जिजीविषा तो बहुत ही कमज़ोर है।

अजीब गत्यवरोध था। वह फिर भी बाहर के कमरे मे जाकर प्रतीक्षा करने

के लिए उद्यत हुई। किसकी प्रतीक्षा ? काहे की प्रतीक्षा ? मा के जाने की प्रतीक्षा ? अहारन ऐसे किसीके एकाएक आने की प्रतीक्षा ? जिससे जीवन सरस नही तो सहनीय हो जाए ! अब लन्दन पर बार-बार बम-वर्षा हो चुकी थी। यहा इस घर पर नही हुई, यह केवल आकस्मिक बात थी।

वह उठकर बाहर के कमरे मे गई, तो देखा कि एक दाढीवाला युवक बैठा हुआ है और वह अहारन की छोडी हुई शराब चुस्किया ले-लेकर पी रहा है। उसे बडा आश्चर्य हुआ, क्योकि युवक सम्पूर्ण रूप से अपरिचित था। पर उसे देखते ही वह युवक उठ खडा हो गया और डाढी के बादलो के अन्दर से मुस्करा-कर बोला—तुम मुझे पहचान नही पा रही होगी। मैं गार्डन हू, विलियम का मित्र। कब्र से निकलकर आया हू।

एलिस के बन मे पहली प्रतिक्रिया यह हुई कि वह आगाह कर दे कि शराब जूठी है, पर कुछ सोचकर वह उस सम्बन्ध मे कुछ बोली नही। इतना ही बोली—अहारन अभी यहा बैठे हुए थे। उनके लडके कोहेन का क्या हुआ ?

गार्डन ने एक घूट मे सारी शराब पीकर कहा—माफ करो, मैंने तुम्हारी शराब पी ली। बहुत प्यास लगी थी, और इन दिनो जैसी-जैसी हालत से गुज़रा हू, उससे अब अपना-पराया, जूठन आदि का कोई विचार नही रहा। केवल अपने को किसी तरह जीवित रखना ही एकमात्र लक्ष्य रहा।

एलिस अब गार्डन को ध्यान से देख रही थी। उसे विशेषकर वह बात याद आ रही थी कि शरीर के ही कारण गार्डन यहूदी प्रमाणित हो गया था। वह सोचते-सोचते कुछ झेप गई और उसने जल्दी से शराब की एक बोतल लाकर उसके सामने रख दी। बोली—बेदर्द होकर पीओ। पता नही कब बम-वर्षा हो और बोतले नष्ट हो जाए। हा, कोहेन का क्या हुआ ? क्या वह नही रहा ?

गार्डन ने चुस्की लेकर कहा—होना क्या था। जैसे गलत तरीके से यहूदी समझे जाने के कारण मैं पकडा गया था, उसी प्रकार यहूदी होने के कारण मेरी मुक्ति भी हुई।

एलिस को बहुत आश्चर्य हुआ, पर गार्डन सामने बैठा हुआ था, इसलिए अविश्वास करने की कोई बात नही थी। बोली—यह कैसे हुआ ?

गार्डन ने थोडी शराब और पीकर कहा—मैं यहा पहले स्काटलैण्ड यार्ड गया, और फिर यहा आया हू। कुछ खाने को भी लाओ, फिर सारी बातें बताऊगा।

—कहकर उसने एक बडा-सा घूट पिया।

एलिस दौडकर गई, और उसने रोटी के टुकडे और आलू के कतले उसके सामने रख दिए, थोडे मक्खन के साथ। गार्डेन उनपर टूटते हुए भूख की पहली ज्वाला शान्त करते हुए बोला—जर्मनो ने जब फ्रास पर हमला किया तो हम लोग जहा कैद थे, वहा से फौज की सख्या घटा दी गई। इस कारण ऐसा मौका लग गया कि एक यहूदी ही हम लोगो का रक्षक रह गया। उसके सम्बन्ध मे किसीको पता नही था कि वह यहूदी है। जर्मन यहूदी तो कुछ न-कुछ पहचान मे आ जाते हैं पर डेन यहूदी साधारण जनता से इस प्रकार घुले-मिले है कि उनका पता ही नही लगता। सैकडो डेन यहूदियो को वहा के ईसाइयो ने अपने घरो मे छिपाकर रखा था। हिटलर के विरुद्ध डेन जनता के विरोध का यह भी एक प्रकार था। उसी यहूदी ने हम लोगो को छोड दिया और फिर वह स्वय भी गायब हो गया। वह शायद 'मोस्साद आलिया बेत' का सदस्य था। कोहेन भी हम लोगो के साथ छूट गया, पर बाहर निकलते ही हम लोगो ने एक-दूसरे से विदाई ले ली, और अपना-अपना रास्ता पकडा। मैं चाहता था कि जल्दी से जल्दी भागू, क्योकि शरीर द्वारा मेरे साथ विश्वासघात के कारण अब मुझे अपने ऊपर विश्वास नही रह गया था। मुझे अपने भाषा-ज्ञान पर इतना विश्वास था कि मैं अपने को जर्मन करके चला सकता था, पर अपने शरीर का क्या करता! इसकी गवाही तो निर्णयात्मक थी। मैने यहा लौटकर स्काटलैण्ड यार्ड मे यह बात बताई, तो वे बहुत हसे। उनकी बातचीत से मालूम हुआ कि वे चाहते है कि मैं इसका फायदा उठाकर 'मोस्साद आलिया बेत' और अन्य ऐसी यहूदी सस्थाओ के विरुद्ध गुप्तचर बनू, जो चुपके से यहूदियो को फिलिस्तीन मे ले जाकर बसा रही है।

कहकर गार्डेन सहसा रुक गया, क्योकि एलिस पहले तो इसी कमरे मे कुछ खाने-पीने की अपेक्षाकृत अच्छी चीजे खोजती रही, पर जब वे नही मिली, तो इगित करके कि चुप रहो, अभी मैं आती हू, भीतर चली गई, और लगभग फौरन ही रोटी के कुछ और टुकडे, मास का एक छोटा-सा टुकडा और प्याज-टमाटर ले आई। उन्हे जैसे-तैसे रखते हुए कहानी-लोभी नन्ही-सी लडकी की तरह बोली—तुमने स्काटलैण्ड यार्ड का अनुरोध मान लिया?

गार्डेन एक बडा-सा लुकमा काटते हुए और जल्दी से निगलते हुए बोला—नही, मैंने यह कार्य स्वीकार नही किया। मैने कहा, मै जिस उद्देश्य से गुप्तचर

विभाग मे शरीक हुआ था, वह बहुत ही भिन्न था। मैं यहूदियो के साथ बन्दी रह चुका हू। मैने सर्वत्र उनकी दुर्दशा देखी। डेनमार्क के लोग यहूदियो के प्रति बडी सहानुभूति रखते थे। पर पोलैण्ड तथा जर्मनी मे स्थानीय अधिवासी भी, जो शायद पुश्तो से पडोसी के रूप मे रहते आए थे, मौका पडने पर उनसे कन्ना काट गए। जर्मनी की तो बात ही नही, बाकी हालैण्ड, बेल्जियम, पोलैण्ड आदि जो देश है उनमे भी सर्वत्र उनपर जो विपत्ति आई, वह उन्हीकी रही।

एलिस को यहूदियो से विशेष सहानुभूति नही थी, फिर भी उसे गार्डन का निर्णय ठीक लगा। उसने कहा—तुम खा लो, फिर मै सुनूगी।

गार्डन थोडी देर तक आज्ञाकारी शिशु की तरह किसी तरफ न देखते हुए खाता रहा। फिर बोला—कहते हे कि जैसे बैंक मे रुपया हो सकता है, उस तरह नीद भी जमा हो सकती है। मेरा खयाल है कि उसी तरह भूख भी जमा हो सकती है। मै जो हफ्तो की भूख अब मिटा रहा हू।—कहकर उसने एक घूट शराब पीकर कहा—बन्दी दशा से मुक्त होकर भी मैं निश्चिन्त नही हो सका, क्योकि मन मे यह जो भय समा गया था कि गिरफ्तार होते ही यहूदी प्रमाणित हो जाऊगा, इससे मेरे स्नायु और रगपट्ठे कमजोर पड गए थे। मरने के लिए तैयार होने से ही हर प्रकार की मृत्यु समान रूप से स्वागत योग्य नही हो जाती, यह मैंने अनुभव किया। और कुछ भी हो, मैं यहूदी-रूप मे मरने के लिए तैयार नही था। मैं भागने की सोचने लगा।

एलिस ने प्रतिवाद करते हुए कहा—यहूदी कहकर मारा जाना किस प्रकार अन्य रूपो मे मारे जाने से शहीदत्व की दृष्टि से कम मूल्य रखता है, यह मेरी समझ मे नही आया। हिटलर के विरुद्ध लडाई का वह भी एक अग है, यह आज न माना जाए, बाद को माना जाएगा।

गार्डन बोला—माफ करना, मिस, मैं तुमसे सहमत नही हो सकता। शायद गहराई से सोचू तो तुम्हारे मत पर पहुच जाऊ, पर हमारी स्थिति बडी अद्‌भुत रही। जब तक बन्दी रहा, तब तक साथी यहूदी यह समझते रहे कि मैं डर के मारे अपना यहूदित्व अस्वीकार कर रहा हू। उनकी दृष्टि मे मेरा यहूदित्व सुनिश्चित था और मैं केवल मारे जाने के डर से उन व्यवहारो से, जैसेकि सामूहिक यहूदी ढग की प्रार्थना आदि से बचता था, ताकि अधिकारियो के सामने मेरा यहूदित्व प्रमाणित न हो।

—क्या कोहेन भी तुमको यहूदी समझता था ?

—मैं कह नही सकता, पर अग्रेज होने के नाते वह मुझसे सहानुभूति रखता था, और शायद उसीके कारण मै छूट सका, नही तो दूसरे लोग तो मुझे काली भेड समझकर शायद ही छुडाते। कुछ भी हो, मुझे बडा दुख है कि मै अब यूरोप नही जा सकूगा और किसी प्रकार का हितकर कार्य नही कर सकूगा।

एलिस फौरन ही बोली—तुम्हारा यह सोचना व्यर्थ है क्योकि अब यही जोखिम उठाने के उतने ही मौके आएगे, जितने कि वहा, जर्मनी के अन्दर आ सकते थे। स्पेन मे जो लडाई चालू हुई, अब वह ब्रिटेन की भूमि पर, या सच कहा जाए तो इग्लिश चैनल की लहरो पर लडी जाएगी।—कहकर उसने मुस्कराते हुए कहा—पर बायरन से लेकर विलियम तक, सबको विदेशी भूमि पर जाकर लडने का एक शौक-सा रहा है, वह यहा रहकर लडने से पूरा नही हो सकेगा। कुछ लोग कर्तव्य को तभी करणीय और वरणीय मानते है, जब वह रोमास का घूघट पहन-कर सामने आए, पर इससे वास्तविकता नही बदलती। अपने-अपने देश मे लडने के लिए कम लक्ष्य थोडे ही है।

गार्डन अब खा-पी चुका था, बोला—लगता है कि इग्लैण्ड मे भी विचारो का रेजिमेटेशन काफी हद तक हो चुका है, क्योकि यही बात स्काटलैण्ड यार्ड के उस अधिकारी ने कही, और यही बात तुम कह रही हो। युद्ध मे यह शायद अनिवार्य है। रेजिमेटेशन की वे ही लोग हसी उडा सकते है, जिनपर कभी सकट नही आया। तुम्हारी सूचना के लिए मैं बताऊ कि मैंने होम गार्ड्स मे अपना नाम लिखा दिया है, और मुझे ड्यूटी भी दे दी गई है। पर इससे यह न समझो कि मेरा मन शान्त है, या मैं बिना कारण रोमास के अगिया बैताल को पछियाता फिर रहा हू। होम-गार्ड तो सभी बन सकते है, मैं चाहता था कि मेरे भाषा-ज्ञान का कुछ अन्य उपयोग होता। जोखिम से तो मै डरता नही हू, पर मेरे शरीर ने मुझे बडा धोखा दिया।

एलिस ने फिर से गार्डन को सिर से पैर तक देखा। फिर शरमाकर सिर नीचा कर लिया। बोली—मैं भी कुछ करना चाहती हू। मा तो कहती है कि मैं कुछ कर लू, पर मन नही मानता। कैसे क्या करू, यह समझ मे नही आता।

गार्डन सारा दिन वही रहा और उसने धीरे-धीरे वह सारी कहानी बताई, जिसे वह भागने मे भुगत चुका था। बन्दी दशा से छूटने के बाद वह जर्मनी पहुचा क्योकि डेनमार्क मे रहना खतरे से खाली नही था। यद्यपि डेनमार्क के निवासी

हिटलर के अधीन हो गए थे, पर हर डेन के हृदय मे जर्मन-विद्वेष भडक रहा था, इसलिए यत्र-तत्र, इक्का-दुक्का जर्मन-वध का कार्यक्रम जारी था। यह उस हालत मे, जबकि हिटलरशाही मे जर्मन मारना बहुत भारी अपराध था। एक जर्मन की मृत्यु के बदले दस डेनो का मारा जाना बिलकुल साधारण बात थी। कही-कही बदला इससे भी भयकर रूप मे लिया जाता था, इसलिए पराजित देश के लोगो ने यह तकनीक निकाली थी कि जर्मन मारकर उसकी लाश गायब कर दी जाती। गार्डन पर यह विपत्ति आ सकती थी क्योकि वह भाषा से जर्मन लगता था। उसे मारना और भी सरल इसलिए था, कि वह स्वय छिपता फिर रहा था। इसीलिए पहला मौका मिलते ही वह डेनमार्क से जर्मनी के अन्दर दाखिल हो गया।

वहा से वह रात को अन्धकार की आड मे आगे बढता रहा। जरा भी पत्ता खटकता, तो वह फौरन दुबक जाता। खाने के लिए जो भी चीज हाथ के पास मिलती, उसे वह खा जाता। दाढी बढी हुई थी, कपडे फट चुके थे, इसलिए जब यदि कोई देख लेता, तो ऐसा व्यवहार करता मानो वह कोई पागल हो। देख लिए जाने पर भागने की चेष्टा न करके वह उस व्यक्ति या उन व्यक्तियो की तरफ बढ जाता था, और उनसे गिडगिडाकर भीख मागने लगता था।

जब डच सेना ने हथियार डाल दिए, तब एक मौका अपने को बचाने का और बढ गया, क्योकि मौका पडता तो अपने को डच बता देते। डच भाषा भी कुछ आती थी। इसके बाद तो एक के बाद एक बेल्जियम के शहरो का पतन होने लगा, तब तो अपना फ्रेंच-ज्ञान भी काम आया, और गार्डन अपने को मौका पडने पर बेल्जियम का रहनेवाला बताने लगा।

सुनते-सुनते एलिस को बडा आश्चर्य हो रहा था। यो तो वह अखबार मे जर्मन सेना की जययात्रा-सम्बन्धी सारी बाते पढ चुकी थी, और बी० बी० सी० से भी सुन चुकी थी, पर एक प्रत्यक्षदर्शी के मुह से सारा ब्योरा सुनना बहुत ही अद्भुत लग रहा था। उसने पूछा—जर्मन स्त्रियो का क्या हाल रहा?

—जर्मन स्त्रिया सम्पूर्ण रूप से पुरुषो के साथ थी। एक ऐसा मौका आया, जब भीख मागते हुए मैंने वह दृश्य देखा, जिसे मैं कभी भुला नही सकता। यह रूर की बात है। वहा से आक्रमणकारी सेना फ्रास की ओर जा रही थी। जर्मन स्त्रिया पुलो तथा सडको पर कतार बाधकर इन सैनिको को विदाई दे रही थी और उनका जयकारा लगा रही थी। मैं भी उसमे शरीक हो गया। मुझे तो ऐसा लगा कि सब

स्त्रिया दिग्विजय के लिए गए हुए इन सैनिको का इस प्रकार से अभिनन्दन कर रही थी मानो वे कह रही हो कि तुम लोग लौटकर आओ, तो हमारे साथ सोना। स्त्रिया भी उसी हद तक दोषी है जिस हद तक जर्मन पुरुष। रहा यह कि उन्हे एक शक्तिशाली प्रचार-विभाग द्वारा पागल बना दिया गया है, यह दूसरी बात है। मैने सेना के साथ जनता के सहयोग का एक और दृश्य देखा, जो बहुत अद्भुत था। मै इसी तरह भीख मागता-खाता हुआ, और पागल बना हुआ हनोवर के पूर्व मे एक जगह पहुचा, जहा एक हैण्डले पेज ब्रिटिश हवाई जहाज गिरा पडा था। इसे हवाई जहाज़ गिराने की बन्दूक से गिरा लिया गया था। पाच मे से चार चालक, जो पैराशूट से उतरे थे, पकड लिए गए थे, और एक की खोज जारी थी। मुझसे कहा गया कि तुम भी खोजो। खैरियत यह है कि मुझे उन लोगो ने पाचवा व्यक्ति नही समझा, पागल ही समझा। मेरी जर्मन ने मेरी रक्षा की। कोई विदेशी इतनी सुन्दर और त्रुटिहीन जर्मन बोल सकता है, यह किसीको विश्वास होता, तो मैं फौरन पकड लिया जाता। मैं पागल बना हुआ उस गिरे हुए हवाई जहाज़ के पास गया, तो देखा कि जर्मन हवाई सेना के मिस्त्री उस हवाई जहाज के वे हिस्से निकालने मे लगे हुए थे, जो ठीक थे, या मरम्मत किए जा सकते थे। यहा मैने देखा कि जर्मन किसान तथा उनकी स्त्रिया उन मिस्त्रियो के साथ पूरा सहयोग कर रही हैं, और जिस भी चीज़ की उन्हे ज़रूरत होती है, पहुचा रही है। इसके अलावा यह भी देखा कि किस प्रकार किसान सब तरह से नात्सी सेना को सहायता पहुचा रहे थे। खेतो मे सिलाई की पुरानी मशीनें, हल, सग्गड आदि इस प्रकार से बैठाए हुए थे कि ऊपर को तोप की नालिया-सी दिखाई पड रही थी, ताकि हवाई जहाज़ से वे मशीनगन मालूम हो। यह एक-दो मील नही, बल्कि सैकडो मीलो तक था। ऐसा करना केवल सैनिको के बस का नही था। जनता के पूर्ण सहयोग से ही यह काम हो सकता था।

एलिस ने यह पूछा—एक बात समझ मे नही आती कि जर्मन सेना इतना जल्दी बेल्जियम और फ्रास कैसे पार कर गई !

गार्डन ने कहा—इसका कारण यह था कि हिटलर ने हवाई सेना का पूर्ण उपयोग किया और पैराशूट से पहले ही हवाबाज़ो को पुलो आदि के पास उतार दिया, ताकि उन्हे नष्ट करने का मौका न मिले। इस प्रकार उन्हे बना-बनाया रास्ता और पुल आदि मिल गए। इस सम्बन्ध मे एक मज़ेदार बात यह सुनने मे

आई कि हालैण्ड मे पुल आदि नष्ट नही किए गए, और न सडके ही डाइनामाइट की गई, पर बेल्जियम मे बहुत-सी सडके तोड डाली गई थी तथा कई पुल उडा दिए गए थे।

थोडा दम लेकर गार्डन ने बताया—मैं ज्यो-ज्यो जर्मनो द्वारा विजित इलाके के अन्दर से आने लगा, त्यो-त्यो मेरा आना और आसान हो गया, क्योकि मैं तो खैर बना हुआ पागल था, पर अब सैकडो व्यक्ति ऐसे मिलने लगे, जो सचमुच पागल नही तो, अर्ध-पागल हो चुके थे। जर्मनो के आगमन की बात सुनकर लोग घर-गाव छोडकर जहा भी जगह मिली, छिप जाते थे, पर जब जर्मन हमला हो चुकता तो वे अपने गाव लौटते। अक्सर उन्हे अपने घरो के बदले मे खण्डहर और कोयले मिलते। घर का सारा सामान कोयला बन चुका होता था। ऐसे मे यदि वे पागल हो जाते तो कोई आश्चर्य की बात नही है। मुझे इन लोगो के चेहरे देखकर बडा दु ख होता था, पर अफसोस कि मैं कुछ कर नही सकता था। यह समझ मे नही आ रहा था कि इतनी बडी फौज कैसे इतनी जल्दी हार गई। क्या स्पेन मे जो कुछ हुआ, वही सारे ससार मे होगा?

उसने प्रश्न किससे पूछा? एलिस से? अपने से? अन्तरिक्ष से? जब कही से कोई उत्तर नही आया, तो वह इसी तरह अपने सस्मरण सुनाता रहा, जिसे सुनकर मन करुण-रस से गीला हो-हो जाता था।

एलिस जानना चाह रही थी कि इनमे से कौन ऐसी बात है, जिसका स्काटलैण्ड यार्ड उपयोग कर सकती है। यह तो समझ मे आया कि पैराशूट से उतरनेवाले शत्रु सैनिको से होशियार रहना चाहिए। किसानो और साधारण जनता का पूर्ण सहयोग लेना चाहिए, जिसकी ब्रिटेन मे कम से कम कोई कमी नही थी। पर गार्डन ने और क्या काम किया? अवश्य वह जान बचाकर भाग आया, अपनी आखो से डेनमार्क, जर्मनी और फ्रास की हालत देख आया। हो सकता है कि यह व्यक्ति की दृष्टि से बहुत बडी वीरता हो, पर यह वीरता केवल ऐडवेंचर या वैयक्तिक साहसिक कार्य-मात्र है, उससे देश को यानी स्काटलैण्ड यार्ड को क्या लाभ है?

शायद गार्डन यह समझ गया, इसलिए उसने इधर-उधर की बातो के वर्णन के बाद बताया—मैं अब की बार कोई विशेष खबरे नही ला सका। असल मे जो खबरें मिलती भी गईं, वे इतनी जल्दी पुरानी पडती गई कि अब उनका कोई अर्थ

नही है, सिवा इसके कि और साधनो से जो खबरे मिली हैं, मैं उनकी पुष्टि करू। एक नमूना बता रहा हू—महायुद्ध का प्रथम मसविदा सेनापति हाल्डेर के द्वारा प्रस्तुत किया गया था, पर वह १६१४ की आक्रमण-योजना से बहुत कुछ मिलता था। ऐसे समय मे सेनापति फान मानस्टाइन ने एक दूसरा कार्यक्रम बनाया, जिसमे प्रधान हमला आर्देन के जरिये से होनेवाला था। इसके बाद म्यूज नदी पार करके हमला जारी रहकर समुद्र तक पहुचनेवाला था। सबने देखा कि यह योजना बहुत अच्छी है, पर पुराने सेनापतियो ने यह पसन्द नही किया कि अपेक्षाकृत नया सैनिक अधिकारी मानस्टाइन अधिक प्रसिद्ध हो, पर वह शायद हिटलर तक पहुच चुका था, और हिटलर ने उसकी योजना अपना ली थी। कुछ भी हो जब मानस्टाइन की योजना ही आक्रमण-योजना के रूप मे मान ली गई, तो भी सेनापतियो ने ऐसा षड्यन्त्र किया कि मानस्टाइन को कोई बडी कमान नही दी गई। उसीकी योजना, और उसीको बडी कमान नही मिली। सेनापतियो के इस आपसी ईर्ष्या और विद्वेष का मित्रपक्ष के द्वारा बहुत अच्छा उपयोग किया जा सकता था, पर जिस गति से घटनाए घटित हो रही थी, उसमे नही। रिपोर्ट देते-देते रिपोर्ट बासी होकर उसमे कीडे पड जाते थे।

गार्डन ने कुछ रुककर कहा—एक बात और लो, यदि पहले से ही विरोध तगडा होता, तो पता नही क्या होना। मुझे विश्वस्त सूत्र से मालूम हुआ कि सेनापति क्लाइस्ट के तोपखाने मे हर बैटरी पर पचास राउण्डो से ज्यादा नही था। इसका कारण यह है कि सडक पर बहुत भीड थी, और गोला-बारूद की गाडिया पीछे रह गई थी। इसके अलावा यह भी मालूम हुआ कि रास्ते मे जो फ्रेंच पिल बाक्स या गढनुमा छोटी गुमटिया मिली, उनमे टैंकमार मशीनगनें नही थी। नतीजा यह है कि जर्मन टैंक आसानी से अपना रास्ता बनाते धडधडाते हुए चले आए।

इन बातो को बताते-बताते गार्डन ने देखा कि एलिस जमुहाई ले रही है, और वह समझ गया कि सैनिक सूचनाओ मे एलिस को कोई विशेष दिलचस्पी नही है। स्पष्ट था कि वह जो कुछ सुन रही थी, उससे निराशा ही बढती जा रही थी। थोडी देर सुनते-सुनते वह पूछ भी बैठी—तो क्या अन्त तक बेईमानो की ही जीत होगी ? इटली ने भी लडाई छेड दी, शायद जापान भी लडाई मे कूद पडे।

गार्डन के मन मे कुछ ऐसी शकाए ही किलोले कर रही थी, पर उसने सोच-

कर कहा—यदि शत्रुओ की सख्या बढ रही है, तो हमारी भी सख्या बढेगी। रूज़-बेल्ट ने पहले हवाई जहाज़ बना-बनाकर मित्रपक्ष को देने की बात कही, और उसके बाद मानो मुसोलिनी का जवाब देते हुए उन्होने कहा कि मित्रपक्ष की अधिक से अधिक सहायता दी जाएगी। मुझे विश्वास है कि अमेरिका भी लडाई मे कूदने के लिए बाध्य होगा। मैं समझता हू कि इतिहास की पुनरावृत्ति होने जा रही है। जीत मित्रपक्ष की होगी, इसमे कोई सन्देह नही। पर क्या वह जीत राल्फ फाक्स, विलियम की भी होगी ? प्रश्न यह है।

अकस्मात् एलिस ने देखा, और साथ ही साथ गार्डन ने देखा, कि श्रीमती टामस कुछ आड लेकर खडी है। हाफ रही है। उनके बाल बिखरे हुए है, चेहरे पर झुर्रिया बहुत स्पष्ट हो गई हैं, जैसे हड्डियो तक पहुच गई हो, आखे अजीब तरह से फैली हुई और रक्तहीन लग रही थी। जैसे वे युद्धपीडित धरती माता का प्रतिरूप हो।

एलिस यन्त्रचालित की तरह उठी, और उसने जाकर मा को पकड लिया, क्योकि उसे लग रहा था कि वह गिर पडेगी। बोली—मा, तुम यहा कैसे आईं ! डाक्टर ने तो तुम्हे हिलने से भी मना किया है।...

मा ने जैसे बेटी की बात सुनी ही नही, पर उसका सहारा लेकर एक आराम-कुर्सी पर बैठ गई, और गार्डन को, जो इस बीच उठ खडा हुआ था, बैठने की अनुमति देते हुए बोली—इतिहास की पुनरावृत्ति हो रही है ! क्या खाक पुनरावृत्ति हो रही है ! केवल पुनरावृत्ति होती, तो उतनी खतरनाक न होती, पर अधिकतर ध्वस के साथ पुनरावृत्ति हो रही है। प्रथम महायुद्ध के बाद द्वितीय महायुद्ध, और फिर शायद तृतीय महायुद्ध होगा, जिससे साबित होगा कि मनुष्य एक यन्त्र बनानेवाला प्राणी अवश्य है, पर है वह बडा ही बेवकूफ !

गार्डन कुछ कहने जा रहा था पर मा ने उसे रोकते हुए कहा—अच्छी बात है, अमेरिका आएगा, युद्ध मे मित्रपक्ष की जीत होगी, पर जहा से तुमने शुरू किया, यानी स्पेन मे कुछ परिवर्तन होगा ? क्या वहा फिर प्रजातन्त्र स्थापित होगा ? और हो भी गया, तो बट्टेखाते मे जो लाखो परिवार बरबाद हो गए, उनका क्या होगा ? तुम्ही अभी बता रहे थे न, कि शरणार्थी लौटे तो उन्हे खण्डहर और कोयला मिला ? बता रहे थे न ?

एलिस ने देखा कि मा बहुत उत्तेजित है। मा के ही कारण तो वह कुछ कर नही पा रही थी, पर मा का कहना ठीक है कि क्या एक परिवार से एक बलिदान

यथेष्ट नही है। गार्डन और एलिस मिलकर मा को किसी तरह फिर बिस्तरे पर ले गए। पर वे समझ गए कि मा को लेटा देना मा के प्रश्नो का उत्तर नही था।

२३

जब से स्वामी रामानन्द अमिताभ से मिलकर लौटे थे, तब से दल के लोगो की कार्यशीलता बहुत बढ गई थी। जो काम पहले से चालू थे, वे तो चलते ही रहे, उनमे तेज़ी आ गई। पर्चेबाज़ी एकाएक बहुत बढ गई। अब लगभग नियमित रूप से कभी 'रणभेरी', कभी 'बिगुल', कभी 'अग्रदूत', जिस नाम से भी जब सुविधा होती, ब्रिटिश साम्राज्य के विरुद्ध क्रान्ति करने के लिए लोगो को प्रोत्साहित करने-वाले पर्चे प्रकाशित होने लगे।

युवको और युवतियो मे मर मिटने और कुछ कर जाने के अधैर्य की बात सुन-कर अमिताभ ने मुस्कराकर स्वामी रामानन्द से कहा था—हा, यह लगन ऐसी ही है, इसमे प्रतीक्षा बहुत अखरती है। मैं ही हू, कि वर्षों से धैर्य के साथ वृक्ष बढने और फल लगने की प्रतीक्षा कर रहा हू। आदोलन मे विलम्ब के लिए महात्मा और काग्रेस को गालिया देना व्यर्थ हे—उसी प्रकार जैसे किसान आकाश को गालिया दे कि बादल क्यो नही आते। जब हम वर्षा के बिना क्राति का बीज बो ही नही सकते, तो हमे प्रतीक्षा करनी पडेगी। बादल तो अपने नियम से, और अपने वक्त से आएगे।

इसीलिए दोनो नेताओ ने दिमाग खपाकर यही तय किया था कि युवशक्ति (इसमे युवक-युवती दोनो की शक्तिया आ जाती है) को लगाए रखने के लिए यह आवश्यक है कि प्रचार-कार्य तेज़ किया जाए। यो तो पहले भी जब-तब गुप्त पर्चे प्रकाशित होते थे, पर वे किसी नियम से प्रकाशित नही होते थे। अब 'रणभेरी', 'बिगुल' और 'अग्रदूत' लगभग नियमित रूप से प्रकाशित होने लगे। इनमे से प्रत्येक पर्चे का अपना चरित्र था।

'रणभेरी' मे महात्मा और काग्रेस को गालिया दी जाती थी, और यह कहा जाता था कि व्यर्थ के वाद-विवाद, हिसा-अहिसा की बाल की खाल निकालने मे बहुमूल्य समय निकाला जा रहा है, और यदि पहले महायुद्ध की तरह दूसरा महा-

युद्ध भी बिना कुछ किए-कराए हाथ से निकल गया, तो इसकी सारी जिम्मेदारी महात्मा और काग्रेस पर होगी। बार-बार ऐसे मौके नही आते। देश उनकी ओर टकटकी बाधकर देख रहा है, पर पदलोलुपता के कारण काग्रेस क्राति की ओर नही बढ पा रही है।

'बिगुल' मे इसके विपरीत जनता से यह कहा जा रहा था, कि नेता तभी तक नेता हैं, जब तक कि वे नेतृत्व दे, यदि वे किसी कारण से नेतृत्व नही देते, या नही दे पाते, तो जिस प्रकार से आगे बढनेवाली सेना कायर और बुजदिल लोगो को पीछे छोडकर, यहा तक कि उन्हे जरूरत पडने पर गोली मारकर आगे बढ जाती है, उसी प्रकार जनता को अब पहले के नेताओ को पैरो के नीचे रौदकर आगे बढ जाना चाहिए। समझौता-विरोधी सम्मेलन ने उसके लिए जनता का आवाहन दिया है। अब कोई किसीका नेता नही है। प्रत्येक व्यक्ति अपना नेता है। कुछ लोगो की बुजदिली के लिए देश इस स्वर्णिम अवसर को अपने हाथ से जाने नही दे सकता। सच तो यह है कि क्राति शुरू हो चुकी है। अब तो उसे आगे ले जाने की बात है। प्रत्येक व्यक्ति को इस महान कार्य मे किसी न किसी प्रकार हाथ बटाना है।

'अग्रदूत' मे यह कहा जा रहा था कि क्राति तो एक निरन्तर चलनेवाली प्रक्रिया है। कई बार उसका लौहमय रथ नेताओ की छाती पर से निकल जाता है, क्योकि क्राति का रथ समाज मे मौजूद असगतियो के घर्षण से अपने-आप चलता जाता है। क्राति तो उसी समय शुरू हो चुकी थी, अब १८५७ मे मगल पाण्डे ने गोली दाग दी थी। इस बीच चाफेकर, खुदीराम, कर्तारसिंह, अशफाकउल्ला, बिस्मिल, भगतसिंह, चन्द्रशेखर आज़ाद और ज्ञात तथा अज्ञात जाने कितने शहीद और वीर हुए, और उनके ज़रिये से, उनके रक्त से अपने पहियो को तैलाक्त करके क्राति का रथ आगे बढा। अब उसकी यात्रा का अतिम पर्व है। अब एक ही धमाके वाले धक्के मे बेडा पार हो जाएगा। रेल की पटरिया उखाडकर तथा तार काटकर, हर तरीके से सरकारी प्रशासन मे बाधा पहुचाकर ऐसी स्थिति बना देनी चाहिए जिससे प्रशासन असम्भव हो जाए। इसके बाद हर जगह पर क्रातिकारी सरकार कायम की जाए।

जिस अनुपात से पर्चे निकलने लगे थे, पुलिस भी उसी अनुपात से सतर्क हो गई थी। पहले ये पर्चे निकलते, और दीवारो पर चिपका दिए जाते, पर पुलिसवाले

टिड्डीदल की तरह फौरन ही पहुच जाते और उन्हे चर जाते। इसलिए अब दीवारो पर पर्चे कम चिपकाए जाते। अब वे जनता मे अच्छी तरह बाट दिए जाते। कई बार तो पर्चे बट जाते, और पुलिसवालो को कानो-कान खबर ही नही लगती। पर्चे बाटना उतना कठिन नही था, जितना कि पर्चे छापना। इसीमे युव-शक्ति का पूरा परिचय मिल रहा था। पहले हर शहर मे एकाध पेशेवर छापेखाने ऐसे थे, जो कुछ अधिक दाम रखवाकर पर्चे छाप देते थे, पर अब यह तरीका असम्भव होता जा रहा था, इसलिए छापेखाने भी उसी तरह से कार्य कर रहे थे जैसे बम बनाने के गुप्त कारखाने। लेख कही पर लिखे जाते थे, कही दूसरे शहर मे उन्हे कम्पोज किया जाता। फिर मौका देखकर कही किसी प्रेस मे छाप लिया जाता था। ऐसे कई छापेखाने थे, जिनमे मालिको को भी पता नही होता था कि उनके छापेखानो मे क्रान्तिकारी पर्चे छपते है। प्रेस के चालू काम के अनुसार टाइप और फर्मा काम मे लाया जाता था, और जबकि मालिक यह समझते थे कि उनका आर्डरी काम हो रहा है, तब क्रान्तिकारी पर्चे छप जाते थे। इसमे सभी तरह के क्रान्तिकारी और गरमपथी पूरा सहयोग दे रहे थे।

धनजय, शिशु आदि सभी लोग खुश थे। सभीको अपना-अपना जौहर दिखाने का मौका मिल रहा था। केवल यही नही, उन्हे यह दिखाई पड रहा था कि लोग पर्चों को पढकर बहुत प्रभावित होते जा रहे है। शिशु ऐसे लोग, जो यह भूल ही गया था कि कभी वह कविता करता था, अब फिर से क्रान्तिकारी ढग की जोश दिलानेवाली कविता लिखने लगे थे, और ऐसे कितने ही लोग अपनी भुथरी साहित्यिक प्रतिभा पर फिर से धार चढाने लगे थे। कई लोग जो केवल क्रान्ति के प्रचार के हेतु कविता-सुन्दरी से आखे लडाते थे, और अब लक्ष्य भूलकर कोमल-कान्त पदावली के उपासक बन गए थे, अब फिर क्रान्तिकारी कविता लिख रहे थे।

इन सब कार्यों के कारण धीरे-धीरे जो परिस्थिति बनती जा रही थी, उसके आईने मे यह स्पष्ट दिखाई पडने लगा था कि महात्माजी चाहे कितनी भी देर करे, पर आन्दोलन रुक नही सकता। सुभाष बाबू ने उधर हालवेल मानूमेण्ट के विरुद्ध अपना आन्दोलन शुरू कर दिया था और उसमे गिरफ्तार भी हो चुके थे।

उनकी गिरफ्तारी पर गाधीजी ने, जो हर बात पर कोई न कोई वक्तव्य देते

थे, कोई वक्तव्य नही दिया। इसपर 'रणभेरी', 'बिगुल' और 'अग्रदूत' आदि मे उनका तिरस्कार किया गया। तब गाधीजी ने 'हरिजन' मे एक लेख लिखा, जिसमे उन्होने कहा—यह सच है कि सुभाष बाबू काग्रेस के भूतपूर्व राष्ट्रपति है। लगातार दो बार चुने गए। उनका रिकार्ड बडे त्यागो का रिकार्ड है, और वे जन्मजात नेता है, पर केवल इन गुणो से ही उनकी गिरफ्तारी का प्रतिवाद करना ज़रूरी नही हो जाता। कार्यसमिति उनकी गिरफ्तारी पर उस हालत मे ही ध्यान देने के लिए बाध्य होती, जबकि दोष-गुण का लेखा-जोखा देखकर इसका तिरस्कार करना ज़रूरी हो जाता। सुभाष बाबू ने काग्रेस की अनुमति से कानून की अवज्ञा नही की, और साथ ही उन्होने खुल्लमखुल्ला और साहस के साथ कार्यसमिति की भी अवज्ञा की है। यदि वे कोई छोटा-मोटा साइड-ईशू लेकर इस समय लडाई लडने की इजाज़त मागते, तो मुझे विश्वास है कि कार्यसमिति उन्हे इसकी इजाज़त न देती। इससे कही अधिक महत्त्वपूर्ण सैकडो समस्याए मिल सकती है, पर इस समय देश का ध्यान एक ही समस्या पर केन्द्रित है। उसी समस्या पर उपयुक्त समय मे डाइरेक्ट ऐक्शन करने की तैयारिया चालू हैं। इसलिए यदि कार्यसमिति इस सम्बन्ध मे कुछ करती, तो वह अस्वीकृतिमूलक ही हो सकता था। समिति ऐसा करना नही चाहती थी। जिस युवक ने मुझे प्रतिवाद लिखकर भेजा है उसकी मैं अवज्ञा कर सकता था, पर मैंने अनुभव किया कि इस गिरफ्तारी को समुचित परिप्रेक्ष्य मे रखने से कोई हानि नही हो सकती। सुभाष बाबू की तरह बडे आदमी की गिरफ्तारी कोई मामूली बात नही है, पर सुभाष बाबू ने अपनी युद्ध-सम्बन्धी योजना सोच-समझकर सामने रखी है। वे समझते है कि उनका तरीका ही सर्वोत्तम है। वे ईमानदारी से सोचते है कि कार्यसमिति का तरीका गलत है, और विलम्ब की नीति से कुछ लाभ न होगा। वे देर के कारण अधीर थे।...

इसपर 'रणभेरी' ने महात्मा को गालिया देते हुए कहा—उन्होने यह जो समझ रखा है कि देश को नेतृत्व देने का सारा ठेका उन्हे ही प्राप्त है, सो यह गलत है। जब लडाई छिड गई है, तो उस समय कानूनी दाव-पेंच का आश्रय लेना, और अपने को सारे नेतृत्व का ठेकेदार जताना, और फिर भी आगे बढने से इन्कार करना बडी ही दूषित मनोवृत्ति का परिचायक है। इतिहास इसके लिए कभी गाधी या काग्रस को क्षमा नही करेगा। लडाई मे तो वही वीर-बाकुरा समझा जाता है, जो आगे बढकर दुश्मन को ललकारकर उससे लोहा लेता है।

'बिगुल' ने इसी विषय पर लिखा—असली बात यह नही है कि सुभाष बाबू ने काग्रेस का कोई नियम तोडा या नही तोडा, जिसे गाधीजी बहुत महत्त्व दे रहे हैं, असली बात यह है कि जिस समय जनता का हर व्यक्ति साम्राज्यवाद से सग्राम करने के लिए तडप रहा है (इसमे हज़ारो काग्रेसी भी है), उस समय कौन देश को मार्ग दिखाने मे सफल हो रहा है ? सुभाष बाबू ने भी काफी देर कर दी, क्योकि उन्होने समझौता-विरोधी सम्मेलन के बाद ही सग्राम नही छेडा, वे कलकत्ता कार्पोरेशन के टुच्चे झगडो मे पड गए, और उन्होने हालवेल स्मारक के विरुद्ध जो आन्दोलन उठाया है, किसी न किसी प्रकार का सग्राम होने पर भी वह ऐसा केन्द्र नही है, जिसके इर्द-गिर्द अखिल भारतीय आन्दोलन हो सके। गाधीजी को चाहिए कि वे कानूनी झगडो मे उलझकर मनमानी न करे, और काग्रेस को सग्राम करने दे, जो उसका अखिल भारतीय साम्राज्य विरोधी मोर्चा होने के कारण जन्म-सिद्ध अधिकार है।

'अग्रदूत' ने लिखा—यह तो बहती गगा है, जो भी चाहे, इसमे हाथ धो ले। सुभाष बाबू ने अपना अर्घ्य इसे अर्पित कर दिया, पर क्राति की देवी भूखी है, और वह एकसाथ सैकडो बलिदान मागती है। सुभाष बाबू ने सग्राम का नारा अवश्य दिया, पर उन्होने हालवेल स्मारक के विरुद्ध जिस प्रकार का आन्दोलन किया वह सडी-गली पुरानी परिपाटी के अनुसार है। इस समय आन्दोलन का उद्देश्य गिरफ्तार होना उतना नही, जितना गिरफ्तार करना होना चाहिए। अब हम दबाव-राजनीति के छिछले पानी से निकलकर क्रान्तिकारी राजनीति के महासागर मे पैठ चुके है। सत्याग्रह का भी इसमे स्थान है, पर स्मरण रहे कि उद्देश्य राष्ट्रशक्ति पर कब्ज़ा करना है, न कि समझौते के मायाजाल मे फस जाना।

इस प्रकार इन पत्रो ने अपने-अपने ढग से उस समय भी लिखा, जब जुलाई के अन्त मे अखिल भारतीय काग्रेस कमेटी की पूना बैठक ने कार्यसमिति के प्रस्ताव का अनुमोदन कर दिया। इस प्रस्ताव मे यह कहा गया था कि काग्रेस स्वतन्त्रता-सग्राम मे अहिंसा के सिद्धान्त पर अटल रूप से कायम है, पर वर्तमान परिस्थिति मे यह घोषणा करने के लिए तैयार नही है, कि भारत की राष्ट्रीय प्रतिरक्षा के मामले तक इस नीति को प्रसारित किया जाए।

इसपर 'रणभेरी', 'बिगुल', तथा 'अग्रदूत' के सम्पादक और लेखक बहुत विपत्ति मे पड गए, क्योकि अब काग्रेस-सगठन एक हद तक अहिंसा के सिद्धान्त को त्याग

देने पर भी साम्राज्यवाद का सम्भव समर्थक और युद्ध प्रयास मे सहायता पहुचाने के लिए लालायित रूप मे सामने आ चुका था, जबकि गाधीजी, जिन्हे 'रणभेरी', 'बिगुल' और 'अग्रदूत' बराबर प्रतिक्रान्ति के प्रतीक के रूप मे चित्रित करते अघाते नही थे, अब एकमात्र सम्भव क्रान्तिकारी के रूप मे दिखाई दे रहे थे।

आनन्दकुमार पूना गए थे, और वे उन सैतालीस व्यक्तियो मे थे जिन्होने काग्रेस के प्रस्ताव के विरुद्ध वोट दिया था। अब तो उक्त क्रान्तिकारी पत्रो के सम्पादको के लिए बडी कठिनाई का सामना था। जल्दी-जल्दी दल के लेखक और बुद्धिवादी मिले। वे आपस मे मिले, दूसरे वामपथियो से मिले, और उन्होने अपने अगले अको मे बिल्कुल स्वर बदल दिया। अब इस आधी के बाद जो चित्र उभर-कर सामने आया, वह यो था कि गाधीजी बावजूद अपनी हास्यास्पद हद तक गई हुई अहिंसा के क्रान्तिकारियो के बहुत करीब हो गए, जबकि दूसरे नेताओ ने पद-लोलुपता के कारण घुटना टेक दिया था। इस प्रस्ताव से उनकी कलई खुल गई थी, और यह स्पष्ट हो गया कि वे बडी-बडी बाते करने के बावजूद साम्राज्यवाद के सामने किसी भी दाम पर, बल्कि बिना दाम के, केवल मन्त्रिमण्डल वापस दिए जाने पर, युद्ध-प्रयास मे मदद देने के लिए तैयार है। यदि यही करना था, तो इन लोगो ने इतना बहुमूल्य समय नष्ट क्यो किया ? उन्हे तो लीगी मन्त्रियो की तरह दुम हिलाकर आकाओ की दिलजोई करनी चाहिए थी, और उनकी तश्तरियो से जो हड्डी गिरती, उसे चिचोडना चाहिए था।

कार्यसमिति के चार सदस्यो ने पूना मे प्रस्ताव पर वोट नही दिया था, इस-पर उन्हे सम्बोधित करके यह कहा गया था, कि अहिंसक तरीके से ही सही, वे सग्राम का नारा तो दे। यदि वे सग्राम का नारा देगे, तो उन्हे मालूम हो जाएगा कि देश उनके साथ है, न कि उन बुजदिलो और कायर नेताओ के साथ, जिन्होने देशरक्षा के नाम पर घुटनाटेक नीति अपनाने की तत्परता दिखाई थी। देशरक्षा का प्रश्न तो तब उठे, जब देश अपना हो। जब देश पर दूसरो का राज्य है, तो देश-रक्षा का नारा देकर हिंसा-अहिंसा का प्रश्न उठाना, और लोगो के दिमागो मे गड-बडी पैदा करना देशद्रोह है। कोई उनके इस भुलावे मे नही आ सकता। भारत की जनता नही आ सकती, बुद्धिजीवी नही आ सकते, किसान और मज़दूर नही आ सकते। अग्रेज़ो से समझौते का प्रश्न और देशरक्षा का प्रश्न तभी उठ सकता है, जब अग्रेज़ भारत छोडकर चले जाए, या लडाई के बाद चले जाने का वादा करें, तभी

यह देखा जा सकता है कि हम अपने देश की रक्षा कर सकते है या नही।

शिशु ने घुटनाटेक नीति के विरुद्ध कई कविताए लिखी, जिनमे यह कहा गया था कि अक्सर कायर लोग दार्शनिकता की आड लेते है, पर उनके शरीर से ऐसी दुर्गन्ध आती है कि उनसे मालूम हो जाता है कि वे सिंह की खाल ओढे हुए गधे-मात्र हैं। उनकी रेंक मे वह वज्र कहा, जो सिंह के गर्जन मे होता है! पर जो कुछ हुआ सो अच्छा ही हुआ, हाडी गई तो गई, पर कुत्ते की जात तो पहचानी गई। अब गाधीजी को चाहिए कि इन कायरो की कुटिल, कपट कलई को कतई खोलकर नमक सत्याग्रह की तरह कोई और सत्याग्रह छेडें। तब उन्हे पता लग जाएगा कि जनता किसके साथ है, इन पदलोलुप, घुटनाटेक, विश्वासघातक जयचन्दो के साथ, या कि महात्मा गाधी, और देश के लिए बलिदान होनेवाले लोगो के साथ।

श्यामा ने भी इन पत्रो मे बहुत-से लेख लिखे। धनजय का तो चरित्र ही बदल गया। कहा तो वह हर समय इसलिए लालायित रहता था कि किसी प्रकार का कोई ऐसा साहसिक कार्य हो, जिसमे जान देने-लेने की नौबत आए, और कहा अब वह दिन-रात लिखने-पढने, कम्पोज करने आदि मे लगा रहता था। वह बहुत अच्छा कम्पोजिटर बन गया था। पेशेदार कम्पोजिटरो से जल्दी कम्पोज़ कर लेता था। वह कहता था—दूसरो के लेख कम्पोज़ करने मे भी आनन्द आता है, पर अपने लेख कम्पोज़ करने मे जो आनन्द आता है, वह किसी कार्य मे नही आता।

यद्यपि आनन्दकुमार इन पत्रो से किसी प्रकार सयुक्त नही थे, पर वे उन थोडे-से बाहरी लोगो मे थे, जिन्हे इन पत्रो के सम्बन्ध मे बहुत-सी बातो का पता हो जाता था। कभी श्यामा उन्हे अपने लेख पढकर सुनाती थी, तो कभी शिशु उन्हे कविता सुनाता था, और कभी धनजय उनके सामने लाकर छपा हुआ पर्चा रखकर, अर्थपूर्ण ढग से किसी लेख को अगुली से दिखा देता था, और फिर जब वे उसे पढने लग जाते, तो वह सास रोककर उनकी प्रतिक्रिया की प्रतीक्षा करता था। इर्द-गिर्द के लोगो मे केवल अर्चना ने लिखने मे कोई दिलचस्पी नही ली, यद्यपि गुप्त छपाई करने मे और पर्चे बटवाने मे उसका पूरा सहयोग होता था। वह तो अधिकतर धन लाने के कार्य मे नियुक्त थी, और इस बीच वह कई बार दिल्ली यात्रा करके सुगनचन्द से धन ले आई थी। श्रीमती सुगनचन्द पति के कारण बिलकुल बदल गई थी। वे जितना बन पडता था, उतना तो देती ही रहती थी, इसके अलावा दूसरे सहानुभूति रखनेवाले धनियो से पैसा दिला रही थी। अब

उनका कहना इतना-भर था—सब कुछ ले जाओ, पर मेरे पति को बख्शे रहो।

कई बार शिशु आदि ने अर्चना से कहा कि आप भी कुछ लिखा करें, पर वह यह कहकर इन अनुरोधो को ठुकरा देती थी—जो व्यक्ति इस समय दल के लिए सबसे उपयोगी हो सकता था, यानी प्रेमचन्दजी तो रहे ही नही, तो मैं क्या लिखू, जिसे लिखना नही आता। इस समय लिखना हमारा कर्तव्य हो रहा है, क्योकि असली काम के लिए अभी समय नही आया है, और उसे लाना है।

इन पत्रो मे बहुत खर्च होता था, क्योकि कागज का दाम तो लगता ही था, इसके अलावा कभी-कभी छापेखाने के मालिक दुगने या तिगुने पैसे लेकर छपाई का काम कर देते थे, तो उनका भी पेट भरना पडता था, क्योकि इस प्रकार जो छपाई होती थी, वह उस छपाई से कही अच्छी होती थी, जिसमे कम्पोजिंग का काम कानपुर मे होता, और छपाई सीतापुर मे होती। रास्ते मे कई टाइप उड जाते, और छपाई भी सन्तोषजनक न होती।

कभी-कभी स्वामी रामानन्द उर्फ शुक्राचार्य अमिताभ के पास जाकर विचार-विनिमय कर आते। यह आधारभूत प्रश्न उठता कि यह जो पर्चेबाज़ी चालू है, इसका कुछ असर भी हो रहा है या नही, भारत की अधिकाश जनता तो अनपढ है, इसलिए लिखा हुआ प्रचार-कार्य कहा तक असरदार होता है। पर दोनो अनिवार्य रूप से इस नतीजे पर पहुचते थे कि बीसियो लोग एक-एक पर्चे को पढते है और वे लोगो को उनकी बातें सुनाते है इसलिए बडा लाभ रहता है।

सब लोग बडी उत्सुकता से प्रतीक्षा कर रहे थे कि अखिल भारतीय काग्रेस-कमेटी के प्रस्ताव का ब्रिटिश सरकार किस प्रकार से स्वागत करती है क्योकि उसी-पर सारा भविष्य निर्भर था। यदि सरकार प्रस्ताव मान ले, तब तो सग्राम चाहने-वालो पर बडी मुसीबत आती, क्योकि फिर तो राष्ट्रीय शक्तियो मे से एक बहुत बडा हिस्सा उस अश के साथ चला जाता जो समझौता चाहता था, और तब केवल उग्र काग्रेसी, क्रातिकारी, साम्यवादी और कुछ ऐसे ही लोग सग्राम करने के लिए छूट जाते। बडी उधेडबुन और शशोपज का मौका था। अपनी तरफ से काग्रेस ने समझौते का अधिक से अधिक हद तक हाथ बढाया था। देखना यह था कि होता क्या है। क्रान्तिकारी नेता गाधीजी और काग्रेस के अलग हो जाने को मिलीभगत व समझने पर भी उसे बहुत महत्त्व नही देते थे, मिलीभगत हो भी तो इससे क्या फर्क आता था।

स्वामी रामानन्द और अमिताभ जल्दी-जल्दी मिल रहे थे। कभी वे मिर्जापुर की किसी पहाडी मे मिलते, तो कभी प्रतापगढ के किसी गाव मे, तो कभी बलिया के देहात मे। एक बार जब वे इसी तरह मिल रहे थे, और स्वामी रामानन्द की विदाई का समय आ गया, तो घडी देखकर अमिताभ ने कहा—आप रुकिए।

रुकने का कोई कारण न तो दिया गया, और न पूछा गया।

अमिताभ इधर-उधर की बात करते-करते बार-बार घडी देख रहे थे, और जिधर से लोग आते थे, उधर देख रहे थे, इससे स्पष्ट था कि वे किसीकी प्रतीक्षा कर रहे थे। दोनो एक पेड के नीचे बैठे थे, इस प्रकार से कि फीकी चादनी उनपर न पडे, और वे पेड की छाया मे बैठकर सब आने-जानेवालो को देख सके। उनके आसपास कोई बत्ती नही थी, इसलिए तारे स्पष्ट रूप से झिलमिला रहे थे। जब चुप हुए कुछ देर हो गई और स्वामी रामानन्द ने अपनी घडी मे देखा कि ग्यारह बजकर तीन मिनट हो चुके है, तो अमिताभ अधीर होकर उठ खडे हुए और बेचैनी के साथ दस कदम के अन्दर आगे-पीछे टहलने लगे।

स्वामी रामानन्द ने देखा कि अब वे कुछ लगडा रहे है, यद्यपि अब साधारण अवस्था मे वे लगडाते नही थे। वे स्वय ही स्वामीजी को बता चुके थे कि जब मैं उत्तेजित हो जाता हू, तब लगडापन लौट आता है, पर खैरियत यह है कि जब अत्यन्त उत्तेजित हो जाता हू, तब लगडापन मुझे छोड जाता है। स्वामी रामानन्द यह नही समझ सके कि इस समय वे इतने उत्तेजित क्यो है। क्या वे इस कारण उत्तेजित है कि वर्षो से जिस घडी की प्रतीक्षा थी, उसके व्यर्थ मे टल जाने की पूरी आशका हो गई थी, बना-बनाया खेल आखो के सामने, किनारे पर आकर डूबने-वाली नाव की तरह बिगडा जा रहा था।

इसमे सन्देह नही कि स्थिति बहुत ही भयकर थी। बडी कठिनाई से जैसे भारत को स्वतन्त्रता का मौका देने के लिए महायुद्ध का सूत्रपात हुआ था। पश्चिमी कूटनीति के सारे छोटे-बडे पहिये इसी लक्ष्य को सामने रखकर प्रघूर्णित हो रहे थे कि युद्ध हो तो नात्सी जर्मनी और साम्यवादी रूस के बीच हो, ताकि दोनो का बेडा गर्क हो जाए और मित्र-शक्तिया अक्षत बनी रहे। उनकी कूटनीति का यह पासा गलत पडा, और खुदा-खुदा करके किसी तरह ब्रिटेन की नाव इस युद्ध के भवर मे फसी। साथ ही काग्रेस मन्त्रिमण्डलो ने इस्तीफा दिया। आशा के प्रदीप एकदम से भभककर जल उठे, सब तरह के समझौतावाद और पराजयवाद के

अधकार का लोप होता हुआ दिखाई पडा। पर बाल की खाल और व्यर्थ के वितण्डे और बेकार की पूछ-ताछ करने का युग बहुत लम्बा चला, और अब यह भाग्य-विपर्यय आया। सोचने की तो बात है।

पर अमिताभ के लिए यह कोई नया सिरदर्द नही। वे बहुत दिनो से इसपर सोच रहे हे। तो क्या वे दल के उन लगभग सिरफिरे युवको के सुझाव पर कोई निर्णय लेने जा रहे हे, जो यह कह रहे हैं कि जो नेता युद्ध-प्रयास मे सहायता देने की बात कह रहे हैं, वे जयचन्द और मीर जाफर की श्रेणी मे आ जाते है, इसलिए देश को इनसे मुक्त करने के लिए इनको गोली मार देनी चाहिए।

पर नही। यह नही हो सकता।

अमिताभ कई दिन पहले ही चुनार मे उनसे कह चुके थे—ऐसे लोग पागल है। मैं उनकी बातो को दो कौडी की समझता हू। रक्तपात केवल वही पर उसी हद तक समर्थन-योग्य है, जहा तक कि उसका सम्बन्ध नवजन्म से है। यदि मृत्यु केवल मृत्यु ही है, और रक्तपात से नया जीवन भूमिष्ठ नही होता, तो वह रक्त-पात हत्या है, और वैसा रक्तपात करनेवाला व्यक्ति हत्यारे की श्रेणी मे आता है।

स्वामी रामानन्द ने घडी देखी। वे भी उठकर खडे हो गए। उसी समय उधर कोई आहट हुई, और अमिताभ ने स्वामी रामानन्द को इगित किया कि आप बैठ जाए। वे स्वय खडे होकर आगन्तुक को देखने लगे। स्वामी रामानन्द ने देखा और फौरन पहचान लिया कि स्थानीय युवक के साथ बादल है। फीकी चादनी मे ही बादल की जलती हुई आखे और चिरसगिनी पिस्तौल की झलके मिल गईं। तो यह बात थी? बादल की प्रतीक्षा हो रही थी? क्या बादल किसी नतीजे पर पहुच चुका है? क्या वह अब सम्पूर्ण रूप से क्रान्तिकारी दल के अधीन कार्य करेगा?

अवश्य ही कोई बात होगी तभी अमिताभ ने उन्हे रोका है। आगन्तुक का स्वागत करने के लिए अमिताभ तो आगे बढे ही, स्वामी रामानन्द भी अपने स्थान से एक कदम आगे बढ गए। युवक लौट गया, और तीसरा मोढा ले आया, और तीनो बैठ गए। युवक चला गया। बादल ने पहली बात यही कही—मुझे कुछ देर हो गई!—कहकर उसने निर्दिष्ट आसन पर बैठते हुए अपनी पिस्तौल के साथ चिरन्तन खेल शुरू किया, यद्यपि उसने कहा कि देर हो गई, पर वह इसके लिए ज़रा भी लज्जित था, ऐसा नही लगा। बोला—हम लोग समय की पाबन्दी नहीं

कर सकते, क्योकि सन्देह होते ही तब तक ठहरना पडता है, जब तक कि वह दूर न हो। फिर आज एक बात हो गई, जिमसे कुछ देर लग गई। चूहे को मारने मे कुछ देर लगती ही है।

अमिताभ बिलकुल एक बच्चे के लहजे मे पूछ बैठे—चूहा कैसा ?

बादल ने अपनी पिस्तौल को सामने उछालकर उसे एकाएक चूमते हुए कहा—आज इसने एक बहुत अच्छा काम किया है। अब मै अपने सारे ऋणो से मुक्त हो गया हू।

अर्ध-अन्धकार मे ही स्वामी रामानन्द और अमिताभ मे अर्थपूर्ण दृष्टि-विनिमय हुआ, असल मे दृष्टि विनिमय नही, दोनो ने एक-दूसरे की तरफ आश्चर्य के साथ देखा। अमिताभ ने गम्भीर लहजे मे पूछा—कौन-सा काम किया किया ? क्या कोई पुलिसवाला मिला था ?

—नही, पुलिसवाला नही। आपको याद होगा कि मै किस कारण डाकू बना। मैंने दोषी जमीदार और उसके रक्षको दो कारिन्दो को मार डाला था, पर जमीदार का एक खास कारिन्दा था, जो औरतो को पकडकर ले जाता था। अक्सर वह स्वय पहले उनपर बलात्कार करता था, तब प्रसाद बनाकर उस स्त्री को जमीदार के पास ले जाता था। पर कई मामलो मे स्थिति ऐसी होती थी कि उसे प्रसाद से ही सन्तुष्ट होना पडना था। उस कारिन्दे को मारना अभी बाकी था। आज जब मैं चलने को हुआ तो एकाएक खबर मिली कि उसका पता लग गया है। वह एक बस स्टेशन पर पूडी-कचौडी की दुकान खोले हुए था। वह हमारे रास्ते से दो मील भीतर को पडता था। मैने सोचा लौटकर भी तो मारा जा सकता है, या मैं अपने किसी गण को उसके पीछे कर दू, तो उसकी आतें निकाल ले। पर कई कर्तव्य ऐसे होते है, जिन्हे स्वय ही करना पडता है। इसलिए मैने पहले वह काम कर लिया, तब यहा आया।

अमिताभ और स्वामी रामानन्द, दोनो साधारण नागरिक नही थे, मजे हुए क्रान्तिकारी थे। उन लोगो के विरुद्ध कई तरह के अभियोग थे, जिनमे हत्या भी थी, पर यह जानकर कि यह व्यक्ति सीधा एक व्यक्ति की हत्या करके उसी पिस्तौल से खेलते हुए यहा आया है, वे भी एक बार सकते मे आ गए। कुछ देर के लिए वातावरण पर सन्नाटा उतर आया, अपने सैकडो नीरव प्रश्नो के साथ। किसीको होश नही रहा कि हम कहा बैठे है, और किस कार्य के लिए।

बादल ने कहा—वह बैठकर पकौडिया निकाल रहा था। मेरे ही डर के कारण वह अपना ज़िला छोडकर इतनी दूर आकर मज़दूर का जीवन व्यतीत कर रहा था। मैने देखा, और देखते ही पहचान गया। फिर क्या हुआ, मुझे कुछ पता नही। सारा खुद-ब-खुद हुआ। मैं कसम खाकर कहता हू, मैने यह देखा कि तेल की कढाही है, और उसमे भरा हुआ तेल है। एक धाय से आवाज़ हुई, और पकौडिया तलनेवाला स्वय इस तरह से लुढक गया कि उसका सिर पकौडी के तेल मे हो गया, और कडाही उलट गई। बडे ज़ोर से तेल छिटका, जिसकी दो-चार बूदे शायद मुझे भी लगी। यह तो मै कल ही देख पाऊगा कि कहा-कहा फफोले पडे है। उसी कारण देर हो गई।

उसने अन्तिम शब्दो को ऐसे कहा, जैसे बहुत साधारण कोई बात हुई हो। फिर वह दोनो श्रोताओ को चुप रहते देखकर बोला—मुझे शायद आप लोगो को यह बात बतानी नही चाहिए थी, क्योकि आपने जैसाकि मुझे बार-बार समझाया, आप तो कहेगे कि पद्धति का दोष है, व्यक्ति का नही, पर मैं यह कहता हू कि व्यक्ति का भी दोष है, कि वह अपने ऊपर पद्धति को इस बुरी तरह हावी क्यो होने देता है! सज्जनसिंह ज़मीदार की गुलामी करता था, यह तो समझ मे आता है, पर वह औरतें भगाने और उनपर बलात्कार करने के लिए मजबूर नही था, इसलिए दोष उसका है, और सज़ा उसे भी मिलनी चाहिए। जब समाज सज़ा नही देता, तो मेरे ऐसे लोगो को, जैसाकि आप कहते है, अपने हाथ मे कानून ले लेना पडता है।

अमिताभ स्तब्ध हो गए थे। उनकी आखो के सामने वह चित्र नाच रहा था—पकौडी छानता हुआ सज्जनसिंह औंधे मुह गरम तेल की कढाही मे पडा है। तेल के छींटे छत और दीवारो तक पहुचे है। वे सहसा कुछ कह नही सके। कुछ बुरा लगा कि ऐसे व्यक्ति के साथ आमने-सामने बैठे हैं, पर साथ ही वह चित्र भी याद आया कि पति-पत्नी गरम बिस्तरे मे सोए हुए हे, इतने मे कारिन्दे आए। उनकी कर्कश आवाज़! फिर कुछ हाथापाई, छीना-झपटी, नोच-खसोट, पत्नी का करुण आर्तनाद। अन्त मे सब चुप। घर चुप, गाव चुप, सृष्टि चुप। जब बादल (पता नही उसका असली नाम क्या था) बेहोशी से जगा, तो शरीर मे सर्वत्र दर्द, जमा हुआ खून, दुर्गन्ध। कोई गाववाला उसकी मदद को नही आया। बेचारा बिलकुल एकाकी था।

अमिताभ ने कहा—मैं तुम्हारी प्रतीक्षा कर रहा था, और स्वामीजी भी इसीलिए आए है।

बादल मुस्कराकर बोला—आप समझ रहे होगे कि मैं असली काम भूल गया, पर यह बात नही। मै आपके युवक साथी के पास एक थैला रख आया हू। उसमे नोट और सोना-चादी है। जितनी लाना चाहता था, उससे ज्यादा ले आया। अब बराबर आपको रुपये आदि पहुचाता रहूगा।

अमिताभ बोले—पर मेरा क्षोभ तो तुम्हारी बन्दूको पर है। मै तो उन्हीके सपने देखता रहता हू।

बादल बोला—अब मेरा व्रत पूरा हो गया है, अब मुझे वर्तमान जीवन मे यानी डाकू बने रहने मे कोई दिलचस्पी नही है। मैं जल्दी ही आपके साथ आ जाऊगा। ऐसी आशा करता हू, और दल-बल के साथ।

—वह कैसे ?

—आपके 'रणभेरी' और 'बिगुल' आदि का हमारे उन हूस साथियो पर भी असर शुरू हो गया है। अब वे अच्छे-बुरे की कुछ-कुछ तमीज़ करने लगे है। निष्ठुर तो वे अब भी है, और शायद हमेशा बने रहेगे, पर वे कह रहे है कि अग्रेज़ो को मारने मे ज्यादा मजा है।

अमिताभ समझ गए कि अब बादल के साथ कुछ देर बातचीत चलेगी। वे स्वामीजी से बोले—आप थैले मे से सारा नकद लेकर चले जाइए। सोना-चादी यही छोड जाइए। उसे ले जाना खतरे से खाली नही है।

पर बादल बीच मे ही बोल उठा—सोना-चादी गलाया हुआ है। हम जानते थे कि गहने आपके काम के नही है। मेरी टोली मे दो-तीन सुनार भी हैं, उन्ही-से मैं यह काम लेता हू।

अमिताभ फिर भी बोले—बहुत अच्छा, कितना सोना है ? कुछ अन्दाज़ तो होगा ?

बादल ने सोचकर, जैसे मन ही मन तौलते हुए कहा—दो-तीन सेर तो होगा ही। थोडी चादी भी है। योही ले आया, बेकार चीज़ है।

अमिताभ ने स्वामीजी से कहा—आप फिर भी सोना-चादी छोड दीजिए। —कहकर हसते हुए बोले—आप साधु आदमी हैं, कागज़-मात्र ले जाइए। फौरन रवाना हो जाइए।

स्वामी रामानन्द फौरन रवाना हो गए। थोडी देर मे ही उनकी मोटर साइकिल रात्रिकालीन आकाश को कपाती हुई रवाना हो गई। अमिताभ बादल के साथ बात करते रहे। वे स्वय तो स्वामीजी के साथ खा चुके थे, पर बादल को खाना खिलवाया। सप्तर्षि मण्डल ने आकाश मे करवट बदली। थोडी देर मे पौ फटने के लक्षण दिखाई देने लगे, तब भी दोनो व्यक्ति बाते कर रहे थे। अमिताभ कह रहे थे—समाज को आमूलचूल बदल देना है, तभी सारी समस्याए सुलझेगी। अब तुम देखो कि उस जमीदार ने कितने ही लोगो के साथ वह अन्याय किया था, जो उसने तुम्हारे साथ किया था, पर केवल तुम्ही उसके विरुद्ध जैसे भी बन पडा, उठ खडे हुए, और आज तुमने उसमे पूर्णाहुति डाल दी, पर इस दौरान तुमको भी कितनी तरह के अन्याय करने पडे होगे। दूसरे शब्दो मे तुम भी उसी श्रेणी मे आ गए, जिसमे जमीदार था। फिर भी मैं तुम्हे एकदम ही गलत नही कह सकता, क्योकि यदि तुम उस जमीदार को तब न मारते तो वह अब तक अपनी बदमाशिया जारी रखता।

ऐसी कितनी ही बातें हुई थी। अमिताभ का कहना था कि तुम अब अपना डाकू जीवन समाप्त कर दो, और देश के सामने जो महान सघर्ष है, उसमे शामिल हो जाओ, पर बादल यही कह रहा था कि मैं अपने साथियो को नही छोड सकता। साहित्य से उनका कुछ सुधार हुआ है। आगे आशा है कि और सुधार होगा।

सवेरा होते-होते दोनो उस स्थान से रवाना हो गए।

२४

काग्रेस कार्यसमिति तथा अखिल भारतीय काग्रेस कमेटी ने एक तरह से गाधीजी से अलग होकर यह जो प्रस्ताव पास किया था कि हम लडाई मे सहायता देने के लिए तैयार हैं, बशर्ते कि किसी प्रकार की जिम्मेदारी दी जाए, उसका सरकार ने कतई स्वागत नही किया। वाइसराय ने अगस्त के प्रारम्भ मे एक वक्तव्य दिया, जिससे काग्रेस की आशाओ पर तुषारपात हो गया। मजे की बात है, कि इससे एक तरफ क्रान्तिकारी तथा उग्र मतवादी खुश हुए, पर दूसरी तरफ मुश्ताक ऐसे लीगी भी खुश हुए, क्योकि वाइसराय के वक्तव्य मे यह स्पष्ट रूप

से कहा गया था कि भारत के कल्याण तथा शान्ति के लिए ब्रिटिश सरकार अपनी ज़िम्मेदारियो को किसी ऐसी शासन-पद्धति को सौपने के लिए तैयार नही है, जो भारत के राष्ट्रीय जीवन के शक्तिशाली उपादानो को मजूर न हो।

धनजय लेखन मुद्रण और पर्चो के वितरण मे व्यस्त था, पर जिस दिन वाइसराय का वक्तव्य निकला, उस दिन वह बगाली हलवाई के यहा से रसगुल्लो की एक बडी-सी हडिया लेकर आनन्दकुमार के यहा पहुचा, और महेन्द्र उर्फ यूसुफ के बेटे कबीर के हाथो मे उस हडिया को देते हुए आनन्दकुमार से बोला—सालो को खूब मुह की खानी पडी! बस, मज़ा आ गया! बुढऊ की आखिर मे जीत हो ही गई!

आनन्दकुमार ने इसपर मुस्कराते हुए कहा—तुम्हारी बातो से ऐसा भ्रम हो सकता है कि तुम महात्माजी के सबसे बडे भक्त हो। शायद तुम्हे वह दिन याद होगा, जब तुम इसी कमरे मे पिस्तौल लेकर पट्टाभि सीतारमैया को मारने के लिए आए थे!

धनजय को इस प्रकार उस घटना का स्मरण दिलाया जाना पसन्द नही आया। वह बोला—उस समय गाधीजी प्रतिक्रिया के प्रतीक हो गए थे, और उनका मुख्य वाहन सीतारमैया हो रहा था।

आनन्दकुमार ने हसकर कहा—तुम लोग जिस तेज़ी से किसी व्यक्ति को बारी-बारी प्रतिक्रियावादी और प्रगतिशील करार देते हो, वह भी किसी दिन रग लाएगा। तुम वाइसराय के अगस्त वक्तव्य से खुश हो रहे हो, क्योकि उसमे काग्रेस की सहयोग सम्बन्धी माग को ठुकरा दिया गया, पर यह नही देख रहे हो कि उसमे लीगियो को खुल्लमखुल्ला किस प्रकार भडकाया गया है। सम्प्रदायो को आपस मे लडाने की पुरानी साम्राज्यवादी नीति ज्यो की त्यो कायम है।

धनजय ने सचमुच वक्तव्य को ध्यान से नही पढा था। अब जो उसने आनन्दकुमार के कहने से उसे पढा, तो उसकी भौहे तन गई। उसने देखा कि जो शका की जा रही है, वह सच है। आनन्दकुमार के यहा तो वह चुप हो गया, पर जब पर्चे मे क्या लिखा जाए, इस सम्बन्ध मे स्वामी रामानन्द से मिला, तो उन्होने भी यही शका प्रकट की, कि अब हिन्दुओ और मुसलमानो को जोर से लडाकर क्रातिकारी वातावरण को मटियामेट कर दिया जाएगा। धनजय तो काग्रेस के नरमपथियो का मज़ाक उडाकर, और वाइसराय द्वारा ठुकराए जाने पर उनपर व्यग्य करके ही सब

कुछ लिखना चाहता था, पर जब पर्चा अन्त तक निकला तो उसका स्वर दूसरा ही था। उसमे लिखा गया था कि काग्रेस के नरमदल की माग ठुकराकर सरकार ने फिर एक बार यह प्रमाणित कर दिया (यद्यपि बुद्धिमानो को इस नये प्रमाण की कोई जरूरत नहीं थी) कि लार्ड लिनलिथगो की सरकार कुछ भी देना नही चाहती, उलटे वह देश मे फूट की ज्वाला भडकाना चाहती है। 'रणभरी' मे यह चेतावनी दी गई कि अब भी यदि काग्रेस सग्राम से मुह मोडती है, तो यही समझना चाहिए कि काग्रेस अब साम्राज्यवाद-विरोधी मोर्चे के रूप मे समाप्त हो चुकी है, और वह केवल पदलोलुप और अपना उल्लू सीधा करनेवाले नेताओ की जमायत हो चुकी है। जनता को अब और प्रतीक्षा नही करनी चाहिए, बल्कि जिसके हाथ जो कुछ हथियार लगे, उससे पहले ब्रिटिश सरकार को असम्भव बनाने, और उसके बाद जब पुरानी सरकार मिट जाए, तो उसकी राख की नीव पर अपनी सरकार कायम करनी चाहिए।

'बिगुल' ने कहा—पुरानी सरकार तो मृत्यु-यन्त्रणा से ग्रस्त होकर कराह रही है। पर हमे उसके मरने की प्रतीक्षा नही करनी चाहिए, बल्कि समान्तराल सरकार कायम कर लेनी चाहिए।

'अग्रदूत' के मुख्य लेखक क्रान्तिकुमार ने लिखा—समान्तराल सरकार तो कही-कही कायम हो भी चुकी है, अब उसे देशव्यापी पैमाने पर वास्तविक बनाना है।

क्रातिकारी तो इस प्रकार सोच रहे थे, पर इनके अलावा साम्यवादी और समाजवादी भी इसी ढर्रे पर चिन्तन कर रहे थे। बहुत-से लोग तो जेल पहुच चुके थे, पर कुछ लोग अभी तक फरार या अर्ध-फरार रूप मे देश मे अपना काम कर रहे थे। दूसरी तरफ मुस्लिमलीग के लोग अब खुल्लमखुल्ला दो राष्ट्र या दो जाति तथा भारत के विभाजन का नारा देने लगे।

इस बीच प्रसिद्ध तम्बाकू-विक्रेता अब्दुल्ला लीग के नेताओ मे हो चुका था। अब वह भी सभाओ मे तकरीरे करता था। मुश्ताक इस परिणति से खुश नही था, क्योकि अब अब्दुल्ला का और सियामादेवी का प्रोग्राम एकसाथ होने लगा था। वे मुश्ताक को महज इस कारण साथ रखते थे, कि वह सभा मे खडे होकर इन लोगो का परिचय कराता था। वह सियामादेवी को प्रसिद्ध शहीद अपने भाई यूसुफ की बीवी करके परिचित कराता ही था, पर अब अब्दुल्ला का परिचय भी उसे कराना

पडता था, जिसमे उसे यह तो कहना ही पडता था कि वे बहुत बडे सरमायेदार और धनी होने पर भी लीग की सेवा करने के लिए मैदान मे उतरे है, पर साथ ही यह झूठ भी कहना पडता था कि वे शहीदे-आज़म यूसुफ के बहुत बडे मददगार थे, और छिपे तौर पर उस जमाने मे इनकलाबियो को मदद देते थे। 'वे यूसुफ परिवार के बहुत पुराने मित्र और मददगार है, इत्यादि-इत्यादि।

अब्दुल्ला केवल रज़िया उर्फ सियामादेवी के प्रति आकर्षण के कारण ही इन प्रोग्रामो मे शामिल होता था, ऐसी भले ही पहले की स्थिति रही हो, पर अब वस्तुस्थिति कुछ और हो गई थी। अब वह सचमुच इस सारे कार्य मे रस पाता था, करीब-करीब वही रस, जो शिकार मे मिलता है। जनता के सामने खडे होना, अपनी तारीफ सुनना, फिर जनता के सामने अपनी बाते कहना, इसमे बहुत उत्तेजना और मादकता थी। जब मुश्ताक कहता था कि अब्दुल्ला छात्रावस्था से ही इनकलाबी रहा है, और इनकलाबियो की मदद करता रहा है, तो वह झेपकर सिर नीचा कर लेता था, क्योकि यह झूठ था। पर जनता, जो यह जानती थी कि अब्दुल्ला करोडो का मालिक है, सारे झूठो पर विश्वास करती थी, और सभास्थल तालियो की गडगडाहट से गूज उठता था। इसके बाद जब अब्दुल्ला अपनी बाते कहने लगता था (जो अपनी बाते तो कम, और जिन्ना की जूठन अधिक होती थी), तो उसे बडी तृप्ति होती थी, क्योकि उसे लगता था कि वह भी किसी काबिल है। व्यापार के क्षेत्र मे तो उसका दाम कुछ भी नही था, क्योकि बाप ने व्यापार चला दिया था। हा, उसने दो-चार नई जगहो पर अपनी कम्पनी की शाखाए कायम की थी। पर जब से वह सियासत मे आया था, तब से उसे यह बोध होने लगा था कि मैं भी कुछ कर सकता हू। इसके अतिरिक्त शायद एक तत्त्व और था, वह था—मुश्ताक की आखो के सामने उसका शिकार रोज़ छीनना, और उसका उपभोग करना।

पर इसी कारण मुश्ताक के लिए यह स्थिति बिलकुल असह्य हो रही थी। यो वह अपने मन को बहुत समझाता था कि न तो रज़िया उसकी भाभी है, और न रज़िया कोई शरीफ औरत है, फिर वह यदि अब्दुल्ला के साथ सोती है, तो इससे आता-जाता क्या है! यह तो बिलकुल स्वाभाविक है। वेश्या से सती रहने की आशा करना बिलकुल व्यर्थ है। फिर भी मन नही मानता था। वह किसी प्रकार अब्दुल्ला से बदला नही ले सकता था, क्योकि अब्दुल्ला धनी था, और लीग मे नवाबो, ताल्लुकेदारो और ज़मीदारो का ही बोलबाला था। पर सबसे अखरने-

वाला वह हिस्सा होता था, जब उसे खडे होकर भरी सभा मे अब्दुल्ला की तारीफ के पुल बाधने पडते थे। सियामादेवी वाला ही झूठ बहुत बडा झूठ था। उसे यूसुफ की बीवी बताना सत्य का बहुत बडा अपलाप था, क्योकि बीवी तो श्यामादेवी थी, जो आनन्दकुमार के यहा रहती है, और शायद इन दिनो फरार है, कम से कम ऐसी ही एक बात सुनी गई थी।

पर रजिया को सियामादेवी करके मुस्लिम जनता के सामने पेश करने मे मुसलमानो का हित था, जैसाकि वह स्वय प्रतिदिन हर सभा मे देखता था। पर अब्दुल्ला को ख्वाहमख्वाह इनकलावियो का मददगार, यूसुफ परिवार का मित्र आदि बताने मे कोई तुक नही थी। इससे मुस्लिम जनता को क्या लाभ था? रज़िया और अब्दुल्ला मे इतनी साठ-गाठ क्यो है इस बात को ढकने के लिए उसे यह झूठ दोहराना पडता था। फिर भी यह बहुत अखरता था। पर इस नेकी के उत्तर मे अब्दुल्ला उसके साथ कोई रियायत नही करता था, बल्कि उसे दिखा-दिखाकर और लोगो को दिखा-दिखाकर मोटर मे रजिया को लेकर घूमता था। इन दिनो तो उसने एक और फरेब शुरू किया था, जो बहुत ही अपमान-जनक था। यदि उन्नाव के बाद रायबरेली का प्रोग्राम है, तो मोटर मे रज़िया को बैठाकर चल देता था, और उससे कहता था—आप रेल से आ जाइएगा, मेरा सामान भी बराए मेहरबानी लेते आइएगा।

मानो वह दोनो का हेड नौकर हो!

कई बार उसने सोचा कि सारा पर्दाफाश कर दे, और अपने बडे भाई यूसुफ के पदाक का अनुसरण करके राष्ट्रीय मुसलमानो मे हो जाए, पर इसमे भी खतरा कुछ कम नही था। यदि इसमे मानसिक क्लेश और अब्दुल्ला के द्वारा अत्याचार और ज्यादतियो का सामना था, तो उसमे जेल जाने का डर था, विशेषकर वाइसराय की अगस्त घोषणा के बाद। काग्रेस के अध्यक्ष (इन दिनो राष्ट्रपति कहलाते थे) ने अगस्त प्रस्ताव को बिल्कुल ही ग्रहण करने से इन्कार किया था, यहा तक कि लार्ड लिनलिथगो ने जो उन्हे बुलाया था, उसके अनुसार उनसे मिलने से भी इन्कार कर दिया था। मुश्ताक का मानसिक द्वन्द्व बना रहा, पर इस द्वन्द्व के कारण वह दबा नही, बल्कि और उग्र भाषण देने लगा। उसे किसी-पर गुस्सा उतारने की ज़रूरत महसूस होती थी, और बुरी तरह महसूस होती थी। इस कारण वह सभाओ मे हिन्दुओ के विरुद्ध बिलकुल ज़हर उगला करता था,

क्योकि उसने मन ही मन अब्दुल्ला और हिन्दुओ को एक कर लिया था।

उसने हाल ही की एक सभा मे कहा था—मुसलमानो और हिन्दुओ को हर्गिज़ बराबरी के दर्जे का नही माना जा सकता। हमारा एक वोट उनके एक वोट के बराबर नही माना जा सकता। मुल्क हमारा है, क्योकि हमने इसे जीता था, तलवार के जोर से जीता था। लार्ड लिनलिथगो साहब ने यह जो कहा है कि अक्लियतो की राय के बिना कुछ नही होगा, और उन्हे मजबूर नही किया जाएगा, इससे हमे बहुत इत्मीनान है। हम दो अलग-अलग कौमे है। अगर स्वराज्य मिले, तो हमको अलग-अलग स्वराज्य मिलना चाहिए।

ऐसा तो वह हमेशा कहता था, पर उसने जिस तरह जोश मे आकर दात किटकिटाते हुए हर शब्द को एक भयकर साकेतिकता प्रदान की, वैसा कभी इससे पहले नही किया था। बोला—हम एक सीधी-सादी लडाकू कौम है, जबकि हिन्दू एक बिगडे हुए रईस बेटे की तरह हैं, जो बहुत ही गिरे हुए है, जिनमे गुलामी कूट-कूटकर भरी है। भला गुलाम और गुलाम के मालिक मे क्या बराबरी! हम थोडे है तो क्या, हम वे ही है, जो लोग पहाडो और दर्रो से उतर-कर आए थे। हम कोई जीरा-सौफ और तम्बाकू बेचनेवाले बनिया लोग नही है!

जब वह यह तकरीर कर चुका तब उसे खयाल आया कि जीरा-सौफ तो ठीक था, पर तम्बाकू का उल्लेख करना शायद उचित नही हुआ, बहुत ही व्यक्तिगत हो गया। सभा समाप्त होने के बाद अब्दुल्ला ने मौका पाते ही कहा—यह आपको कैसे खयाल हुआ कि तम्बाकू बेचनेवाले कम बहादुर होते हैं?—कहकर उसने साके-तिक रूप से सियामादेवी की तरफ हाथ बढाया और उससे बोला—चलिए भाभी, चलिए, क्या गन्दे लोग हैं! दिमाग भन्ना गया है, कुछ सैर-सपाटा किया जाए।

कहकर वह हमेशा की तरह सियामा को लेकर उडनछू हो गया। इससे मुश्ताक को बडा गुस्सा आया। हमेशा की तरह वह मेज़बान और दूसरे लोगो के साथ छूट गया था। वह गुस्से मे भरकर बोला—यह तो हमने जल्से मे कह दिया कि दो अलग-अलग कौमे है, वगैरह-वगैरह, और मुल्क को तकसीम कर दिया जाए, पर तकसीम कैसे किया जाएगा? कोई इलाका ऐसा नही है जिसमे हिन्दू लोग नही हैं। जल्से मे कहना और बात है, पर तजुर्बा तो यही बताता है कि बहुत-से मुसलमान बिलकुल हरामज़ादे है। ऐसे लोगो से तो कई हिन्दू ही भले होते है।

असली बात है लोग अच्छे हो। मुझे तो मुल्क की तकसीम का प्रोग्राम कुछ सियासी चाल ही लगती है, नही तो भला मुल्क तकसीम कैसे होगा!

जो लोग वहा जमा थे, उनमे से भी कई यह समझते थे कि जिन्ना साहब दो कौमो और मल्क की तकसीम करने का नारा किसी चाल से दे रहे है। वे हिन्दुओ से ज्यादा सीटें लेना चाहते है। असल मे कुछ होने का नही, बल्कि हो भी नही सकता। पर यह समझने के बावजूद वे हर सभा मे अब देश के विभाजन की माग रखने लगे, और काग्रेस को ऐसे चित्रित करने लगे, जैसे वह यह माग कर रही हो कि मुसलमानो को बलि का बकरा बनाकर कथित लोकतत्र स्थापित किया जाए।

वाइसराय ने जो कुछ कहा था, वह एक तरह से उन काग्रेसी नेताओ के मुह पर तमाचा था, जो गाधीजी से अलग होकर सरकार से सहयोग करने के लिए हाथ फैला चुके थे। नतीजा यह रहा कि भटके हुए शरारती लडको की तरह ये नेता फिर से गाधीजी के झुण्ड मे लौट आए। मौलाना आजाद ने 'रामगढ को लौटो' का नारा दिया, और यह साफ कर दिया कि इन घटनाओ के कारण महात्मा गाधी को फिर से काग्रेस के नेतृत्व का सूत्र अपने हाथो मे ले लेने के लिए कहा जा रहा है। इस प्रकार यह एक पूरा नाटक हो गया, जिसको अलग-अलग लोगो ने अलग-अलग कोण से देखा।

लीग ने इसे मिलीभगत कहा, क्रातिकारी तथा उनके पर्चे भी यही कहते, पर इस समय वे गाधीजी के हाथो को मजबूत करना चाहते थे, ताकि जल्दी से जल्दी सग्राम छिडे। पर आनन्दकुमार ने इस घटना की व्याख्या दूसरे ही रूप मे की। उन्होने कहा—यह सारी उछल-कूद और जल्दी-जल्दी उलट-फेर व्यर्थ नही रही, यह थोडा सोचने पर ही पता लग सकता है। अब यह स्थिति साफ हो गई कि युद्ध-प्रयास मे सहायता देने के लिए तैयार होने पर भी सरकार कुछ जिम्मेदारी नही देना चाहती और सारी शक्ति अपने हाथो मे रखना चाहती है। अब यह स्पष्ट हो गया कि या तो काग्रेस बैठ जाए, या वह सग्राम छेडे। दूसरा कोई रास्ता रह ही नही गया, और इसी कारण लीग ज्यादा नाराज हो रही है।

फिर भी स्वय गाधीजी लडाई छेडने की जल्दी मे नही थे। वे तो अपने पुराने ढग से पहेलिया बुझाते रहे। उन्होने एक वक्तव्य मे कहा—मैं यह नही चाहता कि इग्लैड हारे या उसका अपमान हो। लन्दन के सेंट पाल गिरजे को क्षति

पहुचे, तो मुझे उतना ही दु ख होगा, जितना काशी विश्वनाथ के मदिर या जामा-मस्जिद के नष्ट होने पर होगा। मैं इन दोनो धर्मस्थानो को, यहा तक कि सेंट पाल गिरजे को अपने प्राणो का बलिदान करके भी बचाना चाहूगा, फिर भी उनकी रक्षा के लिए एक भी जान नही लूगा। यही ब्रिटिश लोगो के साथ मेरा मतभेद है।

काग्रेस के सभी बुद्धिमान भक्त यह समझ रहे थे कि यदि अब भी इसी तरह की बातो मे समय नष्ट किया गया, तो मान लेना चाहिए कि अब नेतृत्व का दिवाला पिट चुका है। और नेतृत्व उस नपुसकीभूत पुरुष की तरह हो चुका है जो स्त्री को बुरी तरह चिपटा रहा है, पर इतना ही। पर आनन्दकुमार ऐसा नही समझते थे। उनका कहना था कि अन्तर्राष्ट्रीय परिस्थिति के कारण गाधीजी उस एकमात्र मार्ग को नही अपना पा रहे है, जो इस स्थिति मे अनिवार्य है। मै किसी भी हालत मे युद्ध-प्रयास मे मदद नही दे सकता, यह कहकर उन्होने समझौते का मार्ग जहा तक उनके स्वय का सम्बन्ध है, बिलकुल बन्द कर दिया है।

कुछ भी हो, इस ज़िद से उग्र लोगो मे बेचैनी और रोष बढ रहा था। क्राति-कारी पर्चों मे अब सयम का अभाव परिलक्षित होने लगा था। फ्रास के पतन के बाद भारतवर्ष मे ब्रिटिश सरकार की साख इतनी गिर गई थी कि लोग खुलेआम नोट लेने से इन्कार कर रहे थे।

क्रातिकारी पर्चों मे यह कहा जा रहा था कि न सत्याग्रह की जरूरत थी, न किसी और बात की, इसीको और बढा दिया जाता, तो उसीसे सरकार का पतन हो जाता। जिस सरकार के नोट जनता को ग्राह्य नही है, वह सरकार तो समाप्त हो चुकी है, ऐसा समझना चाहिए। इस प्रकार पर्चों द्वारा बहुत भयकर रूप से सर-कार के घाव की जगहो को बार-बार छूने के कारण सरकार ने बहुत ज़बर्दस्त ढग से उग्रवादियो को गिरफ्तार करने की कोशिश की, पर दो-चार लोगो को गिरफ्तार कर पाने पर भी उसकी चेष्टा मुख्यत व्यर्थ गई। असली लोग जाल मे नही आए।

२५

पुलिस अधिकारी टीकाराम ने बहुत देर तक सिर ही नही उठाया। यह उसे पता था कि राघवेन्द्र उर्फ़ पुरन्दर उसके सामने खड़ा है, बल्कि लाकर खडा किया

गया है। वह जान-बूझकर अवज्ञा और घृणा दिखाने के लिए, और शायद अवज्ञा और घृणा दिखाने के लिए उतना नही, बल्कि पुरन्दर के दिल मे दहल पैदा करने के लिए बुत बना अपना काम करता रहा। मेज़ पर एक बैटन रखा था, और टीकाराम की कमर के पास सर्विस पिस्तौल लटक रही है, यह पहली ही दृष्टि मे ध्यान मे आ जाता था। टीकाराम कुछ फाइलो को देख रहा था, जिनमे कही-कही फोटो भी लगे हुए थे। जेल और पुलिस करते-करते राघवेन्द्र को इतना ज्ञान हो चुका था कि इन फाइलो मे क्या है। फोटो शायद फरारो के हैं। वह यह भी समझ गया कि उसे क्या कहा जानेवाला है।

फिर भी उसे बडा बुरा लग रहा था। शायद यह डर था।—जेल मे फिर से बाध दिए जाने का डर! वह गिडगिडाकर कुछ कहना चाहता था, पर टीकाराम ने सिर ही नही उठाया। टीकाराम के सिर पर ज़ोर से पखा चल रहा था। उसकी कुछ हवा राघवेन्द्र तक पहुच जाती थी। फिर भी उसे बहुत गर्मी लग रही था, जिससे तबीयत और घबडा रही थी।

इन दिनो राघवेन्द्र बहुत दु खी रहा। कोई ठीक रोज़गार नही रहा। लगभग भीख पर ही, यानी वैसी भीख पर जैसी राजनैतिक कार्यकर्ता मागने पर मजबूर होते है, गुजर हो रही थी। मन्त्रीजी के घर पर रहते समय जिन लोगो से परिचय हुआ था, उन्ही लोगो से माग-मूगकर काम चलता था, पर काम कुछ अच्छा नही चल रहा था। कई बार वह आत्महत्या की बात सोच चुका था। जीवन के सूत्र इतने उलझ गए थे, कि उन्हे सुलझाने की कोई आशा नही दिखाई पड रही थी। एक सूत्र सुलझता, तो दस नये उलझ जाते।

वसुधा के पास फटकने की हिम्मत नही थी, और पद्मा ने जवाब दे दिया था। भला वेश्याए किसीकी होती हैं! हृदय क्षत-विक्षत हो गया था। मन के हर कोने मे सन्देह के जाने कितने साप छिपे हुए थे, जो समय-समय पर फन उठाकर प्रकट हो जाते थे। जीवन मे एक सिरे से दूसरे सिरे तक जितने भी काम किए, सभी अटपटे, भ्रामक और गलत थे। साधारण शिक्षक की तरह रहते, तो ठीक था, पर शिशु के साथ क्रान्तिकारी बनने के फेर मे पड गए। जब वह गिरफ्तार हो गया, तो उसके साथ विश्वासघात करके उसकी पत्नी को पथभ्रष्ट किया। फिर तो गलती पर गलतिया होती हो गईं।

आज घूम रहा था कि अब किसके पास चला जाए कि दिन कटे कि इतने मे

टीकाराम का सलाम पहुचा, और अब वह एक चोर की तरह उसके सामने खडा था। खडे-खडे काफी देर हो गई। वह जान-बूझकर सिर नही उठा रहा था, अपमान करने के लिए, अपना क्रोध दिखाने के लिए, कि मैं शिशु को गिरफ्तार नही करा पाया।

राघवेन्द्र यही सब सोच रहा था। उसकी टागे दुख रही थी कि इतने मे टीकाराम ने जैसे एकाएक सिर उठाया, और उसे देखकर आश्चर्य प्रकट करते हुए बोला—तुम यहा कैसे ? मैं तो समझता था कि तुम जेल मे हो !

राघवेन्द्र समझ गया कि यह भी अपमानो की उस कडी मे ही आता है। बोला—आप ही ने तो मुझे छुडाया, और अभी आप ही ने मुझे बुलाया !

टीकाराम ज़रा भी नही झेंपा कि वह रगे हाथो पकडा गया है, और उसका अभिनय व्यर्थ गया। झेंप-सी मिटाते हुए बोला—तुमको तो जेल मे होना चाहिए, तुम यहा क्या कर रहे हो ?

राघवेन्द्र की समझ मे नही आया कि इसपर वह क्या कहे। टीकाराम ने कहा—अब तुम्हे असली बात बताता हू। तुम यह वादा करके छूटे थे कि तुम जल्दी ही शिशु को गिरफ्तार करा दोगे। पर कई हफ्ते हो गए, और तुम कुछ भी नहीं कर पाए, इसलिए क्यो न तुम्हे फिर से जेल भेज दिया जाए ? सम्भव है, तुम भीतर-भीतर क्रान्तिकारियो से मिले हो।

राघवेन्द्र समझ नही पाया कि क्या कहे, क्योकि जब ज़बरदस्त बोलता है तो चित भी उसका होता है, पट भी उसका होता है। वह घिघियाकर कुछ बोलने की सोच रहा था, तब तक टीकाराम ने फिर कहा—तुमने खबर दी थी कि रामशरण गुप्त के यहा शिशु तथा अन्य क्रान्तिकारी आते है। पर मैंने वहा इतने दिनो से निगरानी रखाई, पर किसी भी बात का पता वही लगा। जब मैने रामशरण को कल बुलाकर धमकिया दीं, तो उसने बताया कि किस प्रकार तुम उसके यहा बिस्तर और सूटकेस रखकर बाहर गए थे, और गिरफ्तार हो गए। इसपर उसने तुम्हारा बिस्तर और सूटकेस गगाजी मे फेक दिया। वह तो बडा डरपोक आदमी है। तुमने उसपर फिजूल दोष लगाया।—कहकर टीकाराम ने जैसे अनुप्रेरणा लेने के लिए मेज़ पर पडे हुए बैटन की ओर देखा। फिर उसने एकाएक चारो तरफ देखकर कहा—तुम 'रणभेरी' पढते हो ?

—'रणभेरी' ?

राघवेन्द्र को बडा आश्चर्य हुआ क्योकि उसने तो इन दिनो कुछ भी नही पढा था। बोला—मैने तो इन दिनो अखबार के अलावा कुछ नही पढा है, सो भी रोज़ नही मिल पाता है। कभी खडे होकर रेडियो से लडाई की खबरें सुन लेता हू।

पर टीकाराम रुखाई के साथ बोला—उसमे तो तुम्हारे लेख छप रहे है, और तुम कहते हो कि मैंने 'रणभेरी' देखी नही है!

—मेरे लेख ?

अब की बार राघवेन्द्र को सचमुच आश्चर्य हुआ, पर यह शायद उतना आश्चर्य नही, जितना कि भय और घबराहट थी। उसका सिर घूम गया, और वह समझ गया कि किसीने उसे फसाने के लिए ही उसके नाम से लेख लिख दिए होगे। उसे कुछ सफाई नही सूझी। बोला—मेरा नाम राघवेन्द्र तो है ही नही। यह तो मैंने अपने पहले के जीवन से अपने को अलग करने के लिए रख लिया है।

टीकाराम हसकर बोला—लेख पुरन्दर के नाम से छप रहे है।

राघवेन्द्र ने देखा कि भागने के सारे रास्ते कट गए। वह बहुत घबडा गया। बोला—मैंने तो आज तक कभी कोई लेख नही लिखा। हा, जब शिक्षक था, तो छात्रो को एकाध आदर्श निबन्ध लिखकर देता था। आप विश्वास कीजिए कि मेरा उस लेख से कोई भी सम्बन्ध नही है। उस बदमाश शिशु ने मुझे फसाने के लिए इस नाम से लेख लिखे होगे। आप तो जानते हैं कि वह मुझसे बदला लेना चाहता है।

—पर तुम ऐसे सन्त हो, कि बदला लेना नही चाहते!

—मैं दिन-रात उसे खोज रहा हू। उसे पाऊ तो कच्चा चबा जाऊ! मुझे तो मालूम नही था कि वह मेरे नाम से लेख भी लिख रहा है।

टीकाराम ने कहा—पर तुमने जो सुराग दिया, वह तो बिलकुल व्यर्थ निकला, और तब से तुम्हारा पता ही नही लगा। तीन दिन से लगातार तुम्हे ढुढवाकर तब तुम्हे कठिनाई से ले आया गया।

टीकाराम ने अब जो यह कहा, उससे उसके द्वारा पहले कही हुई बात बिलकुल कट जाती थी, पर उसने इसकी कतई परवाह नही की। वह उसी लहजे मे बोलता गया—बैठो, डरो मत, तुम बहुत उपयोगी काम कर सकते हो। देखो, अब केवल एक शिशु की बात नही है, तुम उन लोगो को गिरफ्तार कराओ, जो 'रणभेरी', 'बिगुल', 'अग्रदूत' और तरह-तरह के पर्चे बाट रहे हैं। हमे खबर मिली

है कि इसमे केवल क्रान्तिकारी ही नही, बहुत-से भूतपूर्व कांग्रेसी भी है।

राघवेन्द्र बैठ गया था, और अब उसे विश्वास हो गया था कि भले ही उसे डराया-धमकाया जाए, और उसका अपमान किया जाए, पर उसे गिरफ्तार नही किया जाएगा। बोला—मै क्या करू ? न मुझे कोई 'रणभेरी' देता है, और न मुझे किसी और बात का पता लगता है। यह तो आपसे ही पता लगा कि 'रणभेरी' नाम से कोई पर्चा निकलता है, और उसमे बदमाशो ने मेरे नाम से लेख लिखना शुरू किया है।

टीकाराम बोला—छोडो लेख की बात !—टीकाराम ने लेख की बात महज़ डराने के लिए कही थी। असल मे पुरन्दर के नाम से कोई लेख छपा ही नही था। बोला—छोडो लेख की बात ! पर तुमने रामशरण के बारे मे झूठ क्यो कहा ? लगता है कि उसने तुम्हारा बिस्तरा और सूटकेस गगा मे फेंक दिया, इसलिए तुमने व्यर्थ मे उसके घर को क्रान्तिकारियो का अड्डा बता दिया।

इसपर पुरन्दर बहुत ही जोश मे आकर बोला—मेरी हर चीज़ उस साले के घर मे मौजूद है। मैने खुद अपनी आख से उसके बिस्तरे पर अपना खेस बिछा हुआ देखा है। मेरे साथ चलिए, अभी मैं हर चीज़ उसके घर से बरामद करता हू। वह साला क्रान्तिकारियो के माल मार-मारकर ही इतना धनी हो गया है। नही तो वह इतनी बडी कोठी कैसे खडी करता ?

टीकाराम ने इसपर कोई ध्यान नही दिया। वह बोला—मै समझ गया, तुम शिशु को गिरफ्तार नही करा सकते, पर जो लोग 'रणभेरी', 'बिगुल' और 'अग्रदूत' बाटते हैं, उन्हे गिरफ्तार कराना कोई मुश्किल बात नही है। तुम चाहो तो उन्हे गिरफ्तार करा सकते हो। कम से कम कुछ कोशिश तो करो। दिन-भर व्यर्थ में मारे-मारे फिरने और रात को पद्मा के दरवाज़े पर रोने-धोने से कुछ नही होगा। कुछ काम करो।

पुरन्दर का आत्मविश्वास कुछ-कुछ लौट चुका था, फिर भी वह यह गुत्थी नही सुलझा पा रहा था कि कैसे किसीको गिरफ्तार कराए। शिशु आदि जितने भी लोग इस क्षेत्र मे काम कर रहे होगे, वे इतने सावधान है कि उनको गिरफ्तार कराना कठिन काम है। जब सारा पुलिस विभाग उन्हे गिरफ्तार नही कर पा रहा है, तब यह आशा करना कि वह अकेले अपने साधनो से उन्हे गिरफ्तार करा सकेगा, दुराशा-मात्र है। वह बोला—मै कोशिश तो करूगा, पर वे मुझपर विश्वास

नहीं करते, इसलिए मै उनमे पहुच ही नही सकता, और जब पहुच नही सकता, तो गिरफ्तार कैसे करा सकता हू।

टीकाराम चिन्तित लगा। बोला—मुझे तुमसे बडी आशा थी, पर तुम तो अपने ही कामो मे इतने लग गए कि तुमसे हमारी आशा पूर्ण नही हुई। जेल के दिनो को याद करो, और कुछ करके दिखाओ। काग्रेस के सम्बन्ध मे भी मैं खबरे चाहता हू, क्योकि अब अगस्त घोषणा अस्वीकृत हो चुकी है। अब काग्रेस वालो को मजबूरी से कुछ न कुछ करना ही पडेगा। उधर हिटलर इग्लिस्तान पर हमला करने ही वाला हे। कुछ लोगो का खयाल है कि काग्रेस वाले अपना आन्दोलन उसी समय शुरू करेंगे।

पुरन्दर न तो इन बातो को जानता था, और न वह इन बातो को समझने की कोशिश करता था। उसे इन मामलो मे कोई दिलचस्पी ही नही रह गई थी। अपनी गुजर ही उसके लिए मुश्किल हो रही थी। उसे उसी सम्बन्ध मे तरह-तरह के झूठ बोलना और फरेब करना पडता था, फिर भी पेट मुश्किल से भरता था। वह बोला—मुझे तो इन सब बातो पर सोचने का समय ही नही मिलता। मेरे एकाएक छूट जाने से फिर से वह पुरानी अफवाह जोर कर गई है कि मैं उस बार माफी मागकर छूटा था, इसलिए इस बार भी माफी मागकर छूटा हूगा। मैं तो दोनो ही तरीको से मारा गया। देशभक्त मुझपर विश्वास नही करते, और आप लोग भी मुझपर विश्वास नही करते।

टीकाराम इस परिस्थिति से अपरिचित हो, ऐसी बात नही, पर उसे पुरन्दर से कोई सहानुभूति नही थी। उसके प्रति घृणा ही हो रही थी, कि यह आदमी किसी काम का नही है। बोला—क्या तुम नियमित रूप से खुफिया की नौकरी लेना पसन्द करोगे? मैं तुम्हारी सिफारिश कर सकता हू, पर काम दिखाना पडेगा। सरकार का पैसा कोई फोकट मे नही खा सकता।

पुरन्दर को बडा गुस्सा आया कि जैसे यही बहुत काम कर रहे हो। इतने साल हो गए, अमिताभ को गिरफ्तार नही कर पाए, शिशु ऐसे साधारण क्रान्तिकारी को भी ये अपने चगुल मे फसा नही पाते। ऊपर से धौस जमा रहे है कि सरकार का पैसा कोई फोकट मे नही खा सकता! वह बोला—मैं कैसे पहले से कहू कि मैं किसीको गिरफ्तार करा ही सकूगा! रामशरण का नाम बताया, सो आप कहते है, कि वहा कोई आता ही नही, और मुझे यही पता था कि वहा सब

लोग आते है।

टीकाराम हसा, क्योकि रामशरण ने उसे पूरी बात बता दी थी, और कहा था—मैंने गगाजी मे कुछ नही फेंका, उसका सब सामान मेरे पास है। मैं जानता था कि यह खतरनाक आदमी है, इसलिए मैं चाहता था कि यह फिर कभी न आए, इसीलिए मैने इसका सब सामान जब्त कर लिया था।

कहकर उसने सारा सामान टीकाराम के सामने रख दिया था। टीकाराम ने उसमे से एक नया कम्बल अपने लिए रख लिया था, बाकी सामान उसे दे दिया था। इस कारण वह हसा और बोला—रामशरण की बात जाने दो, उसपर हम निगरानी रख रहे है। तुम इससे भी असली कोई नाम तो बताओ।

पुरन्दर को याद आया कि सचमुच उसने और किसीका नाम नही बताया, इसलिए उसने अपना दोष-स्खालन करने के लिए जो भी नाम मुह मे आया, उसे लेते हुए कहा—सूर्यकुमार का घर छिपकर काम करनेवाले काग्रेसियो का एक प्रधान अड्डा है, इसीलिए मैं वहा से भाग रहा था कि व्यर्थ मे पकडा जाऊगा। वहा एक कुत्ता है, वह विशेष रूप से गुप्त कार्य मे मदद देता है, क्योकि कोई भी बाहर से आता है तो उसे वह गुर्राकर रोक लेता है, तब तक खतरनाक चीजें चूल्हे के सिपुर्द हो जाती है।

टीकाराम ने इस सूचना पर कोई ध्यान नही दिया। एकाएक पूछ बैठा—क्या तुम समझते हो कि आन्दोलन छिड जाने पर काग्रेस और क्रान्तिकारी एक हो जाएगे ?—कहकर उसने ध्यान से पुरन्दर के चेहरे की ओर देखा कि वह प्रश्न को समझ भी रहा है या नही।

पुरन्दर सोचकर बोला—आपको याद होगा कि जब पहले-पहल काग्रेस मन्त्रिमण्डल बना था, तो थोडे दिनो के अन्दर ही दो काग्रेस मन्त्रिमण्डलो ने क्रान्तिकारी राजनैतिक कैदियो की रिहाई के सवाल पर पद-त्याग कर दिया था। इसलिए यह समझना तो भूल है कि दोनो मे कोई ऐसी खाई है जो पाटी न जा सके। जवाहरलाल चन्द्रशेखर आज़ाद से मिलते थे। गणेशशकर विद्यार्थी क्रान्तिकारियो के बडे भारी मित्र थे, इसी तरह सभी सफल काग्रेसी नेता दो नावो पर पैर रखे हुए है।

टीकाराम को अब की जैसे कुछ तत्त्व की बात मालूम हुई, और उसने जल्दी-जल्दी कुछ नोट कर लिया। बोला—तो तुम हमारी नियमित सर्विस मे आना

पसन्द नही करोगे ? मैं जानता हू कि तुम्हारी रोटी कठिनाई से चल रही है।

पुरन्दर बहुत पतित था, फिर भी वह वेतन-प्राप्त खुफिया होने के विचार को सहसा पचा नही सका। बोला—मुझे आप मजबूर न कीजिए। मैं आपका काम कर ही रहा हू, पर जैसाकि आपने बताया कि वेतन लूगा तो कुछ काम दिखाना ही पडेगा, पर मुझे विश्वास नही है कि जल्दी मे कुछ काम दिखा सकूगा। आप कहते है कि 'रणभेरी', और जाने क्या-क्या पर्चा निकलता है, पर मैने तो उनके नाम आप ही से सुने। जिस जनता मे मै घूमता हू, उसमे मैने किसीको 'रणभेरी' का नाम लेते हुए नही पाया, फिर मैं काम कैसे दिखाऊगा!—कहते-कहते जैसे एकाएक उसे कुछ और याद आया, बोला—आप ही के खुफियो ने तो सारा काम बिगाड दिया। मैं उस रात को वसुधा के पास पहुच जाता, तो वसुधा अवश्य मेरा विश्वास करती, और फिर मैं उसके ज़रिये बहुत-सी बातो का पता पा जाता, पर आपके खुफियो ने मुझे शिशु समझकर गिरफ्तार कर लिया, और मैं महीनो जेल मे सडता रहा। मेरी गिरफ्तारी ऐसे की गई कि सभीको मालूम हो गया। वसुधा और शिशु को भी पता लग गया होगा। इसलिए जब मैं एकाएक छूट गया, तो वसुधा ने मेरा विश्वास नही किया, और जो कुछ मुझपर बीता, वह तो पहले ही बता चुका हू। मुझे डर है कि मैं अब किसी प्रकार का कोई काम नही दिखा सकता। मैं इसीलिए नौकरी नही करूगा, यद्यपि मुझे किसी तरह की नौकरी की सख्त जरूरत है।

टीकाराम उसे नौकरी देने के लिए कोई विशेष उत्सुक भी नही था, फिर भी बोला—तुम पुलिस की नौकरी करना नही चाहते, इससे जाहिर है कि तुम भीतर ही भीतर अब भी अपनी पहले की सहानुभूतिया कुछ हद तक रखे हुए हो। तुम्हारी यह हालत तब है, जबकि तुम दो बार माफी मागकर छूट चुके हो!—कहकर उसने तेवर चढा लिया, क्योकि उसे लगा कि नौकरी अस्वीकार करके इसने व्यक्तिगत अपमान किया है। बोला—मैने मामूली अपराधियो और राजनैतिक अपराधियो मे यही फर्क देखा, कि जब मामूली अपराधी मुखबिर बन जाता है, तो वह एकदम पानी-पानी हो जाता है, उसमे कोई ऐंठन बाकी नही रहती, पर कथित राजनैतिक अपराधियो की रस्सी जल जाने पर भी ऐंठन बाकी रह जाती है। जाओ, तुम हमारे सामने से निकल जाओ! जो तुम कुछ खबर नही दे सके, तो अब की बार मैं तुम्हे '१०९' या '११०' मे गिरफ्तार कर लूगा, फिर तुम्हारी

ऐंठन कहा जाती है, यह मैं देखूगा !

पुरन्दर उठकर खडा हो गया। पर वह टीकाराम को क्रुद्ध छोडकर जाने से हिचकिचा रहा था, साथ ही जब जाग्रो कह दिया गया तो रुक भी नही सकता था। इस कारण उसकी दशा बहुत ही अजीब हुई। उसे लगा कि सजा अब शुरू हुई है। निराश होकर बोला—जब आप लोग उन लोगो को पकड़ नही पा रहे है, तो मैं कैसे पकड पाऊ ? मेरे पास अपनी दो आखो और दो पैरो के सिवा कोई साधन भी तो नही है। विभिन्न कारणो से सबके यहा जाना मेरा बन्द-सा है।—कहकर उसने ऐसा चेहरा बनाया जैसे रो पडनेवाला हो।

टीकाराम मन ही मन समझ चुका था कि इससे कुछ नही होगा, फिर भी उसने बुलाकर इस कारण डाटा-डपटा था कि कुछ बन जाए तो बन जाए, यो तो कुछ बन ही नही रहा था। पुलिस विभाग के प्रान्तीय प्रधान का खयाल था कि सब पर्चे कानपुर मे ही छप रहे है, और शायद यही लिखे भी जाते है। सारे छोटे-बड़े छापेखानो के टाइपो के और छपी सामग्रियो के नमूने प्राप्त किए गए थे और विशेषज्ञ 'रणभेरी', 'बिगुल' आदि की छपाई से उन्हे मिलाकर अध्ययन कर रहे थे, पर कुछ भी पता नही लगा था। जिस भी प्रेस पर जरा भी सन्देह हुआ, उसकी तलाशी ली जा रही थी, और इसके लिए कानूनी पेचीदगियो के कारण किसी प्रकार चाल मे धीमापन आने नही दिया गया था। तलाशी पहले ली गई थी, और वारट बाद को प्राप्त किया गया था। भारत रक्षा कानून के अनुसार, जो असल मे शासक रक्षा कानून था, कानूनी दिक्कतें भी कम रह गई थी। बोला—तुमको मैंने अन्तिम बार चेतावनी दे दी, अब जैसा तुम्हारा जी चाहे, करो। फिर न कहना कि मैंने तुम्हे मौका नही दिया। जा-ओ ओ-ओ ···। · ·

क्या करता ! पुरन्दर दुतकारे और मारे हुए कुत्ते की तरह दुम दबाकर निकल गया। उसका मन ग्लानि से भर गया था। लग रहा था कि अब कोई उद्धार नही है। इतने पैबन्द लग चुके हैं कि मूल कपडा ही गायब हो गया। मन की यही दशा थी। वह समझ रहा था कि यह सारी विपत्ति उसपर इसलिए आई थी कि वह जेल नही काट पाता था। यदि वह धैर्य से जेल मे रह पाता, तो सारे दुर्भाग्यो के बावजूद वह किसी न किसी रूप मे सिर ऊचा करके रह सकता था। लोग तो पहली बार माफी मागकर छूटने की बात भूल भी गए थे।

पुरन्दर मर गया था, और राघवेन्द्र रह गया था। यह लडाई आ टपकी, इसी-

से सारा काम बिगड गया। आकस्मिक घटनाए होती गईं, और अपने विरुद्ध होती गई। पकडे गए तो शिशु के धोखे मे, नही तो यदि राघवेन्द्र के रूप मे पकडे जाते तो शायद तसल्ली कर लेते, और जहा सैकडो जेलो मे पडे है, वह भी पडा रहता, पर शिशु के धोखे मे पकडे जाने के कारण मनोबल तो योही समाप्त हो गया।

किसी प्रकार कोई टिमटिमाती आशा भी नही रही। रोटी के साधन भी जाते रहे। यह मधुकरी मागकर भला कब तक गुजर होगी। जब फ्रास का पतन हुआ था, तो लगा कि ब्रिटेन का भी पतन हो जाएगा, शायद इसीलिए काग्रेस बहुत धीरे-धीरे चल रही थी। कुछ भी हो, जून मे जिस प्रकार लगा था कि लडाई अब जल्दी ही समाप्त हो जाएगी, अब वैसी कोई सम्भावना नही लग रही थी। वह दु खी होकर गगाजी के किनारे पहुचा, और बहुत देर तक किनारे-किनारे चलता रहा। यह विचार आया कि छलाग लगा लू तो कैसा रहे ! सारे दु खो की समाप्ति हो जाए। हिन्दू यह जो पुनर्जन्म मानते है, यह बहुत अच्छा है। पहले जन्म की सारी बाते भूल जाती है, सब घाव भर जाते है, और नया चोला मिलता है ताकि नये सिरे से काम शुरू हो सके।

वह चलते-चलते बिलकुल शहर के बाहर पहुच गया और एकान्त स्थान देखकर बैठ गया। सध्या धीरे-धीरे अपने केशो को खोलकर धरती पर उतर रही थी। दिन-भर का थका-मादा सूर्य अब प्रचण्ड नही, बल्कि कुछ मुलायम लग रहा था। गगा की लहरो मे प्रकृति मे तिरती हुई शान्ति का प्रतिफलन हो रहा था। लहरो पर धीरे-धीरे काली परते बढती जा रही थी। थोडी ही देर मे वे बिलकुल काली हो जाएंगी, और यह पता नही लगेगा कि लहरो मे क्या समाया हुआ है। पुरन्दर के मन मे यह इच्छा हुई कि वह भी इसीमे समा जाए। उससे सारी समस्याओ का समाधान हो जाता था। यदि पुनर्जन्म है, तो फिर जन्म होगा, और यदि नही है, तब तो परिसमाप्ति हो ही गई।

सूर्यास्त हो चुका था। आकाश के ऊपर वाले हिस्सो पर रोशनी की झलक अब भी बाकी थी, पर पानी लगभग काला हो चुका था। टीकाराम ने बहुत ही मर्मघाती ढग से उसका अपमान किया था। वह छलाग लगाने के लिए उठकर खडा हो गया, पर जहा वह खडा था, उसे लगा कि उसके सामने पानी यथेष्ट गहरा नही है। इसमें छलाग लगाने से सम्भव है कि वह बच जाए, इसलिए वह जान-बूझकर और आगे चलने लगा। वह अब आगे बढ़ने लगा, सो भी बिना यथेष्ट

सावधानी के। एक जगह उसे लगा कि वर्षा के कारण भरी हुई नदी किनारा काफी तोड चुकी है। जितनी रोशनी थी, उसीमे उसे लगा कि जमीन के कई गज़ के एक टुकडे मे दरार हो गई है, और जिस किसी समय भी धसकर गिर सकती है। वह उस टुकडे पर यह आशा करके खडा हो गया कि अब वह धसनेवाली ही है। उसके सामने ही छपाक् से आवाज़ देकर इसके पहले किनारे के कई हिस्से धस चुके थे। वह सास रोककर प्रतीक्षा करता रहा कि जिस ज़मीन पर वह खडा था वह नीचे को जाए! हा, उस टुकडे का धसना निश्चित था, क्योकि उसके दोनो तरफ के हिस्से धस चुके थे, और यह एक छोटे स्थलडमरूमध्य की तरह हो चुका था।

एक!

दो!!

तीन!!!

चार!!!!

वह गिनता रहा और आशा करता रहा कि किसीभी वक्त ज़मीन का वह टुकडा उस समेत धस जाएगा, पर कहा! वह तो सौ तक गिन गया, पर यह स्थलडमरूमध्य विलीन नही हुआ। जब उसने देखा कि सौ तक गिनने पर भी वह ज़मीन पर खडा था, तो उसने समझ लिया कि ईश्वर या दैव की यह इच्छा नही है। वह भयकर जोर से पागलो की तरह पीछे की तरफ छलाग लगा गया, और पता नही उसके प्रचण्ड धक्के के कारण ही हो, या और किसी कारण से ही हो, वह टुकडा बडे ज़ोर के साथ पानी मे गिरा। उसे लगा कि वह भी गिर चुका है। उसे इतना ही मालूम हुआ कि वह भीग गया है, और सास नही आ रही है। चारो तरफ भीतर-बाहर अधेरा है। एक क्षण मे बहुत-से विचार कौध गए, भला हुआ या बुरा हुआ, समझ मे नही आया। सास नही आ रही थी। अन्धकार ही अन्धकार था—ठण्डा और गीला अन्धकार! रन्ध्रहीन ठोस अन्धकार! जैसा उसने कभी देखा नही था।

थोडी देर मे जब वह कुछ सम्भला, तो उसने देखा कि वह नदी के किनारे पानी से काफी दूर खडा है। उसने कपडो को टटोलकर देखा, तो वे सचमुच भीगे थे। ज़मीन के उस टुकडे के पानी मे गिरने से जो छींटे आए थे, उनसे उसके कपडे गीले हो गए थे। उसने अपने को डूबता हुआ समझकर जो हाथ-पैर मारे थे, उसके कारण वह किनारे से और दूर जा पडा था। उसे अब बुरा नही लग रहा था कि

वह एक ऐसे तजुर्बे के रदे से गुजरा है, जो मृत्यु-यातना से किसी प्रकार कम नही था। वह इस निश्चय पर पहुचा कि ईश्वर की इच्छा यह नही है कि वह मरे, नहीं तो सौ गिनते ही जमीन धस गई, फिर भी वह बचा रहा था, यह किस जादू से कम है। वह बहुत खुश था। भले ही उसके जीवन मे बहुत-सी गुत्थिया पड गई हो, पर ईश्वर चाहते है कि वह ज़िन्दा रहे। इसके पहले वह ईश्वर के सम्बन्ध मे कभी विशेप सोचता नही था। फिर भी उसे लगा कि यह ईश्वर का आदेश है कि तुम जीओ।

वह इस चिन्ता से वली होकर शहर की तरफ चला। कपडे गीले थे, पर सूख जाएगे। उसका कोई गम नही। वह जहा ठहरा हुआ था वही पहुचा। बाबू सूर्यकुमार के यहा रहते समय इस व्यक्ति कृष्णमोहन से उसका परिचय हुआ था। वह बहुत सीधा-सादा गृहस्थ था। इसका कोई काम पडा था, जिसे बनाया तो था सूर्यकुमार ने, पर वह समझता था कि राघवेन्द्र ने भी कुछ उसमे हाथ बटाया है। वह कांग्रेस का चार आने का सदस्य था, बस इतना ही। न कभी जेल गया था, न आगे जाने की सोचता था। इसीके यहा राघवेन्द्र इस समय दो-तीन दिन से टिका हुआ था। वहा न तो उसने यह कहा, कि मैं गिरफ्तार हुआ था, और न और कोई राजनीति की बात बताई। बस इतना ही कहा था—तुम्हारे यहा दो-चार दिन ठहरूगा। पता नही क्या हो।

कृष्णमोहन ने उसका स्वागत किया था।

खैरियत यह है कि वह इस समय घर पर नही था, इसलिए खामख्वाह झूठ बोलना नही पडा। जल्दी से कपडे बदलकर उसने दुकान मे जाकर कुछ खाना खाया। फिर वह एक बीडा पान खाकर कई बार थूकने के बाद इसी निश्चय पर पहुचा कि जब ईश्वर ने विशेष रूप से उसकी रक्षा की है, तो उसे 'रणभेरी' और 'बिगुल' बाटनेवालो के पीछे पडने की जरूरत नही। पीछे पडना कोई आसान भी नही। एक बात का तो पक्का पता लग गया, कि मजाक करने और डराने-धमकाने पर भी टीकाराम यह समझता है कि मैं किसी प्रकार दोषी नही हू। न मै क्रान्तिकारी हू, न कांग्रेसी। इस समय वे दोनो शब्द एक-से खतरनाक हो रहे हैं। उसने फिर से मुह मे थोडा तम्बाकू डाला, थूका, और पद्मा के कोठे की तरफ चल पडा।

२६

जयराम को पहले अछूतो से विशेष घृणा थी। अब भी वह घृणा उसी प्रकार मौजूद थी, पर अब जब से वह आर० एस० एस० का सदस्य बना था, विशेषकर तब से उसके अन्दर इससे भी बडी एक घृणा जग रही थी, जो मुसलमानो के विरुद्ध थी। इन दो घृणाओ को जब वह अपने अन्दर एकसाथ धुधुआते और बलते देखता था, तो उसे खयाल होता था कि एक घृणा तो ऐसी है, जिससे बाद को निपटा जा सकता है, पर मुसलमानो के प्रति अविश्वास और घृणा उसे ऐसी प्रचण्ड लग रही थी कि उनकी छाह मे उसे प्रतीत हो रहा था कि उसने अब तक जो कुछ किया, जो जोखिम उठाए, जो कष्ट झेले, हास्यास्पद और बचकाने थे।

१६४० के मार्च मे मुस्लिमलीग ने अपने लाहौर अधिवेशन मे पाकिस्तान अपना ध्येय घोषित किया था। इसके बाद ही गाधीजी ने जो बयान दिया, उससे उसे यह लगा था कि गाधी ही एकमात्र व्यक्ति हैं, जो यदि चाहे तो पाकिस्तान को रोक सकते है। राष्ट्रीय स्वयसेवक सघ, हिन्दू महासभा तथा कई हिन्दू सस्थाए इसके विरुद्ध थी, पर वे कर क्या सकती थी! जयराम खुशी से अपनी जान देने को तैयार था, पर जिन दिनो वह गाधीजी को मारने के लिए बम लिए-लिए फिरता था, उन दिनो उसके सामने एक शत्रु था—गाधी! पर अब शत्रु एक नही था, करोडो मुसलमान जिन्ना के पीछे थे। उसने सिद्धिनाथ से कहा—भई, अगर जिन्ना को मारने से काम चले, तो मैं तैयार हू। सकोच न करो। परिवार के लिए काफी कमा रखा है।

सिद्धिनाथ स्वय जयराम के मत का था, और यह भी चाहता था कि जयराम के हाथो यह कार्य हो, ताकि उसे दल के अन्दर यश मिले, पर उसने जब अपने नेताओ से पूछा तो सबने रहस्यमय ढग से कहा—शत्रु कभी बाहर का नही होता। यदि होता है, तो उससे आसानी से निपट लिया जाता है। शत्रु तभी खतरनाक होता है, जब वह भीतर का होता है।

सिद्धिनाथ ने इसपर जयराम से जो बातचीत हुई थी, उसीकी प्रतिध्वनि करते हुए कहा था—तो पाकिस्तान चाहनेवाले मुसलमान तो घर के अन्दर के शत्रु है, और उनका नेता, वह ईसाई जिन्ना है, जिसे अरबी तो क्या, उर्दू भी नही

आती। वह तो पचवक्ती नमाज भी नही पढता। उसीका काम तमाम कर देना चाहिए।

पर ऊपर से किसी प्रकार की कोई हिदायत नही मिली। सिद्धिनाथ ने नेताओ का अनुकरण करते हुए जयराम से कहा—आन्तरिक शत्रु खतरनाक होता है। हमे उसीसे सावधान रहना चाहिए। यदि हम भीतर से पौढ़े है, तो कोई भी बाहरी शक्ति हमारा बाल बाका नही कर सकती।

जयराम इसका अर्थ नही समझ सका। वह कई दिनो तक मत्र की तरह इस कथन के निहितार्थ को पकडने के लिए सोचता रहा। उसने खाना कम कर दिया। रात को केवल दूध पीकर पडा रहता। उसे नीद ठीक से नही आती। नीद आती तो उसमे बडबडाता।

यशोदा यह सब देखकर बहुत भयभीत हो रही थी। उसने घर की अच्छी तरह तलाशी ली, कि कही कोई बम आदि तो नही छिपा है! उसने जयराम की, अनुपस्थिति मे, जेबे टटोली। जो भी कागज़ मिला, उसे ध्यान से पढा, पर कही कुछ सुराग नही मिला। वह अब पहले की तरह नही रह गई थी। घटनाओ की गति समझने के लिए वह 'प्रताप' पढा करती थी। पर उसमे कोई ऐसी बात नही मिली, जिससे कुछ दिशा मिलती। तब उसने जयराम से पूछा—क्या बात है, तुम ठीक से खाते नही हो, पीते नही हो, सोते नही हो, बोलते नही हो, कुछ मुझे भी तो बताओ कि क्या हो रहा है। अगर तबीयत ठीक नही है तो किसी डाक्टर को दिखाओ। नही तो मैं ही वैद्यजी को बुला लेती हू। वे नाडी देखकर ही सब रोगो का पता लगा देते है।

जयराम को यह बात इतनी बचकानी लगी कि वह बिना कुछ उत्तर दिए वहा से उठकर अपने कमरे मे चला गया। यह वही कमरा था, जिसमे उसने कभी बम का कारखाना खोल रखा था। उस कमरे मे दक्षिण भारत की उस युवती का चित्र जहा टगा हुआ था वहा दाग बना है, या कि भ्रम है। उसने कनखी से उस दाग की ओर देखा। एक लम्बी आह निकल गई। यदि तुम होती, तो तुम्ही इन गुत्थियो को सुलझा सकती थी।

पा-कि-स्ता-न!

बहुत ही बुरा।

उसे तो पता भी नही था और उसकी तरह किसीको पता नही था कि इसका

क्या अर्थ है, पर इसमे वे सारे भयकर और अप्रिय सवेदन एकत्र थे, जो मुहम्मद गौरी से लेकर मुसलमानो के सम्पर्क मे आने पर पैदा हुए थे। पाकिस्तान ! एक बात तो साफ है कि इस शब्द मे यह तो अन्तर्निहित है ही कि बाकी सब नापाक है। किसी भी दाम पर पाकिस्तान रोकना चाहिए ! उसने उस फोटो की तरफ देखा और एकाएक उसका मन पिघल गया, बोला—तुम डरो मत, दक्षिण भारत को कुछ नही होनेवाला है। जो कुछ होगा, सो उत्तर भारत पर ही बीतेगा। युग-युग से यही हुआ है, आगे भी यही होगा। जो भी हमलावर आएगा, वह हमपर ही हावी होगा, हमे ही तहस-नहस करेगा, हमारे ही खेत और खलिहान को खून से लाल कर देगा, उत्तर भारत के खेतो मे लाशे बिछ जाएगी।—पर सोचते-सोचते उसे याद आया कि दक्षिण मे निजाम का राज्य है, पता नही इस बहाने क्या हो !

जयराम सिद्धिनाथ से कोई सान्त्वना प्राप्त न कर सका। इतने मे पाकिस्तान की माग पर गाधीजी का लेख आया, जिसमे उन्होने पाकिस्तान के विचार का विरोध किया था। पर यह विरोध उस प्रकार भयानक रूप मे नही था, जैसा उन्होने साम्प्रदायिक निर्णय के विरुद्ध किया था, जिसमे ब्रिटिश कूटनीतिज्ञो ने अछूतो को हिन्दुओ से फोडने का प्रयास किया था। गाधीजी ने प्रतिवाद करने को किया था, पर यह प्रतिवाद उस तरह ठोस नही था कि यदि यह गलत और अवैज्ञानिक माग मानी गई तो मैं प्राणो की बाज़ी लगा दूगा, अनशन करूगा या और कुछ करूगा। उन्होने तो बल्कि निराशा-भरे शब्दो मे कहा था—मुझे किसी अहिसक तरीके का पता नही है, जिससे आठ करोड मुसलमानो को भारत के बाकी लोगो की इच्छा पर चलने को मजबूर किया जाए, बहुसख्या कितनी भी ज़बर्दस्त हो।

गाधीजी ने केवल यह गुलाबी आशा व्यक्त की थी कि जब वास्तविक निर्णय का समय आए, तब मुसलमान विभाजन की बात पसन्द नही करेगे और सद्बुद्धि की विजय रहेगी।

जयराम कभी बम लेकर गाधीजी को मारने गया था, पर अब वह आशा करता था कि वही गाधी इस अवसर पर पाकिस्तान के विरुद्ध अपनी सारी शक्ति और सारा ओज लेकर एक दृढ दीवार बनकर खडे हो जाए और सीना तानकर कहे कि इन हड्डियो पर ही पाकिस्तान का रथ गुज़र सकता है, नही तो हम कभी पाकिस्तान बनने नही देगे। उन्होने अपने लेख मे यह क्यो नही लिखा

कि यदि ब्रिटिश सरकार ने इस सम्बन्ध मे ज़रा भी झुकने की मनोवृत्ति दिखाई, तो मैं अनशन करके प्राण दे दूगा। यही उन्हे कहना चाहिए था। देश तो हिन्दुओ का है। यदि मुसलमानो को इसमे नही रहना है, यदि उन्हे लोकतन्त्र नही पसन्द है, जैसाकि जिन्ना बार-बार कह चुके है, तो वे मज़े मे अफगानिस्तान, ईरान, तुर्की, अरब, चाहे जहा जा सकते है। उनके धर्म मे इसकी व्यवस्था भी है।

जब जयराम ने बार-बार सिद्धिनाथ को तथा आर० एस० एस० के अन्य नेताओ से कहा, तो उन लोगो ने भी यह कहा, साथ ही यह भी कहा—यह सब तो जिन्ना की चालबाज़ी है। असल मे पाकिस्तान कोई नही चाहता। यह माग तो केवल सौदेबाज़ी के लिए पेश की गई है। इसका कोई अर्थ नही होता।

पर जयराम की अन्तरात्मा इन आश्वासनो से सन्तुष्ट नही हुई। वह भीतर-ही भीतर सिहर उठा कि एकमात्र गाधीजी ही देश को इस विपत्ति से उबार सकते थे, पर वे भी इस मौके पर ननुनच मे पड गए। सिद्धिनाथ के समझाने के बावजूद वह उससे बोला—गाधी ने एक बार और देश को धोखा दिया। उसे तो ये गन्दे अछूत ही प्यारे है, देश प्यारा नही है।

सिद्धिनाथ को जयराम की बात पूरी तरह समझ मे नही आई। वह बोला—गाधी पर हमारा विश्वास होता, तो हम लोग आर० एस० एस० का सगठन ही क्यो करते ? हमारे सदस्य और बढने चाहिए, और ज़ोरो के साथ कवायद होनी चाहिए, फिर हम देख लेंगे कि कैसे क्या होता है।

इसीके बाद अगस्त घोषणा आई, जिसे पढकर जयराम दग रह गया। लीग की पाकिस्तान सम्बन्धी माग और लिनलिथगो की अगस्त घोषणा मे जैसे कोई योगसूत्र ज्ञात हुआ। लगा, एक ने एक पहाड से आवाज़ लगाई, तो दूसरे ने दूसरे पहाड से उसे प्रतिध्वनित किया। जयराम ने उत्तेजित होकर सिद्धिनाथ से उसी दिन कहा—यह तो पूरी मिलीभगत लगती है। हमे कुछ करना चाहिए। हम इस तरह हाथ पर हाथ धरकर बैठे नही रह सकते। कही हिटलर ने ब्रिटेन को जीत लिया तो ऐसा न हो कि अग्रेज़ मुसलमानो के हाथ मे राज्य की बागडोर देकर चले जाए, कि विभाजन की ज़रूरत ही न पडे, कि सारा देश ही पाकिस्तान हो जाए।

इसपर सिद्धिनाथ बहुत बिगडा। वह कुछ दिनो से जयराम से असन्तुष्ट था, क्योकि जयराम ने इधर आर० एस० एस० के प्रत्येक व्यक्ति से, जिसे भी वह जानता था, अलग-अलग बातें करनी शुरू कर दी थी, और एक असन्तोष-सा उत्पन्न हो

रहा था। लोग कहने लगे थे—लाठी और भाले की प्रैक्टिस पर कब तक सन्तोष करेंगे, असली काम कब शुरू होगा? गुरुजी को अब तो कुछ करना चाहिए।

सिद्धिनाथ को लग रहा था कि उसने जेल काटकर जो नेतृत्व प्राप्त किया है (अब तो वह खुल्लमखुल्ला कहता था—मैंने सबकी राय से अपराध स्वीकार करनेवाला अभियुक्त बनना तय किया था। मैंने अपने ऊपर सब दोष ले लिया था, और सजा भुगती।), जयराम उसे बातो के द्वारा छीन लेना चाहता था। उसने लोगो से कहा—जयराम अनुशासन मे नही रह सकता। इसे किसी दिन दल से निकाल देना पडेगा। यह फिजूल मे पर फटफटा रहा है, इससे यह तो पूछो कि इसने कभी कुछ किया भी है! गणेशशकर विद्यार्थी के शहीद हो जाने के बाद इसने कितने मुसलमान मारे, कि अब यह पाकिस्तान का विरोधी बनकर सामने आना चाहता है? भला एक भी हिन्दू के जीवित रहते हुए कभी पाकिस्तान बन सकता है? आर० एस० एस० फिर किस मर्ज की दवा है?

उधर जयराम इन बातो से अनभिज्ञ जोर से सघ के भीतर और बाहर पाकिस्तान के विरुद्ध लोगो को उकसा रहा था। वह सचमुच बहुत ही उत्तेजित था और लोगो मे अपनी उत्तेजना सचारित करने की उसमे अद्भुत शक्ति भी थी, फिर भी उसने देखा कि उसका असर सीधे-सीधे नही पड रहा है। गोला निशाने पर न बैठकर इधर-उधर छितरा जाता है। उसने सोचा आर० एस० एस० वाले जो कुछ करेगे करेंगे, गुरू पर अभी तक उसका विश्वास था, क्योकि लोगो ने गुरूजी को उसके नजदीक किसी सन्त या ऋषि की तरह चित्रित किया था, पर वह आप भी कुछ करना चाहता था।

गाधीजी से कोई आशा नही थी। अक्तूबर मे गाधीजी ने शुरू भी किया तो वैयक्तिक सत्याग्रह। वर्धा के पास एक गाव मे युद्ध-विरोधी भाषण देकर प्रथम सत्याग्रही विनोबा ने सत्याग्रह का आरम्भ किया, पर जयराम ने अखबारो मे पढा कि वे गिरफ्तार नही हुए। उसे लगा कि गाधीजी अपनी सारी शक्ति को एक तरफ लगाकर पाकिस्तान के सकट को दूर करने की बजाय उसे व्यर्थ मे बिखरा दे रहे है।

खैर, चार दिन बाद किसी तरह विनोबा गिरफ्तार हुए। दूसरे सत्याग्रही चौदह दिन बाद सत्याग्रह करनेवाले थे, पर वे वर्धा से इलाहाबाद लौटते समय रास्ते मे ही गिरफ्तार कर लिए गए। यह सत्याग्रह पूर्ण रूप से वैयक्तिक रहा।

कुछ गिरफ्तारिया होती रही, पर इन थोडी सी गिरफ्तारियो से देश में न तो जोश उमडा, और न कोई खास बात हुई। जयराम को लगा यह एक तमाशा है, और यह तमाशा तब हो रहा था, जबकि पाकिस्तान की नगी तलवार सिर पर झूल रही थी। उसे बडी घृणा हुई। इस कारण वह सोच-विचारने के बाद विनायक के घर पहुचा, जिसके सम्बन्ध मे खुल्लमखुल्ला लोग कानपुर मे यह कहा करते थे कि वही 'रणभेरी' का सपादक है।

वह सडको और गलियो को पार करते हुए विनायक के घर पहुचा।

पर वहा पुकार-गुहार करने के बाद यह मालूम हुआ कि विनायक बहुत दिनो से बाहर गए हुए है। कब लौटेंगे, पूछे जाने पर एक बुजुर्ग, जो शायद उसके पिता थे, बोले—बेटा, उसका कुछ पता नही है। तुम लोग क्यो उसे खोजने आते हो? वह कही पुलिस की गोलियो से मर-मरा गया होगा!—कहकर बूढे ने खटक से दरवाजा बन्द कर लिया।

जयराम निराश होकर लौटने लगा। उसे बड़ी आशा थी कि विनायक कुछ न कुछ करेगा। शायद क्रातिकारियो ने आन्दोलन चलाने के फेर मे, और ब्रिटिश शासन को दूर भगाने के जोश मे न तो लीग के प्रस्ताव को पढा, और न वाइसराय के वक्तव्य को ध्यान से देखा, नतीजा यह है कि देश पर बडा भारी दुर्भाग्य आ रहा है, और किसीको कानोकान खबर नही हो रही है। यह तो स्पष्ट है कि लीगियो ने ब्रिटिश शासन के साथ षड्यन्त्र किया है। या तो देश मे इतना जबर्दस्त हिन्दू-मुस्लिम झगडा मचा रहेगा कि स्वराज्य का प्रश्न ही नही उठेगा, और या तो देश को टुकडो मे बाट दिया जाएगा। किस प्रकार देश का विभाजन होगा, इस सम्बन्ध मे देश मे तरह-तरह की अटकलें दूषित वायु की तरह फैल रही थी। पजाब, बिलोचिस्तान, सिंध, उत्तर-पश्चिमी सीमाप्रान्त, बगाल और आसाम तो पाकिस्तान मे जाएगे ही। इन दो हिस्सो को मिलाने के लिए लखनऊ, रामपुर आदि मुस्लिम सस्कृति से सम्बद्ध हिस्सो के जरिये से एक पगडण्डी-सी रहेगी। दक्षिण मे हैदराबाद पाकिस्तान मे रहेगा, और उसे भी इसी प्रकार एक पगडण्डी से जोडा जाएगा, जो एक तरफ अपने मे अजमेर-शरीफ को समा लेगी, और उसकी कोई शाखा ऐसी होगी, जो भोपाल को भी अपने मे ले ले।

जयराम किसी समय अछूतो की बढती से जितना चकित और भयभीत हुआ था, और समझता था कि अछूतो को दुलारने के कारण हिन्दू धर्म का नाश

हो जाएगा, अब वह पाकिस्तान के भय से उससे अधिक सत्रस्त था। क्रान्तिकारी कुछ कर सकते थे, पर वे तो ब्रिटिश विद्वेष मे इतने डूबे हुए थे कि उनको कुछ भी सुझाई ही नही देता था। अरे, जब देश नही रहेगा तो क्राति किसके लिए होगी ? यह सच है कि मुट्ठी-भर अग्रेज देश पर शासन नही कर सकते, पर करोडो लीगी अग्रेजो के साथ मिलकर क्या नही कर सकते ? गाधीजी ने इधर काग्रेस मे एक भाषण देते हुए हिसात्मक उपायो मे विश्वास करनेवाले दलो से यह कहा था कि कृपया तरीको को मिला न दीजिए। आपने कुछ सालो से सयम रखा है, कुछ साल और सयम रखिए। हमारी लडाई कोई छोटी-मोटी नही है। यदि आप सयम रखेंगे तो आपको कोई हानि नही होगी।[1]

पर गाधीजी ने स्वय भी तो कुछ नही किया। उनका भी सारा ध्यान ब्रिटिश शासन से सौदा करने और लेन-देन मे लगा हुआ है। पाकिस्तान बनाने के षड्यन्त्र की ओर उनका ध्यान नही गया। जयराम को ऐसा लग रहा था कि चारो तरफ निराशा का अन्धकार है। कोई कुछ नही देख रहा है, किसीको कुछ नही सूझ रहा है, सब अपनी-अपनी सनक और पीनक मे बहे जा रहे है। वह सोचते-सोचते कई सडक और गलिया पार करके जब एक अपेक्षाकृत निर्जन गली मे पहुचा तो किसीने पीछे से पुकारा—जयरामजी ! शर्मा ! !

उसने पीछे मुडकर देखा तो एक युवक था, जिसे वह पहचानता न था। युवक बोला—आप शर्माजी हैं न ? श्री जयराम शर्मा ?

जयराम ने कहा—हा। आप कौन ?

वह युवक मुस्कराया, बोला—मैं आपका सेवक हू, मेरा नाम सेवक समझिए। आप विनायकजी को किस लिए खोज रहे है ?

जयराम को एकाएक ध्यान आया कि कही यह युवक यह तो नही समझ रहा है कि पुलिस की तरफ से विनायक का भेद लेने गया था। कुछ सिमटता हुआ बोला—मैं जयराम शर्मा हू, मुझे सब जानते है। विनायकजी भी जानते हैं। मै उनसे पहले मिल चुका हू।

युवक ने साथ-साथ चलने का इशारा किया। दोनो साथ-साथ चलने लगे।

युवक ने कहा—आप उनसे क्यो मिलना चाहते है ?

---

१. तेन्दुलकर, जिल्द ५, पृष्ठ ४०४-५

जयराम कुछ देर के लिए हतबुद्धि हो गया, क्योकि वह यह कैसे कहता कि मै तो उपदेश देने आया हू, इसलिए वह बोला—बहुत जरूरी बातें करनी थी ।

—उन्हीसे या उनके ऐसे लोगो से ?

यह प्रश्न एक चुनौती की तरह सुनाई पडा और जयराम ने उसे ग्रहण कर लिया बोला—मैं एक साधारण नागरिक हू, विनायकजी पुराने नेता है, मै उनसे यह कहना चाहता था कि सब कुछ तो हो रहा है, पर लीगी और ब्रिटिश कूटनीतिज्ञ मिलकर पाकिस्तान बनाने का षड्यन्त्र कर रहे हैं । क्या क्रान्तिकारी दल इस सम्बन्ध मे यथेष्ट सचेत है ? मै वह कहना चाहता था कि यह एक ऐसा प्रश्न है जिसपर सबसे पहले ध्यान दिया जाना चाहिए । यदि देश नही रहेगा तो क्रान्ति किसके लिए होगी ? यदि पाकिस्तान बन गया तो कभी सारे भारत पर इस्लामी राज्य होगा । यही उनकी योजना है ।

दोनो बातें करते-करते एक छोटे पार्क मे आकर बैठ गए । उस युवक ने कहा—मैं आपका सन्देश विनायकजी तक पहुचा दूगा । आप यह न समझिए कि वे इस सम्बन्ध मे गाफिल हैं । वे सब कुछ देख रहे है, सुन रहे है, पर यह समझते है कि जब तीसरी शक्ति कायम है, जब तक लडानेवाला मौजूद है, तब तक लडाई भी होगी, गलत नारे भी होगे, लोग बहकावे मे भी आ जाएगे, पर एक दिन जब तीसरी शक्ति चली जाएगी तो पौ फटेगी और नया सवेरा होगा ।

जयराम इससे बिल्कुल प्रभावित नही हुआ । वह अछूतो के विषय मे कुछ कहने जा रहा था, पर उसने अपने को रोक लिया, क्योकि वह जानता था कि क्रान्तिकारी इस सम्बन्ध मे कितने कट्टर हैं । वे अछूतो के विषय मे एक भी शब्द सुनना नही चाहते । उसे स्मरण हो आया कि एक बार उससे एक अधिक जिम्मेदार तो नही कहना चाहिए, मामूली जिम्मेदार क्रान्तिकारी ने, शायद उसका नाम शिशु था, कहा था—देश का कल्याण तो तभी होगा, और न्याय भी तभी होगा, जब हर अछूत के पैरो मे किसी ब्राह्मण के चमडे का जूता होगा ।

इसलिए जयराम ने कहा—लीगी इतना बढ रहे हैं, और ब्रिटिश सरकार उन्हें शह दे रही है । मुझे तो लग रहा है कि पाकिस्तान बनकर रहेगा । और जब एक बार पाकिस्तान बन जाएगा, तो देश के तीन तरफ पाकिस्तान होने के कारण किसी भी समय वे हथियारो के बल पर सारे भारत को अपने जुए के नीचे ले आएगे । मुझे आप विनायकजी से मिला दीजिए । मै उनसे हाथ जोडकर सारी

बाते समझना चाहता हू । मैं तो यहा तक कहता हू कि एक बार पाकिस्तान बन गया, तो सारे देश का सत्यानाश हो जाएगा । कोई भी हिस्सा नही बचेगा । पाकिस्तान तो मुसलमानो का होगा, और बाकी हिस्से मे वे बराबर के साझेदार होगे ।

जयराम आवेश की अधिकता मे जाने क्या-क्या कह गया । युवक ने ध्यान से उसकी बाते सुनी, फिर अन्त मे कहा—एक बात मैं स्पष्ट कर देता हू कि यदि आप विनायकजी के पास इसलिए आए है कि वे जिन्ना को या फजलुलहक को या सिकन्दर हयात को गोली मार दे, तो यह आशा गलत है। आप स्वय ही मान रहे हैं कि ब्रिटिश षड्यन्त्र के फलस्वरूप ही पाकिस्तान का नारा उठा है, तो असल मे दोषी कौन हुआ ? ब्रिटिश सरकार या लीगी नेता, जो उनके बनाए और सिखाए हुए है ।

जयराम को ऐसा लगा कि जैसे युवक बहुत ही सरल बात को समझ नहीं पा रहा हो। वह झुझलाकर बोला—षड्यन्त्र किसीका भी हो, कारण कुछ भी हो, पर क्या पाकिस्तान को रोकना, पाकिस्तान के निर्माण को रोकना, उसके विरुद्ध धर्मयुद्ध की घोषणा कर देना—यह सब सगठित दलो का उद्देश्य नही होना चाहिए ? एक बार पाकिस्तान बन गया, तो आप क्या कर लेंगे ? गाधीजी ने अछूतो को हिन्दुओ से अलग करने के प्रयास के विरुद्ध आमरण अनशन किया था, पर वे इस महान सकट के सामने मूक हैं। आप लोग भी नारेबाज़ी मे पडकर सत्य का दर्शन नही कर पा रहे है। मुझे एक बार विनायकजी से मिला तो दीजिए ।

युवक ने धैर्य खोते हुए कहा—क्या आप समझते है कि हमारे नेताओ ने ये बाते सोची नही है ? सोची है। वे इस नतीजे पर पहुचे हैं कि जब तक धर्म का अस्तित्व एक उन्माद के रूप मे रहेगा, तब तक धर्म के नाम पर लोगो को बहकाना भी सम्भव होगा, तब तक असली भागो पर पर्दा डालकर नकली दल पनप सकते हैं और अपनी डेढ ईंट की मस्जिद बनाकर उसपर से अज़ान देकर लोगो को गुम-राह कर सकते है। पाकिस्तान बनेगा, तो बन जाएगा, पर जब लोगो की आखें खुलेंगी, लोग उन्माद से मुक्त होगे, लोग आर्थिक क्रान्ति की माग करेंगे, तब देश एक होगा, और देश ही क्यो, ससार एक होगा। अभी तो हमे बर्तानिया के विरुद्ध ही लडना है। पैन-इस्लामवाद तो फूस की तरह उड जाएगा, जब लोग रोटी की

माग करेगे ।

जयराम को युवक की बातो से कोई सान्त्वना नही मिली और वह बोला—मेरी बात आप नही समझ रहे है । मुझे आप विनायकजी से मिलवा दीजिए। देश पर इतनी भारी विपत्ति पड रही हे और आप रटे हुए सबक की तरह पुरानी बातो को दुहरा रहे है, जिनका आज के परिप्रेक्ष्य मे कोई अर्थ नही होता । पाकिस्तान बन जाने से तो अच्छा यह है कि सवर्ण हिन्दुओ और अछूतो मे शादी-ब्याह होने लगता, और कोई द्विज रह ही नही जाता ।

युवक इसपर चलने को हुआ, बोला—मैं पुरानी बातो मे पडा हुआ हू या आप ? अभी तक आपको होश नही आया । यदि पाकिस्तान बनेगा, तो वह आप ही ऐसे लोगो की कृपा से होगा !

—क्यो, क्यो ? मेरी कृपा से क्यो ?

युवक अब चलता हुआ बोला—भारत मे कितने मुसलमान आए थे ? आप ही लोगो की ज्यादतियो से बहुत-से अछूत और कथित निम्न जाति के लोग मुसलमान हो गए । वही अब पाकिस्तान माग रहे है और स्वतन्त्रता आन्दोलन मे अडगा लगा रहे है ।

दोनो साथ-साथ चलने लगे थे । जयराम ने कहा—नही-नही, यह सब गलत है। जो हिन्दू जबर्दस्ती मुसलमान बनाए गए, उन्हीसे मुसलमानो की सख्या बढी।

—माना कि हजारो हिन्दू जबर्दस्ती मुसलमान बनाए गए, पर वे फिर से हिन्दू क्यो नही बन सके ? यह सब आप ऐसे लोगो की कृपा है, इसलिए हम तो धर्म के ही विरुद्ध हो गए है। उसके जो अच्छे सिद्धान्त है, वे सदाचार मे आ ही जाते है, बाकी ढोग वगैरह की जरूरत नही है। पाकिस्तान भी होगा, तो अपना ही देश होगा, सारी बातें तो इसपर निर्भर है कि वहा की जनता कैसी निकलती है, उन्हे कैसे नेता मिलते हैं और उनका जीवन-स्तर कहा तक बढता है। ··

जयराम का मन कहने लगा कि विनायक से मिलना एकदम व्यर्थ है । सम्भव है कि यह युवक जो कुछ कह रहा है, वही विनायक की राय हो । पता नही ये कैसे देशभक्त हैं । गाधी को देखो, तो वे इस सम्बन्ध मे उसी प्रकार से उदासीन है, जैसे ये लोग । ब्रिटिश प्रधानमत्री मैकडोनाल्ड ने साम्प्रदायिक निर्णय दिया था, तो साम्प्रदायिक निर्णय मे अछूतो को हिन्दुओ से अलग दिखाना चाहा था, उसपर उन्होने आमरण अनशन का व्रत ले लिया, और यह विपत्ति जो उससे कही बड़ी है

और जिससे देश का ही नाश हो जाता है, उसकी उन्हे कोई फिक्र नही है, और ये क्रातिकारी इतने बेईमान या बुद्धू है कि इन्हे भी यह विपत्ति दिखाई नही दे रही है। ये तो ऐसे भयकर पाजी है कि धर्म को ही रखना नही चाहते। इनके इस रुख से धर्म थोडे ही चला जाएगा! हा, कुछ हिन्दू भावुक युवक गुमराह हो जाएगे, कोई मुसलमान धर्म छोडे तो मैं जानू!

जयराम ने इन्ही बातों को उस युवक से कहा। बोला—अजीब बात है, अहिंसा के पुजारियो को यह विपत्ति दिखाई नही दे रही है, और न क्रान्ति के उपासको को। दोनो इससे गाफिल है। यदि मैं सच्चा ब्राह्मण हू, तो याद रखना, और अपने विनायकजी से कह देना, कि इस महान गफलत और भूल के लिए इतिहास उन्हे कभी नही क्षमा करेगा। आप लोग अजीब देशभक्त है। देश ही नही रहेगा तो देशभक्ति किसकी करेंगे?

जयराम उस युवक से विदा बिना लिए अलग हो गया और उसने सडक पर बडे जोर से थू करके थूका।

इसके बाद उसने विनायक या और किसी क्रातिकारी से मिलने की चेष्टा नही की। वह समझ गया कि गाधी या क्रातिकारी, कोई भी जिन्ना तथा उनके अनुयायियो से लोहा लेने के लिए तैयार नही है, वे समझते हैं कि मुसलमान केवल ब्रिटिश भडकावे मे आकर पाकिस्तान माग रहे हैं, जबकि सत्य कही इससे दूर है। वह क्रोध के आवेश मे सिद्धिनाथ के पास पहुचा और जाने क्या-क्या बोल गया। बोला—आर० एस० एस० वाले भी इस विपत्ति को समझ नही रहे है, तो इस सस्था की जरूरत क्या है? तुम मुझे दूसरे नेताओ से मिलाओ।

सिद्धिनाथ शायद इस बीच जयराम की शिकायत करने के सिलसिले मे अपने नेताओ से मिल चुका था, बोला—मैं आपसे कह चुका कि पाकिस्तान बनने की कोई सम्भावना नही है, ये तो महज़ नारा दे रहे है, भला पाकिस्तान कही बन सकता है! आज तक ससार के इतिहास मे ऐसी कोई घटना नही हुई कि धर्म के आधार पर देश बने, इसलिए मन को शात कीजिए और काम-धन्धे मे लग जाइए। व्यर्थ मे उत्तेजित होने से कोई लाभ नही।

पर जयराम इससे शान्त न हो सका। वह सोचने लगा कि आश्चर्य है कि केवल मुझ ही को यह विपत्ति दिखाई पड रही है। अछूतो को सर पर चढाने से जो विपत्ति धर्म पर आ रही थी, वह मेरे अलावा सैकडो व्यक्तियो को दिखाई

पडी थी, जैसे स्वामी लालनाथ आदि को, पर वे कुछ दूर चलकर बैठ गए, पर अब यह विपत्ति मुझे ही दिखलाई दे रही है। दूसरे इससे सम्पूर्ण रूप से गाफिल है।

क्या मैं अकेला ही कुछ करू ? अ-के-ला ?

पर जब उसने गहराई के साथ सोचा, तो उसे बडी निराशा हुई। रोने की प्रबल हूक-सी उठने लगी। उसे अपने ऊपर सन्देह होने लगा कि मेरा दिमाग तो ठीक है न ? कही मै चीजे जैसी नही है, उन्हे उस रूप मे तो नही देख रहा हू ? कही सारी समस्या मेरी उत्तेजित कल्पना और तने हुए स्नायुओ की उपज तो नही है ?

वह किसी निश्चय पर नही पहुच सका। विशेषकर इसलिए कि उसके मन के कोने मे यह बात झाक रही थी कि उस समय मैं अछूतो के मन्दिर-प्रवेश और सहभोज के आन्दोलन पर जितना उत्तेजित हुआ था, आज मैं उसे उस रूप मे नही देख पा रहा हू, बल्कि अब तो स्थिति इस रूप मे दिखाई दे रही है कि पाकिस्तान चाहनेवाले मुसलमानो के विरुद्ध जिस भी दृष्टि से देखा जाए, अछूत हमारे मित्र हो सकते है। क्या यह सम्भव है कि आज जो मैं सोच रहा हू, वह भी उसी प्रकार से अतिरजित, एकदेशीय और गलत है, जैसे मेरे उस समय के विचार थे ? पर ऐसा तो नही लग रहा था।

वह कई दिनो तक घर से ही नही निकला, जिससे यशोदा बहुत खुश हुई, पर जब उसने देखा कि यह केवल बैठे-बैठे अखबार पढा करता है और किसी विचार मे घुलता रहता है, तो उसे भय हुआ, क्योकि यह आधी के पहले की शान्ति थी। उसे सन्देह हुआ कि यह कुछ करनेवाला है, ऐसा कुछ जिससे परिवार पर महान विपत्ति आ सकती है।

यशोदा जानती थी कि कुछ पूछना व्यर्थ है, क्योकि वह पत्नी से कभी कुछ बताता नही था। यदि पूछा जाएगा तो नाराज होगा। इसलिए वह दूर ही से जयराम पर निगरानी रखती रही। थोडे दिनो मे जयराम बाहर जाने लगा, पर अब वह घण्टो बाहर नही रहता था, फौरन ही लौट आता था। हा, लौटते समय उसके बगल मे अखबारो और पत्र पत्रिकाओ का एक पुलिन्दा होता था। घर पर बैठकर वह इन पत्र-पत्रिकाओ को बडे ध्यान से पढता था। पर यशोदा समझ जाती थी कि जो चीज़ वह खोज रहा है, वह उसे मिल नही रही है। यह क्या चीज़ है, वह क्या खोज रहा है, वह किस व्यथा से बेचैन है—यह वह नही समझ

पाई। हा, घर मे कोई आ जाता था तो उसे वह आनेवाले पाकिस्तान के विरुद्ध व्याख्यान ज़रूर सुनाता था, जिससे वह समझी कि पाकिस्तान कोई देश है, जिसके विरुद्ध वह नाराज़ होता है, पर धीरे-धीरे वह समझने लगी कि बात क्या है। जब समझ गई तो उसे उतनी चिन्ता नही रही, जितनी पहले थी, क्योकि वह समझ रही थी कि जयराम शायद किसीकी हत्या करने की बात सोचा करता है, जैसा-कि उन दिनो सोचा करता था, जब वह मन्दिर-प्रवेश के आन्दोलन के विरुद्ध पागल हो रहा था।

अखबारो को पढने के बाद यशोदा की समझ मे आ गया कि कोई तात्कालिक खतरा नही है। वह स्वय भी पाकिस्तान को जहा तक समझ पाई, उसके विरुद्ध थी, पर ऐसी क्या मुसीबत थी कि खाना-पीना हराम हो जाए, काम छोड दे और पागलो की तरह केवल अखबार ही पढा करे। न बच्चो से मिलना-जुलना, न ठेकेदारी मे दिलचस्पी। सब काम-धाम तो बहुत पहले ही चौपट हो चुका था, अब तो केवल किराये और सूद पर ही गुज़र थी।

सिद्धिनाथ कई दफे जयराम को बुलाने आया कि आप आजकल नही आते तो वह यह कहकर टाल देता—ठेकेदारी के बहुत काम है, मुझे फुरसत नही मिलती, आऊगा, जरा काम निपटा लू।

जयराम सिद्धिनाथ को बिलकुल जवाब भी नही देना चाहता था, साथ ही उसे अब आर० एस० एस० मे कोई दिलचस्पी नही रह गई थी। दूसरे दलो की तरह यह दल भी केवल नेतागिरी का ज़रिया था। इससे आत्मा को सन्तोष नही होता था। फिर भी ले-देकर देश मे ये ही सब दल थे। अकेले तो कुछ किया ही नही जा सकता। यह भी उसने बहुत दिनो तक करके देख लिया।

एक दिन एकाएक जयराम बोला—मेरा सामान बाध दो, मै दक्षिण की यात्रा पर जाऊगा।

यशोदा ने कारण पूछा, तो उसने इतना ही कहा—वहा हिन्दू महासभा की बैठक हो रही है, बडे-बडे नेता आ रहे है—भाई परमानन्द, ज्योतिर्मठ के शकराचार्य, श्यामाप्रसाद मुखर्जी, बी० एस० मुजे।

यशोदा जानती थी कि हिन्दू महासभा कोई खतरनाक सगठन नही है, इसलिए उसने कोई आपत्ति नही की और जयराम सिद्धिनाथ से बिना बताए मदुराई के लिए रवाना हो गया।

जयराम बडा दुखी था क्योकि गाधीजी ने जो वैयक्तिक सत्याग्रह का आन्दोलन चलाया था, उसे भी बडे दिन की सौगात के रूप मे ४ जनवरी तक के लिए बन्द कर दिया था। कुछ लोग अवश्य गिरफ्तार हुए थे, पर यह एक प्रतीकवादी विरोध होने पर भी इसका असर कुछ भी नही था। उसे लग रहा था कि गाधीजी परिस्थिति के साथ न्याय नही कर रहे है। वे शायद खाली कारतूस बन चुके हैं। इसी मानसिक अवस्था मे वह मदुराई की यात्रा करता रहा।

जहा उसका अधिवेशन हो रहा था, वहा पहुचकर उसने देखा कि कुछ लोग पाकिस्तान की योजना से ज़रूर भयभीत है, पर अधिक नही, क्योकि लोग यह समझ रहे थे कि जिस प्रकार काग्रेस का पूर्ण स्वराज्य नही होने जा रहा है, उसी प्रकार से पाकिस्तान भी नही होने जा रहा है, फिर भी उसे यह सुनकर खुशी हुई कि स्वागत-समिति के अध्यक्ष रामस्वामी शास्त्री ने यद्यपि पहले अपने भाषण का बहुत-सा समय यह समझाने मे नष्ट किया कि आर्य और द्रविड अलग-अलग नस्लें नही है, हिन्दू भारत मे ही उत्पन्न हुए। यह सब कहने के बाद रामस्वामी शास्त्री ने पाकिस्तान योजना की निन्दा की और कहा—हम मि० जिन्ना से साफ-साफ कहना चाहते है कि भारत हमारा लक्ष्य है, जिसके लिए हम मरगे और जिएगे, इसके लिए कोई सौदेबाज़ी नही हो सकती। हमारी लाशो पर ही पाकिस्तान बन सकता है।

इस अधिवेशन के अध्यक्ष कभी के क्रान्तिकारी अन्दमन से लौटे हुए विनायक दामोदर सावरकर थे। उन्होने लम्बी-लम्बी बातें की, कहा—हिन्दुओ को एक सैनिक जाति के रूप मे पुनरुज्जीवित और नवजन्म प्राप्त होना चाहिए।—फिर उन्होने पैन-हिन्दू आन्दोलन की आवश्यकता बताई। इसके बाद उन्होंने युद्ध पर यह कहा कि हमे यह डर दिखाने से कोई फायदा नही कि हिटलर भारत को जीत लेगा। हम युद्ध-प्रयास मे भाग लेना चाहते हैं, पर इसके लिए परिस्थिति बनाई जाए।

जयराम को इस व्याख्यान से भी बडी निराशा हुई। ऊची दुकान फीका पकवान, क्योकि पाकिस्तान के सम्बन्ध मे विशेष कुछ नहीं था। हा, जब प्रस्ताव आए, तो उनमे एक प्रस्ताव पाकिस्तान के विरुद्ध था, जिसमे यह कहा गया था कि भारत एक और अविभाज्य है, और किसी भी हालत मे भारत की अखण्डता को कोई ठेस नही पहुचनी चाहिए।

कुछ तो था, पर था बहुत ही फीका। इसमे वह क्रोध, रोष, आक्रोश तथा ऐसा नही होगा तो यह करूगा—इस प्रकार की चुनौती कहा थी ? वह निराश होकर मदुराई से लौटा।

२७

अहारन एक दिन एकाएक एलिस के घर आकर बैठ गया था। पता नही वह कब से आकर बैठ गया था। जब एलिस मा को दवा आदि पिलाकर तथा बच्चो की तरह सुलाकर बाहर के कमरे मे आई, तभी उसे पता लगा कि अहारन बैठा है। उसने बूढे का स्वागत किया और थोडी-सी शराब लाकर उसके सामने रख दी। अब शराब बहुत महगी हो गई थी, इसलिए पहले की तरह उदारता सम्भव नही थी। न कोई इसकी आशा ही करता था। मामूली तौर से यह शराब भी देने की ज़रूरत नही थी, चाय ही यथेष्ट होती या कहवे का बिना चीनी का प्याला।

अब शराब देखकर बूढे की आखे उस तरह से चमक नही उठी, जैसी पहले चमका करती थी। उसने शिथिल ढग से शराब की ओर हाथ बढाया। उसके हाथ काप रहे थे। एलिस ने देखा कि झुरिया पहले से गहरी हो गई थी। आखो के ऊपर का चमडा कुछ झूल सा गया था, बोली—कहिए, कुछ खबर मिली ?

बूढे ने एक घूट पीया, फिर चारो तरफ देखकर अनिच्छा से बोला—खबर कहा से मिलती ? इतनी ही बात है कि अब मुझपर ज़ोर डाला जा रहा है कि मैं मैं भी चोरी से फिलिस्तीन मे जाकर बस जाऊ, सपरिवार।

एलिस बोली—अब तो बाहर जाना मुश्किल है।

—केवल यही बात नही, बाहर जाने को जी नही करता। फिलिस्तीन मेरे सर-आखो पर, पर मैं न तो वहा बसना चाहता हू और न वहा मैं मरना चाहता हू। सन्देह है तो केवल एक बात पर, वह यह कि कही हिटलर के हाथो पड गया, तो बुरी गत बनेगी। काण्टिनेण्ट मे सब लोगो का विश्वास है कि हिटलर जिस दिन चाहे इग्लैण्ड पर अधिकार कर सकता है, पर मेरा मन नही मानता। मैं तो कहता हू कि हिटलर का दात यही से खट्टा होगा।

एलिस ने कुछ जोश के साथ कहा—सब अग्रेज यही सोचते हैं। ब्रिटिन्स शैल बी नेवर स्लेव्ज़ ! (ब्रिटेन के लोग कभी गुलाम नही होगे !)यह धारणा हर अग्रेज

के रक्तकण मे लाल रग की तरह बसी हुई है। आपकी बातें सुनकर बडी अनुप्रेरणा मिलती है, यद्यपि चारो तरफ अधेरा ही अधेरा है। मा का भी यही विश्वास है। वह भी कहती है—मरने के लिए यही देश सबसे अच्छा है।

बूढा अपनी प्रशसा सुनकर ज़रा भी खुश नही हुआ, शायद खुशी वाली सारी नसे इस बीच बुरी तरह मर चुकी थी और प्रशसा से या शराब के धक्के के कोडे से उन मुर्दो को जिलाया नही जा सकता। बूढा एक बहुत छोटा-सा घूट, बल्कि नाम-मात्र की चुस्की लेकर बोला—हम तो यहा यह सोच रहे है, पर काण्टिनेण्ट मे मेरी तरह अग्रेज भी दूसरी तरह से सोच रहे है। वे सोच रहे है—जैसे रोमनो के आक्रमण से कोई नही बचा था, वैसे जर्मनी के आक्रमण के सामने कोई नही ठहर पाएगा। नही तो देखो कि वरदून के प्रथम महायुद्ध मे छ लाख जर्मन मारे गए थे, तब जाकर जर्मनो की जीत हुई थी, पर अब की बार एक दिन मे ही उसका काम तमाम हो गया।

बूढे ने बात करते-करते एक जर्मन अखबार की कटिंग निकाली, जिसमे पेरिस के सम्बन्ध मे इस प्रकार लिखा था—पेरिस इतरता और भ्रष्टाचार, लोकतन्त्र और पूजीवाद की नगरी थी, जहा यहूदी अदालतो के आसन पर बैठे हुए थे और हब्शी सालोनो (गोष्ठियो) मे आते-जाते थे। अब इस पेरिस का कभी उत्थान नही होगा।

एलिस ने अहारन की सहायता से यह कटिंग पढ ली। पढते ही उसमे जैसे एक रासायनिक परिवर्तन हो गया। यह जो लिखा था—अब इस पेरिस का कभी उत्थान नही होगा , कितना भयकर मालूम होता था, जैसे ज़ालिम की पैनी छुरी छाती मे उतर गई और उसे आर-पार चीरती हुई मूठ के साथ बाहर निकल गई। बडी चीस उठी, जिसके सामने सारी आस्थाए तितर-बितर हो गई। अहारन ने कहा—बाइबल मे जैसे सोडोम और गोमोरं लिखा है, वैसे ही पेरिस के सम्बन्ध मे यह लिखा है। वही भाषा, और वही साकेतिकता है, यद्यपि कुछ शब्द बदले हुए है। देखा, जर्मन प्रचार-कार्य कैसा है कि इतरता और भ्रष्टाचार के साथ लोकतत्र को मिला दिया है और जैसाकि नात्सी चिन्तन की विशेषता है, उसी सास मे यहूदियो को ला दिया गया है। असली दुश्मन तो यहूदी हैं, पर इसे कामूफ्लाज करने के लिए हब्शियो को घसीटा गया है क्योकि पेरिस की रमणियो के विषय मे यह दन्तकथा बनाई गई है कि वे हब्शियो को अपना प्रेम देना अधिक पसन्द करती

है। इस छोटी-सी कटिंग मे नात्सी चिन्तन का नग्न रूप आ जाता है। ऐसा दिखाया गया है, मानो नात्सी चरित्र के पुतले हैं। और वे यह युद्ध केवल सदाचार के प्रचार-प्रसार के लिए कर रहे है, पर असली तथ्य क्या है?—कहकर बुड्ढा जैसे चौक पडा और फिर उसने एकाएक चुप्पी साध ली।

उसने वह जर्मन कटिंग ले ली और एलिस के सामने ही उसे, कमरे मे जो नाम-मात्र के लिए केवल रस्मअदायगी के ढग पर थोडी-सी आग जल रही थी, उसमे डाल दिया। एलिस समझ गई कि यह कटिंग कहा से आई थी और इसे इस प्रकार जलाया क्यो गया। स्पष्ट है कि बेटे का पत्र आया था, पर किसी कारण से बूढा, शायद यह समझकर कि यह शायद बेटे का अन्तिम पत्र हो या और कोई कारण हो, वह पत्र स्काटलैण्ड यार्ड को नही दे सका। वह सूचनाओ से भरा हुआ है, पर वह कुछ कहेगा तो प्रश्न उठेगा कि कहा से मालूम हुआ? इसलिए उसने एकाएक अपने मुह पर ब्रेक लगा दिया और कुछ नही बताया। बूढा चुस्की ले रहा था, शायद केवल होठ भिगो रहा था। एलिस समझ नही पा रही थी कि कैसे बूढे से बात निकाली जाए। बोली—और असली हालत क्या है? आप कुछ कह रहे थे।

बूढा फिर भी निश्चय नही कर सका। उसने दो-तीन बार जल्दी-जल्दी होठ भिगोए। वह चुप ही बना रहा, यद्यपि एलिस को यह स्पष्ट झलक गया, कि बूढे को चुप रहने मे बहुत कष्ट हो रहा है। वह यहा बात करने के लिए ही आया है। कटिंग तो आवेश मे दिखा गया, पर यह नही बता रहा है कि चिट्ठी आई है। आखिर कटिंग चोरी से ही आई होगी। जब कटिंग आ सकती है तो चिट्ठी भी आ सकती है। एलिस ने कहा—क्या मैं दरवाजे और जगले बन्द कर दू?

दरवाज़े और जगले के नाम से बूढा समझ गया कि कटिंग दिखाकर जो गलती की है, उससे सारी बात तो खुल ही गई, अब दुराव-छिपाव व्यर्थ है। बोला—बेटे का पत्र आया था, पर उसने जर्मनो का जितना विरोध किया है, उससे ज़्यादा ब्रिटिश सरकार का किया है, कि ऐसी हालत मे भी फिलिस्तीन मे यहूदियो को जाने से रोका जा रहा है। एक तो इस चेष्टा मे उनकी सख्या रास्ते मे ही आधी हो जाती है, तिसपर यह निषेध। उसने तो आवेश मे यहा तक लिख डाला कि मुस्साद आलिया बेतसस्था के बहुत-से सदस्य इस मत के है कि चर्चिल भी यहूदियो को उतना ही बडा दुश्मन है, जितना कि हिटलर।

एलिस को इस समस्या का कुछ-कुछ पता था। ब्रिटिश सरकार अरब देशो को एकदम नाराज करना नही चाहती थी। असली बात यो थी। जब सरकार कोई कदम उठाती है, तो उसमे सब पहलुओ से प्रश्न पर विचार करना पडता है। बोली—आप यह कह रहे थे न कि हालत कुछ और है। वह क्या ?

बूढा अब अपनी झिझक पर विजय प्राप्त कर चुका था, बोला—उसने पूरा ब्योरा लिखा है। जब जर्मन सेना फ्रास मे घुसने लगी तो चारो तरफ भगदड मचने लगी। लोगो को रोटी के लाले पड गए। लोगो ने राशन, अण्डे, गोश्त, मक्खन, सब छिपा लिए। वेश्यालयो से वेश्याए भागने लगी। क्योकि लोग उनके पास आते ही नही थे, और जो आते थे उनसे वेश्याए अन्न, डबलरोटी, मक्खन, ये सब मागती थी, जो वे देने की हालत मे नही होते थे। इसलिए यह व्यवसाय बन्द हो गया। मादाम यानी चकले की मालकिने अलग जाकर बैठ गई, पर बेटे ने लिखा है कि जर्मन सेना के आते ही स्थानीय जर्मन कमाण्डर ने सबसे पहले मादाम को बुलाया और कहा कि तुम अपना काम जारी रखो, यह बहुत जरूरी है।

बूढे ने होठ भिगो लिए, फिर कहा—मेरा बेटा भागकर एक मादाम के पास टिका हुआ था, वह शायद यहूदिन थी।

बूढे ने यहा पर शायद कहकर जो सन्देह पैदा किया, वह इच्छाकृत था, पर सच्ची बात यह थी कि कोहेन ने लिखा था—यहूदिन होने के कारण ही मादाम ने उसको आश्रय दिया था, क्योकि आगे भागने का मौका नही था।

बूढे ने कहा—मेरा बेटा मादाम के पास एक बहरे-गूगे नौकर के रूप मे टिका था। जर्मन कमाण्डर के सामने उसका यही परिचय दिया गया। जब मादाम को जर्मन कमाण्डर ने बुलाया तो वह डरी, पर लौटकर बोली कि मुझे हुक्म हुआ है कि फिर से काम काज जारी रखू। बडे जोरो से वेश्यावृत्ति चालू हो गई, और लडके ने लिखा है कि इसी कारण उसे जान पर खेलकर वहा से भागना पडा। इसके अलावा और एक बात भी हो गई थी। वह यह कि यद्यपि फ्रेच नेताओ और राजनीतिज्ञो ने पराजयवाद से काम लिया पर जनता, विशेषकर देहाती जनता बहुत विक्षुब्ध थी। वह फ्रेंच वेश्याओ के रवैये से खुश नही थी। अब वेश्यागमन भी एक राष्ट्रीयता का प्रश्न बन गया था। वेश्याए वेश्यावृत्ति करे, पर वे जर्मनो को अपना शरीर न बेचें। अधिकाश वेश्याए भी यही चाहती थी, पर उनमे इतना नैतिक बल कहा था कि वे जर्मन आज्ञाओं का प्रतिरोध करती। जब सेना प्रतिरोध

न कर सकी, तो वेश्याए बेचारी क्या करती ! वेश्यावृत्ति तो सदा से अन्तर्राष्ट्रीयतावादी रही है।

बूढे के मन के सारे बन्धन टूट चुके थे। अब वह कुछ छिपाना नही चाहता था। होठ भिगोते हुए बोला—मेरे बेटे के लिए वातावरण असह्य हो गया। लिखा है कि मादाम से मैंने बातचीत की कि क्यो न वेश्याए एक रात को, जिसका जिधर मन चाहे उधर भाग जाए, पर मादाम ने जो तर्क दिया, वह भी कम वज़नदार नही था। मादाम ने कहा—ईर्ष्या और कथित देशभक्ति के कारण लोग यह सोच रहे है कि हम देशद्रोहिता कर रही है, पर यदि मैं तुम्हारी सलाह मान लू और आज सारी वेश्याए भाग जाए तो क्या होगा ? ये जर्मन हूस लोगो की बहू-बेटियो पर टूट पडेगे। जब तक हम लोग मौजूद हैं, फ्रेंच महिलाओ के सतीत्व की पहली रक्षापंक्ति सुरक्षित है, पर हम लोगो के अलग होते ही उनपर भाभई आ जाएगी।

एलिस बहुत दिलचस्पी के साथ बूढे की बाते सुन रही थी, बोली—क्या जर्मन सैनिक स्त्रियो पर ज़्यादती नही कर रहे है ?

—कुछ कर रहे होगे, पर बेटे ने यही लिखा है कि वेश्याओ से सचमुच बहुत कुछ बचत रही है। जीवन बहुत ही जटिल है। मैं जब सोचता हू तो आश्चर्य मे पड जाता हू। इतना तो स्पष्ट है कि यदि मादाम कृपा नही करती और उसे एक बहरे-गूगे नौकर के रूप मे नही बताती, तो वह गिरफ्तार अवश्य होता, और गिरफ्तार होते ही यह आविष्कृत होता कि यहूदी है, फिर तो कयामत आ जाती।

दोनो कुछ देर तक कही हुई बातो पर जुगाली करते रहे।

—क्या आपका बेटा पेरिस गया ?

—हा, वह पेरिस भी गया। वहा उसे अजीब दृश्य दिखाई पडा। आइफेल मीनार पर एक विशाल स्वस्तिक झण्डा फहरा रहा था। जिस होटल क्रिला मे शान्ति सम्मेलन के दिनो मे वुड्रो विलसन ठहरे थे, और जहा जर्मनी के लिए सन्धिपत्र तैयार हुआ था, वहा जर्मन सैनिक अफसरो की भीड थी। नात्सी अधिकारी बडे ही नीच निकले कि उन्होने मारेशाल फोश के उसी कोच मे और उसी कोपिएन कानन मे युद्ध-विराम पर फ्रेंच नेताओ के दस्तखत कराए जहा ११ नवम्बर, १९१८ को युद्ध-विराम सन्धि हुई थी। इस प्रकार जर्मनो ने पूरा प्रतिशोध लिया। उन्होने कोपिएन कानन के युद्ध-विराम-सम्बन्धी सारे स्मारको को डाइनामाइट से उडा दिया। केवल मारेशाल फोश का स्मारक रहने दिया गया।

बेटे ने सुना है कि हिटलर ठीक उसी कुर्सी पर उसी कोण से बैठा, जिसपर विगत महायुद्ध के बाद मारेशाल फोश बैठे थे। जब फ्रेच नेता उस कमरे मे आए, तो हिटलर और अन्य जर्मन नेता उठ खडे हुए। हिटलर, रिबेनट्राप और हेस ने हाथ उठाकर नात्सी सलामी दी। फ्रेचो ने भी सलामी दी। सब सही ढग से हुआ, पर सलामी ही सलामी रही, हाथ नही मिलाया गया।[1] देश का जो सत्यानाश हुआ वह तो हुआ ही, चारो तरफ लाखो शरणार्थी इधर से उधर घूम रहे थे।

बूढे ने कुछ देर तक रुककर कहा—सब से अजीब बात है कि फ्रास ने लडाई ही नही की। मेरे बेटे ने लिखा है कि मैं उत्तर से दक्षिण तक फ्रास मे कही भिख-भगे की तरह, कही शरणार्थी की तरह यहूदियो को निकालते हुए और उन्हे समझा-बुझाकर फिलिस्तीन की ओर रवाना करते हुए घूमता रहा, पर कही भी लडाई का कोई विशेष चिह्न नही दिखाई पडा। शायद ही कही मकान विध्वस्त हुए थे। और जो हुए थे, वे उन्ही स्थानो मे हुए थे, जहा अग्रेज सेना लडी थी। बाकी न खडे खेत मसले गए, न और कोई ध्वसलीला देखने मे आई। हा, कुछ पुल उडाए गए थे। उसने बडे दु ख के साथ लिखा है कि नात्सी हवाई सेना की श्रेष्ठता को कई लोग नात्सी दिग्विजय का कारण मानते है, पर कही भी न तो सडके उडी हुई थी और न विशाल गड्ढे दिखाई पड़े। जर्मनो ने तो फोकट मे लडाई जीत ली।

फोकट शब्द पर विशेष ज़ोर था।

एलिस ने कहा—मेरी भी कुछ समझ मे नही आया कि फ्रास मे हुआ क्या। फ्रास पर आक्रमण के पहले ही ब्रिटिश इम्पीरियल जनरल स्टाफ के प्रधान सर ऐडमण्ड आयरन साइड ने कहा था कि फ्रास मे इस समय कई जनरल ऐसे थे जो प्रथम महायुद्ध मे डिवीजन कमाण्डर थे, जबकि सारे के सारे जर्मन जनरल ऐसे थे जो उस महायुद्ध मे कम्पनी कमाण्डर से ज्यादा कुछ नही थे। वह सारी शेखी तो धूल मे मिल गई, और यह प्रमाणित हो गया कि सर आयरन साइड ने गलत बात कही थी।

बूढा एकाएक हस पडा, बोला—मिस, तुम ऐसे बात कर रही हो, जैसे आयरन साइड की भविष्यवाणी झूठी पड जाने से तुम खुश हो। असल मे बात यह है

---

१. बर्लिन डायरी, पृष्ठ ३१४

कि सेना जब कुछ दिनो तक पडी-पडी रोटी तोडती रहती है, तो उसमे भी नौकर-शाही का बोलबाला हो जाता है , जो फाइल पर अच्छी नोटिंग करता है, जिसकी सर्विस पुरानी है, वह ऊपर आ जाता है, पर लडाई न तो फाइल है, न नोटिंग है, न लच्छेदार भाषा है, उसमे दूध का दूध और पानी का पानी हो जाता है, कलई खुल जाती है। जो असली लोग है, वे सामने आ जाते है।

एलिस ने कान लगाकर सुना। क्या मा कुछ कह रही थी ? वह इगित से माफी मागती हुई भीतर गई और तुरन्त ही लौटकर बोली—उस पागल हिटलर ने कुछ ऐसी जान फूकी है कि कम्पनी कमाण्डर के सामने डिवीजन कमाण्डर घुटना टेकते नजर आए। यही उनकी सफलता का रहस्य ज्ञात होता है।

बूढे के माथे पर सिलवटे स्पष्ट हो गई। वह हिटलर की किसी प्रकार प्रशसा सुनना नही चाहता था, बोला—यह बात नही कि हिटलर उस लडाई मे एक कारपोरल था, इससे छोटे लोगो का हौसला बढा हुआ है। बेटे ने लिखा भी है कि जर्मन सेना मे एक तरह का समतावाद छा गया है। अब सेना की अफसरी केवल एक विशेष गुट या वर्ग के लोगो के लिए सुरक्षित नही है। सब साधारण सैनिक से सेनापति तक अपने को सेना का एक सदस्य समझते है। अब सलाम करने को एक नई साकेतिकता प्राप्त हो गई है। जर्मन सैनिक भी एक-दूसरे को सलाम करते हैं, इसलिए सलाम करना अब किसी प्रकार के पद का सूचक नही है। जहा भी अफसर और सैनिक मिलते है, चाहे वे होटलो, रेस्टोरेंटो या चालू रेल के भोजनालय मे हो, यदि वे उस समय ड्यूटी नही दे रहे है, तो सब लोग एक मेज के इर्द-गिर्द बैठ जाते हैं। पर यही सारी बात नही है।

एलिस ने प्रश्नसूचक दृष्टि से बूढे को देखा। यही क्या थोडी बात थी कि ड्यूटी से बाहर कोई प्रोटोकोल नही रहता था, सब एक परिवार के हो जाते थे। यदि यह हुआ है, तो यह बहुत बडी बात है।

बूढे ने पुनरावृत्ति करते हुए कहा—पर सारी बात यही नही है। हिटलर एक नम्बर का बेईमान है। मेरे बेटे ने यह देखा कि देहात मे किसी बाग के पेडो के नीचे चालीस या पचास पेट्रोल वाले सैनिक ट्रक खडे हैं। उनपर बडे-बडे लाल क्रूस के चिह्न बने हुए थे, जिसका मतलब शत्रु के हवाई जहाजो को यह बताना था कि ये अस्पताल से सम्पृक्त है और इनपर गोलाबारी न की जाए। शायद जर्मन यह समझते हो कि मित्रपक्ष भी ऐसा ही करता होगा, इसी कारण वे लाल क्रूस से

चिह्नित ट्रको और मकानो पर बमबाजी करने से बाज आते।

एलिस ने कहा—यह सब तो होता ही रहता है, पर फ्रास का पतन सारी दुनिया के लिए भयकर धक्के के रूप मे रहा, और फिर अजीब बात है कि प्रथम महायुद्ध के वीर मारेशाल पेता हिटलर के एजेट बन गए, और केवल पेता ही क्यो, राष्ट्रसघ के सेक्रेटरी जनरल आवेनोल को देखिए, जो बडा बुद्धिमान समझा जाता है, उसने राष्ट्रसघ के सब ब्रिटिश सचिवो को निकाल बाहर किया और उन्हे फ्रास की बस पर चढा दिया। लगता है कि सारी फ्रेच जाति ही पेरिस की सडी-गली जनानी सस्कृति के कारण बुरी तरह गिर गई, और यही कारण है कि फ्रेंचो की इस तरह हार हुई। जो जाति महज सुखभोग को ही सर्वस्व मान कर चलेगी, तरल पसीने और लाल खून से उसका दाम न चुकाएगी, उसके लिए यह नियति अनिवार्य थी।

बूढा प्रत्येक शब्द को चबा-चबाकर कह रहा था और उसकी आखो से ऐसा लग रहा था कि वह हिटलर के प्रति विद्वेष से पूर्ण तो है ही, वह फ्रेंच जाति के प्रति भी कम विद्विष्ट नही है। एलिस उसका चेहरा देखती रही, और समझने की कोशिश करती रही कि भीतर-भीतर कौन-से विचार तरगित हो रहे हैं। सच तो है कि फ्रास से बहुत आशा थी। कम से कम उसका गुब्बारा इतनी आसानी से फूट जाएगा, यह आशका नही थी।

बूढे ने कहा—लन्दन पर बार-बार हवाई हमले हो चुके हैं। मेरे बेटे ने लिखा है कि ये हमले इस उद्देश्य से किए गए कि उन्हीसे काम बन जाएगा, और हमारी नैतिक स्थिति दयनीय हो जाएगी। उसने लिखा है कि जर्मन नौसेना ने यह शर्त रखी कि हवाई ताकत इतनी होनी चाहिए कि नौसेना सुरक्षित होकर समुद्र से हमला कर सके और सेना उतार सके, पर हमारी नैतिक और हवाई सेना की स्थिति इतनी मज़बूत रही कि उनके भयकर हमलो के बावजूद न तो यहा के लोग घबडाए और न किसीने सरकार के विरुद्ध असन्तोष या विद्रोह की आवाज़ उठाई। सब लोग एक होकर राष्ट्रीय क्लेश का सामना कर रहे है।

बूढे ने एकएक चुप्पी साध ली। फिर उसने ओठ भिगोकर, कान खडे किए कि कही जर्मन बमबाज़ तो नही आ रहे हैं क्योकि इन दिनो बराबर वे आते थे और आस्मानी युद्ध होते थे, फिर जैसे किसी निर्णय पर एकाएक पहुचते हुए बोला—मेरा बेटा सारी परिस्थिति का अध्ययन करने के बाद इस नतीजे पर

पहुचा कि एक व्यक्ति हिटलर के कारण सारे ससार को दु ख मिल रहा है। ' ''

कहकर बूढे ने जैसे सास के लिए मुह बाकर ऊपर की ओर देखा, फिर एकाएक पूछ बैठा—जब कोई व्यक्ति इस नतीजे पर पहुच जाए कि एक व्यक्ति के कारण ससार को कष्ट मिल रहा है, व्यर्थ मे रक्तपात हो रहा है, तो उसे क्या करना चाहिए ?

एलिस ने इसका कोई उत्तर नही दिया, क्योकि वह जानती थी कि बूढ़ा स्वय इसका उत्तर देगा, पर वह यह नहीं समझ पा रही थी कि इस प्रश्न से उसके बेटे का क्या सम्बन्ध था। बूढा शायद समझ गया। उसने तुरन्त ही अपने प्रश्न का उत्तर देते हुए कहा—ऐसे मौके पर व्यक्ति एक ही निष्कर्ष पर पहुचता है, वह यह कि उत्पात के कारणस्वरूप उस व्यक्ति को जिस किसी प्रकार से हो, समाप्त कर दिया जाए। मैंने भी वह सब पढा है कि इतिहास व्यक्ति को बनाता है, पर कई बार व्यक्ति अकेले भी इतिहास बनाता है। जर्मन नौसेना बिलकुल ब्रिटेन पर आक्रमण करने के लिए अपने को तैयार नही पा रही थी। उन्हें यह मालूम हो चुका था कि हमारे होमगार्डों की सख्या दस लाख तक पहुच चुकी है, ब्रिटेन के समुद्रतट के चप्पे-चप्पे पर पहरा था, फिर भी हिटलर सारी विशेषज्ञ सलाहो के विरुद्ध ब्रिटेन पर आक्रमण के लिए सेनापतियों पर दबाव डाल रहा था। पर वह समझता था कि कि जब सेनापति विरोध कर रहे हैं तो काम कठिन अवश्य है, इसलिए हिटलर ने शाति का प्रस्ताव रखा। यह शाति का प्रस्ताव नही था, बल्कि घुटना टेकने के लिए आह्वान था।

एलिस को ये सारी बातें मुख्यत मालूम थीं, क्योकि ससद में समय-समय पर जो वक्तव्य दिए जाते थे, उनसे दुश्मन की नाडी का भी कुछ न कुछ पता लगता रहता था। बोली—आप शान्त होइए। मुझे विश्वास है कि अन्तिम विजय हमारी होगी, और जैसाकि हमारे प्रधानमत्री ने कहा था कि हम पहले फ्रास मे लडेंगे, फिर खाडी मे लड़ेंगे, फिर समुद्रतट पर लड़ेंगे, फिर राजधानी और अन्य नगरो की सड़कों पर लड़ेंगे, और तब भी यदि दुश्मन पर काबू नहीं कर पाए, तो डोमिनियनो से लडेगे। आपकी उम्र में अधिक उत्तेजित होना ठीक नहीं है।

इसपर बूढा एकदम आपे से बाहर हो गया। बोला—वाह, मैं कुछ कर नहीं पा रहा हू, तो उत्तेजित भी न होऊ ? मेरे बेटे ने तो हिटलर को मारने का प्रयत्न किया, और तुम कहती हो कि मैं उत्तेजित न होऊ! आवारों की तरह

घूमते-घूमते उसे एक जर्मन की लाश मिल गई, जिसे शायद फ्रास के गुरिल्ला युद्ध वाले मारकर छोड गए थे। वह लाश देखकर समझ गया कि उस जर्मन सैनिक को अकेले पाकर गुप्तदलो ने मार डाला। लाश को नदी-किनारे ले भी आए थे, पर उसे किसी कारण से छोडकर भाग गए। यदि वह लाश वहा छूटी रहती तो घण्टे दो घण्टे मे आविष्कृत होती और आस-पास की बस्तियो के कम से कम दस आदमियो को सार्वजनिक रूप से समारोह के साथ गोली मार दी जाती, इसलिए मेरे बेटे ने पहले तो उसकी वर्दी उतार ली, फिर उसका सिर काटकर उसे पत्थर बाधकर नदी मे डुबो दिया। सिर को अलग, और धड को अलग। उसने वर्दी भी पानी में डाल दी, पर अलग। अन्धकार ने उसकी सहायता की। इसके बाद कुछ लिखा है कि उस वर्दी को, या और कोई वर्दी पहनकर वह जुलाई मे जर्मन राईख-स्ताग (ससद) मे किसी प्रकार घुस गया, जिसमे हिटलर ब्रिटेन के सामने शान्ति-प्रस्ताव रखने को था। याद रखो, वह केवल तमाशा देखने नही गया था, गया था कोई मौका ढूढने, कि हिटलर का काम तमाम किया जाए, पर उसने लिखा है· ·

कहकर बूढे ने चारो तरफ देखकर अपनी पैंट की सिलवट की अन्दर से एक पत्र निकाला और पढकर सुनाने लगा—उसने लिखा हिटलर ने शान्ति-प्रस्ताव बडे ढग से रखा। हिटलर ने कहा—इस घडी मैं अपने विवेक के प्रति यह कर्तव्य समझता हू कि एक बार फिर युक्ति और साधारण बुद्धि के प्रति अपील करू। मैं यह समझ नही पाता कि युद्ध क्यो जारी रहे।

बूढे ने होठ भिगोकर फिर से पढना शुरू किया—मुझे लिखते हुए लज्जा आती है कि पहले ही वाक्य से मैं पक्षाघात-ग्रस्त हो गया जैसेकि सारे जर्मन सम्मो-हित हो गए। मैं भूल गया कि मैं वहा किसलिए गया हू, यद्यपि घृणा से मेरा सारा अस्तित्व उबल रहा था, पर उबलना और उफनना एक सूक्ष्म क्रिया, करीब-करीब निष्क्रिय प्रक्रिया है, मुझे ऐसा लगा कि मेरे हाथ नही हैं, पैर नही हैं, इच्छा-शक्ति नही है, केवल कान है, और आखें है। हिटलर ने विजेता का लहजा अपनाते हुए भी अपने को ऐसी पृष्ठभूमि मे रखा जैसे वह जर्मन जनता का एक तुच्छ सेवक हो। लोगो ने मुझसे कहा था कि वह बोलते-बोलते चीख पडता है, लगभग एक मिरगी-ग्रस्त रोग की तरह। पर मैंने ऐसा कुछ नही देखा। मुझे लगा कि वह एक वक्ता ही नहीं, बल्कि बडा पक्का अभिनेता भी है। वह हाथो को बार-बार झटक रहा था, यद्यपि इतिहास-नरपशुओ मे उसकी गिनती होगी, पर उसके हाथ बिलकुल

स्त्रियो की तरह, और लगभग कलात्मक है। उसने शब्द-चयन तथा लहजा ऐसा रखा कि लोग मन्त्रमुग्ध होकर सुन रहे थे। अब मैं जबकि लिख रहा हू, और यह लिख इसलिए पा रहा हू कि मैं हिटलर के साम्राज्य से बाहर पहुच गया हू, तो मुझे उस दिन की याद आती है, जब मैं उसे मारने के लिए गया था, पर एक श्रोता-मात्र होकर खडा रह गया था। झूठ बोलने मे वह अपना प्रतिद्वन्द्वी नही रखता, पर उसने जो भी झूठ कहा, उसे ऐसी ईमानदारी के लहजे मे कहा कि उस समय मैं भी उसके जादू मे आ गया था। सच तो यह है कि वहा उसे मारने का कोई मौका नही था, क्योकि हिटलर तथा उसके स्वर्णसज्जित सेनापति बालकनी मे थे, जहा कोई नहीं पहुच सकता था। उस दिन से मैंने फिर कभी हिटलर को मारने की बात नही सोची, क्योकि मैं इस मत का हो गया कि हिटलर को कोई जर्मन सेनापति ही मार सकता है, अथवा कोई नही।

कहकर बूढ ने एक लम्बी सास खीची और पत्र को लपेटकर जेब के अन्दर रख दिया। फिर बोला—शायद इसे रखना ठीक नही है, इसमे ब्रिटिश सरकार के विरुद्ध भी बहुत-सी बाते है। यहूदियो की हालत बहुत खराब है, दो वे चक्कियो के पाट मे पडे है। हिटलर हजारो यहूदियो को मार रहा है, और इधर ब्रिटिश सरकार फिलिस्तीन मे बहुत यहूदियो को आश्रय देने के लिए तैयार नही है। प्रश्न यह है कि फिर वे कहा जाए ?

एलिस बूढे से यह प्रश्न इसके पहले भी बहुत सुन चुकी थी, इसलिए उसने इसका उत्तर देना आवश्यक नही समझा। बोली—ब्रिटेन मे तो किसी प्रकार की रोक-टोक नही है। यदि फिलिस्तीन मे है, तो उसका कारण स्थानीय होगा, न कि यह हमारे साम्राज्य की कोई स्वीकृत नीति है।

बातें करते-करते बहुत देर हो गई। बीच मे एलिस कई बार उठकर मा को देख आई थी। जब दोपहर के खाने का समय हुआ तो बूढा एकाएक उठा और बोला—मैंने यह पत्र स्काटलैण्ड यार्ड को नही दिया है। यह शायद अनुचित है। मैं बहुत राजभक्त नागरिक हू, पर फिलिस्तीन के मामले मे हमारा सरकार से मत-भेद है, इसलिए मै पत्र नही देता। मै समझता हू, यह माकूल वजह है।

एलिस ने कोई उत्तर नही दिया। जब बूढा उठकर चला चला गया तो उसने टेलीफोन से सारी सूचना स्काटलैण्ड यार्ड को दी और अन्त मे बोला—बूढे का उद्देश्य खराब नही है, इसलिए आशा है कि आप इसपर बिलकुल कानूनी ढग से नही

चलेंगे।

उधर से युवक अधिकारी ने कहा—इस समय हमारे सामने सिर्फ एक ही कानून, और एक ही लक्ष्य है, वह है—लड़ाई जीतना। बूढे को जो पत्र मिला है, वह पहले हमारे यहा आया था, फिर हमने उसका फोटो लेकर भेज दिया। फिर भी आपको धन्यवाद !

एलिस बहुत देर तक सारी बातो पर विचार करती रही, और करते-करते उसने दिन के सारे कर्तव्य किए। इधर लगभग प्रतिदिन हवाई हमले होते थे। इस क्षेत्र पर भी हमला हुआ था, पर न जाने कैसे यह मकान बचा हुआ था, यद्यपि मुहल्ले मे एक गिर्जा और कई अन्य मकान गिर चुके थे।

वह लगभग हर रात को दूसरे लन्दनवासियो की तरह भोपू से सूचना पाकर, उठकर मा का हाथ पकड़कर सुरक्षित स्थान मे जाती थी, फिर लौट आता थी। उस रात को भी हवाई हमला हुआ, और एलिस अपनी मा को लेकर आश्रय मे गई। लौटी तो घर अभी मौजूद था। यह स्पष्ट होता जा रहा था कि हवाई युद्ध से ही भाग्य-निर्णय होना है।

आज रात का हवाई हमला बहुत तेज हुआ था। एलिस अभी जग नही पाई थी कि टेलीफोन बहुत जोर से बज उठा। एलिस अगडाई लेकर उठी। सारा शरीर दर्द कर रहा था, क्योकि आज का हवाई हमला बहुत दीर्घकाल तक रहा और वह बहुत थोड़ा सो पाई थी। टेलीफोन उठाया तो उधर से स्काटलैण्ड यार्ड का वही स्वर था, जिससे कल बातचीत हुई थी। स्वर बोला—आपकी तबियत ठाक है न ?

—जी हा, कहिए।

एलिस को आश्चर्य हुआ कि स्काटलैण्ड यार्ड तबीयत क्यो पूछ रहा है ? स्वर फौरन ही बोला, पर पहले से गम्भीर था। स्वर कह रहा था—कुछ बुरी खबर है।

आए दिन बहुत-सी बुरी खबरें सुनने को मिलती थीं। कितने ही मित्र तथा रिश्तेदार युद्ध मे मारे गए थे। हवाई हमले मे भी बहुत-से लोगों को चोट लगी थी, बहुतों के घर नष्ट हो गए थे। खबरें तो जब होती थी, तो बुरी ही होती थीं, पर अंग्रेजो का रुख ऐसा बन गया था कि एक बुरी खबर के सिवा, वह यह कि जर्मन तट पर उतर गए हैं, अंग्रेज सभी बुरी खबरों के विरुद्ध अपने हृदयो को फौलाद बना

चुके थे। सहमकर बोली—कैसी बुरी खबर ?

—आपके किसी मित्र की मृत्यु हो गई।

एलिस का ध्यान फौरन ही गार्डन पर गया। तो गार्डन भी विलियम के मार्ग पर ही गया। मोर्चा भिन्न, नही, मोर्चा अभिन्न, पर शत्रु दूसरा। मोर्चा तो एक ही है, पर शत्रु अनगिनत। बोली—कौन-से मित्र ?—पूछकर उसने दात भीच लिए कि पता नही कैसी चोट पडेगी।

स्वर ने कई बार अ-अ-अ किया जैसे वह हिचकिचा रहा हो, फिर बोला—कल रात के हवाई हमले मे अहारन सपरिवार मारा गया! सपरिवार माने स्त्री के साथ।

स्काटलैण्ड यार्ड ने टेलीफोन बन्द कर दिया। यह सूचना देना किसी भी प्रकार यार्ड के कार्य मे नही आता था, कम-से-कम एलिस की यही धारणा थी, पर जिसने भी सूचना दी थी, उसने केवल भद्रता के कारण दी थी। पर टेलीफोन का रिसीवर उतारकर एलिस यही सोचने लगी कि इस भद्रता की क्या ज़रूरत थी। यो वह कभी नही जान पाती कि अहारन मर गया। कितनी अजीब बात थी कि कल वह बूढा ''। खैर, वह सारे दु खो से बच गया। हिटलर ने और एक यहूदी मारा! एक नही दो!

एलिस ने अहारन की मृत्यु की खबर दिवाकर को लिख भेजी, यद्यपि दिवाकर अहारन मे दिलचस्पी न तो रखता था, न रख सकता था। फिर भी मानव आज दूर-दूर तक हाथ फैलाकर मानव से मानवता की माग कर रहा था।

1–65–2–2